



सर्वाधिकार सुरक्षित

श्री जिनेन्द्राय नमः

श्री सहजानन्द शास्त्रमाला

कृतिकर्म

सम्पादक—

पं० बिहारी लाल जैन शास्त्री

प्रकाशक :

मंत्री श्री सहजानन्द शास्त्रमाला,

२०१ पुलिस स्ट्रीट, सदर मेरठ ।

मूल्य ३)

## श्री सहजानन्द शास्त्रमाला के प्रवर्तकों की शुभ नामावली

|  |       |
|--|-------|
| १ श्री ला० महावीर प्रसाद जी बैंकसं सर्राफा मेरठ सवर            | ३००१) |
| २ श्री कृष्णचन्द जी जैन १८ तिलक रोड देहरादून                   | १००१) |
| ३ श्री मित्रसैन नाहरासिंह जी जैन पुरानी मंडी मुजफ्फरनगर        | १००१) |
| ४ श्री प्रेमचन्द ओमप्रकाश जी जैन प्रेमपुरी मेरठ सिटी           | १००१) |
| ५ श्री सलेकचन्द लालचन्द जी जैन बाबूपुरा मुजफ्फरनगर             | ११०१) |
| ६ श्री बीपचन्द जी जैन रईस भंडा बाजार देहरादून                  | ११०१) |
| ७ श्री बालरमल प्रेमचन्द जी जैन कुल्हड़ी बाजार मसूरी (देहरादून) | ११००) |
| ८ श्री बाबूराम मुरारीलाल जी जैन ज्वालापुर (सहारनपुर)           | १००१) |
| ९ श्री केवलराम उपसैन जी जैन स्वस्तिका मेटल वर्क्स जगाधरी       | १००१) |
| १० श्री गैवामल जी बगडूसह जी जैन सनादद (म० प्र०)                | १००१) |
| ११ श्री मुकुंदलाल जी गुलशन राय जी नई मंडी मुजफ्फरनगर           | १००१) |
| १२ श्री बा० कैलाशचन्द जी जैन देहरादून                          | १००१) |
| १३ श्री हरीचन्द ज्योतीप्रसाद जी जैन ओवरसियर इटावा वाले         | १००१) |
| १४ श्री जयकुमार जी धीरसैन जी सर्राफ सर्राफा मेरठ सवर           | १००१) |
| १५ श्री भंवरीलाल जी जैन पांड्या भूकरीतिलैया (हजारीबाग)         | १००१) |
| १६ श्री से० फतेहलाल जी (रि०) एक०जन जयपुर                       | १००१) |
| १७ श्री मंत्री जैन समाज छण्डवा (म० प्र०)                       | १००१) |
| *१८ श्री बाबूराम अकलंक प्रसाद जी जैन रईस तिस्ता                | १००१) |
| *१९ श्री सेठ जगन्नाथ जी जैन पांड्या भूमरीतिलैया                | १००१) |
| *२० श्री मुखवीरसिंह हेमचन्द जी जैन सर्राफ बड़ौत (मेरठ)         | १००१) |
| *२१ श्री फूलचन्द बैजनाथ जी जैन नई मंडी मुजफ्फरनगर              | १००१) |
| *२२ श्री सेठ जगलकिशोर शीतल प्रसाद जी जैन मेरठ सवर              | १००१) |
| *२३ सेठ मोहनलाल ताराचन्द्र जी बड़जात्या जयपुर                  | १००१) |
| *२४ बा० दयाराम जी जैन S.D.O. टंकी मौहल्ला मेरठ सवर             | १००१) |
| *२५ श्री ला० जिनेश्वर प्रसाद अभिनन्दन कुमार बजाज सहारनपुर      | १००१) |
| *२६ श्री ला० जिनेश्वर प्रसाद अभिनन्दन कुमार बजाज सहारनपुर      | १००१) |
| *२७ ला० जिनेश्वरदास श्रीपाल जी जैन ३१ लोअर बाजार शिमला         | १००१) |
| *२८ ला० बनवारीलाल निरंजनलाल जी जैन मिडिल बाजार शिमला           | १००१) |

उक्त सदस्यों में से जिन नामों के आदि में ✦ यह निशान लगा है उनके कुछ रुपये आ गये बाकी धाना है। जिन नामों के आदि में ✧ यह निशान लगा है उनके रुपये अभी नहीं आये सभी रुपये उनके नाम हैं। शेष सब के रुपये पूरे आ चुके हैं।

## अनुक्रमणिका

| क्रम सं० | स्तोत्र                  | पृष्ठ सं० |
|----------|--------------------------|-----------|
| १        | बृहत् स्वयम्भू स्तोत्रम् | १         |
| २        | आप्तमीमांसा              | १६        |
| ३        | जिनसहस्रनामस्तोत्रम्     | २५        |
| ४        | सुप्रभातस्तोत्रम्        | ३७        |
| ५        | समाधिगतक                 | ३९        |
| ६        | पात्रकेशरीस्तोत्रम्      | ४७        |
| ७        | एकत्वसप्ततिः             | ५४        |
| ८        | तत्त्वार्थसूत्रम्        | ६०        |
| ९        | अध्यात्मसूत्रम्          | ७३        |
| १०       | तत्त्वसूत्रम्            | ८३        |
| ११       | आलापपद्धतिः              | ८६        |
| १२       | परीक्षामुखसूत्राणि       | १००       |
| १३       | विशेष गाथा संग्रह        | १०८       |
| १४       | समाधिमरणभाषा             | ११९       |
| १५       | भक्तामर स्तोत्रम्        | १२७       |
| १६       | कल्याणमंदिर स्तोत्रम्    | १३३       |
| १७       | एकीभावस्तोत्रम्          | १३८       |
| १८       | विद्यापहार स्तोत्रम्     | १४२       |
| १९       | जिनचतुर्विंशतिका         | १४६       |
| २०       | निर्वाण काण्ड            | १४९       |
| २१       |                          |           |
| २२       | धीतरागस्तोत्रम्          | १५२       |
| २३       | परमानन्द स्तोत्रम्       | १५३       |
| २४       | सम्बोधनम्                | १५५       |

|    |                           |     |
|----|---------------------------|-----|
| २५ | द्वात्रिंशतिका (सा०पा०)   | १५७ |
| २६ | अकलङ्क स्तोत्रम्          | १६० |
| २७ | मृत्यु महोत्सव            | १६३ |
| २८ | प्रदोनोत्तररत्नमालिका     | १६५ |
| २९ | सहजानंद गीता              | १६७ |
| ३० | सिद्धभक्तिः               | २०२ |
| ३१ | प्राकृतसिद्ध भक्तिः       | २०४ |
| ३२ | लघुसिद्धभक्तिः            | २०५ |
| ३३ | श्रुतभक्तिः               | २०७ |
| ३४ | प्राकृत श्रुतभक्तिः       | २१० |
| ३५ | लघु श्रुतभक्ति            | २११ |
| ३६ | चारित्र्य भक्तिः          | २१२ |
| ३७ | प्राकृत चारित्र्य भक्तिः  | २१४ |
| ३८ | लघु चारित्र्य भक्तिः      | २१५ |
| ३९ | प्राकृत योगि भक्तिः       | २१६ |
| ४० | संस्कृत योगि भक्तिः       | २१८ |
| ४१ | लघु योगि भक्तिः           | २२० |
| ४२ | शाचार्य भक्तिः            | २२० |
| ४३ | प्राकृताचार्य भक्तिः      | २२१ |
| ४४ | शाचार्य लघुभक्तिः         | २२३ |
| ४५ | संस्कृत पंचमहागुरु भक्तिः | २२४ |
| ४६ | प्राकृत पंचमहागुरु भक्तिः | २२५ |
| ४७ | शान्ति भक्तिः             | २२६ |
| ४८ | चैत्य भक्तिः              | २२९ |
| ४९ | लघुचैत्य भक्तिः           | २३३ |
| ५० | समाधि भक्तिः              | २३४ |
| ५१ | लघुसमाधि भक्ति            | २३६ |

|    |                                 |     |
|----|---------------------------------|-----|
| ५२ | निर्वाण भक्तिः                  | २३७ |
| ५३ |                                 |     |
| ५४ | नंदीश्वर भक्तिः                 | २४१ |
| ५५ | बंधसिक रात्रि प्रतिक्रमणं       | २४६ |
| ५६ | पाक्षिकादि प्रतिक्रमणम्         | ३०४ |
| ५७ | श्रावक प्रतिक्रमण               | ३२० |
| ५८ | बीर भक्तिः                      | ३३६ |
| ५९ | चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्तिः     | ३३८ |
| ६० | ईर्यापथविशुद्धिः                | ३३९ |
| ६१ | देवबंधना                        | ३४१ |
| ६२ | सामायिक बंधक                    | ३४२ |
| ६३ | चतुर्विंशतिस्तव                 | ३४३ |
| ६४ | सर्वदोषप्रापश्चित्तविधिः        | ३४५ |
| ६५ | चतुर्विंशति बंधना               | ३४७ |
| ६६ | भूतकालतीर्थंकराः                | ३४८ |
| ६७ | वर्तमानकाल तीर्थंकरा            | "   |
| ६८ | भविष्यत्काल तीर्थंकरा           | "   |
| ६९ | विदेहक्षेत्रस्य विंशतितीर्थंकरा | ३४९ |
| ७० | नमस्कार मंत्राः                 | "   |
| ७१ | महावीराष्टक स्तोत्रम्           | ३५० |
| ७२ | चतुर्वंशी क्रिया                | ३५१ |
| ७३ | पाक्षिकी क्रिया                 | ३५३ |
| ७४ | अष्टमी क्रिया                   | ३५४ |
| ७५ | सिद्धप्रतिमा क्रिया             | "   |
| ७६ | तीर्थंकरजन्मक्रिया              | "   |
| ७७ | पूर्वजिनर्षेत्यक्रिया           | "   |
| ७८ | अपूर्वर्षेत्यबंधनाक्रिया        | "   |

|     |   |     |
|-----|---|-----|
| ७६  | दानेका पूर्वचैत्यदर्शनक्रिया                    | ४५४ |
| ८०  | पाक्षिकावि प्रतिक्रमण                           | ३५५ |
| ८१  | श्रुतपंचमी क्रिया                               | ३५६ |
| ८२  | सिद्धान्ताचार क्रिया                            | "   |
| ८३  | सम्यास क्रिया                                   | ३५७ |
| ८४  | अष्टाङ्ग क्रिया                                 | "   |
| ८५  | अभिषेक वंदना क्रिया                             | "   |
| ८६  | मंगलगोचर मध्याह्न वंदना क्रिया                  | "   |
| ८७  | मंगलगोचर बृहत्प्रत्याख्यान क्रिया               | "   |
| ८८  | वर्षायोगग्रहण क्रिया                            | ३५८ |
| ८९  | वर्षायोग निष्ठापन क्रिया                        | ३६० |
| ९०  | बीर निर्वाण क्रिया                              | "   |
| ९१  | कल्याण पंचक क्रिया                              | "   |
| ९२  | पंचत्व प्राप्तध्यादीनां कायेनिषेधिकाया च क्रिया | ३६१ |
| ९३  | चलाचलविम्बप्रतिष्ठायाः क्रिया                   | ३६२ |
| ९४  | आचार्य पदप्रतिष्ठापन क्रिया                     | ३६३ |
| ९५  | प्रतिमायोगिमुनि क्रिया                          | "   |
| ९६  | दीक्षाग्रहण क्रिया                              | ३६४ |
| ९७  | अन्यदातन लोचक्रिया                              | ३६५ |
| ९८  | बृहद्दीक्षा विधिः                               | "   |
| ९९  | क्षुल्लक दीक्षा विधिः                           | ३७० |
| १०० | उपाध्यायपददानविधिः                              | ३७१ |
| १०१ | आचार्यपदस्थापनविधिः                             | "   |
| १०२ | बीभानक्षत्राणि                                  | ३७२ |
| १०३ | आचार्य वंदना                                    | ३७३ |
| १०४ | प्रत्याख्यानप्रतिष्ठापनविधिः                    | "   |
| १०५ | प्रत्याख्यान निष्ठापन विधिः                     | "   |

|     |   |     |
|-----|---|-----|
| १०६ | उपवासग्रहण विधि:                            | ३७८ |
| १०७ | उपवासत्याग विधि:                            | "   |
| १०८ | आचार्य समीपे प्रत्याख्यान प्रतिष्ठापन विधि: | "   |
| १०९ | आचार्य समीपे उपवास प्रतिष्ठापन विधि:        | "   |
| ११० | पौर्वाह्निक स्वाध्याय क्रिया                | ३७४ |
| १११ | अपराह्निक स्वाध्याय क्रिया                  | "   |
| ११२ | प्रादोषिक स्वाध्याय क्रिया                  | "   |
| ११६ | बैरात्रिक स्वाध्याय क्रिया                  | "   |
| ११७ | योगग्रहण क्रिया                             | "   |
| ११८ | योगभोचन क्रिया                              | "   |
| ११९ | दैनसिक प्रतिक्रमण विधि                      | "   |
| १२० | रात्रि प्रतिक्रमण                           | "   |
| १२१ | आचार्य बंदनाबृहद्विधि:                      | "   |
| १२२ | संगलाष्टकम्                                 | "   |







ॐ नमः सिद्धेभ्यः ॥

# कृतिकर्म

श्रीस्वामिसमन्तमद्राचार्यविरचितम्

## १ बृहत्स्वयम्भूस्तोत्रम्

स्वयम्भुवा भूतहितेन भूतले समञ्जसज्ञानविभूतिचञ्चुषा ।  
विराजितं येन विधुन्वता तमः क्षपाकरेखेव गुणोत्करैः करैः ॥१॥  
प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषुः शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः ।  
प्रबुद्धतत्त्वः पुनरद्भुतोदयो मपत्त्वतो निर्विविदे विदांबरः ॥२॥  
विहाय यः सागरवारिवाससं बधूमिवेमां बसुषावधूः सतीम् ।  
मुमुक्षुरित्वाकुकुलादिरात्मवान् प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णुरच्युतः ॥३॥  
स्वदोषमूर्लं स्वसमाधितेजसा निनाय यो निर्दयमस्मसात्क्रियाम् ।  
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्चिनेऽञ्जसा बभूव च ब्रह्मपदामृतेश्वरः ॥४॥  
स विश्वचञ्चुष्टृषमोऽर्चितः सतां समग्रमिद्यत्स्ववपुर्निरञ्जनः ।  
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो त्रिनोः, जितञ्जुब्रह्मणादि-  
शासनः ॥५॥

॥ इत्यादित्रिनस्तोत्रम् ॥

यस्य प्रभावात्त्रिदिवच्युतस्य क्रीडास्त्रपि क्षीवमुत्वारविन्दः ।  
 अजेयशक्तिर्धृवि बन्धुवर्गश्चकार नामाजित इत्यबन्ध्यम् । ६॥  
 अद्यापि यस्याजितरासनस्य सतां प्रखेतुः प्रतिमङ्गलार्थम् ।  
 प्रगृह्यते नाम परं पात्रेत्रं स्वसिद्धिकामेन जनेन लोके । ७॥ यः  
 प्रादुरासीत्त्रभुशक्तिभूम्ना भव्याशयालांनकलं कशान्तैः । महासु-  
 निमुक्तघनोपदेहो यथारविन्दाभ्युदयाय भास्वान् ॥८॥ येन  
 प्रणीतं पृथुधर्मतीर्थं ज्येष्ठं जनाः प्राप्य जयन्ति दुःखम् । गाङ्गं  
 हृदं चन्दनपङ्कशीतं गजप्रवेका इव घर्भतप्ताः ॥९॥ स ब्रह्मनिष्ठः  
 सममित्रशत्रुर्विद्याविनिर्वन्तकषायदोषः । लब्धात्मलक्ष्मीरजितोऽ-  
 जितात्मा जिनः श्रियं मे भगवान् विधत्ताम् ॥१०॥

॥ इत्यजितजिनस्तोत्रम् ॥

त्वं शम्भवः संभवतपरोमैः संतप्यमानस्य जनम्य लोके ।  
 आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो वैद्यो यथा नाथ रुजां प्रशान्त्यै  
 ॥११॥ अनित्यमत्राणमहंक्रियाभिः प्रसक्तमिध्याध्यवसाय-  
 दोषम् । इदं जगज्जन्मजरान्तकाते' निरञ्जनां शान्तिमजीगमस्त्वम्  
 ॥१२॥ शतहृदोन्मेषचलं हि सोख्यं तृष्णाभयप्यायनमात्रहेतुः ।  
 तृष्णाभिवृद्धिश्च तपत्यजस्रं तापसुदायासयतीत्यवादीः ॥१३॥  
 बन्धश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतुर्वद्वश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः ।  
 स्याद्वादिनो नाथ तथैव युक्तं नैकान्तदृष्टे स्त्वमतोऽसि शास्ता  
 ॥१४॥ शक्रोऽप्यशक्तस्तत्र पुण्यकीर्त्तः स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु  
 मादृशाऽङ्गः । तथापि भक्त्या स्तुतपादपद्मो ममार्य देयाः

शिवतातिमुर्ध्वः ॥१५॥

॥ शतं शंभवाग्निस्तोत्रम् ॥

गुणाभिनन्दादभिनन्दनो भवान् दयावधुं चान्तिसखीमशि-  
श्रियत् । समाधितन्द्रस्तदुपोपपत्तये द्वयेन नैर्ग्रन्थ्यगुणेन चायु-  
ज्जत् ॥१६॥ अचेतने तत्कृतबन्धजेऽपि ममेदमित्याभिनिवेशक-  
ग्रहात् । प्रभङ्गुरे स्थावरनिश्चयेन च क्षतं जगत्त्वमाजग्रहद्भ-  
वान् ॥१७॥ झुदादिदुःखप्रतिकारतः स्थितिं चेद्रियार्थप्रभवा-  
ल्पसौख्यतः । ततो गुणो नास्ति च देहदेहिनोऽरतीदमित्यं  
भगवान् व्यञ्जिपत् ॥ १८ ॥ जनोऽतिलोलोऽप्यनुबंधदोषतो  
भयादकार्येष्विह न प्रवर्त्तते । इहाप्यमुत्राप्यनुबंधदोषविकथ  
सुखे संसजतीति चाब्रवीत् ॥१९॥ सचानुबन्धोऽस्य जनस्य  
तापवृत्तयोऽस्मिद्धिःसुखतो च स्थितः । इति प्रभो लोकाहत  
यतो मर्तं ततो भवानेव गतिः सतां मतः ॥२०॥

इत्यभिनन्दनस्तोत्रम् ।

अन्वर्थसंज्ञः सुमतिमुर्निस्त्वं स्वयं मर्तं येन सुर्याक्तनीलम् ।  
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति सर्वक्रियाकारकत्त्वमिद्धिः ॥२१॥  
अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं भेदान्वयज्ञानमिदं हि सत्यम् । सृपोप-  
चारोऽन्यतरस्य लोपे तच्छ्रेयलोपोऽपि ततोऽनुपाख्यम् ॥२२॥  
सतः कथञ्चित्तदसत्त्वशक्तिः खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम् ।  
सर्वस्वभावयुतमप्रमाणं स्ववाग्विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत् ॥२३॥  
न सर्वथा नित्यमुदेत्यपैति न च क्रियाकारकमत्र युक्तम् ।

नैवासतो जन्म सतो न नाशो दीपस्तमः पुद्गलभावतोऽस्ति ॥२४॥  
विधिर्निषेधश्च कथंचिदिष्टौ विवक्षया मुख्यगुणव्यवस्था । इति  
प्रचीतिः सुमतेस्तवेयं मतिप्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ॥२५॥

॥ इति सुमतिबिनस्तोत्रम् ॥

पद्मप्रभः पद्मपलाशलेश्यः पद्मालयालिकित्चारुमूर्तिः । बभौ  
भवान् भव्यपयोरुहाणां पद्माकराणामिव पद्मबन्धुः ॥२६॥  
वभार पद्मां च सरस्वतीं च भवान्पुरस्तात्प्रतिमुक्ति.लक्ष्म्याः ।  
सरस्वतीमेव समग्रशोभां सर्वज्ञलक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः ॥२७॥  
शरीररश्मिप्रसरः प्रभोस्ते बालार्दरश्मिच्छविरालिलेप । नरा-  
मराक्रीणसभां प्रभावच्छैलस्य पद्मामगणेः स्वसानुम् ॥२८॥  
नमस्तलं पद्मवपभि व त्वं सहस्रपत्राम्बुजगर्भचारैः । पादाम्बुजैः  
पातितमोहदर्यो भूमौ प्रजानां विजहर्ष भूत्यै ॥२९॥ गुणाम्बुधे-  
र्विप्लवमप्यजन्नं नाखण्डलः स्तोतुमलं तवधे । प्रागेव मादृक्किमु-  
तातिभक्तिर्मा बालमालापयतीदमित्यम् ॥३०॥

॥ इति पद्मप्रभस्तोत्रम् ॥

स्वास्थ्यं यदात्यन्तिकमेष पु सां स्वार्थो न भोगः परिभङ्गु-  
रात्मा । तृषोऽनुषङ्गाच्च च तापशान्तिरितीदमाख्यद्भगवान्-  
सुपार्श्वः ॥३१॥ अजङ्गमं जङ्गमनेययन्त्रं यथा तथा जीवधृतं  
शरीरम् । बीभस्तु पूति क्षयि तापकं च स्नेहो वृथात्रेति हितं  
त्वमाख्यः ॥३२॥ अलंघ्यशक्तिर्भवितव्यतेयं हेतुद्रयाविष्कृतकार्यं  
लिङ्गा । अनीश्वरो जन्तुरहंक्रियात्तः संहत्य कार्येष्विति साध्व-

वादीः ॥३३॥ विभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो नित्यं शिवं  
वाञ्छन्ति नास्य लाभः । तथापि बालो भयकामवश्यो वृथा स्वयं  
तप्यत इत्यवादीः ॥३४॥ सर्वस्य तत्त्वस्य भवान्प्रमाता मातेव  
बालस्य दितानुशास्ता । गुणावलोकस्य जनस्य नेता मयापि  
भक्त्या परिणयसेऽद्य ॥३५॥

॥ इति सुपाश्वेकिनस्तोत्रम् ॥

चन्द्रभ्रम चन्द्रमरीचिगौरं चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।  
बन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं जिनं जितस्वान्तकषायबन्धम् ॥३६॥  
यस्याङ्गलक्ष्मीपरिवेष्टिभिर्भ्रं तमस्तमोरेरिष रश्मिभिर्भ्रम् । ननाश  
बाह्यं बहुमानसं च ध्यानप्रदीपातिशयेन भिन्नम् ॥३७॥  
स्वपक्षसौस्थित्यमदावलिप्ता वाक्सिंहनादैर्विमदा बभूवुः । प्रवा-  
दिनो यस्य मदाद्गण्डा गजा यथा केशरिणो निनादैः ॥३८॥  
यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः पदं बभूवाद्भुतवर्मतेजाः । अनन्त-  
धामाक्षरविश्वचक्षुः समेतदुःखक्षयशासनरश्च ॥३९॥ स चन्द्रमा  
भव्यकुमुद्वतीनां विपन्नदोषाभ्रकलङ्कलेपः । व्याकोशवाङ्मन्यायम-  
यूखमालः पूयात् पवित्रो भगवान्मनो मे ॥४०॥

॥ इति च द्रप्रभाकिनस्तोत्रम् ।

एकान्तदृष्टिप्रतिषेधिं तत्त्वं प्रमाणासिद्धं तदतस्त्वभावम् ।  
त्वया प्रणीतं सुविधे स्वधाम्ना नैतत्समालीढपदं त्वदन्यैः ॥४१॥  
तदेव च स्यान्न तदेव च स्यात्तथा प्रतन्तेस्तव तत्कथञ्चित् ।  
नात्यन्तमन्यत्वमनन्यता च विधेर्निषेधस्य च शून्यदोषात् ॥४२॥

नित्यं तदेवेदामिति प्रतीतेर्नानित्यमन्यत्प्रातपत्तिसद्धेः नतद्विरुद्धं  
बहिरन्तरङ्गनिमित्तनैर्मात्तक्ययौगतस्ते ॥ ४३ ॥ इनेकमेकं च  
पदस्य वाच्यं वृद्धा इति प्रत्ययवत्प्रकृत्या । आकाङ्क्षिणः  
स्यादिति वै निपातो गुणानपेक्षे नियमेऽपवादः ॥४४॥ गुण-  
प्रधानार्थमिदं हि वाक्यं जिनस्य ते तद्द्विषतामप्ययम् । ततोऽ-  
भिवन्द्यं जगदीश्वराणां ममापि साधोरतव पादपद्मम् ॥ ४५ ॥

। इति सुर्वाधि.वनस्तोत्रम् ।

न शीतलाश्चन्दनचन्द्ररश्मयो न गांगमम्भो न चहारयष्टयः ।  
यथा मुनेरतेऽनघवाक्यरश्मयः शमाभ्युगर्भाः शिशिरा विपरिचतां  
॥ ४६ ॥ सुखाभिलाषानलदाहमूर्च्छितं मनो निजं ज्ञानमय.मृता-  
म्बुभिः । विदिध्यपरत्वं विषदाहमोहितं यथा भिषनुमन्त्रगुरोः  
स्वविग्रहं ॥४७॥ स्वजीविते कामसुखे च तृष्णया दिवा श्रमार्ता  
निशि शेरते प्रजाः । त्वमार्यं नक्तं दिवरुप्रमत्तवानजागरेवात्माव-  
शुद्धवर्त्मनि ॥४८॥ अपत्यवित्तोत्तरलोकतृष्णया तर्पास्वनः केचन  
कर्म कुर्वते । भवान्पुनर्जन्मजराजिहासया त्रयीं प्रवृत्तिं शमधीर-  
वारुणत् ॥४९॥ त्वमुत्तमज्योतिरजः क्व निवृतः क्व ते परे  
बुद्धिलवोद्भवक्षताः । ततः स्वनिःश्रयसभावनापरैर्बुधप्रबेक्षेजिन-  
शीतलेढ्यसे ॥५०॥

॥ इति शीतलचिन्स्तोत्रम् ॥

श्रेयान् जिनः श्रेयसि वर्त्मनीमाः श्रेयः प्रजाः शासदजेय-  
वाक्यः । भवांश्चकासे भुवनत्रयेऽस्मिन्नेको यथा वीतघनो विव-

स्वान् ॥ ११ ॥ विधिर्विषयप्रतिषेधरूपः प्रमाणमत्रान्यतरत्प्रधानम् ।  
 गुणोऽपरो मुख्यनियामहेतुर्जयः सदृष्टान्तसमर्थनस्ते ॥ २ ॥  
 विवक्षितो मुख्य इतीष्यतेऽन्यो गुणोऽविवक्षो न निरात्मकस्ते ।  
 तथारिमित्रानुभयादिशक्तिर्द्रव्यावधिः कार्यकरं हि वस्तु ॥ ५३ ॥  
 दृष्टान्तसिद्धावुभयोर्विवादे साध्यं प्राप्तुष्येन्न तु तादृगारत ।  
 यत्सर्वथैकान्तनियामदृष्टं त्वदायदादृष्टविभवत्तदशेषे ॥ ५४ ॥ एका-  
 न्तदृष्टिप्रतिषेधसिद्धिन्यायेषुभिर्मोहरिपुं निरस्य । असिस्म  
 कैवल्यविभूतसम्राट ततस्त्वमहंवासिमे रतवाहः ॥ ५५ ॥

॥ इति श्रीयाज्ञिकीस्तोत्रम् ॥

शिवासु पूज्योऽभ्युदयक्रियासु त्व वासुपूज्यस्त्रिदशेन्द्रपूज्यः ।  
 मयापि पूज्योऽल्पधिया मुनीन्द्र दीपार्चिषा किं तपनो न पूज्यः  
 ५६ ॥ न पूजयार्थस्त्रयि वीतरागे न निन्दया नाथ विवा-  
 न्तवैरे । तथापि ते पुण्यगुणस्मृतिर्नः पुनातु चित्तं दुरिता-  
 जनेभ्यः ॥ ५७ ॥ पूज्यं जिन त्वार्चयतो जनस्य सावधलेशो  
 बहुपुण्यराशो । दोषाय-नालं कणिका विषस्य न दूषिका शीत-  
 शिवाम्बुराशो ॥ ५८ ॥ यद्वस्तु बाह्यं गुणदोषसूतेर्निमित्तमभ्य-  
 न्तरमूलहेतोः । अर्घ्यात्मवृत्तस्य तदङ्गभूतमभ्यन्तरं केवलमप्यलं  
 ते ॥ ५९ ॥ बाह्ये तरोपाधिसमग्रतेयं कार्येषु ते द्रव्यगतः स्वभावः ।  
 नैवान्यथा मोक्षविधिश्च पुंसां तेनाभिवन्द्यस्त्वमृषिर्ब्रह्मन्तः ॥ ६० ॥

॥ इति ब्रह्मपूज्यस्तोत्रम् ॥

य एव नित्यदशिकादयो नया मिथोऽनपेक्षाः स्वपरप्रणा-



शिनः । त एव तत्त्वं विमलस्य ते मुनेः परस्परेष्वाः स्वपरोपकारिणाः ॥६१॥ अद्वैकशः कारकमर्षाद्भवे समीच्य शेषं स्वसहायधारकम् । तथैव सामान्यविशेषमातृका नयास्तवेष्टा गुणगुण्यकल्पतः ॥६२॥ परस्परेष्वान्वयभेदलिङ्गतः प्रसिद्धसानान्यविशेषयोस्तव । समग्रतास्ति स्वपराभासकं यथा प्रमाणं भुवि बुद्धिलक्षणम् ॥६३॥ विशेषवाच्यस्य विशेषणं वचो यतो विशेष्यं विनियम्यते च यत् । तयोश्च सामान्यमतिप्रसज्यते विवक्षितात्स्यादिति तेऽन्यवर्जनम् ॥६४॥ नयास्तव स्यात्पदसत्यलाञ्छिता रसोपविद्धा इव लोहघातवः । भवन्त्यभिप्रेतगुणा यतस्ततो भवन्तमार्याः प्रख्यता हितैषिणः ॥६५॥

॥ इति विमलावनस्तोत्रम् ॥

अनन्तदोषाशयविग्रहो ग्रहो विषङ्गवान्मोहमयश्चिरं हृदि । यतो जितस्तत्त्वरुचौ प्रसीदता त्वया ततोऽभूर्भगवाननन्तजित् ॥६६॥ कषायनाम्नां द्विषतां प्रमाथिनामशेषयन्नाम भवानशेषवित् । विशेषणं मन्मथदुर्भेदाभयं समाधिभैषज्यगुणैर्व्येलीनयन् ॥६७॥ परिभ्रमाम्बुर्भयबीचिमालिनी त्वया स्वतृष्णासरिदायं शोषिता । असंगधर्मार्कगमस्ति तेजसा परं ततो निर्वृतिधाम तावकम् ॥६८॥ सुहृत्त्वयि भीष्मगत्वमश्नुते द्विषंस्त्वयि प्रत्ययवत्प्रलीयते । भवानुदासं प्रकृष्टस्तपोरपि प्रभो परं चित्रमिदं तवेहितम् ॥६९॥ त्वयीद्यशस्तच्छब्द इत्यर्थं मम प्रलापलेशोऽल्पमतेर्भू.मुने । अशेषमाहात्म्यमकीर्यत्वयि शिवाय, संस्पर्श इवामृताम्बुधेः ॥७०॥

॥ इत्तं नन्तस्त्रिन्स्तोत्रम् ॥

घर्मतीर्थमनघं प्रवर्त्तन् ६र्मा इत्यनुमतः सतां भवान् ।  
 कर्मकामदहत्तपोऽग्निभिः शर्म शाश्वतमवाव इङ्करः ॥७१॥  
 देवमानवनिष्कायसत्तौ रेडिषे परिवृतो वृतो बुधैः । नारकापरि-  
 वृतोऽर्तिपुष्कलो व्योमर्नव शशलाञ्छनोऽमलः ॥७२॥ प्रातिहार्य-  
 विभवेः परिष्कृतो देहतोऽपि विरतो भवानमूत् । मोक्षमार्ग-  
 मशिष्यभारामरात्रापि शासनफलैषणातुरः ॥७३॥ कायवाक्य-  
 मनसां प्रवृत्तयो नाऽमवस्तव मुनेरि-कीर्षया । नासमीक्ष्य भवतः  
 प्रवृत्तयो धीर तावकमचिन्त्यमोहितम् ॥७४॥ मालुर्षीं प्रकृति-  
 मभ्यतीतवान् देवतास्वपि च देवता यतः । तेन नाथ परमासि  
 देवता भ्रयेसे जिनवृष प्रसीद नः ॥७५॥

॥ इत्तं घर्मविन्स्तोत्रम् ॥

विधाव रक्षां परितः प्रजानां राजा चिरं योऽप्रतिमप्रतापः ।  
 व्यधात्पुग्स्तात्स्वत एव शांतिम् निदंयामूर्तिरिवावशान्तिम् ॥७६॥  
 चक्रेण यः शत्रुभयंकरेण जित्वा नृषः सर्वनरेन्द्रचक्रम् । समाधि-  
 चक्रेण पुनर्जिगाय महोदयो दुर्जयमोहचक्रम् ॥७७॥ राजभिया  
 राजसु राजसिंहो राजा यो राजसुभोगतन्त्रः । भार्हन्त्यलक्ष्म्या  
 पुनरात्मतन्त्रो देवासुरोदारसमे रराज ॥७८॥ यस्मिन्बभूवद्राजनि  
 राजचक्रं मुनी द्यादीनि सिद्धं चक्रम् । पूज्ये शुकुः प्राजलि  
 देवचक्रं ध्यानोन्मुखे षंलि कृतप्रत्यचक्रम् ॥७९॥ स्वकीयसाम्प्र-  
 दिहितस्यगान्तिः शान्तेर्विधाता शहरं मवानुभूत् । भूकान्दुनकपलेषु-

भयोपशान्त्यै शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः ॥८०॥

॥ इति शान्तिर्जिनस्तोत्रम् ॥

कुन्धु भृत्यखिलसत्त्वदयैकतानः कुन्धुर्जिनो ज्वरजराभरणोप-  
शान्त्यै । त्वं धर्मचक्रमिह वर्चयसि स्म भूयै भूत्वा पुरा क्षिति-  
पत्नीश्वरचक्रपाणिः ॥८१॥ तृणार्चिवः परिदहन्ति न शान्तिरामा-  
क्षिप्टेन्द्रधार्थविभवैः परिवृद्धिरेव । स्थित्यैव कायपरितापहरं  
निमित्तमित्यात्मवान्विषयसौख्यपराङ्मुखोऽभूत् ॥ ८२ ॥ बाह्यं  
तपः परमदुश्चरमाचरंस्त्वमाध्यात्मिकस्य तपसः परिवृंहणार्थम् ।  
ध्यानं निरस्य क्लृप्तद्वयमुत्तरेऽस्मिन् ध्यानद्वये वृत्तिषेऽतिशयो-  
पपन्न ॥८३॥ हुत्वा स्वकर्मकटुकप्रकृतीश्चतस्रो रत्नत्रयातिशय-  
तेजसि जातवीर्यः । विभ्राजिषे सकृत्तत्रेदविवेचिनेता व्यभ्रे यथा  
वियति दीप्तश्चिर्विभ्रवान् ॥८४॥ यस्मान्मुनीन्द्र तत्र लोकपिताम-  
हाद्या विद्याविभूतिकंशिकामपि नाप्नुवन्ति । तस्माद्भवन्तमजमप्र-  
तिमेयमार्याः स्तुत्यं स्तुवन्ति सुधियः सद्भितैकतानाः ॥ ८५ ॥

॥ इति कुन्धुर्जिनस्तोत्रम् ॥

गुणस्तोकं सदुद्ब्रंध्य तद्बहुत्ववशां स्तुतिः । ज्ञानन्त्यात्ते गुणा  
वक्तुमशक्यास्त्रयि सा कथम् ॥ ८६ ॥ तथापि ते मुनीन्द्रस्य  
यतो नामापि कीर्तितम् । पुनाति पुण्यकौर्तेर्नस्ततो ब्रूयाम  
किञ्चिन् ॥ ८७ ॥ लक्ष्मीविभवसर्वस्वं मुमुक्षोश्चक्रलाङ्कनम् ।  
साम्राज्यं सार्वभौमं ते जरत् क्षमिवाभवत् ॥ ८८ ॥ तव रूपस्य  
सौन्दर्यं दृष्ट्वा तृप्तेमनापिवान् । इत्यकः शक्रः सहस्रसो बभूव

बहुविस्मयः ॥ ८६ ॥ मोहरूपो रिपुः पापः कृपायभटसाधनः ।  
 दृष्टिसम्पदुपेक्षास्त्रैस्त्वया धीर पराजितः ॥ ८७ ॥ कन्दर्पस्योद्गरो  
 दपस्त्रैर्लोक्ष्यविजयार्जितः । ह्येपयामास तं धीरे त्वयि प्रतिहतोदयः  
 ॥ ८८ ॥ आयत्यां च तदात्वे च दुःखयोनिर्निरुत्तरा । तृष्णा नदी  
 त्वयोत्तीर्णा विधानावा विविक्त्वा ॥ ८९ ॥ अन्तकः क्रन्दको  
 नृणां जन्मज्वरभक्ता सदा । त्वामन्तकान्तकं प्राप्य व्याहृतः  
 कामकारतः । ९० ॥ भूषावेषायुधत्यागि विधादमदयापरम् ।  
 रूपमेव तवाचष्टे धीरदोषविनेग्रहम् ॥ ९१ ॥ समन्ततोऽङ्गभासां  
 ते परवेषेण भूयसा । तमो बाह्यमपाकीर्णमध्यात्मध्यानतेजसा  
 ॥ ९२ ॥ सर्गज्ञयोतिषोद्भूतस्तावको महिमोदयः । वं न कुर्यात्  
 प्रथमं ते सत्त्वं नाथ सचेतनम् ॥ ९३ ॥ तव वागमृतं श्रीमत्सर्ग-  
 भाषास्वभावकम् । प्रथीयत्यमृतं यद्वत् प्राणिनो व्यापि संसदि  
 ॥ ९४ ॥ अनेकान्तरमदृष्टिस्ते सतां शूयो विपर्ययः । ततः  
 सर्वं मृधोक्तं स्यात्तदयुक्तं स्वघाततः ॥ ९५ ॥ ये परस्त्व-  
 लितांनिद्राः स्वर्दोषेभनिमीलिनः । तपस्विनस्ते किं कुपु रपात्रं  
 त्वन्मत्प्रियः ॥ ९६ ॥ ते तं स्वघातिनं दोषं शमी-  
 क्तुं मनीश्वराः । त्वद्द्वेषः स्वहनो बालास्तत्रावन्नव्यतां  
 श्रिताः ॥ १०० ॥ सदेकनित्यवक्त्रव्यास्तद्विपक्षाश्च ये नयाः ।  
 सर्गथेति प्रदुष्यन्ति पुष्यन्ति स्मादितीहिते ॥ १०१ ॥ सर्ग्या  
 नियमत्यागी यथादृष्टमपेक्षकः । स्याच्छब्दस्तावके न्याये नान्ये-  
 षामात्मविदिषात् ॥ १०२ ॥ अनेकान्तोऽप्यनेकान्तः प्रमाथ-

नयसाधनः । अनेकान्तः प्रमाणात् तदेकान्ताऽपि नान्नायात् ॥ १०३ ॥  
इति निरुपमयुक्तिशासनः प्रियहितयोगगुणानुशासनः । अरजिन-  
दमतीर्थनायकस्त्वमिव सतां प्रतिबोधनायकः ॥ १०४ ॥ मनि-  
गुणविभवानुरूपतस्तस्यै वरदागमदृष्टिरूपतः । गुणकृशमपि  
किञ्चिजोदितं मम भवताद्दुरिताशनोदितम् ॥ १०५ ॥

। इत्यरजिनस्तोत्रम् ।

यस्य महर्षेः सकलपदार्थप्रत्यवसाधः समजनि साक्षात् ।  
सामरमर्ष्यां जगदपि सर्वं प्राञ्जलि भूत्वा प्रक्षिपतति स्म ॥ १०६ ॥  
यस्य च मूर्तिः कनकमयाव स्वस्फुरदामाकृतपरिवेषण । वाग्वापि  
तत्रं कथयितुकामा भ्याः पदपूर्वा रमयति साधुः ॥ १०७ ॥ यस्य  
पुरस्ताद्विगलितमाना न प्रतितीर्थ्या भुवि विवदन्ते । मूरपि  
रम्या प्रतिपदमार्सः ज्जातविकोशाः बुज्जुहासा ॥ १०८ ॥ यस्य  
समन्ताज्जिन्नशिशिरांशाः शिष्यकसाधुग्रहत्रिमत्रोऽभून् । तार्थमपि  
स्वं जननसमुद्रत्रामितसम्पन्नोत्तरख्यशोऽग्रम् ॥ १०९ ॥ यस्य च  
शुकं परमतपाऽग्निर्ध्यानमनःतंदुरितमघादीत् । तं जिनसिंहं कृत-  
करणीयं मल्लिमशान्यं शरणागिताऽस्मि ॥ ११० ॥

॥ इति म रजिनस्तोत्रम् ॥

अधिगतमुनिमुत्तस्थितिमु निवृत्तभो मुनिसुहृतोऽनघः । मुनि-  
परिपदि निर्गमो भवानुपुपरिचीतसोमवत् ॥ १११ ॥ परि-  
खतशिक्षिकपठारागया कृतमदनिग्रहविग्रहाभया । तत्र जिन तपसः  
प्रसूतया ग्रहपरिवेषरूपेण शोभतम् ॥ ११२ ॥ शीशुलीचक्षुच-

शुक्ललोहितं सुरभितरं विरजो निर्जं वपुः । तत्र शिवमतिविस्मयं  
यते यदपि च वाङ्मनसोऽयमोहितम् ॥ ११३ ॥ स्थितिजनन-  
निरोधतद्वर्णं चरमचरं च जगत्प्रतिबन्धम् । इति जिनसकलश-  
लाञ्छनं वचनमिदं वदतां वरस्य ते ॥ ११४ ॥ दुरितमलकल-  
कमष्टकं निरुपमयोगवलेन निर्दहन् । अभवदभयसोख्यवान्  
भवान् भवतु ममापि भवोपशान्तये ॥ ११५ ॥

॥ इति मुनिमुत्तजिनस्तोत्रम् ॥

स्तुतिः स्तोतुः साधोः कुशलपरिणामाय स तदा । भवेन्मा वा  
स्तुत्यः फलमपि ततस्तस्य च सतः किमेवं स्वाधीनाज्जगति  
सुलभे भ्रायसपथे । स्तुत्यान्वा विद्वान्सततमभिपूज्यं नमि-  
जिनम् ॥ ११६ ॥ त्वया धीमन् ब्रह्मप्रणिधिमनसा जन्मनिगलं ।  
समूलं निर्मिञ्चं त्वमसि विदुषां मोक्षपदवी ॥ त्वयि ज्ञानज्योति-  
र्विभङ्गकिरणमिति भगव- । अभूवन् सद्योता इव शुचिरिवावन्य-  
मतयः ॥ ११७ ॥ विषेयं वार्यं चानुभयमुभयं मिथमपि तत् ।  
विशेषैः प्रत्येकं नियमविषयैश्चापरिमितैः ॥ सदान्योन्यापेक्षैः  
सकलभुवनज्येष्ठगुरुणा । त्वया गीतं तत्त्वं बहुनयविवक्षतरवशात्  
॥ ११८ ॥ अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमं । न सा  
तत्रारम्भोस्त्यगुरपि च यत्राभमविधौ ॥ ततस्तत्सिद्धयर्थं परमक-  
रुणो ग्रन्थमुभयं । भवानेवात्वाचीञ्च च विकृतवेषोपधिरतः ॥ ११९ ॥  
वपुर्भूषणेष्वप्यवधिरहितं शान्तिकरुणं । यतस्ते संक्षेपे म्परशरविवा-  
तकविजयम् ॥ विना भीमैः शस्त्रैरद्यद्दयामर्षविलयं । ततस्त्वं

निर्मोहः शरणांसि नः शान्तिनिलयः ॥ १२० ॥

॥ इति निर्माञ्जनस्तोत्रम् ॥

भगवानृषिः परमयोगदहनहुतकल्पवेन्धनम् । ज्ञानविषुल-  
किरणैः सकलं प्रतिबुध्य बुद्धः कमलायतेक्षणः ॥ १२१ ॥ हरि-  
र्षकैतुरनवद्यविनयदमतीर्थनायकः । शीलजलधिरभवो विभव-  
स्त्वमरिष्ठनेमिजिनकुञ्जरोऽजरः ॥ १२२ ॥ त्रिदशेन्द्रमोलिमणि-  
रत्नकिरणविसरोपचुस्वितम् । पादयुगलममलं भवतो विकसत्-  
कुशेशयदलारुणोदरम् ॥ १२३ ॥ नखचन्द्ररश्मिकवचातिरुचिर-  
शिखराङ्गुलिस्थलम् । स्वार्थनियतमनसः सुधियः प्रणमन्ति  
मन्त्रमूखरा महर्षयः ॥ १२४ ॥ द्युतिमद्रथाङ्गरविबिम्बकिरण-  
जटिलांशुमण्डलः । नीलजलदज्जराशिवपुः सहबन्धुभिर्गुरुके-  
तुरीश्वरः ॥ १२५ ॥ हलभृच्च ते स्वजनमक्रिमुदितहृदयौ जनेश्वरौ ।  
धर्मविनयरसिकौ सुतरां चरणरविन्द्रयुगलं प्रणोमतुः ॥ १२६ ॥  
ककुदं भुवः खचरयोषिदुषितशिखरैरलंकृतः । मेघपटलपरिवीत-  
तटस्तव लक्ष्यानि लिखितानि वज्रिणा ॥ १२७ ॥ बहतीति  
तीर्थमृषिमिथ्व सततमभिगम्यतेऽद्य च । प्रीतिविततहृदयैः  
परितो भृशमूर्ज्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः ॥ १२८ ॥ बहिरन्तर-  
प्युभयथा च करणमविधाति नार्थं कृत् । नाथ युगपदाखिलं च  
सदा त्वमिदं तलामलकबद्विवेदिथ ॥ १२९ ॥ अत एव ते बुव-  
नुतस्य चरितगुणमद्भुतोदयम् । न्यायविहितमवधार्य जिने  
त्वयि सुप्रसन्नमनसः स्थिता वर्यं ॥ १३० ॥

५ इत्याद्यन माचनस्तोत्रम् ॥

तमालनीलैः सधनुस्तडिद्गुणै प्रकीर्णमीमाशनिवायुवृष्टिभिः ।  
 वलाहकवैरिवशैरुपद्रुतो महामना यो न च्चाल योगतः ॥१३१॥  
 बृहत्फलामण्डलमण्डपेन यं स्फुरत्तडित्पिङ्गरुचोपसर्गिणम् । शुगू  
 नागो धरशो धराधरं विरागसन्ध्यातडिदम्बुदो बधा ॥ १३२ ॥  
 स्वयोगनिस्त्रिशनिशातधारया निशात्य यो दुर्जयमोहविद्विषम् ।  
 अवापदाहन्त्यमचित्यममद्भुतं त्रिलोकपूजातिशयास्वद पदम्  
 ॥१३३॥ यमाश्वरं वीच्य विधूतकम्भव तपोधनास्तेऽपि तथा  
 युभूषवः । वनोकसः स्वभ्रमवन्ध्यबुद्धयः शमोपदेशं शरर्ण  
 प्रपोदरे ॥ १३४ ॥ स सत्यविद्यातपसां प्रणायकः समग्रधीरुग्र-  
 कुलाम्बराशुमान् । मया सदा पाश्वजिनः प्रणम्यत्वे । विलीन-  
 मिध्यापथदृष्टिर्विभ्रमः ॥ १३५ ॥

॥ -ति पाश्वजिनस्तोत्रम् ॥

कीर्त्या भुवि भासि तथा वीर त्व गुणसमुच्छ्रया भासितया ।  
 भासोद्भुसभासितया सोम इव व्योम्नि कुन्दशोभासतया ॥१३६॥  
 तव जिन शासनविभवो जयति कलावपि गुणात्तुशासनविभवः ।  
 दोषकशासनविभवः स्तुवति चैनं प्रभाकृशासनविभवः ॥१३७॥  
 अनवद्यः स्याद्वादस्तव दृष्टेष्टाविरोधतः स्याद्वादः । इतरो न  
 स्याद्वादो सद्वितयविरोधान्धुनीश्वराऽस्याद्वादः ॥१३८॥ त्वमसि  
 सुरासुरमहितो ग्रन्थिकसम्भाशयप्रणामामहितः । लोकप्रवपरम-  
 हितोऽनावरणज्योतिरुज्ज्वलधामहितः ॥ १३९ ॥ सम्यानामभिरु-



चित्तं दधासि मुखमूर्ध्नि भिया चारुचितम् । मग्नं स्वस्यां रुचिरे  
 जयसि च मृगलाञ्छनं स्वकान्त्या रुचितम् ॥१४०॥ त्वं नि  
 मतमदमायस्तव भावानां मुमुक्षुकामदमायः । अये यान् श्रीमदमाय-  
 स्त्वया समादेशि सप्रयामदमायः ॥१४१॥ गिरिभिन्यवदान-  
 वतः श्रीमत इष दन्तिनः स्रवदानवतः । तव शमवादानवतो मतः  
 मूर्जितमपगतप्रमादानवतः ॥ १४२ ॥

बहुगुणसंपदसकलं परमतर्माप मधुरवचनविन्याससकलम् ।  
 नयभक्त्यवर्तसकलं तव देव मतं समन्तभद्रं सकलम् ॥१४३॥

। इति श्रीगजिनस्तोत्रम् ।

यो निःशेषजिनोक्तचमविषयः अंगीतमाद्यैः कृतः । सूक्ताधैरुदलैः स्तवो-  
 य मसमः स्वहृदः प्रसन्नैः पदैः ॥ तयास्वदानमदो यथा ह्यदगतः किञ्चिन्नृत्त  
 लेशतः । स्पेशाच्च द्रष्टृदाकरावधि बुधग्रहश्चेतस्वलयम् ॥ १४४ ॥

॥ इति बृहत्संहितासूक्तं च समाप्तम् ॥

श्रीसमः तद्भद्रवार्मिविरचिता

२ आप्तमीमांसा ।

देवागमनभोयानचामरादिविभूतयः । मायाविष्वपि दृश्यन्ते  
 नातस्त्वमसि नो महान् ॥ १ ॥ अध्यात्मं बहिरप्येष विग्रहादि-  
 महोदयः । दिव्यः सत्यो दिवोकस्त्वप्यस्ति रागादिमत्सु सः ॥२॥  
 तीर्थकृत्समयानां च परस्परविरोधतः । सर्वेषामाप्तता नास्ति कश्चिदेव  
 भवेद्गुरुः ॥ ३ ॥ दोषावरणयोर्हानिर्निःशेषाऽस्त्यतिशयनात् ।

कचिद्यथा स्वहेतुभ्यो वहिरन्तर्गलक्षयः ॥४॥ सूक्ष्मान्तरितदूरार्थाः  
 प्रत्यक्षाः कस्यचिद्यथा । अनुमेयत्वतोऽन्त्यादिरिति । सवज्ञ-  
 संस्थितिः ॥ ५ ॥ स त्वमेवानि निर्दोषो यक्तिशास्त्राविरोधिवाक् ।  
 अविरोधी यदिष्टं ते प्रसिद्धेन न बाध्यते । ६ ॥ त्वन्मतामृत-  
 वाह्यानां सर्वथैकान्तवादिनाम् । आप्ताभिमानदग्धानां स्वेष्टं दृष्टे न  
 बाध्यते ॥ ७ ॥ कुशलाकुशलं कर्म परलोकश्च न क्वचित् ।  
 एकान्तग्रहरक्तेषु नाथ स्वपरवैरिषु ॥ ८ ॥ भवैकान्ते पदानाम-  
 भावानामपह्नुवात् । सर्वात्मकमनाद्यन्तमस्वरूपमतावकम् ॥ ९ ॥  
 कार्यद्रव्यमनादि स्यात्प्रागभवस्य निह्ववे । प्रध्वंसस्य च धर्मस्य  
 प्रच्यवेऽनन्ततां ब्रजेत् १० ॥ सर्वात्मक तदेकं स्यादन्त्यापोह-  
 व्यतिक्रमे । अन्यत्र समवायेन व्यपदिश्येत सवथा ॥ ११ ॥  
 अभावेकान्तपक्षेऽपि भवापह्नुवादिनाम् । बाधवाक्य प्रमाणं न  
 केन साधनदूषणम् ॥ १२ ॥ विरोधात्तोभयैकान्तम्यं स्याद्वादन्याय  
 विद्विषाम् । अवाच्यतैकान्तेऽप्युक्तिर्नावाच्यमांत युज्यते ॥ १३ ॥  
 कथञ्चित् सदेवेष्टं कथञ्चिदसदेव तत् । तयोर्भेदमवाच्यं च  
 नययोगान्न सर्वथा ॥ १४ ॥ सदेव सर्वं क्व ने छेत् स्वरूपादि-  
 चतुष्टयात् । असदेव विपर्यासान्न चेन्न व्यर्वात्तुष्टे ॥ १५ ॥  
 क्रमार्पितद्वयाद् द्वैतं सहावाच्यमशक्तितः । अवक्लव्योतराः  
 शेषास्त्रयो भङ्गाः स्वहेतुतः ॥ १६ ॥ अस्तित्वं प्रतिषेधेनाविना-  
 भाव्येकधर्मिणि । विशेषणत्वात्साधर्म्यं यथा भेदविवक्षया ॥ ७ ॥  
 नास्तित्वं प्रतिषेधेनाविनाभाव्येकधर्मिणि । विशेषणत्वाद्द्वैधर्म्यं

यथाऽभेदविवक्षया ॥ १८ ॥ विधेयप्रतिषेध्यात्मा विशेष्यः शब्द-  
 गोचरः । साध्यधर्मो यथा हेतुरहेतुश्चाप्यपेक्षया ॥ १९ ॥  
 शेषभङ्गाश्च नेतव्या यथोक्तनययोगतः । न च कश्चिद्विरोधोऽस्ति  
 मुनीन्द्र तव शासने ॥ २० ॥ एवं विविनिषेधाभ्यामनवस्थित-  
 मर्थकृत् । नेति चेन्न यथाकार्यं बहिरन्तरुपाधिभिः । २१ ॥  
 धर्मे धर्मेऽन्य एवार्थो धर्मिणोऽनन्तधर्मणः । अङ्गित्वेऽन्यतमान्तस्य  
 शेषान्तानां तदङ्गता ॥ २२ ॥ एकानेकविकल्पादावुत्तरत्रोऽपि  
 योजयेत् । प्रक्रियां भङ्गिनीमेनां नयैर्नयविशारदः ॥ २३ ॥  
 अद्वैतकांतपक्षेऽपि दृष्टो भेदो विरुध्यते । कारकाणां क्रियायाश्च  
 नैकं स्वस्मात्प्रजायते ॥ २४ ॥ कर्मद्वैतं फलद्वैतं लोकद्वैतं च  
 नो भवेत् । त्रिधाऽवद्याद्वयं न स्यात् बन्धमोक्षद्वयं तथा ॥ २५ ॥  
 हेतोरद्वैतसिद्धिश्च द्द्वैतं स्याद्वेतुसाध्ययोः । हेतुना चेद्विना  
 सिद्धिद्वैतं वाङ्मात्रतो न किम् ॥ २६ ॥ अद्वैतं न विना  
 द्वैतादहेतुरिव हेतुना । सञ्ज्ञिनः प्रतिषेधो न प्रतिषेध्यादृते क्वचित्  
 ॥ २७ ॥ पृथक्त्वैकान्तपक्षेऽपि पृथक्त्वादपृथक्कृतौ ।  
 पृथक्त्वे न पृथक्त्वं स्यादनेकस्थो ह्यसौ गुणः ॥ २८ ॥  
 सन्तानः समुदायश्च साधर्म्यं च निरङ्कुशः । प्रेत्यभावश्च तत्सर्वं  
 न स्यादेकत्वनिह्वये २९ ॥ सदात्मनो च भिन्नं चेत् ज्ञानं  
 ज्ञेयाद्द्विधाऽप्यसत् । ज्ञानाभावे कथं ज्ञेयं बहिरन्तश्च ते द्विषाम्  
 ॥ ३० ॥ सामान्यार्था गिरोऽन्येषां विशेषो नाभिलष्यते ।  
 मामान्याभावतस्तेषां मृषैव सकला गिरः ॥ ३१ ॥ विरोधाच्चो-

भयैकात्म्यं स्याद्वादन्यायविद्विषाम् । अवाच्यतैकान्तेऽप्युक्तिर्न-  
 चाच्यमिति युज्यते ॥३२॥ अनपेक्षे पृथक्त्वैक्ये ह्यवस्तुद्वयहेतुतः ।  
 तदेवैक्यं पृथक्त्वं च स्वमेदः साधनं यथा ॥ ३३ ॥ सत्सामा-  
 न्यात्तु सदैक्यं पृथक् द्रव्यादिभेदतः । भेदाभेदविवक्षायाममा-  
 धारणहेतुवत् ॥ ३४ ॥ त्रिवदा चात्रिवदा च विशेष्येऽनन्तधर्मिणि ।  
 सतो विशेषणस्यात्र नासतस्तैस्तदर्थिभिः ॥ ३५ ॥ प्रमाणगोचरौ  
 सन्तौ भेदाभेदौ न संबुती । तावेकत्रात्रिरुद्धौ ते गुणमुख्यविवक्षया  
 ॥ ३६ ॥ नित्यत्वैकान्तपक्षेऽपि विक्रिया नोपपद्यते । प्रागेव  
 कारकाभावः क प्रमाणं क तत्फलम् ॥३७॥ प्रमाणकारकैव्यंक्तं  
 व्यक्तं चेदिन्द्रियार्थवत् । ते च नित्ये विकार्यं किं साधीस्ते  
 शासनावृद्धिः ॥ ३८ ॥ यदि सत्सर्वथा कार्यं पृथक्त्वोत्पत्तु  
 महति । परिणामप्रवृत्तिश्च नित्यत्वैकान्तवाधिर्ना ॥ ३९ ॥  
 पुण्यपापक्रिया न स्यात् प्रेत्यभावः फलं कुतः । बन्धमोक्षौ च  
 तेषां न येषां त्वं नासि नायकः ॥ ४० ॥ क्षणिकैकान्तपक्षेऽपि  
 प्रेत्यभावाद्यसंभवः । प्रत्यभिज्ञाद्यभावान्न कार्यारम्भः कुतः  
 फलम् ॥ ४१ ॥ यद्यसत्सर्वथा कार्यं तन्माजनि स्वपुण्यवत्  
 मोपादाननियामोभून्माऽऽश्वासः कार्येऽन्मनि ॥ ४२ ॥ न हेतु-  
 फलभावादिरन्यभावादनन्वयात् । सन्तानन्तरवन्नैकः सन्तानन्तर  
 इतः पृथक् ॥ ४३ ॥ अन्येऽनन्यशब्दोऽयं संबृतिर्न मृषा कथम् ।  
 मुख्यार्थः संबृतिर्नास्ति विना मुख्यान्न संबृतिः ॥ ४४ ॥  
 चतुष्कोटैर्विकल्पस्य सन्तिपूर्वयोगतः [। तत्रान्यतामवाच्यं च

तयोः सन्तानतद्वतोः ॥ ४५ ॥ अवक्तव्यचतुष्कोटिविकल्पाऽपि न  
 कथ्यताम् । असर्वान्तमवस्तु स्यादविशेष्यविशेषणम् ॥ ४६ ॥  
 द्रव्याद्यन्तरभावेन निषेधः सञ्ज्ञनः सतः । असद्भेदो न भावस्तु  
 स्थानं विधिनिषेधयोः ॥ ४७ ॥ अवभृत्वनभिलाप्यं स्यात्  
 सर्वात्तैः परिवर्जितम् । वस्त्वेवावस्तुतां याति प्रक्रियाया विषयं यात्  
 ॥ ४८ ॥ सर्वान्ताश्चेदव्यव्यास्तेषां किं वचनं पुनः । संवृतिश्चे-  
 न्मृषैवैषा परमार्थविषयं यात् ॥ ४९ ॥ अशक्यत्वादवाच्यं किम-  
 भावात्किमवोधतः । आद्यन्तोक्तिद्वयं न स्यात् किं व्याजेनोच्यतां  
 स्फुटम् ॥ ५० ॥ हिनस्त्यनभिसन्धात् न हिनस्त्यभिसन्दिग्धम् ।  
 बद्धात् तद्वापेतं चिचं बद्धं न मुच्यते ॥ ५१ ॥ अहेतुकत्वाच्चा-  
 शस्य हिसाहेतुर्न हिंसकः । चित्तमन्ततिनाशश्च मोक्षो नाष्टाङ्गहेतुकः  
 ॥ ५२ ॥ विरूपकार्यारम्भाय यदि हेतुसमागमः । आश्रयिभ्या  
 मनन्योऽसावविशेषादयुनवत् ॥ ५३ ॥ स्कन्धाः सन्ततयश्चैव  
 संवृतिःत्वादसंस्कृताः । स्थित्युत्पत्तिव्यास्तेषां न स्पुः खरविषाणवत्  
 ॥ ५४ ॥ विरोधाच्चाभयकात्म्यं स्याद्वादन्यायविद्विषाम् । अवा-  
 च्यतैकान्तेऽप्युक्तिनोवाच्यमिति युज्यते ॥ ५५ ॥ नित्यं तत्  
 प्रत्यभिज्ञानाच्चास्मात्तदविच्छिदा । क्षणिकं कालभेदात्ते बुद्धसञ्च-  
 रदोषतः ॥ ५६ ॥ न सामान्यात्मनोदेति न व्येति व्यक्तमन्वयात् ।  
 व्येत्युदेति विशेषात्ते सहैकत्रोदयादि सत् ॥ ५७ ॥ कार्योत्पादः  
 जयो हेतोर्नियमाल्लक्षणात्पृथक् । न तौ जात्याद्यवस्थानादनपेक्षाः  
 खपुष्पवत् ॥ ५८ ॥ घटमौलिसुवर्णार्थी नाशोत्पादस्थितिष्वयम् ।

शोकप्रमोदमाध्यस्थं जनो याति सहेतुश्च ॥ ५६ ॥ पयोव्रतो  
न दध्यत्ति न पयोऽत्ति दद्विव्रतः । अगोरसव्रतो नोभे तस्मा-  
त्तत्त्वं त्रयात्मकम् ॥ ६० ॥ कार्यकारणनानात्वं गुणगुण्यन्यता  
ऽपि च । सामान्यतद्वदन्यत्वं कैकान्तेन यदीष्यते । ६१ ॥  
एकस्यानेकवृत्तिर्न भागाभावाद्बहूनि वा । भागित्वाद्वाऽस्य नैकव  
दोषो वृत्तेरनाहते ॥ ६२ ॥ देशकालविशेषेऽपि स्याद्वृत्तिर्युत  
सिद्धवत् । समानदेशता न स्यात् मूर्त्तकारणकार्ययोः ॥ ६३ ॥  
आश्रयाश्रयिभावाच्च स्वातन्त्र्यं समवायिनाम् । इत्ययुक्तः स  
सम्बन्धो न युक्तः समवायिभिः ॥ ६४ ॥ सामान्यं समवायश्चा  
कैकत्र समाहितः । अन्तरेणाश्रयं न स्यान्नाशात्पादिषु को विधिः  
॥ ६५ ॥ सर्वथाऽनभिसम्बन्धः सानान्यसमवाययोः । ताभ्यामर्थो न  
सम्बद्धस्तानि त्रीणि खपुष्पवत् ६६ । अनन्यतैकान्तेऽणूनां रुक्मातेऽपि  
विभागवत् । असंहतत्वं स्याद्भूतचतुष्टयं भ्रान्तिरेवं सा ॥ ६७ ॥ काय-  
भ्रान्तेरेणुभ्रान्तः कादलिङ्गं हि कारणम् । उभयाभावतस्तत्स्थं  
गुणजातातरश्च ॥ ६८ ॥ एकत्वेऽन्यतराभावः शेषाभावोऽविनाशुवः ।  
द्वित्वसंख्याविरोधश्च संवृतिश्चेन्मृषैव सा ॥ ६९ ॥ विरोधाच्चो-  
कात्म्यं स्याद्वादन्यायविद्विषाम् ! अवाव्यतैकान्तेऽप्युक्तिर्नवाच्य-  
मिति युज्यते ॥ ७० ॥ द्रव्यपर्याययोरैक्यं तयोरव्यतिरेकतः ।  
परिणामविशेषाच्च शक्तिमच्छक्तिभावतः ॥ ७१ ॥ संज्ञासंख्या  
विशेषाच्च स्थलक्षणाविशेषतः । प्रयाजनादिभेदाच्च तन्नानात्वं न  
सर्वथा ॥ ७२ ॥ यद्यापेच्छिकसिद्धिः स्यात्त द्वयं व्यतिष्ठते ।

अनापेक्षिकसिद्धौ च न सामान्यविशेषता ॥ ७३ ॥ विरोधान्नो  
 मयैकात्म्यं स्याद्वादन्यायविद्विषाम् । अवाच्यतैकान्तेऽप्युक्तिर्नि-  
 वा यमिति युज्यते ॥ ७४ ॥ धर्मधर्म्यविनाभावः सिद्ध्यात्यन्यो  
 ऽप्यकीचया । न स्वरूपं स्वतो ह्येतत् कारकज्ञापकाङ्गवत् ॥ ७५ ॥  
 सिद्धं चेद्वेतुतः सर्वं न प्रत्यक्षादितो गतिः ।  
 सिद्धं चेदागमान्सर्वं विरुद्धान्यमतान्यपि ॥ ७६ ॥ विरोधान्नो-  
 मयैकात्म्यं स्याद्वादन्यायविद्विषाम् । अवाच्यतैकान्तेऽप्युक्तिर्नि-  
 वाच्यमिति युज्यते ॥ ७७ ॥ वक्ररं नाप्तं यद्धेतोः साध्यमाग-  
 मसाधितम् ॥ ७८ ॥ अन्तरङ्गार्थतैकान्ते बुद्धिवाक्यं मृषाऽसल्लम् ॥  
 प्रमाणाभासमेवातस्तत्प्रमाणादृते कथम् ॥ ७९ ॥ साध्यसाधन-  
 विज्ञप्तेर्यदि विज्ञप्तिमात्रता । न साध्यं च हेतुश्च प्रतिज्ञाहेतु  
 दोषतः ॥ ८० ॥ बहिरङ्गार्थतैकान्ते प्रमाणाभासनिहवात् ।  
 सर्वेषां कायसिद्धिः स्याद्विरुद्धान्याभिधायिनाम् ॥ ८१ ॥  
 विरोधान्नोमयैकात्म्यं स्याद्वादन्यायविद्विषाम् । अवाच्यतैकान्ते  
 ऽप्युक्तिर्निवाच्यमिति युज्यते ॥ ८२ ॥ भावप्रमेयापेक्षायां प्रमाणा  
 भासनिहवः । बहिःप्रमेयापेक्षायां प्रमाणं तन्निभं च ते ॥ ८३ ॥  
 जीवशब्दः सवाक्यार्थः संज्ञात्वाद्देतुशब्दवत् । मायादिभ्रान्ति  
 संज्ञाश्च मायाद्यैः स्वैः प्रयोक्तिवत् ॥ ८४ ॥ बुद्धिशब्दार्थसंज्ञा-  
 स्तास्तिस्रो बुद्धश्च दिवाचिकाः । तुल्या बुद्ध्यादिबोधाश्च त्रयस्तत्प्रति  
 विम्बकाः ॥ ८५ ॥ वक्तृभोतृप्रमातृणां वाक्यबोधप्रमाः पृथक् ।  
 भ्रान्तादेव प्रमाभ्रान्तौ वाक्यार्थो तादृशेतरौ ॥ ८६ ॥ बुद्धिशब्द-  
 प्रमात्वं वाक्यबोधप्रमाः पृथक् । सत्यान्तृत्वव्यवस्थैव युज्यतेऽर्था-

प्यनासिषु ॥ ८७ ॥ देवादेवाद्येसिद्धिरुषेर्देवं पौरुषतः कथम् ।  
 देवतश्चेदनिमोक्षः पौरुषं निष्फलं भवेत् ॥ ८८ ॥ पौरुषादेव  
 सिद्धिरुषेत् पौरुषं देवतः कथम् । पौरुषाच्चदेवमोक्षं स्वात् सर्व-  
 प्राणिषु पौरुषम् ॥ ८९ ॥ विरोधान्नोभयैकात्म्यं स्याद्वादन्याय  
 विद्विषाम् । अवाच्यतैकान्तेऽप्युक्तिर्नावाच्यमिति युज्यते ॥ ९० ॥  
 अबुद्धिपूर्वपिषायामिष्टानिष्टं स्वदेवतः । बुद्धिपूर्वव्यपेक्षायामिष्टानि-  
 ष्टं स्वपौरुषात् ॥ ९१ ॥ पापं ध्रुवं परे दुःखात्  
 पुण्यं च सुखतो यदि । अचेतनाकनापी च बध्वेयात्  
 निमित्ततः ॥ ९२ ॥ पुण्यं ध्रुवं स्वतो दुःखात्पापं च सुखतो  
 याद । वीतरागो मुनिर्विद्वांस्ताभ्यां युञ्ज्यान्नमित्ततः ॥ ९३ ॥  
 विरोधान्नोभयैकात्म्यं स्याद्वादन्यायावेद्विषाम् । अवाच्यतैकान्ते-  
 ऽप्युक्तिर्नावाच्यमिति युज्यते ॥ ९४ ॥ विशुद्धिसंस्लेशाङ्गं चेत्  
 स्वपरस्य सुखासुखम् । पुण्यपापस्यै युक्तौ न चेद्व्यर्थरतवार्हितः  
 ॥ ९५ ॥ अज्ञानाच्च ध्रुवो बन्धो ज्ञेयानन्त्यान्न केवलो । ज्ञान-  
 स्तोकादिमोक्षश्चेदज्ञानाद्बहुतोऽन्यथा ॥ ९६ ॥ विरोधान्नोभयै-  
 कात्म्यं स्याद्वादन्यायविद्विषाम् । अवाच्यतैकान्तेऽप्युक्तिर्नावाच्य-  
 मिति युज्यते ॥ ९७ ॥ अज्ञाना मोक्षतो बन्धो नाज्ञानाद्भोक्तमोक्षतः  
 ज्ञानस्तौकाच्च मोक्षः स्यादमोक्षान्नोहितोऽन्यथा ॥ ९८ ॥ कामा-  
 दिश्रमवभिदः कर्मबन्धात्कुर्यात्तः । तत्र कर्मस्वहेतुभ्यो बीजास्ते  
 शुद्धयशुद्धितः ॥ ९९ ॥ शुद्धशुद्धी पुनः शुद्धी ते पाप्मानान्क-  
 शक्तिवत् ॥ साधनादी तयोर्गच्छी स्वयामोऽतर्कमोक्षरः ॥१००॥  
 तच्चज्ञानं प्रमास्य तै युगपत्सर्वभासनम् । क्रमभावि च यज्ज्ञानं



न्याद्वादन्यसंस्कृतम् ॥ १०१ ॥ उपेक्षाफलमाद्यस्य शेषस्यादान-  
हानर्थाः । पूर्वं वाऽङ्गननाशो वा सर्वस्यास्य स्वगोचरे ॥ १०२ ॥  
वाक्येषुनेकान्तद्योतो गम्यम्प्रतिविशेषकः । स्यान्ननिषातोऽर्थयोगि-  
त्वात्तत्र केर्वालनामपि ॥ १०३ ॥ स्याद्वादः सर्वैकान्तःयोगात्कि-  
ञ्चिच्चिद्विधिः । सप्तमङ्गनयापेक्षो हेयादेयविशेषकः ॥ १०४ ॥  
स्याद्वादकेवलज्ञाने सर्वतत्त्वप्रकाशने । भेदः साक्षादशाब्दाच्च ह्यवस्त्वन्य-  
तमं भवेत् ॥ १०५ ॥ मध्यमैव साध्यस्य साध्यं द्भिः ।  
स्याद्वादप्रविभक्तार्थविशेषव्यञ्जको नयः ॥ १०६ ॥ नयोपनयै-  
कान्तानां त्रिकालानां सनुच्चयः । अविभ्राट् भावसम्बन्धो द्रव्य-  
मेकमनेकधा ॥ १०७ ॥ मिथ्यासमूहो मिथ्या चेन्न मिथ्यै-  
कान्तताऽस्ति नः । नरपेक्षा नया मिथ्या सापेक्षा वस्तु तेऽर्थ-  
कृत् ॥ १०८ ॥ नियम्यतेऽर्थो वाक्येन विधिना वारणेन वा ।  
तथाऽन्यथा च सोऽवश्यमविशेष्यत्वमन्यथा ॥ १०९ ॥ तदतद्वस्तु  
वागेषा तदेवेत्यनुशासति । न सत्या स्यान्मृषावाक्यैः कथं  
तत्त्वार्थदेशना ॥ ११० ॥ वाक्यस्वभावोऽन्यवागर्थप्रतिषेधनिरङ्कुशः ।  
आह च स्वार्थसामान्यं तादृग्वाच्यं खपुष्पवत् ॥ १११ ॥ सामान्य-  
वाविशेषे चेन्न शब्दायां मृषा हि सा । अमिप्रेतविशेषात्तेः  
स्यात्कारः सत्यलाञ्छनः ॥ ११२ ॥ विधेयमोप्सितार्थाङ्गं  
प्रतिषेध्याविराधि यत् । तथैवादेयहेयत्वमिति स्याद्वादसंस्थितिः  
॥ ११३ ॥ इतीयमाप्तमीमांसा विदिता द्वितमिच्छिता । सम्यङ्चित्त-  
ध्योपदेशार्थविशेषप्रतिपत्तये ॥ ११४ ॥ जयति जगति क्लेशा-

वेशप्रपञ्चहिर्माशुमान् बिहृतविषैकान्तध्वान्तप्रमाणनर्षाशुमान् ।  
यतिपतिरजो यस्योष्टृष्टान्महाम्बुनिघेर्लवान् स्वमतमतयस्तीर्थ्या  
नाना परे समुपासते ॥ ११५ ॥ इति श्री आसमीमांसा समाप्ता ॥

श्रीजिनसेनाचार्यकृतं

॥ श्रीजिनसहस्रनामस्तोत्रम् ॥

स्वर्यश्रुवे नमस्तुम्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि । स्वात्मनैव तथो-  
द्भूतवृत्तयेऽचित्यवृत्तये ॥ १ ॥ नमस्ते जगतां पत्ये लक्ष्मीभर्त्रे  
नमोऽस्तु ते । विदांबर नमस्तुम्यं नमस्ते बदतांबर ॥ २ ॥  
कामशत्रुहृक्षं देवमामनन्ति मनीषिणः । त्वामालुमः सुरेण्मौलि-  
भालाम्भर्चितविक्रमम् ॥ ३ ॥ ध्यानद्रुषणनिर्मिन्नघनघातिमहा-  
तरुः । अनन्तभवसन्तानजयादासीदनन्तजित् ॥ ४ ॥ त्रैलोक्य-  
निर्जयावःसद्दुर्दम्यमतिदुर्जयम् । मृत्युराजं विजित्यासीज्जन  
मृत्युञ्जयो भवान् ॥ ५ ॥ विधूताशेषसंसारबन्धनो मध्यर्षाधवः ।  
त्रिपुरारिस्त्वमेवासि जन्ममृत्युजरान्तकृत् ॥ ६ ॥ त्रिकाल-  
विषयाशेषतत्त्वमेदात्त्रिषोत्थितम् । केवलाख्यं दधन्नुस्त्रिनेत्रो-  
ऽसि त्वमीशितः ॥ ७ ॥ त्वामन्वकान्तकः प्राहुर्मोहान्वासुरमद-  
नात् । अद्भूते नारयो यस्मादर्चनारीश्वरोऽस्त्यतः ॥ ८ ॥ शिवः  
शिवपदाध्यासाद् दुरिताहरिहरो हरः । शंकर कृतर्षा लोके  
शंभवस्त्वं भवन्मुखे ॥ ९ ॥ वृषभोऽसि कमन्वैष्टः पुरुः पुरुगुणो-  
दयैः । नामेयो नामिसभूतेरिच्छाकुलनदनः ॥ १० ॥

त्वमेकः पुरुषस्कंधस्त्वं द्वे लोकस्य लोचने । त्वं त्रिधा बुद्ध-  
 सन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञानधारकः ॥ ११ ॥ चतुश्शरण्यमांगन्यमूर्तिस्त्वं  
 चतुरः सुधीः पञ्चब्रह्ममयो देव पावनस्त्वं पुनीहि माम् ॥ १२ ॥  
 स्वर्गावतरणे तुभ्यं सद्यो जातात्मने नमः । जन्माभिषेकवामाय  
 वामदेव नमोऽस्तु ते ॥ १३ ॥ सुनिःक्रान्तावधोराय पदं परम-  
 मीयुषे । केवलज्ञानसंसिद्धावीशानाय नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥  
 पुरस्तत्पुरुषत्वेन विष्णुक्लिपदभोगिने । नमस्तात्पुरुषावस्थां भाविनीं  
 तेऽद्य विभ्रते ॥ १५ ॥ ज्ञानावरणनिर्हासान्नमस्तेऽनन्तचक्षुषे ।  
 दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदृश्वने ॥ १६ ॥ नमो दर्शनमोहघ्ने  
 क्षायिकामलदृष्टये । नमश्चारित्रमोहघ्ने विरागाय महौजसे ॥ १७ ॥  
 नमस्तेऽनन्तवीर्याय नमोऽनन्तसुखात्मने । नमस्तेऽनन्तलोकाय  
 लोकालोकावलोकिने ॥ १८ ॥ नमस्तेऽनन्तदानाय नमस्तेऽनन्त-  
 लब्धये । नमस्तेऽनन्तभोगाय नमोऽनन्तोपभोगिने ॥ १९ ॥  
 नमः परमयोगाय नमस्तुभ्यमयोनये । नमः परमपूताय नमस्ते  
 परमर्षये ॥ २० ॥ नमः परमविधाय नमः परमतच्छिदे । नमः  
 परमतत्त्वाय नमस्तं परमात्मने ॥ २१ ॥ नमः परमरूपाय नमः  
 परमतेजसे । नमः परममार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥ २२ ॥ परम-  
 द्विजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः । नमः पारितमःप्राप्तवाम्ने  
 परतरात्मने ॥ २३ ॥ नमः क्षीणकलंकाय क्षीणबंध नमोऽस्तुते ।  
 नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ॥ २४ ॥ नमः सुगतये  
 तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे नमस्तेऽतीन्द्रियज्ञानसुखायानिन्द्रि-

यात्मने ॥ २५ ॥ कायबन्धननिर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते ।  
 नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ॥ २६ ॥ अवेदाय  
 नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः । नमः परमर्योगीन्द्रवन्दितांघ्रि-  
 द्वयाय ते ॥ २७ ॥ नमः परमविज्ञान नमः परमसंयत । नमः  
 परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ॥ २८ ॥ नमस्तुभ्यमलेस्याय  
 शुक्ल्लेशंशकम्पृशे । नभो भव्येतरावस्थाव्यतांताय विमोक्षिणे  
 ॥ २९ ॥ संश्यसंज्ञिद्वयावस्थाव्यतिरिक्तामलात्मने । नमस्ते  
 बीतसंज्ञाय नमः क्षायिकदृष्टये ॥ ३० ॥ अनाहाराय तृप्ताय  
 नमः परमभाजुषे । व्यतीताशेषदोषाय भवाब्धेः पाग्मोयुषे ॥ ३१ ॥  
 अजराय नमस्तुभ्यं नमस्ते स्तादजन्मने । अमृत्यवे नमस्तुभ्य-  
 मचलायाचरात्मने ॥ ३२ ॥ अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावका  
 गुणाः ॥ त्वां नामस्मृतिमात्रेण पर्युष्माभिसिषामहे ॥ ३३ ॥  
 एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः । पठेदष्टोत्तरं नाम्नां  
 सहस्रं पापशान्तये ॥ १ ॥

॥ इति पीठिका ॥

प्रसिद्धाष्टसहस्रं द्वालक्षणं त्वां गिरां पतिम् । नाम्नामष्टसहस्रेण  
 तोष्टु मोऽमीष्टसिद्धये ॥ १ ॥ श्रीमान्स्वर्यंभूवृषभः शमवः शंभु-  
 रात्मभूः । स्वर्यं प्रमः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरुनर्भवः ॥ २ ॥ विश्वात्मा  
 विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः । विश्वविद्विष्वविधेशो विश्व-  
 योनिरनश्वरः ॥ ३ ॥ विश्वदृश्या विश्वर्षाता विश्वेशो विश्व-  
 लोचनः । विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ॥ ४ ॥

विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिजिनेश्वरः । विश्वदग्निश्वभृतेऽथो  
 विश्वज्योतिरनीश्वरः ॥ ५ ॥ जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो  
 जगत्पतिः । अनन्तचिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरबन्धनः ॥ ६ ॥  
 युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्मण्यः शिवः । परः परतरः सूक्ष्मः  
 परमेष्ठो सनातनः ॥ ७ ॥ स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनि-  
 रयोनित्रः । मोहारिद्विजयो जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ॥ ८ ॥  
 प्रशान्तरिरनन्तात्मा योगी योगीश्वरार्चितः । ब्रह्मविद्ब्रह्मतत्वज्ञो  
 ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ॥ ९ ॥ शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्ध-  
 शासनः । सिद्धः सिद्धान्तविद्ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ॥ १० ॥  
 सहिष्णुरक्षुतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भक्तोद्भवः । प्रभूष्णुरजरोऽजयो  
 आजिष्णुधीश्वरोऽख्ययः ॥ ११ ॥ विभावसुं रसभूष्णुः स्वयंभूष्णुः  
 पुरातनः । परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ॥ १२ ॥

॥ इति श्रीमदार्याम ॥ १ ॥

दिव्यभाषातिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः । पूतात्मा परम-  
 ज्योतिर्धर्मार्घ्यज्ञो दमीश्वरः ॥ १ ॥ श्रीपतिर्भगवानहंश्वरजा विरजाः  
 शुचिः । तीर्थकृत्केवलीशानः पुजार्हः स्नातकोऽमलः ॥ २ ॥  
 अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुधः प्रजापतिः । मुक्तः शक्तो निरा-  
 वाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ॥ ३ ॥ निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तो-  
 क्तिर्निरामयः । अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्वांशुरक्षयः ॥ ४ ॥  
 अग्रणीर्गाम्भीर्नैता प्रखेता न्यायशास्त्रकृत् । शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो  
 धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ॥ ५ ॥ वृषभजोवृषाधीशो वृषकेतुवृषापुत्रः

वृषो वृषपतिर्मर्ता वृषभःकृो वृषोद्भवः ॥ ६ ॥ हिरण्यनामिभू तात्मा  
 भूतभृद्भूतमावनः । प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ॥ ७ ॥  
 हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रसूतविभवोद्भवः । स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा  
 भूतनाथो जगत्प्रभुः ॥ ८ ॥ सर्वादिः सबद्धक् सावैः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।  
 सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित्सर्वलोकजित् ॥ ९ ॥ सुगतिः सुभ्रुतः सुभ्रुक्  
 सुबाक्छरिर्बहुभ्रुतः । विश्रुतो विश्रुतःपादो विश्रुशीर्षः शुचिश्रवाः ॥ १० ॥  
 सहस्रशीर्षः चेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् । भूतभव्यभवद्भर्ता विश्रुविद्यामहेश्वरः ॥ ११ ॥

॥ इति दिव्यादिशतम् ॥

- स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः । स्थेष्ठो गरिष्ठो  
 वहिष्ठो श्रेष्ठो निष्ठो गरिष्ठगीः ॥ १ ॥ विश्वसृट् विश्वसृट् विश्वेट् विश्वसृट्  
 विश्वेट् विश्वसृट् विश्वनायकः । विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ॥ २ ॥  
 विभवो विभवो वीरो विशोको विजरो जरन् । विरागो विरतोऽसङ्गो विविक्तो वीतमत्सरः ॥ ३ ॥  
 विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः । वियोगो योगविद्विद्वान्विधाता सुविधिः सुधीः ॥ ४ ॥  
 शान्तिभाक् सलिलात्मकः । वायुमूर्तिरसङ्गात्मा वह्निमूर्तिरधर्मघृक ॥ ५ ॥  
 सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सुश्रामपूजितः । ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञाङ्गममूर्त हविः ॥ ६ ॥  
 व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निलोपो निर्मलोऽचलः । सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ॥ ७ ॥  
 मन्त्रविन्मन्त्रकुन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तगः । स्वतन्त्रस्तन्त्रकुत्स्वान्तः

कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ॥ ८ ॥ कृती कृताथः सत्कृत्यः कृतकृत्यः  
 कृतकृतुः । नित्यो मृत्युञ्जयोऽमृत्युरमृतात्माऽमृतोद्भवः ॥ ९ ॥  
 ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः । महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मे  
 महाब्रह्मपदेश्वरः ॥ १० ॥ सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।  
 प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुरोणपुरुषोत्तमः ॥ ११ ॥

१. इति स्थविष्ठादशतम् ॥ ३ ॥

महाशोकध्वजोऽशोकः कः स्रष्टा पद्मविष्टरः । पद्मेशः पद्म-  
 संभूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ॥ १ ॥ पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः  
 स्तुत्यः स्तुतीश्वरः । स्तवनाहो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ॥ २ ॥  
 गणाधिपो गणज्येष्ठो गणयः पुण्यो गणाग्रणीः । गुणाकरो  
 गुणांभोधिगुणज्ञो गुणनायकः ॥ ३ ॥ गुणाकरी गुणोच्छेदी  
 निगुणः पुण्यगीगुणः । शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्य-  
 नायकः ॥ ४ ॥ अगण्यः पुण्यधीर्गण्य पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।  
 धर्मरामो गुणग्रामः पुण्यापुण्यनिरोधकः ॥ ५ ॥ पापापेतो  
 विपापात्मा विपाप्मावीतकल्मषः । निर्द्वन्द्वो निर्मदः शांतो निर्मोहो  
 निरुपद्रवः ॥ ६ ॥ निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लवः ।  
 निष्कलको निरस्तैना निष्कृतांगो निराश्रयः ॥ ७ ॥ विशालो  
 विपुलज्योतरतुलोऽचित्त्वबैभवः । सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुभृत्सुन-  
 यतत्त्रवित् ॥ ८ ॥ एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिष्टुटः पतिः ।  
 र्घाशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतांतकः ॥ ९ ॥ पिता  
 पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः । त्राता भिषग्वरो वर्षो

वरदः परमः पुमान् । १० ॥ कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्बृषभः  
पुरुः । प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ॥ ११ ॥

॥ इति महाशोकध्वजादिशतम् ॥ ४ ॥

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षणयः शुभलक्षणः । निरक्षः प्रहरी-  
काक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ॥ १ ॥ सिद्धिदः सिद्धसंकल्पः  
सिद्धात्मा सिद्धसाधनः । बुद्धबोध्यो महाबोधिवन्द्यमानो  
महद्विकः ॥ २ ॥ वेदांगो वेदविद्वेद्यो जातरूपो विदांवरः ।  
वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ॥ ३ ॥ अनादिनिधनो  
व्यक्तो व्यक्तवान्व्यक्तशासनः । युमादिकृद्युगाधारो युगादिर्जग-  
दादिजः ॥ ४ ॥ अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽनीन्द्रिशब्-  
दकः । अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राचर्यो महेन्द्रमहितो महान् ॥ ५ ॥  
उद्भवः करणं कर्ता पारगो भवतारकः । अगाधो महानं गुह्यं  
पराध्यं परमेश्वरः ॥ ६ ॥ अनंतद्विरमेयद्विरचित्यद्विः समग्रघाः ।  
प्राग्रयः प्राग्रहरोऽभ्यग्रयः प्रत्यग्रोऽग्रयोऽग्रिमोऽग्रजः ॥ ७ ॥  
महातपा महातेजा महोदको महोदयः । महायशा महात्मा  
महासन्धो महाधृतिः ॥ ८ ॥ महाधैर्यो महावीर्यो महासंपन्नहा-  
बलः । महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महादयुतिः ॥ ९ ॥ महा-  
मतिर्महानीतिर्महाकातिर्महोदयः । महाप्राज्ञो महाभागो महानंदो  
महाकविः ॥ १० ॥ महामहा महाकीर्तिर्महाकांतिमहावपुः ।  
महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ॥ ११ ॥ महा-  
महपतिः प्राप्तमहाकल्याणपंचकः । महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो



महेश्वरः ॥ १२ ॥

॥ इति श्री वृक्षादिशतम् ॥ ५ ॥

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः । महादमो महाशीलो  
 मनायज्ञो महामखः ॥ १ ॥ महाव्रतपतिर्द्व्यो महाकांतिधरोऽ-  
 धिपः । महामैत्रीमयोऽमेयो महोपायो महोमयः ॥ २ ॥ महा-  
 कारुणिको मंता महामंत्रो महायतिः । महानादो महाघोषो  
 महेज्यो महसां पतिः ॥ ३ ॥ महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो  
 महेष्टवाक् । महात्मा महसां धाम महर्षिर्महितोदयः ॥ ४ ॥  
 महाङ्गेशाङ्कुशः शूरो महामृतपतिगुरुः महापराक्रमोऽनंतो  
 महाक्रोधरिष्यर्षशी ॥ ५ ॥ महाभवाब्धिसंतरी महामोहाद्रिसूदनः ।  
 महागुल्फाकरः चांतो महायोगीश्वरः शमी ॥ ६ ॥ महाध्यानपति-  
 ध्याता महाधर्मो महाव्रतः । महाकमारिहात्मज्ञो महादेवो  
 महेशिता ॥ ७ ॥ सर्वङ्गेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः । असंख्ये-  
 योऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकर ॥ ८ ॥ सर्वयोगीश्वरोऽचित्य  
 भ्रुतात्मा विष्टरभवा । दांतात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञान-  
 सवंगः ॥ ९ ॥ प्रधानमात्मा प्रकृति परमः परमोदयः । प्रक्षीण-  
 बंध कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ॥ १० ॥ प्रखवः प्रखयः प्राखः  
 प्राखदः प्रखतेश्वरः । प्रमार्थं प्रखिधिर्द्व्यो दक्षिणोऽध्वयुर्-  
 ध्वरः ॥ ११ ॥ आनंदो नंदनो नंदो बंधोऽनिघोऽभिनंदनः ।  
 कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिजयः ॥ १२ ॥

॥ इति महासुन्यादिशतम् ॥ ६ ॥

असंस्कृतः सुसंस्कारः प्राकृतो वै कृतांतकृत् । अंतकृत्कांतिगु  
 कांतश्चितामखिरभीष्टदः ॥ १ ॥ अजितो जितकामारिरमितोऽ-  
 मितशासनः । जितक्रोधो जितामित्रो जितक्रेशो जितांतकः ॥ २ ॥  
 जिनेंद्रः परमानंदो मुनींद्रो दुंदुभिस्वनः । महेंद्रवंद्यो योगींद्रो  
 यतींद्रो नाभिनंदनः ॥ ३ ॥ नामेयो नाभिजोऽजातः सुव्रतो  
 मनुकृत्तमः । अभेद्योऽनत्ययोऽनास्वानधिकोऽधिगुरुः सुगीः ॥ ४ ॥  
 सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराघर्षो निरुत्सुकः । विशिष्टः भिष्टशुक्  
 शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ॥ ५ ॥ क्षेमी क्षेमं करोऽच्चय्यः  
 क्षेत्रधर्मपतिः क्षमी । अग्राहो ज्ञाननिग्राहो ध्यानगम्यो  
 निरुत्तरः ॥ ६ ॥ सुकृतो धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।  
 श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ॥ ७ ॥ सस्थात्मा सत्यविज्ञानः  
 सत्यवाक्सत्यशासनः । सत्याशीः सत्यसंधानः सत्यः सत्यपरा-  
 यणः ॥ ८ ॥ स्थेयान्स्थवीयोन्नेदीयान्दवीयान्दूरदर्शनः । अणो  
 रणीयाननगुणुं कुराद्यो गरीयसाम् ॥ ९ ॥ सदायोगः सदाभोगः  
 सदावृत्तः सदाशिवः । सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः  
 ॥ १० ॥ सुषोषः सुमुखः सोम्यः सुखदः सुदितः सुहृत् । सुगुप्ता  
 गुप्तिभृद्गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ॥ ११ ॥

॥ इति असंस्कृतादिशतम् ॥ ७ ॥

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः । मनीषी धीषणो  
 धीमाञ्छेमुशीषो गिरांपतिः ॥ १ ॥ नैकरूपो नयस्तुंगो नैकात्मा  
 नकधर्मकृत् । अविज्ञेयोऽप्रवक्ष्यात्मा कुतश्चः कुतस्तपणः ॥ २ ॥ ज्ञान-

गर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः । पद्मगर्भो जगद्गर्भो  
हेमगर्भः सुदर्शनः ॥ ३ ॥ लक्ष्मीवांस्त्रिदशाऽध्यक्षो दृढायानन  
ईशिता । मनोहरो मनोज्ञांगो धीरो गर्भीरशासनः ॥ ४ ॥ धर्मयूषो  
दयायागो धर्मनेमिष्ठु नीश्वरः । धर्मचक्रायुषो देवः कर्महा धर्म-  
घोषणः ॥ ५ ॥ अमोघवागमोघाो निर्मलोऽमोघशासनः । सुरुषः  
सुभगस्त्यागी भमयज्ञः समाहितः ॥ ६ ॥ सुस्थितः स्वास्थ्य-  
भाक्स्वम्भो नीरजस्को निरुद्धवः । अलेपो निष्कलंकात्मा वीत-  
रागो गतस्पृहः ॥ ७ ॥ वश्येन्द्रियो वियुक्तात्मा निःसपत्नो  
जितेन्द्रियः । प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्भगलं मलहाऽनघः ॥ ८ ॥  
अनीदृगुपमाभूतो दिष्टिर्देवमगोचरः अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको  
नानैकतत्त्वदृक् ॥ ९ ॥ अध्यात्मगम्योऽगम्यात्मा योगविद्योगि-  
वन्दितः सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ॥ १० ॥ शंकरः  
शंवदो दान्तो दमी क्षांतिपरायणः । अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः  
परात्परः ॥ ११ ॥ त्रिजगद्ब्रह्मोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्भंगलोदयः ।  
त्रिजगत्पतिपूज्यांघ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ॥ १२ ॥

॥ इति बृहदादिशतम् ॥ ८ ॥

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः । सर्वलोकातिगः  
पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ॥ १ ॥ पुराणपुरुषः पूर्वः कृतपूर्वा ग-  
विस्तरः । आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ॥ २ ॥ युगमुख्यो  
युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः । कल्याणवर्षाः कल्याणः कल्पः  
कल्याणलक्षणः ॥ ३ ॥ कल्याणप्रकृतिर्दीप्तकल्याणात्मा विकल्पः ।

विकलकः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ॥ ४ ॥ देवदेवो जगन्नाथो  
जगद्गन्धुर्जगद्गद्गुः । जगद्द्वितीयो लोकज्ञः सर्गेशो जगद्गजः ॥ ५ ॥  
चराचरगुहर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः । सद्योजातः प्रकाशात्मा  
ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ॥ ६ ॥ आदित्यवर्णो भर्माभिः सुप्रभः कनक-  
प्रभः । सुवर्णवर्णो रुक्माभिः सूर्यकोटिसप्रभः ॥ ७ ॥ तपनीय-  
निमस्तुंगो वाताकर्म्मोऽनलप्रभः । संध्याभ्रवद्भूमामस्तप्तचामी-  
करप्रभः ॥ ८ ॥ निष्टकनकच्छायः कनकशब्दनसन्निभः । हिरण्य-  
वर्णः स्वर्णभिः शातकुम्भनिमप्रभः ॥ ९ ॥ धूमनामो जातरूपाभो  
तप्तजाम्बूनदद्युतिः । सुधौतकलधौतश्रोः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ॥ १० ॥  
शिष्टष्टः पुष्टदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाचरन्मः । शत्रुघ्नोऽप्रतिबोऽमोघः  
प्रशास्ता शासिता स्वभूः ॥ ११ ॥ शान्तिनिष्ठो मुनिज्वेष्टः  
शिवतातिः शिवप्रदः । शान्तिदः शान्तिकुच्छान्तिः कान्तिमान्का-  
मितप्रदः ॥ १२ ॥ श्रेयोनिधिरधिष्ठानमतिष्ठः प्रतिष्ठितः । सुस्थितः  
स्थावरः स्थाणुः प्रथोयान्प्रथितः पृथुः ॥ १३ ॥

॥ इति त्रिकालदर्शोदितम् ॥ ९ ॥

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः । निष्किञ्चनो  
निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोघुहः ॥ १४ ॥ तेजोराशिरनन्तीजा ज्ञानान्धिः  
शीलसागरः । तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोऽपहः ॥ १५ ॥  
जगच्चूडामखिर्दीप्तः सर्वविघ्नविनायकः । कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो  
लोकालोकप्रकाशकः ॥ १६ ॥ अनिद्रादुरतंद्रालुजः गरूकः प्रमामयः ।  
लक्ष्मीपतिर्जगज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥ १७ ॥ सुसुखुर्बन्धमोक्षज्ञो

जिताक्षो जितमन्मथः । प्रशांतरसशैलूषो भव्यपेटकनाथकः ॥५॥  
 मूलकर्ताखिलज्योतिर्मलमो मूलकारणः । आप्तो वागीश्वरः  
 भ्रूयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥६॥ प्रवक्त्रा वचसामीशो मारजिद्धि-  
 श्वभाववित् । सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥७॥ श्रीशः  
 श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयंकरः । उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो  
 लोकवत्सलः ॥ ८ ॥ लोकोचरो लोकपतिलोकचन्द्ररपारधीः ।  
 धीरधीबुधसन्मार्गः शुद्धः सनृतपूतवाक् ॥ ९ ॥ प्रज्ञापारमितः  
 प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः । मन्दतो मद्रक्तुद्भद्रः कल्पवृक्षो  
 वरप्रदः ॥ १० ॥ सुमुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाशुशुचक्षिः । कर्मण्यः  
 कर्मठः प्राशुहेयादेयविचक्षणः ॥ ११ ॥ अनंतशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारि-  
 स्त्रिलोचनः । त्रिनेत्रस्यबंकस्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥ १२ ॥  
 सखंतमद्रः शांतारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः । सूक्ष्मदर्शी जितानंगः  
 कृपालुर्धर्मदेशकः ॥ १३ ॥ शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।  
 धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ॥ १४ ॥

॥ इति दिव्यासादिशतम् ॥ १० ॥

॥ इत्यष्टाधिकसहस्रनामावली समाप्ता ॥

धाम्नां पते त्वामूर्तिनामान्यागमकोविदैः । सम्बुधितान्यनु-  
 प्यायन्पुमान्पूतस्कृतिर्भवेत् ॥ १ ॥ गोचरोऽपि गिरामासां त्वम-  
 वाग्गोचरो मतः । स्तोता तथाप्यसंधिगर्धं त्वचोऽभीष्टफलं  
 लभेत् ॥ २ ॥ त्वमतोऽसि जगद्धन्धुस्त्वमस्तोसि जगद्धिषक् ।  
 त्वमतोसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ॥ ३ ॥ त्वमेकं  
 जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् । त्वं त्रिरूपैकमुक्त्स्वंगं

स्वोत्थानंतचतुष्टयः ॥ ४ ॥ त्वं पंचब्रह्मतत्त्वात्मा पंचकल्प्याण-  
नायकः । षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ॥ ५ ॥ दिव्याष्ट-  
गुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः । दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि  
परमेश्वर ॥ ६ ॥ युष्मन्मामावलीदृग्धवलसत्स्तोत्रमालया । भवतं  
वरिवस्यामः प्रसीदानुग्रहोऽद्य नः ॥ ७ ॥ इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो  
भवति भाक्तिकः । यः स पाठं पठत्येनं स स्यात्कल्पोऽष्टभाजनम्  
॥ ८ ॥ ततः सदेदं पुण्यार्थं पुमान्पठति पुण्यधीः । पौरुहूर्ती  
श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ॥ ९ ॥ स्तुत्वेति मघवा देवं चरा-  
चरजगद्गुरुं । ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ॥ १० ॥  
स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः निष्ठितार्थो  
भवांस्तुत्यः फलं नैश्रेयसं सुखं ॥ ११ ॥ यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य  
न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित् । ध्येयो योगिजनस्य यश्च  
नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित् । यो नेतन् नयते नमस्कृतिमलं  
नंतव्यपक्षेक्षणः । स श्रीमान् जगतां त्रयस्य च गुरुर्देवः पुरुः  
पावनः ॥ १२ ॥ तं देवं त्रिदशाधिपाचितपदं घातेऽक्षयानंतरं ।  
श्रोत्थानंतचतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जिनीनामिनम् । मानस्तंभ-  
विलोकनानतजमन्मान्यं त्रिलोकीपतिं । प्राप्ताचित्यबहिर्विभूति-  
मनर्षं भक्त्या प्रवृत्तमहे ॥ १३ ॥

२० सुप्रभातस्तोत्रम् ॥

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यद्भवज्जन्मामिषेकोत्सवे । यद्द्वाराग्रहणो-  
त्सवे यदखिलज्ञानप्रकाशोत्सवे ॥ यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः

पूजाद्भुतं तद्भवैः । संगीतस्तुतिमंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः  
 ॥ १ ॥ श्रीमन्नतामरकिरीटमणिप्रभाभिराढीढपादयुग ! दुद्धर-  
 कर्मदूर । श्रीनामिनंदन ! जिनाजित ! शंभवाख्य ! त्वद्ध्यानताऽस्तु  
 सजतं मम सुप्रभातम् ॥ २ ॥ छत्रत्रयप्रचलचामरवीज्यमान-  
 देवामिनंदनमुने सुमते जिनेंद्र ! पद्मप्रभारुणमण्डित्तिभासुरांग  
 त्व० ॥ ३ ॥ अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलवर्षागात्र प्रालेयतारगिरो-  
 मोक्तिकवर्णगौर । चंद्रप्रभस्फटिकपाण्डुरपुष्पदंत ! त्व० ॥ ४ ॥  
 संतप्तकांचनरुचे जिनशीतलाख्य श्रेयान्विनष्टदुरिताष्टकलंकपंक ।  
 बंधूकबंधुररुचे जिनवासपूज्य त्व० ॥ ५ ॥ उदंडदपंकरिपो विमला-  
 मलांग स्थेमन्नंतजिदनंतसुखांबुराशे । दुष्कर्मकृन्मषविवर्जित  
 घर्मनाथ त्व० ॥ ६ ॥ देवामराकुसुमसन्निभ शान्तिनाथ कुंथा  
 दयागुणविभूषणभूषितांग । देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ त्व०  
 ॥ ७ ॥ यन्मोहमल्लमदभंजनमल्लिनाथ चेमंकरावितथशासनसु-  
 ब्रतारूप । यत्सपदा प्रशमितो नमिनामधेय त्व० ॥ ८ ॥ तापिच्छ  
 गुच्छरुचिरोज्ज्वल नेमिनाथ धोरोपसर्गविजयिन् जिनपार्श्वनाथ ।  
 स्याद्वादसूक्तिमण्डिपंखवर्द्धमान त्व० ॥ ९ ॥ प्रालेयनीलहरितारुण-  
 पीतभासं यन्मूर्तिमव्ययसुखावसथं मुनीन्द्राः । ध्यायन्ति सप्तविंशतं  
 जिनवल्गुभानां त्व० ॥ १० ॥ सुप्रभातं सुनचत्रं मांगल्यं परि-  
 कीर्तितम् । चतुर्विंशतितीर्थानां सुप्रभातं दिने दिने ॥ ११ ॥  
 सुप्रभातं सुनचत्रं श्रेय इत्यभिनंदितम् । देवता ऋषयः सिद्धाः  
 सुप्रभातं दिने दिने ॥ १२ ॥ सुप्रभातं तवैकस्य वृषभस्य

महात्मनः । येन प्रवर्तितं तीर्थं भव्यसम्बसुक्तावहम् ॥ १३ ॥  
 सुप्रभातं जिनेन्द्राणां ज्ञानोन्मीलितचक्षुषाम् । अज्ञानतिमि-  
 रांधानां नित्यमस्तमितो रविः ॥ १४ ॥ सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य धीरः  
 कमललोचनः । येन कर्माटवी दग्धा शुक्लध्यानोग्रवह्निना ॥ १५ ॥  
 सुप्रभातं सुनक्षत्रं सुकन्याणं सुमंगलम् । दैलोक्यहितकर्तृणां  
 जिनानामेव शासनम् ॥

॥ इति सुप्रभातस्तोत्रम् ॥

श्रीमत्पूज्यपादस्वामिविरचितं

४ समाधिशतकम् ।

येनात्माऽबुद्ध्यतात्मैव परत्वेनैव चापरम् । अक्षयानन्तबोधाय तस्मै  
 सिद्धात्मने नमः ॥ १ ॥ जयन्ति यथावदतोऽपि भारती—  
 विभूतयस्तीर्थकृतोऽप्यनीहितुः । शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे  
 जिनाय तस्मै सकलात्मने नमः ॥ २ ॥ श्रुतेन लिङ्गेन यथात्म-  
 शक्ति सपाहितान्तःकरणेन सम्यक् । समीक्ष्य वैबन्धसुखस्पृहाणां  
 विविक्तिमात्मानमथाभिधास्ये ॥ ३ ॥ ग्रहिरन्तः परश्चेति त्रिधा-  
 सर्वदेहिषु । उपेयात्तत्र परमं मध्योपायाद्बहिस्त्यजेत् ॥ ४ ॥  
 बहिरात्मा शरीरादौ जातात्मभ्रान्तिरान्तरः । चित्तदोषात्मविभ्रा-  
 न्तिः परमात्मातिनिर्भलः ॥ ५ ॥ निर्भलः केवलः सिद्धो विविक्रः  
 प्रभुरक्षयः । परमेष्ठी परास्मेति परमात्मेश्वरो जिनः ॥ ६ ॥  
 बहिरात्मेन्द्रियद्वारैरात्मज्ञानपराङ्मुखः । स्फुरितश्चात्मनो देह-  
 मात्मत्वेनाध्यवस्यति ॥ ७ ॥ नरदेहस्थमात्मानमविद्वान्मन्यते



नरम् । तिर्यञ्चं तिर्यगङ्गस्थं सुराङ्गस्थं सुरं तथा ॥ ८ ॥ नारकं  
 नारकाङ्गस्थं न स्वयं तत्त्वतस्तथा । अनन्तानन्तधीशक्तिः स्वसंवेद्यो-  
 ऽक्षलस्थितिः ॥ ९ ॥ स्वदेहसदृशं दृष्ट्वा परदेहमचेतनम् ।  
 परात्माविष्टित मूढः परत्वेनाभ्यवस्यति ॥ १० ॥ स्वपराध्यवसा-  
 येन देहेष्वविदितात्मनाम् । वर्त्तते विभ्रमः पुंसां पुत्रभार्यादिगो-  
 चरः ॥ ११ ॥ अविद्यासंज्ञितस्तस्मात्संस्कारो जायते दृढः ।  
 येन लोकोऽङ्गमेव स्वं पुनरप्यभिमन्यते ॥ १२ ॥ देहे स्वबुद्धि-  
 रात्मानं युनक्तुं तेन निश्चयात् । स्वात्मन्येवात्मधीस्तस्माद्द्वियोजय-  
 ति देहिनम् ॥ १३ ॥ देहेष्वात्मधिया जाताः पुत्रभार्यादिकल्पनाः ।  
 सम्पत्तिमात्मनस्ताभिर्मन्यते हा हतं जगत् ॥ १४ ॥ मूलं संसार  
 दुःखस्य देह एवात्मधीस्ततः । त्यक्तवैनां प्रविशेदन्तर्बहिरव्यावृते-  
 न्द्रियः ॥ १५ ॥ मत्तश्च्युत्वेन्द्रियद्वारैः पतितो विषयेष्वहम् ।  
 तान्प्रपद्याहमिति मां पुरवेद न तत्त्वतः ॥ १६ ॥ एवं त्यक्त्वा  
 बहिर्वाचं त्यजेदन्तरशेषतः । एष योगः समासेन प्रदीपः परमात्मनः  
 ॥ १७ ॥ यन्मया दृश्यते रूपं तन्न जानाति सर्वथा । जानन्न  
 दृश्यते रूपं ततः केन ब्रवीम्यहम् ॥ १८ ॥ यत्परैः प्रतिपाद्योऽहं  
 यत्प्राग्प्रतिपादये । उन्मत्तचेष्टितं तन्मे यदहं निर्विकल्पकः ॥ १९ ॥  
 यदग्राह्यं न गृह्णाति गृहीतं नापि मुञ्चति । जानाति सर्वथा सर्वं  
 तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ॥ २० ॥ उत्पन्नपुरुषभ्रान्तेः स्थाणौ यद्बुद्धि-  
 चेष्टितम् । तद्वन्मे चेष्टितं पूर्वं देहादिष्वात्मविभ्रमात् ॥ २१ ॥  
 यथासौ चेष्टते स्थाणौ निवृत्ते पुरुषाग्रहे । तथाचेष्टोऽस्मि देहादी

विविक्ततात्मविभ्रमः ॥२२॥ येनात्मनानुभूयेऽऽत्मानैवात्मनः-  
 नि । सोऽहं न तन्न मा नापौ नैको न द्वौ न वा बहुः ॥२३॥  
 यदभावे सुषुप्तोऽहं यद्भावे व्युत्थितः पुनः । अतीन्द्रियमनि-  
 र्देश्यं तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ॥२४॥ क्षीयन्तेऽत्रैव रागाद्यास्तत्त्व-  
 तो मां प्रपश्यतः । बोधात्मानं ततः कश्चिन्न मे शत्रुर्न च प्रियः  
 ॥२५॥ मामपश्यन्नयं लोको न मे शत्रुर्न च प्रियः । मां प्रपश्-  
 न्नयं लोको न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥२६॥ त्वक्तृत्वं बहि-  
 रात्मानमन्तरात्मव्यवस्थितः । भावयेत्परमात्मानं सर्वसङ्कल्पवर्जि-  
 तम् ॥२७॥ सोऽहमित्यात्तसंस्कारस्तस्मिन् भावनया पुनः । तत्रैव  
 दृढसंस्कारान्प्रभते आत्मनि स्थितिम् ॥२८॥ मूढात्मा यत्र  
 विश्वस्तस्ततो नान्यद्भयास्पदम् । यतो भीतस्ततो नान्यदङ्गस्थान-  
 मात्मनः ॥२९॥ सर्वेन्द्रियाणि संयम्य भित्तमितेनान्तरात्मना ।  
 यत्क्षणां पश्यतो भाति तत्तत्त्वं परमात्मनः ॥३०॥ यः परात्मा  
 स एवाहं योऽहं स परमस्ततः । अहमेव मयोपास्यो नान्यः  
 कश्चिदिति स्थितिः ॥३१॥ प्राच्याव्य विषयेभ्योऽहं मां मयैव  
 मयि स्थितम् । बोधात्मानं प्रपन्नोऽस्मि परमानन्दनिष्ठः ॥३३॥  
 यो न वेत्ति परं देहादेवमात्मानमव्ययम् । लभते न स निर्वाणं तत्प्रापि  
 परं तपः ॥३३॥ अहमदेहान्तरज्ञानजनिताह्लादनिर्मुक्तः तपसा  
 दुष्कृतं घोरं ब्रह्मज्ञानोऽपि न खिद्यते ॥३४॥ रागद्वेषादिक्रमो-  
 लोच्छ्रोत्रं धनमनोज्ञलम् । स पश्यत्यत्मानस्तत्त्वं तत्तत्त्वं जेतसी  
 जनः ॥३५॥ अविधिर्पुं मनस्तत्त्वं विधिर्पुं भ्रान्तिरात्मनः ।

धारयेत्तदविहितं विहितं नाश्रयेत्ततः ॥३६॥ अविद्याभ्यास-  
 संस्कारैरवशं विष्यते मनः । तदेव ज्ञानसंस्कारैः स्वतस्तत्त्वे-  
 ऽवतिष्ठते ॥३७॥ अपमानादयस्तस्य विक्षेपो यस्य चेतसः ।  
 नापमानादयस्तस्य न क्षेपो यस्य चेतसः ॥३८॥ यदा मोहोत्प्र-  
 जायेते रागद्वेषौ तपस्विनः । तदेव भावयेत्स्वस्थमात्मानं शाम्यतः  
 षष्ठात् ॥३९॥ यत्र काये मुनेः प्रेम ततः प्रच्याव्य देहिनम् ।  
 बुद्ध्या तदुत्तमे काये योजयेत्प्रेम नश्यति ॥४०॥ आत्मविभ्रमजं  
 दुःखमात्मज्ञानात्प्रशाम्यति । नायतास्तत्र निर्वान्ति कृत्वापि  
 परमं तपः ॥४१॥ शुभं शरीरं दिव्यांश्च विषयानभिवाञ्छति ।  
 उत्पन्नात्ममतिर्देहे तत्त्वज्ञानी ततश्च्युतिम् ॥४२॥ परत्राहंमतिः  
 स्वस्माच्च्युतो बध्नात्यसंशयम् । स्वस्मिन्नहंमातश्च्युत्त्रा परस्मा-  
 न्मुच्यते बुधः ॥४३॥ दृश्यमानमिदं मूढस्त्रिलिङ्गमवबुध्यते  
 इदमित्यवबुद्धस्तु निष्पन्नं शब्दवज्जितम् ॥ ४४ ॥ जानन्न-  
 प्यात्मनस्तत्त्वं विविक्तं भावयन्नपि । पूर्वविभ्रमसंस्काराद्-  
 भ्रान्तिं भूयोऽपि गच्छति ॥४५॥ अचेतनमिदं दृश्यमदृश्यं  
 चेतन ततः । क्व रूप्यामि क्व तुष्यामि मध्यस्वोऽहं भवाम्यतः  
 ॥४६॥ त्यागादाने बहिर्मूढः करोत्यध्मात्ममात्मवित् । नान्त-  
 र्बहिरुपादानं न त्यागो निष्ठितात्मनः ॥४७॥ युञ्जीत मनसात्म-  
 नं वाक्कायाभ्यां वियोजयेत् । मनसा व्यवहारं तु त्यजेद्वाक्काय-  
 योजितम् ॥४८॥ जगद्देहात्मदृष्टीनां विश्वास्त्यं रम्यमेव वा ।  
 आत्मन्वेवात्मदृष्टीनां क्व विश्वासः क्व वा रतिः ॥४९॥ अस्मिन्-

ज्ञानात्तरं कार्यं न बुद्धौ धारयेच्चिरम् । कुर्थादर्धशक्तिश्चिद्वा-  
 कायाम्याम त्परः । ५०॥ यत्पश्यामीन्द्रियैस्तन्मे नास्ति यन्नि-  
 यतेन्द्रियः । अन्तः पश्यामि सानन्दं तदस्तु ज्योतिरुत्तमम् । ५१॥  
 सुखमारब्धयोगस्य बहिर्दुःखमथात्मनि । बहिरेवासुखं सौख्य-  
 मध्यात्मं भावितात्मनः ॥५२॥ तद्वृथात्तत्परान्पृच्छत्तदिच्छेत्-  
 त्परो भवेत् । येनाविद्यामगं रूपं त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत् ॥५३॥  
 शरीरे वाचि चात्मानं संधये वाक्शरीरयोः । आन्तोऽआन्तः  
 पुनस्तत्त्वं पृथगेषां विबुध्यते ॥५४॥ न तदस्तीन्द्रियार्थेषु यत्  
 चेमङ्करमात्मनः । तथापि रमते बालस्तत्रैवाज्ञानभावेनात् ॥५५॥  
 चिरं सुषुप्तास्तमसि मूढात्मानः कुयोनिषु । अनात्मीयात्मभूतेषु  
 ममाहमिति जाग्रति ॥५६॥ पश्येन्नन्तरं देहमात्मनो नात्म-  
 चेतसा । अपरात्मधियान्येषामात्मतत्त्वे व्यवस्थितः ॥ ५७ ॥  
 अज्ञापितं न जानन्ति यथा मां ज्ञापितं तथा । मूढात्मानस्ततस्तेषां  
 वृथा मे ज्ञापनश्रमः ॥५८॥ यद्बोधयितुमिच्छामि तच्चाहं यदर्हं  
 पुनः । आह्वं तदपि नान्यस्य तत्किमन्यस्य बोधये ॥५९॥  
 बहिस्तुप्यति मूढात्मा पिहितज्योतिरन्तरे । तुप्यत्यन्तः प्रबुद्धा-  
 त्मा बहिर्व्यावृत्तकौतुकः ॥६०॥ न जानन्ति शरीराणि सुख-  
 दुःखान्यबुद्धयः । निग्रहानुग्रहधियं तथाप्यत्रैव कुर्वते ॥ ६१ ॥  
 स्वबुद्ध्या यावद्गृहीयात् कायवाक्चेतसां त्रयम् । सर्वमस्तीहै-  
 तेषां भेदाभ्यासे तु निवृत्तिः ॥६२॥ घने वस्त्रे पृष्ठात्मानं न  
 घनं मन्यते तथा । घने स्वदेहेऽप्यात्मानं न घनं मन्यते बुधः

॥६३॥ जीर्णं वस्त्रे यथात्मानं न जीर्णं मन्यते तथा । जीर्णं स्वदेहेऽप्यात्मानं न जीर्णं मन्यते बुधः ॥६४॥ नष्टे वस्त्रे यथात्मानं न नष्टं मन्यते तथा । नष्टे स्वदेहेऽप्यात्मानं न नष्टं मन्यते बुधः ॥६५॥ रक्ते वस्त्रे यथात्मानं न रक्तं मन्यते तथा । रक्ते स्वदेहेऽप्यात्मानं न रक्तं मन्यते बुधः ॥६६॥ यस्य सस्पन्दमाभाति निष्पन्देन समं जगत् । अप्रज्ञमक्रियाभोगं स समं याति नेतरः ॥ ६७ ॥ शरीरकञ्चुकेनात्मा संवृतो ज्ञानविग्रहः । नात्मानं बुध्यते तस्माद् भ्रमत्यतिचिरं भवे ॥६८॥ प्रविशद्गलतां व्यूहे देहेऽणुनां समाकृतौ । स्थितिभ्रान्त्या प्रपद्यन्ते तमात्मानमबुद्धयः ॥६९॥ गौरः स्थूलः कुशो वाहमित्यङ्गेनाविशेषयन् । आत्मानं धारयेत्प्रत्यं केवलं ज्ञप्तिविग्रहम् ॥७०॥ मुक्तिरैकान्तिकी तस्य चित्ते यस्याचला धृतिः । तस्य नैकान्तिकी मुक्तियस्य नास्त्यचला धृतिः ७१। जनेभ्यो वाक् ततः स्पन्दो मनसरिचत्तविभ्रमाः । भवन्ति तस्मात्संसर्गं जनैर्योगी ततस्त्यजेत् ॥७२॥ ग्रामोऽरण्यमिति द्वेषा निवासोऽनात्मदर्शिनाम् । दृष्टात्मनां निवासस्तु विविक्तात्मैव निश्चलः ॥७३॥ देहान्तरगतेर्बीजं देहेऽस्मिन्नामभावना । बीजं विदेहनिष्पत्तेरात्मन्येवात्मभावना ॥७४॥ नयत्यात्मानमात्मैवजन्मनिर्वाणमेव वा । गुरुरात्मात्मनस्तस्मान्मान्योऽस्ति परमार्थतः ॥७५॥ दृढात्मबुद्धिर्देहदाबुत्पश्यन्नाशमात्मनः । मित्रादिभिर्वियोगं च विमेति मरणाद्भुशम् ॥७६॥ आत्मन्येवात्मधीरन्यां शरीरगतिमात्मनः । मन्यते निर्भयं त्यक्त्वा वस्त्रे वस्त्रान्तरग्रहम् ॥७७॥

व्यवहारे सुषुप्तो यः स जागत्यात्मगोचरे । जागर्ति व्यवहारे  
 ऽस्मिन् सुषुप्तश्चात्मगोचरे ॥७८॥ आत्मानमन्तरे दृष्ट्वा दृष्ट्वा-  
 देहादिकं बहिः । तयोरन्तरविज्ञानादभ्यासादच्युतो भवेत् ॥७९॥  
 पूर्वं दृष्टात्मतत्त्वस्य विभात्युन्मत्तवञ्जगतः । स्वभ्यस्तात्मविषयः  
 परचात्काष्ठपाषाणरूपवत् ॥८०॥ शृण्वन्नप्यन्यतः कामं वदन्नपि  
 क्लेबरात् । नात्मानं भावयेद्भिन्नं यावत्तावन्न मोक्षमाक् ॥८१॥  
 तथैव भावयेद्देहाद्युत्पत्त्यात्मानमात्मनि । यथा न पुनरात्मानं  
 देहे स्वप्नेऽपि योजयेत् ॥८२॥ अपुण्यमव्रतैः पुण्यं व्रतैर्मोक्षस्त-  
 योर्व्ययः । अव्रतानीव मोक्षार्थी व्रतान्यपि ततस्त्यजेत् ॥८३॥  
 अव्रतानि परित्यज्य व्रतेषु परिनिष्ठितः । त्यजेत्तान्यपि सम्प्राप्य  
 परमं पदमात्मनः ॥८४॥ यदन्तर्जन्यसंपृक्तमुत्प्रेक्षाजालमात्मनः  
 मूलं दुःखस्य तन्नाशे शिष्टमिष्टं परं पदम् ॥८५॥ अव्रती  
 व्रतमादाय व्रती ज्ञानपरायणः परात्मज्ञानसम्पन्नः स्वयमेव परो  
 भवत् ॥८६॥ लिङ्गं देहाभितं दृष्टं देह एवात्मनो भवः । न मुच्य-  
 न्ते भवात्तस्मादेते लिङ्गकृताग्रहाः ॥८७॥ जातिर्देहाभिता दृष्टा देह  
 एवात्मनो भवः । न मुच्यन्ते भवात्तस्मादेते जातिकृताग्रहाः ॥८८॥  
 जातिलिङ्गविकल्पेन येषां च समयाग्रहः । तेऽपि न प्राप्नुवन्त्येव  
 परमं पदमात्मनः ॥८९॥ यस्यामाय निवर्चन्ते भोगेभ्यो यद्वा-  
 प्तये । प्रीतिं तत्रैव कुर्वन्ति द्वेषमन्यत्र मोहिनः ॥९०॥ अनन्त-  
 रङ्गः संघर्षे दृष्टिं पञ्चोर्यथान्वके । संयोगाद्दृष्टिमङ्गं ऽपि संघर्षे तद्-  
 दात्मनः ॥९१॥ दृष्टिमेदो यथा दृष्टिं पञ्चोरन्ये न भोजयेत् । तथा न

योजयेद्देहे दृष्टात्मा दृष्टिमात्मनः ॥६२॥ सुप्तोन्मत्ताद्यवस्थैव विभ्रमो  
 ऽनात्मदर्शिनाम् । विभ्रमः क्षीणदोषस्य सर्वावस्थात्मदर्शिनः ॥६३॥  
 विदिताशेषशास्त्रोऽपि न जाग्रदपि मुच्यते । देहात्मदृष्टिर्ज्ञाता-  
 त्मा सुप्तोन्मत्तोऽपि मुच्यते ॥६४॥ यत्रैवाहितधीः पुंसः श्रद्धा  
 तत्रैव जायते । यत्रैव जायते श्रद्धा चित्तं तत्रैव लीयते ॥६५॥  
 यत्रानाहितधीः पुंसः श्रद्धा तस्माभिवर्तते । यस्मान्निश्चिन्ते श्रद्धा  
 कुतश्चित्तस्य तन्लयः । ६६॥ भिन्नात्मानमुपास्यात्मा परो भवति  
 तादृशः । बर्त्तिर्दीपं यथोपास्य भिन्ना भवति तादृशी ॥६७॥  
 उपास्यात्मानमेवात्मा जायते परमोऽथ वा । मथित्वान्मानमात्मैव  
 जायतेऽग्निर्यथा तरुः ॥६७॥ इतीदं भावयेन्नित्यमवाचांगोचरं  
 पदम् । स्वत एव तदाप्नोति यतो नावर्तते पुनः ॥६८॥ अयत्न-  
 साध्यं निर्वाणं चित्तत्वं भूतजं यदि । अन्यथा योगतस्तस्मान्न  
 दुःखं योगिनां क्वचित् ॥१००॥ स्वप्ने दृष्टे विनष्टेऽपि न नाशो  
 ऽस्ति यथात्मनः । तथा जागरदृष्टेऽपि विपर्ययाविशेषतः ॥१०१॥  
 अदुःखमावितं ज्ञानं क्षीयते दुःखसन्निधौ । तस्माद्यथाफलं दुःखै-  
 रात्मानं भावयेन्मुनिः ॥१०२॥ प्रयत्नादात्मनो वायुरिच्छाद्वेष-  
 प्रवर्तितम् । वायोः शरीरयन्त्रास्त्रि वर्त्तन्ते स्वेषु कर्मसु ॥१०३॥  
 तान्शतानि समारोप्य साक्षात्पास्ते सुखं जडः । त्यक्त्वा रोपं  
 पुनर्विद्वान् प्राप्नोति परमं पदम् ॥१०४॥ हुक्त्वा परत्र परबुद्धि-  
 महर्षिर्बुध् च संसारदुःखजर्जरी जननादिमुक्तः । ज्योतिर्मयं सुखं  
 भूपैति परात्मनिष्ठुस्तन्मार्गमित्येदं विगम्य समाधितन्त्रम् ॥१०५॥

येनात्मा बहिरन्तरुक्तमभिदा त्रेधा विवृत्योदितः, सोऽस्योऽनन्तचतु-  
ष्टयामलबधुः सद्ध्यानतः कीर्तितः । जीयास्तोऽत्र जिनः  
समस्तविषयः श्रीपादपूज्योऽमलो, भव्यानन्दकरः समाधिशासकः  
श्रीमत्प्रमेन्दुः प्रभुः ॥

इति श्रीमत्पूज्यपादस्वामिविरचितं समाधितन्त्रं समाप्तम् ।

### श्रीमद्विद्यानन्दिस्वामिविरचितं पात्रकेशरिस्तोत्रम्

जिनेन्द्र ! गुणसंभृतितस्तव मनागपि प्रस्तुता, भवत्यखिलकर्मणां  
प्रहतये परं कारणम् । इति व्यवसिता मतिर्मम ततोऽहमत्याद-  
रात्, स्फुटार्थनयपेशलां सुगतः संविधास्ये स्तुतिम् । १। मतिः  
श्रुतमथावधिश्च सहजं प्रमाणां हिते, ततः स्वयमबोधि मोक्षपदवीं  
स्वयंभूर्भवान् । नचैतदिह दिव्यचक्षुरधुनेक्ष्यतेऽस्मादृशां, यथा  
सुकृतकर्मणां सकलराज्यलक्ष्यादयः । २। व्रतेषु परिरज्यसे निरुपमे  
च सौख्यस्पृहा, विभेष्यपि च संरुतेरसुभृतां वधं द्वेष्यपि  
कदाचिददयोदयो विगतचित्तकोऽप्यञ्जसा, तथापि गुरुरिष्यसे  
विश्ववर्नैकबन्धुर्जिनः । ३। तपः परमृपाश्रितस्य भवतोऽभवत्केवलं  
समस्तं विषयं निरक्षमपुनश्च्युति स्वात्मजं । निरावरखण्डकं  
व्यतिकरादपेतात्मकं, तदेव पुरुषार्थसारमभिसम्मतं योमिन्नसु-  
। ४। परस्परविरोधवद्विविधमङ्गशाखाकुलं, पृथग्जनसुहृत्सं-  
तव निरर्थकं शासनम् ।



तथापि जिन ! सम्मतं सुविदुषां न चात्यदद्भुतं । 'भवन्ति हि  
 महत्स्मर्ना दुरुदितान्यापि ख्यातये' ॥५॥ सुरेन्द्रपरिकल्पितं  
 बृहदनर्घ्यसिंहासनं तथाऽऽपनिवारणत्रयमथोल्लसन्नामरम् । वशं  
 च भुवनत्रयं निरुपमा च निःसंगता न संगतमिदं द्वयं त्वयि  
 तथाऽपि संगच्छते ॥६॥ त्वमिन्द्रियविनिग्रहप्रवणनिष्ठुरं भाषसे  
 तपस्यपि च यातयस्यनवघदुष्करे सश्रितान् । अनन्यपारदृष्टया  
 षडसुकायसंरक्ष्या स्वनुग्रहपरोऽप्यहो ! त्रिभुवनात्मना नापरः  
 ॥७॥ ददास्यनुपमं सुखं स्तुतिपरेष्वतुष्यन्नपि क्षिपस्यकुपितोऽपि  
 च ध्रुवमस्यकान्दुर्गतौ । न चेश ! परमेष्ठिता तव विरुद्ध्यते  
 यद्भवान् न कृष्यति न तुष्यति प्रकृतिमाश्रितो माध्यमाम् ॥८॥  
 परिष्वपितकर्मणस्तव च जातु रागादयो न चेन्द्रियविवृत्तयो न  
 च मनस्कृता व्यावृत्तिः । तथाऽपि सकलं जगद्युगपदंजसा वेत्सि  
 च प्रपश्यसि च केवलाभ्युदितदिव्यसच्चक्षुषा ॥९॥ अयाञ्च  
 रतिरागमोहभयकारिणां कर्मणां कषायरिपुनिर्जयः सकलतत्त्ववि-  
 बोदयः । अनन्यमदृशं सुखं त्रिभुवनाधिपत्यं च ते सुनिश्चितमिदं  
 विभो ! सुमुनिसम्प्रदायादिभिः ॥१०॥ न हीन्द्रियधिया विरोधि  
 न च लिंगबुद्ध्या बधो न चाभ्यनुमतेन ते मुनयसप्तधा योजि-  
 तम् । व्यपेतपरिशङ्कनं वितथकारणादर्शना-दतोऽपि भगवैस्त्वमेव  
 परमेष्ठितायाः पदम् ॥११॥ न लुब्ध इति गम्यसे सकलसङ्गतं-  
 न्यासतो न चाऽपि तव मूढता विगतदोषवाग्भवान् । अनेक-  
 विधरक्षयदसुमृतां न च द्वेषिता निरायुधतयाऽपि च व्यपगतं

तथा ते भयम् ॥१२॥ यदि त्वमपि माषसे वितथमेवमाप्तोऽपि  
 सन् परेषु जिन का कथा प्रकृतिलुब्धसुग्धादिषु । न चाऽप्यकृत-  
 कात्मिका वचनसंहतिर्दृश्यते पुनर्जननमप्यहो ! न हि विरुध्यते  
 युक्तिभिः ॥१३॥ सजन्ममरणाविगोत्रचरणादिनामभुतेरनेकरूप-  
 संहतिप्रतिनियामसन्दर्शनात् । फलार्थिपुरुषप्रवृत्तिविनिवृत्तिहेत्वा  
 त्मनां श्रुतेरच मनुष्यवत्पुरुषकर्तृकैव श्रुतिः ॥१४॥ स्मृतिरच  
 परजन्मनः स्फुटमिहेच्यते कस्यचित्तथाप्तवचनान्तरात्प्रसृतलोक-  
 वादादपि । न चाऽप्यसत उद्भवो न च सतो निमूलात्क्षयः कथं  
 हि परलोकानामसुभूतामसचोह्यते ॥१५॥ न चाऽप्यसदुदीयते न  
 च सदेव वा व्यज्यते सुराङ्गमदवतथा शिखिकलापवैचिष्यवत् ।  
 क्वचिन्मृतकरन्धनार्थपठरादिके नेच्यते कथं चित्तजलादिसङ्ग-  
 गुण इष्यते चेतना ॥१६॥ प्रशान्तकरणां वपुर्विगतभूषणां चाऽपि  
 ते समस्तजनचित्तेत्रपरमोत्सवत्वं गतम् । विनाऽऽयुषपरिग्रहा-  
 जिजन ? जितास्त्वया दुर्जयाः कषायरिपवो परैर्न तु गृहीतशस्त्रै-  
 रपि ॥१७॥ धियान्तरतमार्थवद्गतिसमन्वयान्वीक्षणाद्भवेत्खपरि-  
 माणवत्क्वचिदिह प्रतिष्ठा परा । प्रहाणमपि इत्यते क्षयवतो  
 निमूलात्क्वचित्तथाऽयमपि युज्यते ज्वलनवत्कषायक्षयः ॥१८॥  
 अशेषविदिहेच्यते सदसदात्मसामान्यविज्जिन ! प्रकृतमानुषोऽपि  
 किमुताखिलज्ञानवान् । कदाचिदिह कस्यचित्क्वचिदपेतरागादिता  
 स्फुटं समुपलभ्यते किमुत ते व्यपेतैनसः ॥१९॥ अशेषपुरुषादि-  
 तस्वगतदेशनाकीशं त्वदन्यपुरुषान्तरानुचितमाप्तताहान्कनम् ।  
 कथादकपिलाक्षपादमुनिशाक्यपुत्रोक्तयः स्खलन्ति हि सुषुपु-

दिपरिनिश्चितार्थेष्वपि ॥२०॥ परैरपरिणामकः पुरुष इष्यते  
सर्वथा प्रमाणविषयादितस्त्वपरिलोपनं स्यात्ततः । कषायविरहात्  
चाऽस्य विनिबन्धनं कर्मभिः कुतश्च परिनिवृत्तिः क्षणिकरूप-  
तायां तथा ॥२१॥ मनो विपरिणामकं यदिह संसृतिं चारनुते  
तदेव च विमुच्यते पुरुषकल्पना स्याद् वृथा । न चाऽस्य मनसो  
विकार उपपद्यते सर्वथा ध्रुवं तदिति हीष्यते द्वितयवादिता  
केपिनी ॥२२॥ पृथग्जनमनोनुकूलमपरैः कृतं शासनं सुखेन  
सुखमाप्यते न तपसेत्यवश्येन्द्रियैः । प्रतिक्षणविमंगुरं सकलसंस्कृतं  
चेप्यते ननु स्वतल्लोकलिङ्गपरिनिश्चयैर्व्याहितम् ॥२३॥ न सन्त-  
तिरनश्वरी न हि च नश्वरी नो द्विधा वनादिवदभाव एव यत्  
इष्यते तत्त्वतः वृथैव कृषिदानशीलमुनिवन्दनादिक्रियाः कथञ्चिद-  
विनश्वरी यदि भवेत्प्रतिज्ञाद्यतिः ॥२४॥ अनन्यपुरुषोत्तमो मनु-  
जतामतीतोऽपि स मनुष्य इति शस्यसे त्वमधुना नरैर्बालिशैः ।  
क्व ते मनुजगर्भिता क्व च विरागसर्वज्ञता न जन्ममरणात्मता हि  
तव विद्यते तत्त्वतः ॥२५॥ स्वमातुरिह यद्यपि प्रभव इष्यते गर्भतो  
मलैरनुपसंप्लुतो वरसरोजपत्रेऽम्बुवत् हिताहितविवेकशून्यहृदयो न  
गर्भेऽप्यभूः क्वं तव मनुष्यमात्रसदृशत्वमाशङ्कयते । २६॥ न  
मृत्युरपि विद्यते प्रकृतिमानुषस्येव ते मृतस्य परिनिवृत्तिर्न  
मरणं पुनर्जन्मवत् जरा च न हि यद्बहुर्विमलकेवलोत्पत्तितः  
प्रभृत्यरुज्जमेकरूपमवतिष्ठते प्राङ् मृतेः ॥२७॥ परैः कृपणदेवकैः  
स्वयमसत्सुखैः प्रार्थ्यते सुखं युवतिस्त्रेवनादिपरसन्धिप्रत्ययम् ।  
त्वया तु परमात्मना न परतो यतस्ते सुखं व्यपेतपरिणामकं निरु-

परमं ध्रुवं स्वात्मजं ॥२८॥ पिशाचपरिवारितः पितृवने नरीनृत्यते  
 च। द्रुधिर्भीषणद्विरदकृत्सिहेलापटः इरो हसति चायतं कहकडा-  
 दहासोन्वयं कथं परमदेवतेति परिपूज्यते पण्डितैः ॥२९॥ सुखेन  
 किल दक्षिणेन पृथुनाऽखिलप्राणिनां समत्ति शवपूतिमज्जरुधिरां-  
 त्रमांसानि च । गणैः स्वसदृशैर्भृशं रतिशुषैः रात्रिदिचं पिबत्यपि  
 च यः सुरां स कथमाप्ततामाजनम् ॥३०॥ अनादिनिधनात्मकं  
 सकलतत्त्वसंबोधनं सप्रस्तत्रगदाधिपत्यमथ तस्य संनृप्तता तथा  
 विगतदोषता च किल विद्यते यन्मृषा सुयुक्तिविरहाश्च चाऽस्ति  
 परिशुद्धतत्त्वागमः ॥४१॥ कमण्डलुमृगाजिनाञ्च वलयादिभि-  
 र्ब्रह्मणः शुचित्वविरहादिदोषकलुषत्वमभ्युद्यते मय विघृणता च  
 विष्णुहरयोः मशस्त्रत्वतः स्वतो न रमणीयता च परिमूढता  
 भूषणात् ॥३२॥ स्वयं सृजति चेत्प्रजाः किमिति दैत्यविघ्नंसनं  
 सुदुष्टजननिग्रहाथमिति चेदसृष्टिर्वरम् । कृतात्मकरणीयकस्य जगतां  
 कृतिर्निष्फला स्वभाव इति चेन्मृषा स हि सुदुष्ट एवाऽऽप्यते। ३३  
 प्रसन्नकृपितात्मनां नियमतो भवेद्दुःखिता तथैव परिमोहिता मय-  
 मुपद्रुतिश्चामयैः । तृषाऽपि च बुभुक्षया च न च संसृतिरिच्छते  
 जिनेन्द्र ! भवतोऽपरेषु कथमाप्तता युज्यते ॥३४॥ कथं स्वयमुप-  
 द्रुताः परसुखोदये कारणां स्वयं रिपुभयार्दिताश्च शरणां कथं  
 विभ्यताम् । गतानुगतिकैरहो त्वदपरत्र भक्तैर्जनैरनायतनसेपनं  
 निरयहेतुरङ्गीकृतम् ॥३५॥ सदा इननघातनाद्यनुमतिप्रवृत्तात्मनां  
 प्रदुष्टचरितोदितेषु परिहृष्यतां देहिनाम् । अवश्यमनुष्यज्यते दुरित-  
 बन्धनं तत्त्वतः शुभेऽपि परिनिश्चितस्त्रिबिधबन्धहेतुर्भवेत् ॥३६॥

विमोक्षमुखचैत्यदानपरिपूजनाद्यात्मिकाः क्रिया बहुविधासुमृन्मर-  
 षापीडना हेतवः त्वया ज्वलितकेवलेन न हि देशिताः किं तु ता-  
 स्त्रयि प्रसृतमक्तिभिः स्वयमनुष्ठिताः श्रावकैः ॥३७॥ त्वया  
 त्वदुपदेशकारिपुरुषेण वा केनचित् कथंचिदुपदिश्यतेस्म जिन !  
 चैत्यदानक्रियाः । अनाशकविधिश्च केशपरिलुचनं चाऽप्यवा  
 भ्र तादनिधनात्मकादधिगतं प्रमाथान्तरात् ॥३८॥ न चासुपरि-  
 पीडनं नियमतोऽशुभायेष्यते त्वया न च शुभाय वा न हि च  
 सर्वथा सत्यवाक् । न चाऽपि दमदानयोः कुशलहेतुनैकान्ततो  
 विचित्रनयमङ्गजालगहनं त्वदीर्यं मतम् ॥३९॥ त्वयाऽपि मुखजी-  
 वनार्थमिह शासनं चेत्कृतं कथं सकलसंग्रहत्यजनशासिना युज्यते ।  
 तथा निरशनाद्भुक्तिरसवर्जनाद्युक्तिमिर्जितेन्द्रियतया त्वमेव  
 जिन ! इत्यभिरुपां गतः ॥४०॥ जिनेश्वर ! न ते मतं पःकव-  
 स्त्रपात्रग्रहो विमृष्य सुखकारणं स्वयमशक्तकैः कल्पितः । अथाप-  
 मपि सत्यथस्तव मकेवृषुथा नग्नता न हस्तसुलमे फले सति तरुः  
 समारूढते ॥४१॥ परिग्रहवर्ता सतां मयभवश्यमापद्यते प्रकोपपारि-  
 हिंसने च परुषानृतव्याहृती मन्त्रमथ चोरतो स्वमनतरच विभ्रा-  
 न्तता कुतो हि क्लृपात्मनां परमशुक्लसद्दुध्यानता ॥४२॥  
 स्वमाजनगतेषु वेद्यपरिभोज्यवस्तुध्वमी यदा प्रतिनिरीक्षिता-  
 स्तनुधृतः सुषुप्त्मात्मिका । तदा स्वचिदपोज्झने मरशमेव  
 तेषां भवेदद्याऽप्यमिनिरोधनं बहुतरात्मसंमूर्च्छनम् ॥४३॥  
 दिगम्बरतया स्थिताः स्वभुजमोज्जिनो ये सदा प्रमाद-  
 रहिताशयाः प्रचुरजीवहत्यामपि । न बन्धकलभागिनस्त इति

गम्यते येन ते प्रवृत्तमनुविभ्रति स्वबलयोग्यमद्याप्यमी ॥४४॥  
 यथागमविहारिणाभशनपानमक्ष्यादिषु प्रयत्नपरचेतसामविकलेन्द्रि-  
 याल्लोकिनाम् । कथंचिदसुपीडनाद्यादे भवेदपुण्योदय-स्तपोऽपि  
 वध एव ते स्वपरजीवमन्तापनात् ॥४५॥ मरुज्ज्वलनभूपयःसु  
 नियमात्क्वचिद्युज्यते परस्परविरोधितेषु विगतासुता सर्वदा प्रमाद  
 दजनितागसां क्वचिदपोहनं स्वागमात्कथं स्थितिभ्रजां सतां गगन  
 वाससां दोषितम् ॥४६॥ परैरनघनिवृत्तिः स्वगुणतत्त्वविध्वंसनं  
 व्यघोषि कपिलादिभिश्च पुरुषार्थविभ्रंशनं । त्वया सुमृदितैरसा  
 ज्वलितकेवलौघश्रिया ध्रुव निरुपमात्मकं सुखमनन्तमव्याहृतम् ४७  
 निरन्वयविनश्वरी जगति मुक्तिरिष्टापरैर्न करिचदिह चेटते स्वव्य-  
 सनाय मूढेतरः । त्वयाऽनुगुणसंहतेरतिशयोपलब्ध्यात्मिका स्थितिः  
 शिवमयी प्रवचने तव रूपापिता ॥४८॥ इत्यपि गुणस्तुतिः  
 परमनिवृत्तेः साधनी भवत्यलमतो जनो व्यवसितश्च तत्काङ्क्षया  
 विरंस्यतिच साधुना रुचिरलोभलामे सतां मनोऽमिल्लपिताप्तिरेव  
 ननु च प्रयासावधिः ॥४९॥ इति मम मतिवृत्त्या संहतिं त्वद्-  
 गुणानामनिशममितशक्तिं संस्तुवानस्य भक्त्या । सुखमनघमनंतं  
 स्वात्मसंस्थं महात्मन् ! जिन ! भवतु महत्या केवलभीविभूत्या  
 ॥५०॥

इति श्री निल्लितार्किक चूडामणिविद्यानन्दिस्वामिप्रणीतम्  
 वृहत्पञ्चनमस्कारस्तोत्रापरनामधेयं पात्रकेशरिस्तोत्रं समाप्तम् ।

श्री पद्मानन्दाचार्यविरचिता

✽ एकत्वसप्ततिः ✽

चिदानन्दैकसद्भावं परमात्मानमव्ययम् । प्रणमामि सदा शान्तं  
 शान्तये सर्वकर्मणाम् ॥१॥ स्वादिपञ्चकनिर्मुक्तं कर्माष्टकावेव-  
 र्जितम् । चिदात्मकं परं ज्योतिर्वन्दे देवेन्द्रपूजितम् ॥२॥ यदव्य-  
 क्तमबोधानां व्यक्तं सद्बोधचक्षुषाम् । सारं यत्सर्ववस्तूनां  
 नमस्तस्मै चिदात्मने ॥३॥ चित्तत्वं तत्प्रतिप्राणिदेह एव व्यव-  
 स्थितम् । तमरञ्जना न जानन्ति भ्रमन्ति च बहिर्बहिः ॥४॥  
 भ्रमतोऽपि सदा शास्त्रजाले महति केचन । न विदन्ति परं तत्त्वं  
 दारुणीव हुताशनम् ॥५॥ केचित् केन्येऽपि कारुण्यात्कथ्यमान-  
 मपि स्फुटम् । न मन्यन्ते न शृण्वन्ति महामोहमलीमसाः ॥६॥  
 घुरि घर्मात्मकं तत्त्वं दुःश्रुतेर्मन्दबुद्धयः । जात्यन्धहास्तरूपेण  
 ज्ञात्वा नश्यन्ति केचन ॥७॥ केचित्किञ्चित्परिज्ञाय कुतश्चिद्  
 गर्विताशयाः । जगन्मन्दं प्रपश्यन्तो नाश्रयन्ति मनीषिणः ॥८॥  
 जन्तुमुद्धरते धर्मः पतन्तं जन्मसंकटे । अन्यथा स कुतो आन्त्या  
 लोकैर्ग्राह्यः परीक्षितः ॥९॥ सर्वविद्वीतरागोक्तो धर्मः छतृतां  
 व्रजेत् । प्रामाण्यतो यतः पुंसो वाचः प्रामाण्यमिष्यते ॥१०॥  
 बहिर्निषयसंबन्धः सर्वः सर्वस्य सर्वदा । अतस्तद्भिन्नचैतन्य-  
 बोधयोगी तु दुर्लभौ ॥११॥ लब्धिपञ्चकसामग्रीविशेषात् पात्रतां  
 गतः । भव्यः सम्यग्दमादीनां यः स मुक्तिपथे स्थितः ॥१२॥

सम्यग्द्वन्द्वोद्योधचारित्रं त्रितयं मुक्तिकारणम् । मुक्तावैव सुखं तेन  
 तत्र यत्नो विधीयतां ॥१३॥ दर्शनं निश्चयः पुंसि बोधस्त-  
 द्बोध इत्यते । स्थितिरत्रैव चारित्रमिति येः गः शिवाश्रयः ॥१४॥  
 एकमेव हि चैतन्यं शुद्धनिश्चयतोऽथवा । कोऽवकाशो  
 विकल्पानां तत्राखण्डैरुवस्तुनि ॥१५॥ प्रमाणनयनिक्षेपा अर्वा-  
 चीने पदे स्थिताः । केवले च पुनस्तस्मिन्स्तदेकः प्रतिमासते ॥१६॥  
 निश्चयैकदशा नित्यं तदेवैकं चिदात्मकम् । प्रपश्यामि गतभ्रान्ति-  
 र्व्यवहारदृशा परम् ॥१७॥ अत्रमेकं परं शांतं सर्वोपाधिविवाङ्मि-  
 तम् । आत्मानमात्मना ज्ञात्वा तिष्ठेदात्मनि यः स्थिरः ॥१८॥  
 स एवाहं न जगन्नाथः स एव प्रभुरीश्वरः ॥१९॥ केवलज्ञानदृक्-  
 सौख्यस्वभावं तत्परं महः । तत्र ज्ञाते न किं ज्ञातिं दृष्टे दृष्टं  
 श्रुते श्रुतम् ॥२०॥ इति ज्ञेयं तदेवैकं श्रवणीयं तदेव हि ।  
 दृष्टव्यञ्च तदेवैकं नान्यन्निश्चितो बुधैः ॥२१॥ गुरुपदेशा-  
 तोऽभ्यासाद्द्वैराग्यादुपलभ्य यत् कृतकृत्यो भवेद्योगी तदेवैकं न  
 चापरम् ॥२२॥ तत्प्रति प्रीतिचिन्तेन येन वार्तापि हि श्रुता ।  
 निश्चितं स भवेद्भव्यो याति निर्वाणभाजनम् ॥२३॥ जानीते  
 यः परं ब्रह्म कर्मणः पृथगेकताम् । गतं तद्गतबोधतात्मा तत्स्वरूपं  
 स गच्छति ॥२४॥ केनापि परेण स्यात्सम्बन्धो बन्धकारणम्  
 परैकत्वपदे शान्ते मुक्तये स्थितिरात्मनः ॥२५॥ विकल्पोर्मि-  
 भरत्यक्तः शान्तः कैवल्यमाश्रितः । कर्माभावे भवेदात्मा वाताभावे  
 समुद्रवत् ॥२६॥ संयोगेन यदा यातं मत्तस्तत्सकलं परम् ।  
 तत्परित्याग-योगेन मुक्तोऽहमिति मे मतिः ॥२७॥ किं मे



करिष्यतः क्रूरौ शुभाशुभ निश्च्यवरी । रागद्वेषपरित्याग मोह-  
मंत्रेण क्रीलितौ ॥२८॥ सम्बन्धेऽपि सति त्याज्यौ रागद्वेषौ  
महात्मभिः । विना तेनापि ये क्युर्स्ते क्युः किं न बातुलाः ॥२९॥  
मनोवाक्कायचेष्टाभिस्तद्विधं कर्मजम्भते । उषास्यते तदेवैकं तेभ्यो  
भिन्नं मृशुञ्जुभिः ॥३०॥ द्वैततो द्वैतमद्वैतादद्वैतं खलु जायते ।  
लोहान्ग्लोहमय पात्रं हेम्नो हेममयं यथा ॥३१॥ निश्चयेन तदे-  
कत्वमद्वैतममृतं परम् । द्वितीयेन कृतं द्वैतं संसृतिर्व्यवहारतः  
॥३२॥ बंधमोक्षौ रतिद्वेषौ कर्मात्मनौ शुभाशुभौ । इति द्वैताभिता  
बुद्धिरसिद्धिरभिधीयते ॥३३॥ उदयोदीरणासत्ताप्रबन्धः खलु  
कर्मणः । गोष्ठ्यात्मधाम सर्वेभ्यस्तदेवैकं परं परम् ॥३४॥ क्रोधा-  
दिकर्मयोगेऽपि निर्विकारं परं महः । विकारकारिभेर्मेघैर्न  
विकारि नभो भवेत् ॥३५॥ नामापि हि परं तस्मान्निश्चयात्तद-  
नामकम् । जन्ममृत्यादिचाशेषं वपुर्धर्मं विदुर्बुधाः ॥३६॥ बोधे-  
नापि युतिस्तस्य चैतन्यस्य तु कल्पना । स च तच्च तयारैक्यं  
निश्चयेन विभाव्यते ॥३७॥ क्रियाकारकसम्बन्धप्रबन्धोज्झित-  
मूर्तिं यत् । एवं ज्योतिस्तदेवैकं शरण्यं मोक्षकाञ्चिन्नाम् ॥३८॥  
तदेवैकं परं ज्ञानं तदेकं शुचिं दर्शनम् । चारित्रं च तदेकं स्यात्  
तदेकं निर्मलं तपः ॥३९॥ नमस्यञ्च तदेवैकं तदेवैकञ्च मंगलम्  
उत्तमञ्च तदेवैकं तदेव शरण्यं सताम् ॥४०॥ आचारश्च तदेवैकं  
तदेवावश्यकक्रिया । स्वाध्यायस्तु तदेवैकमग्रमत्तस्य योगिनः ॥४१॥  
गुणशीलानि सर्वाणि धर्मश्चात्यन्तनिर्मलः । सम्भाष्यते परं  
ज्योतिस्तदेकमनुतिष्ठतः ॥४२॥ तदेवैकं परं रत्नं सर्वशास्त्र-

महोदधेः । रमणीयेषु सर्वेषु तदेकं पुरतः स्थितम् ॥४३॥ तदेवैकं  
 परं तत्त्वं तदेवैकं परं पदम् । मन्वाराध्यं तदेवैकं तदेवैकं परं  
 महः ॥४४॥ शस्त्रं जन्मतरुञ्छेदि तदेवैकं सतां मतम् । योगिनां  
 योगनिष्ठानां तदेवैकं प्रयोजनम् ॥४५॥ मुमुक्षूणां तदेवैकं मुक्तेः  
 पन्था न चोपरः । आनन्दोऽपि न चान्यत्र तद्विहाय विभाष्यते  
 ॥४६॥ संसारबोरधर्मेण रुदा तप्तस्य देहिनः । यन्त्रधारागृहं  
 शान्तं तदेव हिमशीतलम् ॥४७॥ तदेवैकं परं दुर्गमगम्यं कर्म-  
 विद्विषाम् । तदेवैतत्तिरस्कारकारि सारं निजं बलम् ॥४८॥ तदेव  
 महती विद्या स्फुरन्मन्त्रस्तदेव हि । औषधं तदपि श्रेष्ठं जन्म-  
 व्याधिबिनाशनम् ॥४९॥ अक्षयस्याक्षयानन्दमहाफलमरश्रियः  
 तदेवैकं परं बीजं निःश्रेयसलसत्तरोः ॥५०॥ तदेवैकं परं विद्वि-  
 त्तैलोक्यगृहनायकम् येनैकेन विना राज्ञे वसदप्येतदुद्रसम् ॥५१॥ शुद्धं  
 यदेव चैतन्यं तदेवाहं न संशयः । कल्पनयानयाप्येतद्भानमानन्दमन्दि-  
 रम् ॥५२॥ स्पृहा मोक्षेऽपि मोहोत्था तन्निर्धाय जायते । अन्यस्मै  
 तत्कथं शान्ता स्पृहयन्ति मुमुक्षवः ॥५३॥ अहं चैतन्यमेवैकं नान्यत्कि-  
 मपि जातुचित् । सम्बन्धोऽपि न केनापि दृढपक्षो ममेदृशः ॥५४॥  
 शरीरादिवहिरिचिन्ताचक्रसम्पर्कवर्जितम् । विशुद्धात्मस्थितं चिरं  
 कुर्वन्नास्तेनिरन्तरम् ॥५५॥ एवं सति यदेवास्ति तदस्तु किमिहा-  
 परैः । आसाद्यात्मनिदं तत्त्वं शान्तो भव सुखी भव ॥५६॥  
 अपारजन्मसन्तानपथभ्रान्तिकृतधमम् । तत्त्वामृतमिदं पीत्वा  
 नाशयन्तु मनीषिणः ॥५७॥ अतिसूक्ष्ममतिस्थूलमेकं चान्तेकमेव  
 तत् । स्वसंवेद्यमेधञ्च यदक्षरमनक्षरम् ॥५८॥ अनौपम्यमनिर्देश्यम-

प्रमेयमनाकुलम् । शून्यं पूर्णं च यन्नित्यमनित्यं च प्रचक्षते ॥५६॥  
 निरशरीरं निरालम्बं निरशब्दं निरुपाधि यत् । चिदात्मकं परं  
 ज्योतिर्बाह्यमानसगोचरम् ॥६०॥ इत्यत्र गहनेऽप्यन्तदुल्लेख्ये पर-  
 मात्मनि । उच्यते यत्तदाकाशं प्रत्यालेख्यं बिलिरूपते ॥६१॥  
 आस्तां तत्र स्थितो यस्तु चिंतामात्रपरिग्रहः । तस्यात्र जीवितं  
 श्लाघ्यं देवैरपि स पूज्यते ॥६२॥ सर्वाबन्धिरसंसारैः सम्य-  
 ग्ज्ञानविलोचनैः । एतस्योपासनोपायः साम्यमेकमुदाहृतम् ॥६३॥  
 साम्यं स्वास्थ्यं समाधिश्च योगश्चेतानिरोधनम् । शुद्धोपयोग  
 इत्येते भवन्त्येकार्थवाचकाः ॥६४॥ नाकृतिर्नाचरं वर्णो नो विक-  
 न्पश्च कश्चन । शुद्धचेतन्यमेवैकं यत्र तत्साम्यमुच्यते ॥६५॥  
 साम्यमेकं परं कार्यं साम्यं तत्त्वं परं स्मृतम् । साम्यं सर्वोप-  
 देशानामुपदेशो विमुक्तये ॥६६॥ साम्यं सद्बोधनिर्माणं शश्वदा-  
 नन्दमन्दिरम् । साम्यं शुद्धात्मनो रूपं द्वारं मोक्षैकसधनः ॥६७॥  
 साम्यं निश्शेषशास्त्राणां सारमाहुर्विपरिचितः । साम्यं कर्ममहादा-  
 षदाहे दावानलायते ॥६८॥ साम्यं शरण्यमित्याहुर्वोगिर्ना योग-  
 गोचरम् । उपाधिरचिताशेषं दोषक्षपणकारणम् ॥६९॥ निस्पृहा-  
 याणिमाद्यञ्जलण्डे साम्यसरोजुषे । इंसाय शुचये मुक्तिर्हंसीदक्ष-  
 दशै नमः ॥७०॥ ज्ञानिनोऽमृतसंगाय मृत्युस्तापकरोऽपि सन् ।  
 आमकुम्भस्य लोकेऽरिम्भन् भवेत् पाकविधियथा ॥७१॥ मानुष्यं  
 सत्कुले जन्म लक्ष्मीबुद्धिः कृतज्ञता । विवेकेन विना सर्वं सदप्ये-  
 तन्न किञ्चन ॥७२॥ चिदचिद्द्वेषरे तस्ये विवेकस्तद्विवेचनम् ।  
 उपादेयमुपादेयं हेयं हेयञ्च कुर्वतः ॥७३॥ दुःखं किञ्चित्सुख

किञ्चिच्चित्तं माति जडात्मनः । संसारेऽत्र पुनर्नित्यं सर्वं दुःखं  
 विवेकिनः ॥७४॥ हेयञ्च कर्म रागादि तत्कार्यञ्च विवेकिनः ।  
 उपादेयं परं ज्योतिरुपयोगैकलक्षणम् । ७५॥ यदेव चैतन्यमहं  
 तदेव, तदेव जानाति तदेव पश्यति । तदेव चैकं परमस्ति  
 निरचयाद् गतोऽस्मि भावेन तदेकतां परम् ॥७६॥ एकत्वसप्तति-  
 रियं सुरसिन्दुरुच्चैः श्रीपद्मनन्दिहिमभूधरतः प्रसूता । यो गाहते  
 शिवपदाम्बुनिधिं प्रविष्टामेतां लमेत स नरः परमां विशुद्धिम् ॥  
 ७७॥ संसारसागरसमुत्तरणैकसेतुमेव सतां सदुपदेशमुपाभितानाम् ।  
 कुर्यात्पदं मललवोऽपि किमन्तरङ्गे सम्यक् समाधिविधि-  
 मन्निधनिस्तरङ्गे ॥७८॥ आत्मा भिन्नस्तदनुगतिमत्कर्म भिन्नं  
 तयार्या, प्रत्यासत्तेर्भवति विकृतिः सापि भिन्ना तथैव । कालक्षेत्र-  
 प्रमुखमपि यत्तच्च भिन्नं मतं मे, भिन्नं भिन्नं निजगुणकलालङ्कृतं  
 सर्वमेतत् ॥७९॥ येऽभ्यासयन्ति कथयन्ति विचारयन्ति, सम्भाव-  
 यन्त च मुहुर्मुहुरात्मतत्त्वम् । ते मोक्षमक्षयमनूनमनन्तसौख्यम्,  
 क्षिप्रं प्रयान्ति नवकेवललब्धिरूपम् ॥८०॥

॥ इति पद्मनन्दाचार्यविरचिता एकत्वसप्ततिः समाप्ता ॥



## तत्त्वार्थसूत्रम्

(आचार्यश्रीमदुमास्वामिविरचितं)

सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥१॥ तत्त्वार्थश्रद्धानं  
 सम्यग्दर्शनम् ॥ २ ॥ तभिसर्गादधिगमाद्वा ॥ ३ ॥ जीवाजीवा-  
 स्रवबन्धसंवरनिर्जरा मोक्षास्तत्त्वम् ॥ ४ ॥ नामस्थापनाद्रव्यभावत-  
 स्तन्न्यासः ॥ ५ ॥ प्रमाणनयैरधिगमः ॥ ६ ॥ निर्देशस्वामित्व-  
 साधनाऽधिकरणस्थिति विधानतः ॥ ७ ॥ सत्सख्याक्षेत्रस्पर्शन-  
 कालान्तरभावान्पबहुत्वैश्च ॥८॥ मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि  
 ज्ञानम् ॥ ९ ॥ तत्प्रमाणे ॥ १० ॥ आद्ये 'परोक्षम् ॥ ११ ॥  
 प्रत्यक्षमन्यत् ॥ १२ ॥ मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताऽनिनिबोध  
 इत्यनर्थान्तरम् ॥ १३ ॥ तदिन्द्रियानिन्द्रियनिमित्तम् ॥ १४ ॥  
 अवग्रहेहावायधारणाः ॥ १५ ॥ बहुबहुविधक्षिप्राऽनिःसृताऽनुक्त-  
 ध्रुवाणां सेतराणाम् ॥ १६ ॥ अर्थस्य ॥१७॥ व्यञ्जनस्यावग्रहः  
 ॥१८॥ न चक्षुरनिन्द्रियाम्याम् ॥ १९ ॥ श्रुतं मतिपूर्वं द्वयनेक-  
 द्वादशमेदम् ॥ २० ॥ भवप्रत्ययोऽवधिर्देवनारकाणाम् ॥ २१ ॥  
 क्षयोपशमनिमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ॥ २२ ॥ श्रुजुविपुल-  
 मती मनःपर्ययः ॥ २३ ॥ विशुद्धयप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ॥२४  
 विशुद्धिक्षेत्रस्वामिविषयेभ्योऽवधिमनःपर्यययोः ॥ २५ ॥ मति-  
 श्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्वपर्यायेषु ॥ २६ ॥ रूपिष्ववधेः ॥२७॥ तद-  
 नन्तमागे मनःपर्ययस्य ॥२८॥ सर्वद्रव्यपययिषु केवलस्या ॥२९॥

एकादीनि माज्यानि युगपदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥ ३० ॥  
 मतिश्रुतावधयो निपर्ययश्च ॥ ३१ ॥ सदसत्तोरतिशेषाद्यद्व्यो-  
 पलब्धेरुन्मत्तवत् ॥ ३२ ॥ नैगमसंग्रहव्यवहारजुसूत्रशब्दसममि-  
 रुद्धैवंभूता नयाः ॥ ३३ ॥

इति पूज्यपादश्रीमद्गुमास्वामि वै चित्ते तत्त्वार्थाभिगो मो जशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः

श्रीपशमिकक्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्वमौदयिक-  
 पाणिनामिकौ च ॥१॥ द्विनवाष्टादशैकविंशतित्रिमेदा यथाक्रमम्  
 ॥ २ ॥ सम्यक्त्वचारित्रे ॥ ३ ॥ ज्ञानदर्शनदानज्ञाभभोगोपभोग-  
 वीर्याणि च ॥ ४ ॥ ज्ञानाज्ञानदर्शनलब्धयश्चतुस्त्रिपञ्चमेदाः  
 सम्यक्त्वचारित्रसंयमासंयमाश्च ॥ ५ ॥ गतिरूपायलिङ्गमिध्या-  
 दर्शनाऽज्ञानाऽसंयताऽ मिद्धलेस्याश्चतुरचतुस्त्र्येकैकैकैकषड्मेदाः  
 ॥ ६ ॥ जीवमव्याऽमव्यत्वानि च ॥७॥ उपयोगो लक्षणम् ॥८॥  
 स द्विविधोऽष्टचतुर्मेदः ॥ ९ ॥ संसारिणो मुक्ताश्च ॥ १० ॥  
 समनस्काऽमनस्काः ॥ ११ ॥ संसारिणस्त्रसस्थावराः ॥ १२ ॥  
 पृथिव्यप्तेजोवायुवनस्पतयः स्थावराः ॥१३॥ द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः  
 ॥१४॥ पञ्चेन्द्रियाणि ॥ १५ ॥ द्विविधानि ॥ १६ ॥ निर्वृत्युप-  
 करणे त्र्येन्द्रियम् ॥ १७ ॥ लब्ध्युपयोगी भावेन्द्रियम् ॥ १८॥  
 स्पर्शनरसनघ्राणचक्षुःश्रोत्राणि ॥ १९ ॥ स्पर्शनसगन्धवर्णशब्दा-  
 स्तदर्थाः ॥ २० ॥ श्रुतमनिन्द्रियस्य ॥ २१ ॥ वनस्पत्यन्ता-  
 नामेकम् ॥ २२ ॥ कृमिपिपीलिकाभ्रमरमनुष्यादीनामेकैकषड्द्वानि  
 ॥ २३ ॥ संज्ञिनः समनस्काः ॥ २४ ॥ विग्रहगतौ कर्मयोगः  
 ॥ २५ ॥ अनुश्रेणि गातेः ॥२६ ॥ अविग्रहा जीवस्य ॥२७॥

विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ॥ २८ ॥ एकसमयाऽ-  
 विग्रहा ॥२९॥ एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ॥ ३० ॥ सम्मूर्च्छनग-  
 भौपपादा जन्म ॥ ३१ ॥ साचक्षतीतसंभृताः सेतरा मिश्राश्चैक-  
 शस्तद्योनयः ॥ ३२ ॥ जरायुजातड्वजपोतानां गर्भः ॥ ३३ ॥  
 देवनारकाणामुपपादः ॥ ३४ ॥ शेषाणां सम्मूर्च्छनम् ॥ ३५ ॥  
 औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणानि शरीराणि ॥३६॥ परं  
 परं वृत्तम् ॥३७॥ प्रदेशताऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ॥३८॥  
 अनन्तगुणे परे ॥३९॥ अप्रतीघाते ॥४०॥ अनादिसम्बन्धे  
 च ॥४१॥ सर्वस्य ॥४२॥ तदादीनि भाज्यानि युगपदेक-  
 स्मिन्नाचतुर्भ्यः ॥४३॥ निरुपभोगमन्त्यम् ॥४४॥ गर्भसम्मूर्च्छ-  
 नजमाद्यम् ॥४५॥ औपपादिकं वैक्रियिकम् ॥४६॥ लब्धिप्रत्यर्थं  
 च ॥४७॥ तैजसमपि ॥४८॥ शुभं विशुद्धमव्याधाति चाहारकं  
 प्रमत्तसंयतस्यैव ॥४९॥ नारकसम्मूर्च्छिनो नष्टसकानि ॥५०॥  
 न देवाः ॥५१॥ शेषास्त्रिवेदाः ॥५२॥ औपपादिकचरमोत्तम-  
 वेहाऽसंख्येयसर्वायुषाऽनपवर्त्यायुषः ॥

॥ इति पूज्यपादश्रामदुमास्वामिविरचिते तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे  
 द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥

रत्नशर्कराबालुकापङ्कधूमतमोमहातमः प्रभा भूमयो घनाम्बु-  
 वाताकाशप्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ॥१॥ तासु त्रिंशत्पञ्चविंशति-  
 पञ्चदशदशत्रिपञ्चनेकनरकशतसहस्राणि पञ्च चैव यथा-  
 क्रमम् ॥ २ ॥ नारका नित्याशुमतरलेरथापरिष्णामदेहवेदना-  
 विक्रियाः ॥३॥ परस्परोदीरितदुःखाः ॥४॥ संक्लिष्टासुरोदीरित-  
 दुःखारच प्राक्चतुर्भ्याः ॥५॥ तेष्वेकत्रिसप्तदशसप्तदशद्विंशति-

त्रयस्त्रिंशत्सामरोपमा सन्धानां परा स्थितिः ॥६॥ जम्बूद्वीपलव-  
 योदादयः शुभनामानो द्वीपसमुद्राः ॥७॥ द्विद्विर्विष्कम्भाः पूर्व-  
 पूर्वपरिच्छेपिणो बलपाकृतयः ॥ ८ ॥ तन्मध्ये मेरुनाभिर्बुधो  
 योजनशतसहस्रविष्कम्भो जम्बूद्वीपः ॥ ९ ॥ भरतहैमवतहरि-  
 विदेहरम्पकृहैरण्यतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ॥ १० ॥ तद्विभाजिनः  
 पूर्वापरायता हिमवन्महाहिम । भिषघनीलरुक्मिशिखरिखो वर्षधर-  
 पर्वताः ॥ ११ ॥ हेमार्जुनतपनीयवेङ्कयंरजतहेममयाः ॥ १२ ॥  
 मणिविचित्रपाशर्वा उपरि मूले च तुल्यविस्ताराः ॥१३॥ पञ्चमहा-  
 पञ्चतिगिञ्जकेशरिमहापुण्डरीकपुण्डरीका हृदास्तेषामुपरि ॥१४॥  
 प्रथमो योजनसहस्रायामस्तदर्द्धविष्कम्भो हृदः ॥ १५ ॥ दशयो-  
 जनावगाहः ॥ १६ ॥ तन्मध्ये योजनं पुष्करम् ॥ १७ ॥ तद्द्वि-  
 गुणद्विगुणा हृदाः पुष्कराणि च १८ ॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्रीह्री-  
 धृतिक्तीर्तिबुद्धिलक्ष्म्यः पत्न्योपमस्थितयः ससामानिकपारिवत्कः  
 ॥ १९ ॥ गङ्गासिन्धुरोहिद्रोहितास्याहरिद्धरिकान्तासीतासीता-  
 दानारीनरकान्तासुनर्यारूप्यकूलारक्तारकोदाः सरितस्तन्मध्यगाः  
 ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्त्वपरगाः ॥२२॥  
 चतुर्दशनदासहस्रपरिवृता गङ्गासिन्धवादयो नद्यः ॥ २३ ॥ भरतः  
 षट्त्रिंशतिपञ्चयोजनशतविस्तारः षट्चैकोनविंशतिभागा योज-  
 नस्य ॥ २४ ॥ तद्द्विगुणद्विगुणविस्तारा वर्षधरवर्षा विदेहान्ताः  
 ॥ २५ ॥ उत्तरा दक्षिणतुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयोर्द्विहासी  
 षट्समयाम्बामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥ २७ ॥ ताम्यामपरा  
 भूमयोऽवस्थिताः ॥ २८ ॥ एकद्वित्रिपत्न्योपमस्थितयो हैमवत-  
 कहारिवर्षकृद्वैवकुरवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु



सङ्ख्येयकालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य  
 नवतिशतभागः ॥३२॥ द्विर्द्वातर्काखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे  
 च ॥३४॥ प्राङ् मालुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्या म्लेच्छाश्च  
 ॥३६॥ भरतैरावतविदेहाः कर्मभूमयोऽन्यत्र देवकुरुत्तरकुरुम्यः  
 ॥३७॥ नृस्थिती परावरे त्रिपन्न्योपमान्तर्हृते ॥३८॥ तिर्य-  
 ग्योनिजानां च ॥३९॥

॥ इति पूज्यपादश्रीमदुमास्वामिविरचिते तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे  
 तृतीयोऽध्यायः ॥३॥

देवाश्चतुर्धिकायाः ॥१॥ आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ॥२॥  
 दशाष्टपञ्चद्वादशविकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ॥३॥ इन्द्रसामा-  
 निकत्रायस्त्रिंशदारिषदात्मरक्षलोकपालानीकप्रकीर्णकामियोग्य-  
 किन्चिषिकाश्चैकशः ॥४॥ त्रायस्त्रिंशत्तीक्ष्णालवज्यां व्यन्तरज्यो-  
 तिष्काः ॥५॥ पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ॥६॥ कायप्रवीचारा आ ऐशा-  
 नात् ॥७॥ शेषाः स्पर्शरूपशब्दमनःप्रवीचाराः ॥८॥ परेऽप्रवी-  
 चाराः ॥९॥ भवनवासिनोऽसुरनागविद्युत्सुपर्णाग्निवातस्तनितो-  
 दधिद्वीपदिक्कुमाराः ॥१०॥ व्यन्तराः किन्नरकिम्पुरुषमहोर-  
 गगन्धर्वयक्षराक्षसभूतपिशाचाः ॥११॥ ज्योतिष्काः सूर्या-  
 चन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च ॥१२॥ मेरुप्रदक्षिणा  
 नित्यगतयो नृलोके ॥१३॥ उत्कृतः कालविभागः ॥१४॥  
 बहिरवस्थिताः ॥१५॥ वैमानिकाः ॥१६॥ कल्पोपपन्नाः कल्पा-  
 तीतारश्च ॥१७॥ उपर्युपरि ॥१८॥ सौधर्मेशानसानत्कुमार-  
 माहेन्द्रब्रह्मप्रभोत्तरलान्तवकापिष्ठशुकमहाशुकशतारसहस्रारेश्वान-  
 तप्राणतयोरारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजयवैजयन्तजय-

न्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ॥१६॥ स्थितिप्रभावसुखयु-  
तिलेश्या विशुद्धीन्द्रियावधिविषयतोऽधिकाः ॥२०॥ गतिशरीर-  
परिग्रहामिमानतो हीनाः ॥२१॥ पीतपद्मशुक्ललेश्या द्वित्रिशेषेषु  
॥ २२ ॥ प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ॥२३॥ ब्रह्मलोकालया  
लौकान्तिकाः ॥२४॥ सारस्वतादित्यवह्न्यरुह्यगर्दतोपतुषिताव्याधा  
धारिष्टाश्च ॥२५॥ विषयादिषु द्विचरमाः ॥२६॥ औपपादिक-  
मनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ॥२७॥ स्थितिरसुरनागसुपर्ण-  
द्वीपशेषार्द्धा सागरोपमत्रिपल्योपमार्द्धहीनमिताः ॥ २८॥ सौधर्मै-  
शानयोः सागरोपमे अधिके ॥ २९ ॥ सानत्कुमागमाद्देन्द्रयोः  
सप्त ॥ ३० ॥ त्रिमप्तनवैकादशत्रयोदशर्षचदशभिरधिकानि  
तु ॥ १॥ आरणाच्युतादूर्ध्ववमेकैकेन नवसुग्रैवेयकेषु विजयादिषु  
सर्वार्थसिद्धौ च ॥३२॥ अपरा पल्योपममधिकम् ॥३३॥ परतः  
परतः पूर्वापूर्वानन्तराः ॥३४॥ नारकाणां च द्वितीयादिषु ॥३५॥  
दशवर्षसहस्राणि प्रथमायाम् ॥ ३६ ॥ भवनेषु च ॥ ३७ ॥  
व्यन्तराणां च ॥ ३८ ॥ परा पल्योपममधिकं ॥३९॥ ज्योति-  
ष्काणां च ॥ ४० ॥ तदष्टमागोऽपरा ॥ ४१ ॥ लोकान्तिकाना-  
मष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ॥४२ ॥

॥ इति पूज्यपादश्रीमदुमास्वामिविरचिते तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे  
चतुर्थोऽध्यायः ॥४१॥

अर्जावकाया धर्माधर्माकाशपुद्गलाः ॥ १ ॥ द्रव्याणि ॥२॥  
जीवाश्च ॥३॥ नित्यावस्थितान्यरूपाणि ॥४॥ रूपिण्यः पुद्गलाः  
॥५॥ आ आकाशादेकद्रव्याणि ॥६॥ निष्क्रियाणि च ॥ ७ ॥  
असहस्र्येवाः प्रदेशाः धर्माधर्मैकजीवानाम् ॥८॥ आकाशस्या-

नन्ताः ॥६॥ सङ्ख्येयासङ्ख्येयाश्च पुद्गलानाम् ॥१०॥ नाशोः  
 ॥११॥ लोकाकाशोऽवगाहः ॥१२॥ धर्माधर्मयोः कृत्स्ने ॥१३॥  
 एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ॥१४॥ असङ्ख्येयभागादिषु  
 जीवानाम् ॥१५॥ प्रदेशसंहारविसर्पाम्यां प्रदीपवत् ॥१६॥  
 गतिस्थित्युपग्रही धर्माधर्मयोरुपकारः ॥१७॥ आकाशस्याव-  
 गाहः ॥१८॥ शरीरवाङ्मनःप्रणयानाः पुद्गलानाम् ॥१९॥  
 सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च ॥२०॥ परस्परपग्रहा जीवानाम्  
 ॥२१॥ वर्तनापरिणामक्रिया परत्वापरत्वे च कालस्य ॥२२॥  
 स्पर्शरसगन्धवर्णवन्तः पुद्गलाः ॥२३॥ शब्दबन्धसौन्दर्यस्थौल्य-  
 संस्थानभेदतमस्त्रायाऽऽस्तपोद्योतवन्तश्च ॥२४॥ अणवस्कन्धाश्च  
 ॥२५॥ भेदसङ्घातेभ्य उत्पद्यन्ते ॥२६॥ भेदादणुः ॥२७॥  
 भेदसङ्घाताभ्यां चाणुषः ॥२८॥ सद्द्रव्यलक्षणम् ॥२९॥  
 उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं सत् ॥३०॥ तद्भावाव्ययं नित्यम् ॥३१॥  
 अपित्तानर्पितसिद्धेः ॥३२॥ स्निग्धरूक्षत्वाद्यन्धः ॥३३॥ न  
 जघन्यगुणानाम् ॥३४॥ गुणसाम्ये सदृशानाम् ॥३५॥  
 द्वयधिकदिगुणानां तु ॥३६॥ बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ॥३७॥  
 गुणपर्ययवद्द्रव्यम् ॥३८॥ कालश्च ॥३९॥ सोऽनन्तसमयः  
 ॥४०॥ द्रव्याभया निर्गुणागुणाः ॥४१॥ तद्भावःपरिणामः ॥४२॥

इति तत्त्वार्थाधिगमे पृथ्यपादश्रीमदुमास्वामिचिरचिते मोक्षशास्त्रे  
 पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥

कायवाङ्मनःकर्मयोगः । १। स आस्रवः ॥२॥ शुभः  
 पुण्यस्याशुभःपापस्य ॥३॥ सकषायाकषाययोः साम्परायिके-  
 र्यापययोः ॥४॥ इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्च-

त्रिंशतिसंख्ययाः पूर्वस्थ भेदाः ॥ ५ ॥ तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातमावा-  
 धिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः ॥ ६ ॥ अधिकरणं जीवाजीवाः  
 ॥ ७ ॥ आद्यं संग्मसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषाय-  
 विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ॥ ८ ॥ निर्वर्तनानिन्वेपसयोगनिसर्गा  
 द्विचतुर्द्विभिभेदाः परम् ॥ ९ ॥ तत्रदेवनिन्द्वमात्सर्यान्तराया-  
 सादनोपघाता ज्ञानदर्शनावरणयोः ॥ १० ॥ दुःखशोक्तापाक्रन्द-  
 नवधपरिवेदनान्यात्मपरोपयस्थानान्यमद्वेषस्य ॥ ११ ॥ भूत-  
 वृत्त्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्दे-  
 धस्य ॥ १२ ॥ केवलिश्रुतमङ्गधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य  
 ॥ १३ ॥ कषाघोदयात्तीव्रपरिष्णामश्चारित्रमोहस्य ॥ १४ ॥ बह्वा-  
 रम्भपरिग्रहत्वं नारवस्यायुषः ॥ १५ ॥ माया तैर्यग्येनस्य ॥ १६ ॥  
 अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ॥ १७ ॥ स्वभावमार्दवं च ॥ १८ ॥  
 निःशीलव्रतित्वं च सर्वेषाम् ॥ १९ ॥ सरागसंयमसंयमासंयमाकाम-  
 निर्जगत्वालतपांसि दैवस्य ॥ २० ॥ सम्यक्त्वं च ॥ २१ ॥ योग-  
 वक्रता त्रिसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ॥ २२ ॥ तद्विपरीतं शुभस्य  
 ॥ २३ ॥ दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारे-  
 ऽमीच्छज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्यागतपती साधुसमाधिर्वैया-  
 वृत्त्यकरणमर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनमक्तिरावश्यकपरिहायिर्मार्ग-  
 प्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ॥ २४ ॥ परात्म-  
 निन्दाप्रशंसि सदसद्गुणोच्छ्वादनोद्भावे च नीचैर्गोत्रस्य ॥ २५ ॥  
 तद्विपर्ययी नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ॥ २६ ॥ विघ्नकरण-  
 मन्तरापस्य ॥ २७ ॥

इति पञ्चपाद त्रीमदुमास्वामिबिठचित्ते तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे  
 षट्ठोऽध्यायः ६

हिंसानृतस्तेष्वीदं परिग्रहेभ्यो विरतिर्ब्रतम् ॥१॥ देशसर्व-  
 तोऽद्युमहतो ॥ २ ॥ तत्स्थैयार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ॥३॥  
 वाग्मनोगुप्तीर्यादाननिक्षेपणसमित्यालोकितपानभोजनानि पञ्च  
 ॥ ४ ॥ क्रोधलोभभीरुत्वहास्यप्रत्यारूपानान्यनुवीचीमाषणं च  
 पंच ॥ ५ ॥ शून्यागारविमोचितावासपरोपरोधाकरणमैक्ष्यशुद्धि-  
 सधर्माविसंवादाः पंच ॥ ६ ॥ स्त्रीरामकथोभ्रवणतन्मनोहरा-  
 ङ्गनिरीक्षणपूर्वतरानुस्मरणपृष्येष्टरसस्वशरीरसंस्कारत्यागाः पंच  
 ॥ ७ ॥ मनोज्ञामनोज्ञेन्द्रियविषयरागद्वेषवर्जनानि पंच ॥ ८ ॥  
 हिंसादिष्विहासुत्रापायावद्यदर्शनं ॥ ९ ॥ दुःखमेव वा ॥ १० ॥  
 मैत्रीप्रमोदकारुण्यमाध्यस्थानि च सत्त्वगुणधिककिलरयमाना-  
 विनयेषु ॥ ११ ॥ जगत्कायस्वभावौ वा संवेगवैराग्यार्थम् ॥१२॥  
 प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा ॥ १३ ॥ अस्वर्गमिधानमनृतम्  
 ॥ १४ ॥ अदत्तादानं स्तेयम् ॥१५॥ मैथुनमब्रह्म ॥१६॥ मूर्च्छा  
 परिग्रहः ॥१७॥ निःशन्वो वृत्ती ॥१८॥ अगार्यनगारश्च ॥१९॥  
 अणुव्रतोऽगारी ॥२०॥ दिग्देशानर्थदण्डविरतिसामायिकप्रोषधोप-  
 वासोपभोगपरिभोगपरिमाणातिथिसंविभागव्रतसम्पन्नश्च ॥२१॥  
 मारखान्तिकीं सन्लेखनां जोषिता ॥ २२ ॥ शङ्काहाङ्गाविचि-  
 कित्सान्यदृष्टिप्रशंसासंस्तवाः सम्यग्दृष्टेरतीचाराः ॥ २३ ॥ व्रत-  
 शीलेषु पंच पंच. यथाक्रमम् ॥ २४ ॥ बन्धवबच्छेदातिभारारो-  
 पणाभपाननिरोधाः ॥ २५ ॥ मिथ्योपदेशरहोभ्याख्यानकूटलेख-  
 क्रियान्यासापहारसाकारमन्त्रमेदाः ॥ २६ ॥ स्तेनप्रयोगतदाह-  
 तादानविरुद्धराज्यातिक्रमहीनाधिकमानोन्मानप्रतिरूपकम्यबहाराः  
 ॥२७॥ परविवाहकरणेत्वरिकापरिगृहीतापरिगृहीतागमनानङ्गकी-

ङाकामतीव्राभिनिवेशाः ॥२८॥ क्षेत्रवास्तुहिरण्यसुवर्षाधनधान्य-  
 दासीदासकुप्यप्रमाणातिक्रमाः ॥२९॥ ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम-  
 च्छेत्रवृद्धिसमृत्यन्तराधानानि ॥३०॥ आनयनप्रेष्यप्रयोगशब्दरूपा-  
 नुपातपुद्गलक्षेपाः ॥३१॥ कन्दर्पकौत्कुच्यमौखर्यासमीक्ष्याधि-  
 करणोपभोगपरिभोगानर्थक्यानि ॥३२॥ योगदुः प्रक्षिधानानाद-  
 रस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३३॥ अप्रत्यवेक्षिताप्रमार्जितोत्सर्गादान-  
 संस्तरोपक्रमणानादरस्मृत्यनुपस्थानानि ॥३४॥ सच्चित्तसम्बन्ध-  
 सन्मिश्राभिषवदुःपकाहाराः ॥ ३५ ॥ सच्चित्तनिक्षेपापिधानपर-  
 व्यपदेशमात्सर्यकालातिक्रमाः ॥ ३६ ॥ जोषितमरणार्शांतामित्रा-  
 नुरागसुखानुबन्धनिदानानि ॥३७॥ अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो-  
 दानम् ॥ ३८ ॥ विधिद्रव्यदातृपात्रविशेषात्तद्विशेषः ॥ ३९ ॥

॥ इति पूज्यपादश्रीभट्टमारवामिविरचिते तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे  
 सप्तमोऽध्यायः ॥७॥

मिथ्यादर्शनाविरतिप्रमादकषाययोगा बन्धहेतवः ॥ १ ॥  
 सकषायत्वाज्जीवः कम्मणो योग्यान्पुद्गलानादक्षे स बन्धः ॥२॥  
 प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः ॥ ३ ॥ आद्यो ज्ञानदर्शन-  
 वरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः ॥ ४ ॥ पञ्चनवद्वयष्टा  
 त्रिंशत्तितुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपञ्चमेदा यथाक्रमम् ॥ ५ ॥ मतिश्रु-  
 तावधिमनःपर्ययकेवलानाम् ॥ ६ ॥ चक्षुरचक्षुरवधिकेवलानां  
 निद्रानिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाप्रचलास्त्यानगृह्ययश्च ॥७॥ सदस-  
 द्बोधे ॥८॥ दर्शनचारित्रमोहनीयाकषायकषायवेदनीयाख्यास्त्रि-  
 द्विनवषोडशमेदाः सम्यक्त्वमिथ्यात्वतदुभयान्यकषायकषायौ  
 हास्यरत्परविशोकमयजुगुप्सास्त्रीपुरुषसकवेदा अनन्तानुबन्ध-

प्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनविकल्पान्चैकशः क्रोधमानमाया-  
 ल्लोभाः ॥ ६ ॥ नारकतैर्यग्योनमानुषदैवानि ॥१०॥ गतिजाति-  
 शरीराङ्गोपाङ्गनिर्माणवन्धनसङ्घातसंस्थानसंहननस्पर्शरसगन्ध-  
 वर्णानुपूर्य्यगुरुलघूपघातपरघात।तपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतयः  
 प्रत्येकशरीरत्रसमुभगसुस्वरसुभषुत्तमपर्याप्तिस्थिरादेययशःकीर्ति-  
 सेतराशि तीर्थकरत्वं च ॥११॥ उच्चैर्नीचैश्च ॥१२॥ दानलाम-  
 भोगोपभोगवीर्याणाम् ॥ १३ ॥ आदितमितसृणु,मन्तरायस्य  
 च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोट्यः परा स्थितिः ॥१४॥ सप्तति-  
 मोहनीयस्य ॥१५॥ विंशतिर्नामगोत्रयोः ॥१६॥ त्रयस्त्रिंश-  
 त्सागरोपमाण्यायुषः ॥१७॥ अपाद्द्वादशमुहूर्तोवेदनीयस्य ॥ ८॥  
 नामगोत्रयोरष्टौ ॥१६॥ शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ॥२०॥ विपाकोऽ-  
 नुभवः ॥२१॥ स यथानाम् ॥२२॥ ततश्च निर्जरा ॥ २३ ॥  
 नामप्रत्ययाःसर्वतोय गविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताःसर्वात्म-  
 प्रदेशेष्वनन्तानन्तप्रदेशाः ॥ २४ ॥ सद्ब्रह्मः शुभायुर्नामगोत्राणि  
 पुण्यम् ॥ २५ ॥ अतोऽन्यत्पापम् ॥ २६ ॥

॥ इति पूज्यपादश्रीमदुमास्वामिविरचिते तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे  
 अष्टमोऽध्यायः ॥८॥

आस्रवनिरोधः संवरः ॥१॥ स गुप्तिसमितिघर्मानुप्रेक्षापरी-  
 षहज्यचारित्रैः ॥ २ ॥ तपसा निर्जरा च ॥ ३ ॥ सम्यग्योगनि-  
 ब्रह्मो गुप्तिः ॥४॥ ईर्यामादैपणादाननिक्षेपोत्सर्गाः समितयः॥५॥  
 उत्तमक्षमामार्दवाजैवसत्यशौचसंयमतपस्त्यागाकिञ्चन्य ब्रह्मच-  
 र्य्याणि धर्मः ॥६॥ अनित्याशरणसंसारैकत्वान्यत्वाशुच्या-  
 स्रवसंवरनिर्जरालोकबोधिदुर्लभधर्मस्वाख्याततत्त्वानुचिन्तनमनु-

प्रेक्षाः ॥७॥ मार्गाच्यवननिर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ॥८॥  
 वृत्तिपासाशीतोष्णदंशमशकनाग्न्यारतिस्त्रीचर्यानिषद्याशय्या-  
 क्रोशवधयाञ्चालोभरोगतृणस्पर्शमलसत्कारपुरस्कारप्रज्ञाज्ञानाद-  
 र्शनानि ॥९॥ सूक्ष्मसाम्परायण्यस्थवीतरागयोश्चतुर्दश ॥१०॥  
 एकादश जिने ॥११॥ बादरसाम्पराये सर्वे ॥१२॥ ज्ञानावरणे  
 प्रज्ञाज्ञाने ॥१३॥ दर्शनमोहान्तराययोरदर्शनालामौ ॥ १४ ॥  
 चारित्रमोहे नाग्न्यारतिस्त्रीनिषद्याक्रोशयाञ्चासत्कारपुरस्काराः  
 । १५ ॥ वेदनीये शेषाः ॥ ६ ॥ एकादयो भाज्या युगपदेक-  
 स्मिन्नेकोनविंशतिः ॥ १७ ॥ सामायिकच्छेदोपस्थापनापरिहार-  
 विशुद्धिर्धम्मसाम्पराययथाख्यातमिति चारित्रम् ॥ १८ ॥ अन-  
 शनावमौदर्यवृत्तिपरिसंख्यानरसपरित्यागविविक्तशय्यासनकाय-  
 क्लेषा बाह्यं तपः ॥१९॥ प्रायश्चित्तविनयवैयावृत्त्यस्वाध्यायव्यु-  
 त्सर्गध्यानान्युत्तरम् ॥ २० ॥ नवचतुर्दशपञ्चद्विभेदो यथाक्रमं  
 प्रागध्यानात् ॥ २१ ॥ आलोचनाप्रतिक्रमणतदुभयविवेकव्युत्सर्ग-  
 तपश्छेदपरिहारोपस्थापनाः ॥ २२ ॥ ज्ञानदर्शनचारित्र्योपचाराः  
 ॥ २३ ॥ आचार्योपाध्यायतपस्विरौच्यग्लानगणकुलसंघसाधु-  
 मनोज्ञानाम् ॥२४॥ वाचनपृच्छनानुप्रेक्षाम्नायधर्मोपदेशाः ॥२५॥  
 बाह्याभ्यन्तरोपधयोः ॥ २६ ॥ उत्तमसंहननस्यैकाग्रचिन्तानिरोधो  
 ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ॥२७॥ आर्तरीद्रघर्म्यशुक्लानि ॥२८॥ परे  
 मोक्षहेतू ॥ २९ ॥ आर्तममनोज्ञस्य सम्प्रयोगे तद्विप्रयोगाय  
 स्मृतिसमन्वाहारः ॥३०॥ विपरीतं मनोज्ञस्य ॥ ३१ ॥ वेदना-  
 याश्च ॥ ३२ ॥ निदानं च ॥३३॥ तदविरतदेशविरतप्रमत्तसंय-  
 तानाम् ॥ ३४ ॥ हिंसानृतस्तेयविषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत-



देशविरतयोः ॥३५॥ आज्ञापायविपाकसंस्थानविचयाय घर्म्यम्  
 ॥३६॥ शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ॥३७॥ १रे केवलिनः ॥३८॥ पृथ-  
 क्तवैकत्ववितर्कैश्चक्रियाप्रतिपातिष्युपरतक्रियानिवर्तीनि ॥३९॥  
 श्येकयोगकाययोगायोगानाम् ॥ ४० ॥ एकाग्रये सवितर्क-  
 वीचारे पूर्वे ॥ ४१ ॥ अवीचारं द्वितीयम् ॥ ४२ ॥ वितर्कः  
 श्रुतम् ॥४३॥ वीचारोऽर्थाञ्जनयोगसंक्रान्तिः ॥४४॥ सम्य-  
 ग्दृष्टिश्चावकविरतानन्तवियोजकदर्शनमोहक्षपकोपशमकोपशान्त-  
 मोहक्षपकर्षाद्यमोहजिनाः क्रमशोऽसंख्येयगुणनिजेराः ॥४५॥  
 पुलाकगकुशकुशीलनिग्रन्थनातका निग्रन्थाः ॥४६॥ संयमश्रुत-  
 प्रतिसेवनातीर्थलिङ्गलेश्योपपादस्थानविकल्पतः साध्याः ॥ ४७ ॥

॥ इति पूज्यपादश्रीमदुमास्वामिविरचिते तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे  
 नवमोऽध्यायः ॥६॥

मोहक्षयाज्ज्ञानदर्शनावरणान्तरापक्षपाच्च केवलम् ॥ १ ॥  
 घन्धहेत्वभावनिर्जराभ्यां कृत्स्नकर्मविप्रमोक्षो मोक्षः ॥ २ ॥  
 औपशमिकादिमध्यत्वानां च ॥ ३ ॥ अन्यत्र केवलसम्यक्त्व-  
 ज्ञानदर्शनसिद्धस्वेभ्यः ॥ ४ ॥ तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छन्त्यालोकान्तात्  
 ॥ ५ ॥ पूर्वप्रयोगादसङ्गत्वाद्बन्धच्छेदात्तथागतिपरिखा-  
 माच्च ॥६॥ आविद्धकुलालचक्रवद्व्यपगतलेपालाजुवदेरएडबीज-  
 वद्गनिशिखावच्च ॥ ७ ॥ घर्मास्तिकायामावात् ॥ ८ ॥ क्षेत्रकाल-  
 मतिलिङ्गतीर्थचारित्रप्रत्येकबुद्धबोधितज्ञानावगाहनान्तरसंख्यान्प-  
 बद्भुत्वतः साध्याः ॥ ९ ॥

॥ इति पूज्यपादश्रीमदुमास्वामिविरचिते तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे  
 दशमोऽध्यायः ॥१०॥

अक्षरमात्रपदस्वरहीनं व्यञ्जनसन्धिविबर्जितरेफम् । साधु-  
मित्रमम ह्यमितव्यं को न विमुञ्चति शास्त्रसमुद्रे ॥ १ ॥  
दशाध्याये परिच्छिन्ने तत्त्वार्थे पठिते सति । फलं स्वाहुपवासस्य  
भाषितं मुनिपुङ्गवैः ॥ २ ॥ तत्त्वार्थसूत्रकर्तारं गृह्यपिच्छोपलक्षितं ।  
वन्दे गणीन्द्रसंजातमुमास्वामि मुनीश्वरम् ॥ ३ ॥

### ६-अध्यात्मसूत्र

ॐ नमः परम शुद्धाय ॥ १ ॥ शुद्धस्थितिर्दिता  
साध्या ॥ २ ॥ तस्याः साधिका निरुपचिदृष्टिः ॥ ३ ॥  
तस्याश्च स्वभावपरभावविवेकः ॥ ४ ॥ तस्य च परीक्षा  
॥ ५ ॥ सा प्रमाणात् ॥ ६ ॥ तस्यांशौ निश्चय-  
व्यवहारनयौ ॥ ७ ॥ स्वाश्रितो निश्चयः ॥ ८ ॥ पराश्रितो  
व्यवहारः ॥ ९ ॥ निश्चयस्त्रेचा ॥ १० ॥ अशुद्धशुद्धपरमशुद्ध-  
भेदात् ॥ ११ ॥ यथा स्वचनुष्टयस्यैव परिश्रुत्याऽशुद्धो  
जीव इत्यवलोकनमशुद्धो निश्चयः ॥ १२ ॥ शुद्धपरिश्रुतो  
जीव इति शुद्धः ॥ १३ ॥ पर्यायगुणनिरपेक्षतया सामान्य-  
भावेन द्रव्यदृष्टिः परमशुद्धनिश्चयनयः ॥ १४ ॥  
उत्तरान्तर्दृष्ट्यां पूर्वानिश्चयो व्यवहारः ॥ १५ ॥ सर्वभेद-  
प्रतिषेधगम्यो निश्चय एव ॥ १६ ॥ निर्विकल्पकतया  
स्वस्वानुपपन्नमर्थानुभवः ॥ १७ ॥ व्यवहारश्चैशादराधा  
॥ १८ ॥ आश्रयनिमित्तोभयसम्बन्धका उपचरितानुपचरिता

सद्भूतसद्भूतन्यवहारा अशुद्धशुद्धपरमशुद्धनिरपेक्ष  
 शुद्धनिरूपकाश्चेति ॥ १६ ॥ धनगृहचित्रादयो रागादेराश्रयाः  
 ॥ २० ॥ द्रव्यकर्म निमित्तम् ॥ २१ ॥ नोकर्मोपयम् ॥ २२ ॥  
 बुद्धिगा रागादय उपचरितासद्भूताः ॥ २३ ॥ तेन्य  
 अनुपचारितासद्भूताः ॥ २४ ॥ मतिज्ञानादय उपचरित  
 सद्भूताः ॥ २५ ॥ ज्ञानं गुण इत्यादिरनुपचरितसद्भूताः  
 ॥ २६ ॥ उक्तानामशुद्धनिश्चयादीनां प्ररूपणारच व्यवहाराः  
 ॥ २७ ॥ अन्याश्च यावत्सो दृष्टयस्तावन्तो नयाः ॥ २८ ॥

इति अध्यात्मयोगिन्यायपीर्यञ्जुल्लकवर्णि  
 श्रीमदध्यात्मयोग सहजानन्दवर्णिविरचिते स्वतत्वाधिगमे अध्यात्म-  
 सूत्रे निश्चयव्यवहारपरूपकः प्रथमोऽध्यायः । इति

### अथ द्वितीयोऽध्यायः

जीवपुद्गलधर्माधर्माकाशकालो द्रव्याणि ॥ १ ॥ जीवा  
 अनन्तानन्ताः ॥ २ ॥ पुद्गलास्ततोऽप्यनन्तगुणाः ॥ ३ ॥  
 धर्माधर्माकाशा एकैकम् ॥ ४ ॥ कालाणवोऽसंरुपाताः ॥ ५ ॥  
 स्वस्वपरिणत्यैवैतानि परिणमन्ते ॥ ६ ॥ अन्वयव्यतिरेक-  
 सम्बन्धावच्छिन्नानीतराणि ॥ ७ ॥ यस्मिन् सत्येव परिणतिः  
 सोऽन्वयः ॥ ८ ॥ नासति व्यतिरेकः ॥ ९ ॥ विवक्षितं  
 परिणममानद्वुपादानम् ॥ १० ॥ अत्यन्ताभाववदन्यसंबंधानि  
 निमित्तानि ॥ ११ ॥ यथा रागादेरुपादानमशुद्धपरिणता

जीवः ॥१२॥ निमित्तानि च कर्माणि ॥१३॥ रागादयोऽशुद्ध-  
 निरचयेनात्मनः ॥ १४ ॥ निमित्तापेक्षया व्यवहारेण वा  
 कर्मणाम् ॥ १५ ॥ शुद्धनिरचयेन सन्त्येव न ॥ १६ ॥ प्रथमं  
 चक्षुस्पकैबन्धस्य निमित्तं कर्मक्षयः ॥ १७ ॥ उपादानं  
 शुद्धात्मा ॥१८॥ निरचयेनात्मजम् ॥ १९ ॥ व्यवहारेण  
 चाधिकम् ॥ २० ॥ अनंतरवर्तिशुद्धीनामुपादानं शुद्धात्मा  
 ॥२१॥ निमित्तं कालमात्रम् ॥२२॥ सम्यक्त्वाविर्भावस्यो-  
 पादानं श्रद्धालुः ॥२३॥ श्रोतृश्रद्धाज्ञानित्वप्राप्तवस्त्वनुदेशक  
 देशना निमित्तम् ॥ २४ ॥ विम्बदशानादीनि च ॥ २५ ॥  
 एवमन्येष्वपि प्रयोज्यम् ॥ २६ ॥

इति श्रीमदध्यात्मयोगि सहजानन्दविरचिते स्वतत्त्वाधिगमे  
 अध्यात्मसूत्रे उपादाननिमित्तप्ररूपको द्वितीयोऽध्यायः ।

— —

### अथ तृतीयोऽध्यायः

परिणममानःकर्ता ॥१॥ परिणामःकर्म ॥२॥ परिणतिः  
 क्रिया ॥३॥ इति वस्तु स्वस्यैव स्वक्रियेव स्वयं कर्ता ॥४॥  
 अन्यनिमित्तमात्रम् ॥५॥ निमित्तं प्राप्योपादानं स्वप्रभावत्  
 ॥६॥ एषः परिणममानद्रव्यस्वभावः ॥७॥ परिणामो द्वेषा  
 स्वभावविभावभेदात् ॥८॥ स्वभावपरिणामो नियतो वि-  
 विधनिमित्तानपेक्षत्वात् ॥९॥ विभावपरिणामो नियता-  
 ऽनियतरश्च ॥१०॥ सकलविशेषज्ञान्यां ज्ञातत्वाच्च यदा

यदपि भवेत्तथैव भवनाच्च नियतः ॥ ११ ॥ सोऽपि प्रतिक्ष्ण  
 परिणतिपूर्वकः ॥ १२ ॥ विशिष्टक्रमवत्कगुणाभावादन्यभि-  
 मितं प्राप्य भवनाच्चानियतः ॥ १३ ॥ निमित्तसन्निधानेऽपि  
 वस्तु स्वेकत्वगतमेव ॥ १४ ॥ परस्य परैः संबन्धाभावात्  
 ॥ १५ ॥ अन्योन्यकर्तृत्वमुपचारः ॥ १६ ॥ स्वपरिणाम-  
 कर्तृत्वं निश्चयः ॥ १७ ॥ अशुद्धनिश्चयेनात्मना रोगादि-  
 कर्तृत्वम् ॥ १८ ॥ शुद्धनिश्चयेन स्वच्छभावकर्तृत्वम् ॥ १९ ॥  
 परमशुद्धनिश्चयेनाकर्तृत्वम् ॥ २० ॥ परिणामनत्रैव कर्तृत्वम्  
 ॥ २१ ॥ विभावपरयोः कर्तृत्वबुद्धिरज्ञानम् ॥ २२ ॥  
 कैवल्यपरयोर्भेदविज्ञानाभावात् ॥ २३ ॥ भेदविज्ञानतः  
 स्वस्याकर्तृत्वावधारणे सति पुनरभेदचित्स्वभावस्त्वेदं  
 शिवोपायः ॥ २४ ॥ स च सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रयात्मक  
 एव ॥ २५ ॥ सकलनयपक्षातिक्रान्तश्च ॥ २६ ॥

इति श्रीमत्सहजानन्दविरचिते स्वतत्त्वाधिगमे अध्यात्मधृत्रे  
 कर्तृकर्मत्वप्ररूपकः तृतीयोऽध्यायः ।

### अथ चतुर्थोऽध्यायः

कषायहेतुका प्रकृतिः कर्म ॥ १ ॥ तन्लोकबुद्धेर्द्विविधं  
 पुण्यं पापं च ॥ २ ॥ प्रत्येकं द्विधा ॥ ३ ॥ जीवाजीवाभ्यां भाव-  
 द्रव्याभ्यां वा ॥ ४ ॥ सातादिविकल्पो भावपुण्यम् ॥ ५ ॥  
 तन्निमित्तभूतं कर्म द्रव्यपुण्यम् ॥ ६ ॥ असातादिविकल्पो

भावपापम् ॥७॥ तन्निमित्तभूतं कर्म द्रव्यपापम् ॥ ८ ॥  
 कर्मत्वशक्तिर्वा भावः ॥ ९ ॥ हेतुस्वभावानुभवभयामेदात्सर्वं  
 क्षेपकम् ॥१०॥ विकारास्त्रयणमास्त्रवः ॥११॥ स्वभावच्युतिर्व-  
 न्धः ॥ १२ ॥ तावपि द्विविधौ ॥ १३ ॥ भावद्रव्याभ्यां  
 जीवाजीवाभ्यां वा ॥ १४ ॥ ज्ञेयं हेयं सर्वम् ॥१६॥  
 पुण्यपापास्त्रयवन्धविविक्त आत्मस्वभाव उपादेयः ॥१७॥  
 तस्योपलब्धिः शुद्धोपयोगात् ॥१८॥ स चाशुद्धोपेक्षयात्  
 ॥१९॥ स च मेदविज्ञानात् ॥ २० ॥ तज्ज्ञानस्वभावस्य  
 शुचिस्वभावभूतध्रुवशर्यानाकुलत्वादेरास्त्रवादीनां तद्विप-  
 रीतत्वादेश्च परीक्षयात् ॥२१॥

इति अध्यात्मयोगिन्यायतीर्थचुन्लकवर्णि- श्रीमत्स-  
 हजानन्दविरचिते स्वतन्त्राधिगमे अध्यात्मसूत्रे पुण्यपापास्त्रव-  
 न्धप्ररूपकश्चतुर्थोऽध्यायः ।

### अथ पञ्चमोऽध्यायः

विकारानुत्पत्तिः संवरः ॥ १ ॥ स द्रुख्यस्युपादेयं  
 तत्त्वम् ॥ २ ॥ मोक्षमूलत्वान्मोक्षेऽपि वर्तमानत्वाच्च । ३ ॥  
 तन्मूलं स्वभावविभावयोर्भेदविज्ञानम् ॥ ४ ॥ तस्माच्छुद्धा-  
 त्मरुचिः ॥५॥ ततः शुद्धात्मोपलम्भः ॥ ६ ॥ ततोऽध्यवसा-  
 नाभावः ॥ ७ ॥ ततो रामद्वेषमोहानामभावः ॥ ८ ॥ ततः  
 कर्माभावः ॥ ९ ॥ ततो नो कर्माभावः ॥ १० ॥ ततः  
 संसारभावः ॥ ११ ॥ संसारभावे सदा तेषामभावः ॥१२॥

शुद्धात्मोपलम्भस्य सदा प्रवर्तमानत्वात् ॥ १३ ॥ संवरो  
द्वेषा ॥ १४ ॥ भावद्रव्याभ्यां जीवजीवाभ्यां वा ॥ १५ ॥  
तद्द्रव्यं संवार्यसंवारकोभयम् ॥ १६ ॥ संवार्यो विभावाना-  
स्रवः ॥ १७ ॥ द्रव्यारास्रवश्च ॥ १८ ॥ संवारकः शुद्ध-  
परिग्रामः ॥ १९ ॥ विभावनिमित्तत्वाभावरश्च ॥ २० ॥  
संवारकसंवार्यत्वे जीवाजीवौ गुरुर्यौ ॥ २१ ॥ आदेवमिदम्  
तत्त्वमानिर्विकल्पात् ॥ २२ ॥

इति अध्यात्मयोगिद्युल्लकवर्णिश्रीमत्सहजानन्दविरचिते स्व-  
तत्त्वाधिगमे अध्यात्मसूत्रे भावद्रव्यसंवरप्ररूपकः पंचमोऽध्यायः ।

### अथ षष्ठोऽध्यायः

विकृतिनिर्जराणां निर्जरा ॥ १ ॥ सैव मोक्षापायः ॥ २ ॥  
द्वेषा ॥ ३ ॥ भावद्रव्ययोः ॥ ४ ॥ बीतरागनिर्विकल्पसमाधि-  
भावनिर्जरा ॥ ५ ॥ बन्धानिमित्तं निष्फलं कर्मनिर्जरा  
द्रव्यनिर्जरा ॥ ६ ॥ ते च परमार्थैकत्वद्रष्टुरेव ॥ ७ ॥ स  
चान्तर्बहिर्निःशङ्कितः ॥ ८ ॥ अनाकाङ्क्षः ॥ ९ ॥ निर्विचिकि-  
त्सः ॥ १० ॥ अमूढः ॥ ११ ॥ उपगूहकः ॥ १२ ॥  
शिवस्थापकः ॥ १३ ॥ भ्रमवरसलः ॥ १४ ॥ प्रभावकरश्च  
॥ १५ ॥ परस्थितिनिर्जराधेम् स्वभावविभावौ विमेष स्वभाव  
उपलम्भनीयः ॥ १६ ॥ निरुपधिरुपादानकारणीभूत  
एकीकृतशुद्धपर्यायः स्वभावः ॥ १५ ॥ आत्मनोऽप्यावताद्यन-

न्ताहेतुकासाधारणज्ञानस्वभावः ॥ १८ ॥ तत्त्वैर्याव  
सकलरागबिकल्पास्त्याज्याः ॥ १९ ॥ तस्यागाम्य स्वभावो  
दृश्यः ॥ २० ॥ तमभिप्रैत्य बाह्यसयोगं निवर्तयेत् ॥ २१ ॥  
स्वभावमाश्रित्य स्वमिदं तयाऽनुभवेत् ॥ २२ ॥ शुद्धचिद्रूपो-  
ऽहम् ॥ २३ ॥

इति अध्यात्मयोगिन्यायतीर्थब्रह्मलकवर्षि श्रीमत्सहजानन्दविरचिते,  
स्वतत्त्वाधिगमे अध्यात्मसूत्रे भावद्रव्यनिर्जराप्ररूपकः षष्ठोऽध्यायः ।

### अथ सप्तमोऽध्यायः

पूर्णशुद्धस्वरूपसमवस्थानं मोक्षः ॥ १ ॥ तत्सम्यग्दर्शन-  
ज्ञानचारित्र्यैकत्वम् ॥ २ ॥ विशुद्धज्ञानदर्शनस्वरूपनिजशु-  
द्धात्मानुभूतिः सम्यग्दर्शनम् ॥ ३ ॥ अखण्डस्वरूपप्रतीत्या  
सह वस्तुज्ञप्तिः सन्धग्ज्ञानम् ॥ ४ ॥ विकृतिपरिहरण-  
स्वभावेन ज्ञप्तिस्थितिः सम्यक्चारित्र्यम् ॥ ५ ॥ त्रयाणामेकत्वं  
ज्ञातृत्वमात्रम् ॥ ६ ॥ उपधिमोचनं वा मोक्षः  
॥ ७ ॥ स बन्धच्छेदात् ॥ ८ ॥ स बन्धमावारागात् ॥ ९ ॥  
स बन्धात्मनोः स्वभावमेदपरिज्ञानात् ॥ १० ॥ मोक्षो द्वेषा  
॥ ११ ॥ द्रव्यमावाभ्याम् ॥ १२ ॥ तावपि द्वेषा मोक्ष्य  
मोक्षकमेदात् ॥ १३ ॥ भूतार्थेन स्वैकत्मेव ॥ १४ ॥  
तद्वैयं फलञ्च ॥ १५ ॥ शान्तस्वरूपम् ॥ १६ ॥ शुद्ध-



परिखतिगतो धर्मो वा ॥ १७ ॥ स्वस्ति । १८ ।

इति अध्यात्मयोगिञ्जुल्लकवर्षिंश्रीमत्सहजानन्दविरचिते स्वतन्त्रा-  
धिगमे अध्यात्मसूत्रे मावद्रव्यमोक्ष प्ररूपकः सप्तमोऽध्यायः ।

### अथाष्टमोऽध्यायः

पर्यायतो नानात्मगुणस्थानानि ॥ १ ॥ श्रद्धाचारित्र्ययोगैः  
॥ २ ॥ विपरीताभिनिवेशो मिथ्यात्वम् ॥ ३ ॥ तदनादिवद्ध-  
स्यानादि ॥ ४ ॥ सम्यक्त्वच्युतस्य सादि ॥ ५ ॥ सम्यक्त्वा-  
सादने सासादनसम्यक्त्वम् ॥ ६ ॥ मिश्राभिनिवेशो मिश्रः-  
॥ ७ ॥ अविरतसम्यक्त्वम् ॥ ८ ॥ दशतो विरतौ देशविर-  
तिः ॥ ९ ॥ सर्वतः प्रमादे च प्रमत्तविरतः ॥ १० ॥  
प्रमादाभावेऽप्रमत्तविरतः ॥ ११ ॥ स द्वेषा ॥ १२ ॥  
स्वस्थानसात्तिशयभेदान् ॥ १३ ॥ प्रमत्ताप्रमत्तपरिवृत्तौ  
स्वस्थानी ॥ १४ ॥ सात्तिशयोऽधःकरणस्थः ॥ १५ ॥  
ततोऽपूर्वकरणश्चारित्र्यमोहस्योपशमकः क्षपको वा ॥ १६ ॥  
अनिवृत्तिकरणश्च ॥ १७ ॥ अवशिष्टसूक्ष्मसाम्परायजेता  
श्च ॥ १८ ॥ उपशान्तमोहः ॥ १९ ॥ क्षीणमोहः । २० ।  
योगेन युतः सर्वज्ञः संयोगः केवली । २१ । रहितोऽयोगः  
॥ २२ ॥ ततः सिद्धो गुणध्यानातीतः ॥ २३ ॥ गुणस्थाना-  
नीमानि क्रमाक्रमोभयरूपेण यथागमं योजयानि ॥ २४ ॥  
सिद्धः सर्वतः पूर्णशुद्धः ॥ २५ ॥ ॐ नमः सिद्धाय ॥ २६ ॥  
इति अष्टमयोगिन्यायतीर्थञ्जुल्लकवर्षिंश्रीमत्सहजानन्दावराचते  
अध्यात्मसूत्रे गुणस्थान संकेव मोःऽष्टमोऽध्यायः ।

## अथ नवमोऽध्यायः

सर्वार्थेषु सारः समयः ॥ १ ॥ सोऽनन्तशक्तिकः ॥ २ ॥  
 तत्र ज्ञानं मुख्यम् ॥ ३ ॥ सर्वचेतकत्वात् ॥ ४ ॥ तस्य  
 पर्यायो द्वेषा ॥ ५ ॥ सम्बन्धिमध्यामेदात् ॥ ६ ॥ मिध्या-  
 ज्ञानमुपचारात् ॥ ७ ॥ सम्बन्धज्ञानं सम्बन्धस्वसहचारात् ॥ ८ ॥  
 ज्ञानानि मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलानि ॥ ९ ॥ तत्र चत्वारि  
 विकलज्ञानानि ॥ १० ॥ सकलज्ञानं केवलम् ॥ ११ ॥ तांभे-  
 रन्तरं क्षणवृत्तिं ज्ञानस्वभावोपादानम् ॥ १२ ॥ अन्त्ये सम्य-  
 गेव ॥ १३ ॥ सर्वपरिण्वेकरूपमखण्डं ज्ञानमात्रं विशुद्धम्  
 ॥ १४ ॥ तदनादि ॥ १५ ॥ अनन्तम् ॥ १६ ॥ अहेतुकम्  
 ॥ १७ ॥ परपरिणत्या परिणतिशून्यम् ॥ १८ ॥ स्वपरि-  
 णामेन परिणन्तु ॥ १९ ॥ सर्वशक्तिगर्भम् ॥ २० ॥ विशेष-  
 तांऽमेदषट्कारकविषयं ॥ २१ ॥ सामान्यतः स्वलक्षणमात्रम्  
 ॥ २२ ॥ कर्तृभोक्त्रादिमावरहितम् ॥ २३ ॥ विकृति-  
 मुक्त्यकल्पितम् ॥ २४ ॥ ज्ञानमयत्वादात्मैव तथा ॥ २५ ॥  
 तच्छ्रद्धानं सम्बन्धदर्शनम् ॥ २६ ॥ तदनुभूतिः सम्यग्ज्ञानम्  
 ॥ २७ ॥ तत्स्थैर्यं सम्यक्चाग्रिमम् ॥ २८ ॥ शुद्धं शुद्धं  
 तत्स्फूर्जतु ॥ २९ ॥

इति अध्यात्मयोगिन्यापतीर्थलुल्लकवर्षिणीश्रीमत्सहजानन्दविरचिते  
 स्वतत्त्वाधिगमे अध्यात्मसूत्रे विशुद्धज्ञानप्ररूपकः नवमोऽध्यायः ।

## अथ दशमोऽध्यायः

ज्ञानवृत्तिः संयमः ॥ १ ॥ विशुद्धद्रष्टुःशुभरागप्रवृत्तिर-  
 प्युषचारात् ॥ २ ॥ संयमः पञ्चधा ॥ ३ ॥ सामायिकच्छे-  
 दोपस्थापनापरिहारविशुद्धिसत्त्वमसाम्पराययथाख्यातसंयममे-  
 दात् ॥ ४ ॥ बाह्याभ्यन्तरपरिग्रहविरतसाम्यभावः सामायिकः  
 ॥ ५ ॥ हिंसादिविरतश्छेदोपस्थापकः ॥ ६ ॥ स च मेद-  
 संयमः ॥ ७ ॥ बुद्धिपूर्वकोऽयमेव ॥ ८ ॥ समितिगुप्तिधर्मा-  
 नुद्रेच्चापरीषहजया मेदसंयमेत्तर्गता अमेदस्पर्शिनः ॥ ९ ॥  
 सर्व एते जोषितव्या आनिर्विकल्पसंयमात् ॥ १० ॥ अद्धि-  
 विशेषजातः प्राणिपीडापरिहारप्रवणः परिहारविशुद्धिः ॥ ११ ॥  
 अवशिष्टसत्त्वमलोमपरिहाणिकुशला विशुद्धिः मृत्त्वमसाम्प-  
 रायः ॥ १२ ॥ यथाख्यातो निरुपधिस्वभावख्यातिः ॥ १३ ॥  
 तदर्थं संयमः सेव्यः ॥ १४ ॥ ततः संवरनिर्जरे ॥ १५ ॥  
 ततः सर्वपरभावविमुक्तो मोक्षः ॥ १६ ॥ स सहजज्ञानानन्द-  
 स्वरूपः स्वत एव ॥ १७ ॥

इति अध्यात्मयोगिन्यायतीर्थक्षुब्धकवर्णिश्रीमत्सहजानन्दविरचिते  
 स्वतन्त्राधिगमे अध्यात्मसूत्रे संयमग्ररूपकः दशमोऽध्यायः ।

॥ ॐ तत्सत्परमात्मने नमः ॥

पूज्य श्री सुबुल्लक मनोहरबर्षिसहजानन्दस्वामिविरचितम्

## १० तत्त्वसूत्रम्

( अष्टाध्यायी )

प्रथमोऽध्यायः

ॐ । १ । तत् । २ । सत् । ३ । एकम् । ४ । नित्यम् । ५ । सप्रतिपक्षम् । ६ । अप्रतिपक्षम् । ७ । अतत् । ८ । असत् । ९ । अनेकम् । १० । क्षणिकम् । ११ । अविभक्तम् । १२ । विभक्तम् । १३ । अखण्डम् । १४ । सांशम् । १५ । स्वपरिणतम् । १६ । अस्वापरिणतम् । १७ । स्वभाववत् । १८ । अस्वाभाव्यम् । १९ । ज्ञानमात्रम् । २० ।

अथ द्वितीयोऽध्यायः

तदहम् । १ । चित् । २ । ब्रह्म । ३ । जीवः । ४ । आत्मा । ५ । ज्ञाना । ६ । द्रष्टा । ७ । अमूर्तः । ८ । कर्ता । ९ । मोक्ता । १० । अकर्ता । ११ । अमोक्ता । १२ । विद्युः । १३ । अव्यापी । १४ । स्रष्टा । १५ । अस्रष्टा । १६ । शुद्धः । १७ । अशुद्धः । १८ । शक्तिमयम् । १९ । ज्ञानमात्रम् । २० ।

अथ तृतीयोऽध्यायः

अहम् । १ । आनन्दः । २ । निर्विकल्पः । ३ । निष्कर्मा । ४ । निष्कलः । ५ । निर्विश्वः । ६ । दिव्यः । ७ । मद्-

वृचिर्देवी । ८ । दुर्गा । ९ । शक्तिः । १० । खण्डी । ११ ।  
 मुण्डी । १२ । चन्द्रघण्टा । १३ । मद्रकाली । १४ । अम्बा  
 । १५ । सरस्वती । १६ । भगवती । १७ । तत्प्रसादाभिरा-  
 कुलः । १८ । शिवमयम् । १९ । ज्ञानमात्रम् । २० ।

### अथ चतुर्थोऽध्यायः

प्रभुः । १ । सर्वज्ञः । २ । सर्वदर्शी । ३ । स्वच्छः । ४ ।  
 स्वविलासः । ५ । अकार्यः । ६ । अकारणः । ७ । परिणामी  
 ८ । अन्यूनः । ९ । अनतिरिक्तः । १० । अपरिणामी । ११ ।  
 निष्क्रियः । १२ । नियतः । १३ । अनन्तधर्मा । १४ ।  
 विरुद्धधर्मा । १५ । उपायः । १६ । उपेयः । १७ । योगि-  
 गम्यम् । १८ । स्वानुभाव्यम् । १९ । ज्ञानमात्रम् । २० ।

### अथ पञ्चमोऽध्यायः

सिद्धः । १ । जिनः । २ । हरिः । ३ । हरः । ४ । ईश्वरः  
 । ५ । परमात्मा । ६ । भगवान् । ७ । शिवः । ८ । ब्रह्मा  
 । ९ । विष्णुः । १० । बुद्धः । ११ । रामः । १२ । ईशः  
 । १३ । सनातनः । १४ । परमेष्ठी । १५ । शम्भुः । १६ ।  
 शुकः । १७ । अर्हन् । १८ । स्वयंभूः । १९ । ज्ञानमात्रम् । २० ।

### अथ षष्ठोऽध्यायः

अस्वादपेत्य । १ । जहात् । २ । बन्धोः । ३ । देहात्  
 । ४ । शब्दात् । ५ । रूपात् । ६ । गन्धात् । ७ । रसात् । ८ ।  
 स्पर्शात् । ९ । क्रोधात् । १० । मानात् । ११ । छलात्

। १२ । लोभात् । १३ । तर्कात् । १४ । भक्तेः । १५ ।  
 ध्यानात् । १६ । ज्ञेयमात्रात् । १७ । ज्ञानव्यक्तेः । १८ ।  
 ज्ञेयाकारात् । १९ । ज्ञानमात्रम् । २० ।

### अथ सप्तमोऽध्यायः

तं लक्षे । १ । ज्ञातम् । २ । स्वज्ञातम् । ३ । प्रतिमातम् । ४ ।  
 भूतार्थम् । ५ । सत्पार्थम् । ६ । परमार्थम् । ७ । स्वार्थम् ।  
 ८ । अवद्धम् । ९ । अस्पृष्टम् । १० । अनन्यम् । ११ ।  
 नियतम् । १२ । अविशेषम् । १३ । असंयुक्तम् । १४ ।  
 अजम् । १५ । अनन्तम् । १६ । गुप्तम् । १७ । स्वयम् ।  
 । १८ । सहजम् । १९ । ज्ञानमात्रम् । २० ।

### अथ अष्टमोऽध्यायः

तच्छृण्वानि । १ । अवगृह्णानि । २ । धारयानि । ३ ।  
 ब्रुवाणि । ४ । गच्छानि । ५ । जानीयाम् । ६ । मन्ये । ७ ।  
 ह्च्छामि । ८ । रोचै । ९ । प्रत्येमि । १० । भ्रष्टवानि । ११ ।  
 भावयेयम् । १२ । ध्यायेयम् । १३ । स्पृशानि । १४ । प्राप्नु-  
 वाणि । १५ । प्रतपानि । १६ । अनुभवानि । १७ । संचे-  
 तानि । १८ । एकीभवेयम् । १९ । ज्ञानमात्रम् । २० ।

॥ इति तत्त्वसूत्रनाम्नी अष्टाध्यायी समाप्ता ॥

श्रीमद्देवसेनविरचिता

## ११ आलापपद्धतिः ।

गुणानां विस्तरं वक्ष्ये स्वभावानां तथैव च ।

पर्यायाणां विशेषेण नत्वा वीरं जिनेस्वरम् ॥

आलापपद्धतिर्वचनरचनाऽनुक्रमेण नयचक्रस्योपरि उच्य-  
ते । सा च किमर्थम् ? द्रव्यलक्षणासिद्धयर्थम् स्वभावसिद्धयर्थञ्च ।  
द्रव्याणि कानि ? जीवपुद्गलधर्माधर्माकाशकालद्रव्याणि ।  
मद्द्रव्यलक्षणम्, उत्पादव्ययधीव्ययुक्तं सत् । इति द्रव्या-  
धिकारः ।

लक्षणाणि कानि ? अस्तित्वं, वस्तुत्वं, द्रव्यत्वं, प्रमेयत्वं,  
अगुरुत्वघुत्वं, प्रदेशत्वं, चेतनत्वमचेतनत्वं मूर्तत्वममूर्तत्वं  
द्रव्याणां दश सामान्यगुणाः प्रत्येकमष्टावष्टौ सर्वेषाम् ।

[एकैकद्रव्ये अष्टौ अष्टौ गुणाः भवन्ति । जीवद्रव्ये अचे-  
तनत्वं मूर्तत्वं च नास्ति, पुद्गलद्रव्ये चेतनत्वममूर्तत्वं च नास्ति,  
धर्माधर्माकाशकालद्रव्येषु चेतनत्वं मूर्तत्वं च नास्ति । एव-  
द्विद्विगुणवजिते अष्टौ अष्टौ गुणाः प्रत्येकद्रव्ये भवन्ति । ]

ज्ञानदर्शनसुखवीर्याणि स्पर्शरसगन्धवर्णाः गतिहेतुत्वं स्थि-  
तिहेतुत्वमन्नगाहनहेतुत्वं वृत्तनाहेतुत्वं चेतनत्वमचेतनत्वं  
मूर्तत्वममूर्तत्वं द्रव्याणां षोडश विशेषगुणाः । षोडशविशेषगुणेषु  
जीवपुद्गलयोः षडिति । जीवस्य ज्ञानदर्शनसुखवीर्याणि  
चेतनत्वममूर्तत्वमिति षट् । पुद्गलस्य स्पर्शरसगन्धवर्णाः  
मूर्तत्वमचेतनत्वमिति षट् । इतरेषां धर्माधर्माकाशकालानां

प्रत्येकं त्रयो गुणाः । धर्मद्रव्ये गतिहेतुत्वममूर्तत्वमचेतनत्वमेते  
त्रयो गुणाः । अधर्मद्रव्ये स्थितिहेतुत्वममूर्तत्वमचेतनत्वमिति ।  
आकाशद्रव्ये अवगाहनहेतुत्वममूर्तत्वमचेतनत्वमिति । काल-  
द्रव्ये वर्चनाहेतुत्वममूर्तत्वमचेतनत्वमिति विशेषगुणाः । अन्त-  
स्थारचत्वारो गुणाः स्वजात्यपेक्षया सामान्यगुणा विजात्य-  
पेक्षया त एव विशेषगुणाः । इति गुणाधिकारः ।

गुणविकाराः पर्यायास्ते द्वेषा स्वभावविभावपर्यायमेदात्  
अगुरुलघुविकाराः स्वभावपर्यायास्ते द्वादशधा षड्वृद्धिरूपाः  
षड्दानिरूपाः । अनन्तभागवृद्धिः, असंख्यातभागवृद्धिः,  
संख्यातभागवृद्धिः, संख्यातगुणवृद्धिः, असंख्यातगुणवृद्धिः,  
अनन्तगुणवृद्धिः, एवं षड्वृद्धिरूपास्तथा अनन्तभागहानिः,  
असंख्यातभागहानिः, संख्यातभागहानिः, संख्यातगुणहानिः,  
असंख्यातगुणहानिः, अनन्तगुणहानिः एवं षड्दानिरूपा  
ज्ञेयाः । विभावद्रव्यव्यञ्जनपर्यायश्चतुर्विधा नरनारकादि-  
पर्यायाः अथवा चतुरशीतिलक्षा योनयः । विभावगुण-  
व्यञ्जनपर्याया मत्पादयः । स्वभावद्रव्यव्यञ्जनपर्यायाश्चरमश-  
रीरात्किञ्चिन्न्यूनसिद्धपर्यायाः । स्वभावगुणव्यञ्जनपर्याया  
अनन्तचतुष्टयस्वरूपा जीवस्य । पुद्गलस्य तु क्षणिकादयो विभा-  
वद्रव्यव्यञ्जनपर्यायाः । रसरसान्तरगन्धगन्धान्तगादिविभाव-  
गुणव्यञ्जनपर्यायाः । अविभागिपुद्गलपरमाणुः स्वभावद्रव्य-  
व्यञ्जनपर्यायः । वर्णगन्धरसैकैकाविरुद्धस्पर्शद्वयं स्वभावगुण-  
व्यञ्जनपर्यायः ।



अनाद्यनिधने द्रव्ये स्वपर्यायाः प्रतिषेद्यम् ।

उन्मज्जन्ति निमज्जन्ति जलकण्टोलवज्जले ॥ १ ॥

धर्माधर्मनभः काला अर्थपर्यायगोचराः ।

व्यञ्जनेन तु संबन्धौ द्वावन्यौ जीवपुद्गलौ ॥ २ ॥

इति पर्यायाधिकारः गुणपर्ययवद्द्रव्यम् ।

स्वभावाः कथ्यन्ते । अस्तिस्वभावः, नास्तिस्वभावः, नित्यस्वभावः, अनित्यस्वभावः, एकस्वभावः, अनेकस्वभावः, भेदस्वभावः, अभेदस्वभावः, भव्यस्वभावः, अभव्यस्वभावः, परमस्वभावः, द्रव्याणामेकादश सामान्यस्वभावाः । चेतनस्वभावः, अचेतनस्वभावः, मूर्त्तस्वभावः, अमूर्त्तस्वभावः, एकप्रदेशस्वभावः, अनेकप्रदेशस्वभावः, विभावस्वभावः, शुद्धस्वभावः, अशुद्धस्वभावः, उचरितस्वभावः, एते द्रव्याणां दश विशेषस्वभावाः । जीवपुद्गलयोरेकविंशतिः चेतनस्वभावः, मूर्त्तस्वभावः, विभावस्वभावः, एकप्रदेशस्वभावः, अशुद्धस्वभाव एतैः पञ्चभिः स्वभावे विना धर्मादित्रयाणां षोडश स्वभावाः सन्ति । तत्र बहुप्रदेशविना कालस्य पञ्चदश स्वभावाः ।

एकविंशतिभावाः स्युर्जीवपुद्गलयोर्मताः ।

धर्मादीनां षोडश स्युः काले पञ्चदश स्मृताः ॥३॥

ते कुतो ज्ञेयाः ? प्रमाणनयविवक्षातः । सम्पग्न्धानं प्रमाणम् । तद्वैधा प्रत्यक्षेतरभेदात् अवधिमनःपर्यायावेकदेशप्रत्यक्षौ । केवलं सकलप्रत्यक्षं । मतिश्रुते परोक्षे । प्रमाणमुक्तं । तदवयवा नयाः ।

नयमेदा उच्यन्तेः —

शिच्छयववहारण्या मूलममेयाण्य ण्य सञ्चार्यं ।  
शिच्छय साहस्यहेत्रो दव्यपज्जत्थिया मुण्ड ॥ ४ ॥

द्रव्यार्थिकः, पर्यायार्थिकः नैगमः, संग्रहः, व्यवहारः, ऋजुसूत्रः, शब्दः, समभिरूढः, एवंभूत इति नव नयाः स्मृताः । उपनयाश्च कथ्यन्ते । नयानां समीपा उपनयाः । सद्भूतव्यवहारः असद्भूतव्यवहारः उपचरितासद्भूतव्यवहारश्चेत्युपनयाश्रेयाः ।

इदानीमेतेषां मेदा उच्यन्ते । द्रव्यार्थिकस्य दशमेदाः ।

कर्मोपाधिनिरपेक्षः शुद्धद्रव्यार्थिको यथा संगी जीवः सिद्धसदृक् शुद्धात्मा । उत्पादव्ययगौणत्वेन सत्ताग्राहकः शुद्धद्रव्यार्थिको यथा द्रव्यं नित्यम् । मेदकल्पनानिरपेक्षः शुद्धो-द्रव्यार्थिको यथा निजगुणपर्यायस्वभावोद्भव्यमभिन्नम् ।

कर्मोपाधिसापेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको यथा क्रोधादिकर्मज-भाव आत्मा । उत्पादव्ययसापेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको यथैक-स्मिन् समये द्रव्यमुत्पादव्ययध्रौव्यात्मकम् । मेदकल्पना-सापेक्षोऽशुद्धद्रव्यार्थिको यथात्मनो दर्शनज्ञानादयो गुणाः । अन्वयद्रव्यार्थिको तथा-गुणपर्यायस्वभावं द्रव्यम् । स्वद्रव्यादि-ग्राहकद्रव्यार्थिको यथा-स्वद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया द्रव्यमस्ति । परद्रव्यादिग्राहकद्रव्यार्थिको यथा-परद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया द्रव्यं नास्ति । परमभावग्राहकद्रव्यार्थिको यथा-ज्ञानस्वरूप

आत्मा । अत्रानेकस्वभावानां मध्ये ज्ञानारूपः परमस्वभावो  
गृहीतः ।

इति द्रव्यार्थिकस्य दशमेदाः

अथ पर्यायार्थिकस्य षट्मेदा उच्यन्ते—

अनादिनित्यपर्यायार्थिको यथा पुद्गलपर्यायो नित्यो मेवा-  
दिः । सादिनित्यपर्यायार्थिको यथा—सिद्धपर्यायो नित्यः ।  
सत्तागौणत्वेनोत्पादव्ययग्राहकस्वभावो नित्याशुद्धपर्यायार्थिको  
यथा—समर्थं समर्थं प्रति पर्याया विनाशिनः । सत्तासा-  
पेक्षस्वभावो नित्याशुद्धपर्यायार्थिको यथा—एकस्मिन् समये  
त्रयात्मकः पर्यायः । कर्मोपाधिनिरपेक्षस्वभावो नित्यशुद्ध-  
पर्यायार्थिको यथा—सिद्धपर्यायसदृशाः शुद्धाः संसारिणां  
पर्यायाः । कर्मोपाधिसापेक्षस्वभावोऽनित्याशुद्धपर्यायार्थिको  
यथा—संसारिणांमुत्पत्तिमरणे स्तः । इति पर्यायार्थिकस्य  
षट् मेदाः ।

नैगमस्त्रेधा भूतमाविर्त्तमानकाज्ञमेदात् । अतीते वर्त्त-  
मानारोपश्च यत्र स भूतनैगमो यथा—अद्य दीपोत्सवदिने  
श्रीवर्द्धमानस्वामी मोक्षं गतः । भाविनि भूतवत्कथनं यत्र स  
भाविनैगमो यथा अहंन् सिद्ध एव । कर्तुमागन्धमीषन्निष्प-  
न्नमनिष्पन्नं वा वस्तु निष्पन्नवत्कथ्यते यत्र स वर्त्तमाननैगमो  
यथा—ओदनः पच्यते इति नैगमस्त्रेधा ।

संग्रहो द्विविधः । सामान्यसंग्रहो यथा—सर्वाणि द्रव्याणि

परस्परमविरोधीनि । विशेषसंग्रहो यथा—सर्वे जीवाः परस्परमविरोधिनः इति संग्रहोऽपि द्विधा ।

व्यवहारोऽपि द्वेधा । सामान्यसंग्रहमेदको व्यवहारो यथा—द्रव्याणि जीवाजीवाः । विशेषसंग्रहमेदको व्यवहारो यथा—जीवाः संसारिणो मुक्ताश्च इति व्यवहारोऽपि द्वेधा ।

अजुसुत्रो द्विविधः । सूक्ष्मजुसुत्रो यथा—एकसमयावस्थायां पर्यायः । स्थूलजुसुत्रो यथा—मनुष्यादिपर्यायास्तदायुः प्रमाणाकालं तिष्ठन्ति इति अजुसुत्रोऽपि द्वेधा ।

शब्दसममिरूढैवंभूता नयाः प्रत्येकमेकैका नया । शब्दनयो यथा दारा मार्या कलत्रं जलं आपः । सममिरूढनयो यथा गौः पशुः । एवंभूतनयो यथा—इन्दतीति इन्द्रः । उक्ता अष्टाविंशतिर्नयमेदाः ।

उपनयमेदा उच्यन्ते—सद्भूतव्यवहारो द्विधा । शुद्धसद्भूतव्यवहारो यथा—शुद्धगुणशुद्धगुणिनोः शुद्धपर्यायशुद्धपर्यायिणोर्भेदकथनम् । अशुद्धसद्भूतव्यवहारो यथा—शुद्धगुणाऽऽशुद्धगुणिनोरशुद्धपर्यायाऽऽशुद्धपर्यायिणोर्भेदकथनम् इति सद्भूतव्यवहारोऽपि द्वेधा ।

असद्भूतव्यवहारस्त्रेधा । स्वजात्यसद्भूतव्यवहारो यथा—परमाणुर्बहुप्रदेशीति कथनमित्यादि । विजात्यसद्भूतव्यवहारो यथा मूर्च्छा मतिज्ञानं यतो मूर्च्छाद्रव्येषु जनितम् । स्वजातिविजात्यसद्भूतव्यवहारो यथा ज्ञेये जीवेऽजीवे ज्ञानमिति कथनं ज्ञानस्य विषयान् । इत्यसद्भूतव्यवहारस्त्रेधा ।

उपचरितासद्भूतव्यवहारस्त्रेषा । स्वजात्युपचरितासद्भूत-  
तव्यवहारो यथा-पुत्रदारादि मम । विजात्युपचरितासद्भूत-  
व्यवहारो यथा वस्त्राभरणहेमरत्नादि मम । स्वजातिविजात्यु-  
पचरितासद्भूतव्यवहारो यथा-देशराज्य दुर्गादि मम इत्युप-  
चरितासद्भूतव्यवहारस्त्रेषा ।

सहभावा गुणाः, क्रमवर्तिनः पर्यायाः । गुण्यन्ते पृथक्-  
क्रियन्ते द्रव्यं द्रव्याद्यैस्ते गुणाः । अस्तीत्येतस्य भावोऽस्तत्त्वं  
सद्द्रूपत्वम् । वस्तुनो भावो वस्तुत्वम्, सामान्याविशेषात्मकं  
वस्तु । द्रव्यस्वभावो द्रव्यत्वम् । निजनिजप्रदेशसमूहैरखण्ड-  
कृत्या स्वभावविभावपर्यायान् द्रवात् द्राप्यात् अदुद्रवदिति  
द्रव्यम् । सद्द्रव्यलक्षणम्, सीदति स्वकीयान् गुणपर्यायान् गुण-  
पर्यायान् व्याप्नोतीति सत् । उत्पादव्ययधौव्ययुक्तं यत् ।  
प्रमेयस्य भावः प्रमेयत्वम् प्रमाथेन स्वपरस्वरूपपरिच्छेदं  
प्रमेयम् । अगुरुलघोर्भावोऽगुरुलघुत्वं । सूक्ष्मा वागगोचराः  
प्रतिक्षणं वर्तमाना आगमप्रमायादभ्युपगम्या अगुरुलघुगुणाः ।

“सूक्ष्मं जिनोदितं तत्त्वं हेतुभिर्नैव हन्यते ।

आज्ञासिद्धं तु तद्ग्राह्यं नान्यथावादिनो जिनाः” ॥५॥

प्रदेशस्य भावः प्रदेशत्वं क्षेत्रत्वं अविभागीपुद्गलपर-  
माणुनावष्टम्भम् । चेतनस्य भावश्चेतनत्वम् चैतन्यमनुभवनम् ।

चैतन्यमनुभूतिः स्यात् सा क्रियारूपमेव च ।

क्रिया मनोवचःकायेष्वन्विता वर्तते ध्रुवम् ॥६॥

अचेतनस्य भावोऽचेतनत्वमचैतन्यमनुभवनम् । मूर्तस्य

भावो मूर्तत्वं रूपादिमत्वम् । अमूर्तस्य भावोऽमूर्तत्वरूपादि-  
रहितत्वम् । इति गुणानां व्युत्पत्तिः । स्वभावविभावरूपतया-  
याति पर्येति परिखमतीति पर्याय इति पर्यायस्य व्युत्पत्तिः ।  
स्वभावलाभादच्युतत्वादस्तिस्वभावः । परस्वरूपेणामावाप्तास्ति  
स्वभावः । निजनिजनानापयांशेषु तदेवेदमिति द्रव्यस्योपल-  
म्भाभित्यस्वभावः । तस्याप्यनेकपर्यायपरिणामित्वादनित्यस्व-  
भावः । स्वभावानामेकाधारत्वादेकस्वभावः एकस्याप्यनेकस्व-  
भावोपलम्भदनेकस्वभावः । गुणगुण्यादिसंज्ञामेदाद् भेदस्व-  
भावः । संज्ञासंख्यालक्षणप्रयोजनानि गुणगुण्याद्येकस्वभावा-  
दभेदस्वभावः । भात्रिकाले परस्वरूपाकारभवनाद् भव्यस्वभावः ।  
कालत्रयेऽपि परस्वरूपाकाराभवनाद् भव्यस्वभावः । उक्तञ्च-

“अणुशोणं पविसंता दिंता उग्गासमणुमणुसस ।

मेलंतावि य खिञ्चं सगसगभावं ख विजहंति” ॥७॥

पारिणामिकभावप्रधानत्वेन परमस्वभावः । इति सामा-  
न्यस्वभावानां व्युत्पात्तः । प्रदेशादिगुणानां व्युत्पत्तिश्चेतनादि-  
विशेषस्वभावानां च व्युत्पत्तिर्निगदिता ।

धर्मापेक्षया स्वभावा गुणा न भवन्ति, स्वद्रव्यचतुष्टया-  
पेक्षया परस्परं गुणाः स्वभावा भवन्ति । इत्याद्यपि भवन्ति ।  
स्वभावादन्यथाभवनं विभावः । शुद्धं केवलभावमशुद्धं तस्यापि  
विपरीतम् । स्वभावस्याप्यन्यत्रोपचारादुपन्नरितस्वभावः । स  
द्वेषा-कर्मजस्वामाविकमेदात् । यथा जीवस्य मूर्तत्वमचेतनत्वं

यथा सिद्धानां परकृता परदर्शकत्वं च । एवमितरेषां द्रव्याणां प्रवृत्तौ यथाप्रभवो ज्ञेयः ।

“दुर्नयैकान्तमारूढा भवानां स्वार्थिका हि ते ।

स्वार्थिकारश्च विपर्यस्ताः सकलज्ञा नया यतः” ॥८॥

तत्कथं तथाहि—सर्वथैकान्तेन सद्रूपस्य न नियतार्थ-  
व्यवस्था—संकरादिदोषत्वात् तथा—सद्रूपस्य सकलशून्यता  
प्रसङ्गात्, नित्यस्यैकरूपत्वादेकरूपस्यार्थक्रियाकारित्वाभावः,  
अर्थक्रियाकारित्वाभावे द्रव्यस्याप्यभावः । अनित्यपक्षेऽपि  
अनित्यरूपत्वादर्थक्रियाकारित्वाभावः, अर्थक्रियाकारित्वाभावे  
द्रव्यस्याप्यभावः । एकस्वरूपस्यैकान्तेन विशेषाभावः, सर्वथैक-  
रूपत्वात् विशेषाभावे सामान्यस्याप्यभावः ।

“निविशेर्षं हि सामान्यं भवेत्स्वरविषयावत् ।

सामान्यरहितत्वाच्च विशेषस्तद्वै देव हि” ॥९॥ इति ज्ञेयः॥

अनेकरूपेऽपि तथा द्रव्याभावो निराधारत्वात् आधारा-  
धेयाभावाच्च । भेदपक्षेऽपि विशेषस्वभावानां निराधारत्वा-  
दर्थक्रियाकारित्वाभावः, अर्थक्रियाकारित्वाभावे द्रव्यस्याप्य-  
भावः । अभेदपक्षेऽपि सर्वेषामेकत्वम् सर्वेषामेकत्वेऽर्थक्रिया-  
कारित्वाभावः अर्थक्रियाकारित्वाभावे द्रव्यस्याप्यभावः । मध्य-  
स्यैकान्तेन पारिखामिकत्वात् द्रव्यस्य द्रव्यान्तरत्वप्रसङ्गात्  
संकरादिदोषसम्भवात् । संकरव्यतिकरविरोधवैयधिकरस्यान-  
वस्थासंशयाप्रतिपत्त्यभावात्चेति । सर्वथाऽमध्यस्यैकान्तेऽपि  
तथा शून्यताप्रसङ्गात् स्वभावरूपस्यैकान्तेन संसारभावः ।

विभावपक्षेऽपि मोक्षस्याप्यभावः । सर्वथा चैतन्यमेवेत्युक्ते सर्वेषां शुद्धज्ञानचैतन्यावाप्तिः स्यात्, तथा सति ध्यानं ध्येयं ज्ञानं ज्ञेयं गुरुशिष्याद्यभावः । सर्वथाशब्दः सर्वप्रकारवाची, अथवा सर्वकालवाची, अथवा नियमवाची, वा अनेकान्तसापेक्षी वा ? यदि सर्वप्रकारवाची सर्वकालवाची अनेकान्तवाची वा सर्वादिगणो पठनात् सर्वशब्द एवंविधश्चेत्तर्हि सिद्धं नः समीहितम् । अथवा नियमवाची चेत्तर्हि सकलार्थानां तत्र प्रतीतिः कथं स्यात्? नित्यः, अनित्यः, एकः, अनेकः, भेदः, अभेदः कथं प्रतीतिः स्यात् नियमितपक्षत्वात् । तथा चैतन्यपक्षेऽपि सकलचैतन्योच्छेदः स्यात्, मूर्त्तस्यैकान्तेतात्मनो मोक्षस्यावाप्तिः स्यात् । सर्वथाऽमूर्त्तस्यापि तथात्मनः संसारविलोपः स्यात् एकप्रदेशस्यैकान्तेनाखण्डपरिपूर्वस्यात्मनोऽनेककार्यकारित्व एव हानिः स्यात् । सर्वथाऽनेकप्रदेशत्वेऽपि तथा तस्यानर्थकार्यकारित्वं स्वस्वभावशून्यताप्रसङ्गात् । शुद्धस्यैकान्तेनात्मनो न कर्ममलकजङ्गावलेपः सर्वथा निरञ्जनत्वात् । सर्वथाऽशुद्धैकान्तेऽपि तथात्मनो न कदापि शुद्धस्वभावप्रसङ्गः स्यात् तन्मयत्वात् । उपचरितैकान्तपक्षेऽपि नात्मज्ञता सम्भवति नियमितपक्षत्वात् । तथात्मनोऽनुपचरितपक्षेऽपि परज्ञतादीनां विरोधः स्यात् ।

“नानास्वभावसंयुक्तं द्रव्यं ज्ञात्वा प्रमाद्यतः ।

तच्च सापेक्षसिद्धयर्थं स्यान्नयमिहितं कुरु” ॥१०॥

स्वव्यादिदाहकेखास्तिस्वभावः । परद्रव्यादिज्ञाहकेष्व



नास्तिस्वभावः । उत्पादव्ययगौखत्वेन सत्ताग्राहकेषु नित्यस्वभावः । केनचित्पर्यायार्थिकेनानित्यस्वभावः । भेदकल्पनानिरपेक्षेणैकस्वभावः । अन्वयद्रव्यार्थिकेनैकस्याप्यनेकद्रव्यस्वभावत्वम् । सद्भूतव्यवहारेण गुणगुण्यादिभिर्भेदस्वभावः । भेदकल्पनानिरपेक्षेण गुणगुण्यादिभिरभेदस्वभावः । परमभावग्राहकेण भव्याभव्यपारिणामिकस्वभावः । शुद्धाशुद्धपरमभावग्राहकेण चेतनस्वभावो जीवस्य । असद्भूतव्यवहारेण कर्मनो-कर्मशोरपि चेतनस्वभावः । परमभावग्राहकेण कर्मनो-कर्मशोरचेतनस्वभावः ।

जीवस्याप्यसद्भूतव्यवहारेणाचेतनस्वभावः । परमभावग्राहकेण कर्मनो-कर्मशोर्मूर्त्तस्वभावः । जीवस्याप्यासद्भूतव्यवहारेण मूर्त्तस्वभावः । परमभावग्राहकेण पुद्गलं विहाय इतरेषाममूर्त्तस्वभावः । पुद्गलस्यपचारादापि नास्त्यमूर्त्तत्वम् । परमभावग्राहकेण कालपुद्गलाणूनामेकप्रदेशस्वभावत्वम् । भेदकल्पनानिरपेक्षेणेतरेषां धर्माधर्माकाशजीवानां चाखण्डत्वादेकप्रदेशत्वम् । भेदकल्पनासापेक्षेण चतुर्णामपि नानाप्रदेशस्वभावत्वम् । पुद्गलाखोरुपचारतो नानादेशत्वं न च कालाखोः स्निग्धरूक्षत्वाभावात् । अरूक्षत्वाखाशोरमूर्त्तपुद्गलस्यैकविंशतितमो भावो न स्यात् । परोक्षप्रमाणापेक्षयाऽसद्भूतव्यवहारेणाप्युपचारेणामूर्त्तत्वं । पुद्गलस्य शुद्धाशुद्धद्रव्यार्थिकेन विभावस्वभावत्वम् । शुद्धद्रव्यार्थिकेन शुद्धस्वभावः । अशुद्धद्रव्यार्थिकेनाशुद्धस्वभावः । असद्भूतव्यवहारेणोपचरितस्वभावः

“द्रव्याणां तु यथारूपं तन्लोकेऽपि व्यवस्थितम् ।  
तथाज्ञानेन संज्ञातं नपोऽपि हि तथाविधः” ॥११॥

इति नययोजनिका ।

—०—

सकलवस्तुग्राहकं प्रमाणां, प्रमीयते परिच्छिद्यते वस्तुत्त्वं  
येन ज्ञानेन तत्प्रमाणम् । तद्द्वेषा सविकल्पेतरमेदात् । सविक-  
ल्पं मानसं तच्चतुर्विधम् । मतिश्चुतावधिमनःपर्ययरूपम् । नि-  
र्विकल्पं मनोरहितं केवलज्ञानमिति प्रमाणस्य व्युत्पत्तिः । प्र-  
माणेन वस्तु संगृहीतार्थैकांशो नयः, श्रुतविकल्पो वा, ज्ञातुर-  
भिप्रायो वा नयः, नानास्वभावेभ्यो व्याप्त्यै एकस्मिन्स्वभावे  
वस्तु नयनि प्राप्नोतीति वा नयः । स द्वेषा सविकल्पनिर्विक-  
ल्पमेदादिति नयस्य व्युत्पत्तिः । प्रमाणनययोर्निक्षेप आरोपणं  
स नामस्थापनादिमेदेन चतुर्विध इति निक्षेपस्य व्युत्पत्तिः ।  
द्रव्यमेवार्थः प्रयोजनमस्येति द्रव्यार्थिकः । शुद्धद्रव्यमेवार्थः  
प्रयोजनमस्येति शुद्धद्रव्यार्थिकः । अशुद्धद्रव्यमेवार्थः प्रयोजनम-  
स्येति अशुद्धद्रव्यार्थिकः । सामान्यगुणादयोऽन्वयरूपेण द्रव्यं  
द्रव्यमात द्रवति व्यवस्थापयतीत्यन्वयद्रव्यार्थिकः । स्वद्रव्या-  
दिग्रहणमर्थः प्रयोजनमस्येति स्वद्रव्यादिग्राहकः । परद्रव्यादि  
ग्रहणमर्थः प्रयोजनमस्येति परद्रव्यादिग्राहकः । परमभाव-  
ग्रहणमर्थः प्रयोजनमस्येति परमभावग्राहकः ।

इति द्रव्यार्थिकस्य व्युत्पत्तिः ।

—०—

एवार्थ एवार्थः प्रयोजनमस्येति पर्यायार्थिकः । अनादिनि-  
त्यपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येत्यनादिनित्यपर्यायार्थिकः । सा-  
दिनित्यपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येति सादिनित्यपर्यायार्थिकः ।  
शुद्धपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येति शुद्धपर्यायार्थिकः ।  
अशुद्धपर्याय एवार्थः प्रयोजनमस्येत्यशुद्धपर्यायार्थिकः ।

इति पर्यायार्थिकस्य व्युत्पत्तिः ।

—८—

नैकं गच्छतीति निगमः, निगमो विद्वन्पस्तत्रमवो नैगमः ।  
अमेदरूपतया वस्तुजातं संगृह्णातीति संग्रहः । संग्रहेण गृही-  
तार्थस्य मेदरूपतया वस्तु व्यवहियत इति व्यवहारः । अजु  
प्राञ्जलं सूत्रवतीति अजुपत्रः । शब्दात् व्याकरणात् प्रकृति-  
प्रत्ययद्वारेण सिद्धः शब्दः शब्दनयः । परस्परेशाभिरूढाः स-  
मभिरूढाः । शब्दमेदेऽप्यर्थमेदो नास्ति । यथा शक्र इन्द्रः पुर-  
न्दर इत्यादयः समभिरूढाः । एवंक्रियाप्रधानत्वेन भूयत इत्ये-  
वंभूतः । शुद्धाशुद्धनिश्चयौ द्रव्यार्थिकस्य मेदौ । अमेदानुप-  
चारतया वस्तु निश्चीयत इति निश्चयः । मेदापचारतया  
वस्तु व्यवहियत इति व्यवहारः । गुणगुणिनोः संज्ञादिमेदात्  
मेदकः सद्भूतव्यवहारः । अन्यत्र प्रसिद्धस्य धर्मस्यान्यत्र  
समारोपणमसद्भूतव्यवहारः । असद्भूतव्यवहार एवोपचारः,  
उपचारादप्युपचारं यः करोति स उपचरितासद्भूतव्यवहारः ।  
गुणगुणिनोःपर्यायपर्यायिनोः स्वभावस्वभाविनोः कारककार-  
किञ्चोर्मेद सद्भूतव्यवहारस्वार्थः । द्रव्ये द्रव्योपचारः, पर्याये

पर्यायोपचारः, गुण्ये गुण्योपचारः, द्रव्ये गुण्योपचारः, द्रव्ये पर्यायोपचारः, गुण्ये द्रव्योपचारः, गुण्ये पर्यायोपचारः, पर्याये द्रव्योपचारः, पर्याये गुण्योपचार इति नवविधोऽसद्भूतव्यवहारस्वार्थो द्रष्टव्यः ।

उपचारः पृथग् नयो नास्तीति न पृथक् कृतः । दृष्टव्याभावो सति प्रयोजने निर्मिसे चोपचारः प्रवर्तते सोऽपि सम्बन्धाविनाभावः । संश्लेषः सम्बन्धः । परिणामपरिणामिसम्बन्धः, भद्राभद्वेयसम्बन्धः, ज्ञानज्ञेयसम्बन्धः, चारित्रचर्चासम्बन्धश्चेत्यादिसत्यार्थः, असत्यार्थः, सत्यासत्यार्थश्चेत्युपचरिताऽसद्भूतव्यवहारनयस्यार्थः ।

पुनःप्यध्यात्ममाशया नया उच्यन्ते । तावन्मूलनयो द्वौ निरयो व्यवहारश्च । तत्र निश्चयनयोऽमेदविषयो व्यवहारो मेदविषयः । तत्र निश्चयो द्विविधः शुद्धनिश्चयोऽशुद्धनिश्चयश्च । तत्र निरुपाधिकगुण्यगुण्यमेदविषयकोशुद्धनिश्चयो यथा—केवलज्ञानादयो जीव इति । सोपाधिकविषयोऽशुद्धनिश्चयो यथा—मतिज्ञानादयो जीव इति । व्यवहारो द्विविधः सद्भूतव्यवहारोऽसद्भूतव्यवहारश्च । तत्रैकवस्तुविषयः सद्भूतव्यवहारः, भिन्नवस्तुविषयोऽसद्भूतव्यवहारस्तत्रसद्भूतव्यवहारो द्विविधः उपचरितानुपचरितमेदात् । तत्र सोपाधिगुण्यगुण्यिनोर्मेदविषयः उपचरितसद्भूतव्यवहारो यथा—जीवस्य मतिज्ञानादयो गुणाः । निरुपाधिगुण्यगुण्यिनोर्मेदविषयोऽनुपचरितसद्भूतव्यवहारो यथा—जीवस्य केवलज्ञानादयो गुणाः । असद्भूतव्यवहारो द्विविधः उपचरिता-

नुपचरितमेदात् । तत्र संस्लेषरहितवस्तुसम्बन्धविषय उपचरिता-  
सद्भूतव्यवहारो—यथा देवदत्तस्य धनमिति । संस्लेषरहितवस्तु-  
सम्बन्धविषयोऽनुपचरितासद्भूतव्यवहारो यथा—जीवस्य शरीर-  
मिति ।

इति सुखबोधार्थमालापपद्धतिः श्रीमद्देवसेनविरचिता  
परिसमाप्ता

—: ० :—

श्रीमन्माखिक्यनन्दिविरचितानि

## १२ परीक्षामुखसूत्राणि ।

प्रमाणादर्थसंसिद्धिस्तदामासाद्विपर्ययः ।

इति वक्ष्ये तयोर्लक्ष्म सिद्धमन्वं लघीयसः ॥१॥

स्वापूर्वार्थव्यवसायात्मकं ज्ञानं प्रमाणं ॥ १ ॥ हितारित-  
प्राप्तिपरिहारसमर्थं हि प्रमाणं ततो ज्ञानमेव तत् ॥ २ ॥ तन्नि-  
श्चयात्मकं समारोपविरुद्धत्वादानुमानवत् ॥ ३ ॥ अनिश्चितोऽपू-  
र्वार्थः ॥ ४ ॥ इष्टोऽपि समारोपात्तादृक् ॥ ५ ॥ स्वोन्मुखतया  
प्रतिभासनं स्वस्य व्यवसायः ॥ ६ ॥ अर्थस्यैव तदुन्मुखतया  
॥ ७ ॥ षट्महमात्मना वेष्टि ॥ ८ ॥ कर्मवत्कर्तृकरणक्रियाप्रती-  
तेः ॥ ९ ॥ शब्दानुच्चारणेऽपि स्वस्यानुमवनमर्थवत् ॥ १० ॥  
को वा तत्प्रतिभासिनमर्थमभ्यस्यमिच्छंस्तदेव तथा नेच्छेत् ॥११॥  
प्रदीपवत् ॥ १२ ॥ तत्प्रामाण्यं स्वतः परतश्च ॥ १३ ॥

इति प्रमाणाख्य स्वरूपोद्देशः प्रथमः ॥ १ ॥

तद्देहा ॥ १ ॥ प्रत्यक्षेतरमेदात् ॥ २ ॥ विशदं प्रत्यक्षं

॥ ३ ॥ प्रतीत्यन्तराव्यवधानेन विशेषवसया वा प्रतिभासनं  
 वैशद्यं ॥ ४ ॥ इन्द्रियानिन्द्रियनिमग्नं देशतः सांख्यवहारिकम्  
 ॥ ५ ॥ नार्थालोकौ कारखं परिच्छेद्यत्वात्तमोवत् ॥ ६ ॥ तदन्व-  
 यव्यतिरेकानुविधानाभावाच्च केशोण्डुकज्ञानवन्नक्तचरज्ञानवच्च  
 ॥ ७ ॥ अतज्जन्यमपि तत्प्रकाशकं प्रदीपवत् ॥ ८ ॥ स्वावरणच-  
 योपशमलक्ष्ययोग्यतया हि प्रतिनियतमर्थं व्यवस्थापयति ॥ ९ ॥  
 कारणस्य च परिच्छेद्यत्वे करखादिना व्यभिचारः ॥ १० ॥ साम-  
 ग्रीविशेषविश्लेषिताखिलावरणमतीन्द्रियमशेषतो मुख्यं ॥ ११ ॥  
 सावरणत्वे करखजन्यत्वे च प्रतिबन्धसम्भवात् ॥ १२ ॥

इति प्रत्यक्षोद्देशः द्वितीयः ॥ २ ॥

परोक्षमितरत् ॥ १ ॥ प्रत्यक्षादिनिमित्तं स्मृतिप्रत्यभिज्ञा-  
 नतर्कानुमानागमभेदं ॥ २ ॥ संस्कारोद्बोधनिबन्धना तदित्या-  
 कारा स्मृतिः ॥ ३ ॥ स देवदत्तो यथा ॥ ४ ॥ दर्शनस्मरणकार-  
 णकं सङ्कलनं प्रत्यभिज्ञानं तदेवेदं तत्सदृशं तद्विलक्षणं तत्प्रति-  
 योगीत्यादि ॥ ५ ॥ यथा स एवायं देवदत्तः गोसदृशो गवयः  
 गोविलक्षणो महिष इदमस्माद्दूरं वृक्षोऽयमित्यादि ॥ ६ ॥  
 उपलम्बानुपलम्बनिमित्तं व्याप्तिज्ञानमूढः इदमस्मिन्सत्येव भव-  
 त्यसति न भवत्येवेति च ॥ ७ ॥ यथाग्नावेव धूमस्तदभावे न  
 भवत्येवेति च ॥ ८ ॥ साधनात्साध्यविज्ञानमनुमानं ॥ ९ ॥  
 साध्याभिनामादित्वेन निश्चितो हेतुः ॥ १० ॥ सहकर्मभावनि-  
 यमोऽभिनामावः ॥ ११ ॥ सहचारिणोऽप्यप्यव्यापकयोश्च सह-  
 भावः ॥ १२ ॥ पूर्वोक्तचारिणोः कार्यकारणयोश्च क्रमभावः

॥ १३ ॥ तर्कात्तन्निर्णयः ॥ १४ ॥ इष्टमशक्तिमसिद्धं साध्यं  
 ॥ १५ ॥ सन्दिग्धविपर्यस्ताभ्युत्पन्नानां साध्यत्वं यथा स्यादि-  
 न्यसिद्धपदं ॥ १६ ॥ अनिष्टाध्यक्षादिबाधितयोः साध्यत्वं मा-  
 यूदितीष्टाबाधितवचनं ॥ १७ ॥ न चासिद्धवर्षिष्टं प्रतिवादिनः  
 ॥ १८ ॥ प्रत्यायनाय हीच्छा वक्तुरेव ॥ १९ ॥ साध्यं धर्मः क्व-  
 चित्तद्विशिष्टो वा धर्मी ॥ २० ॥ पक्ष इति यावत् ॥ २१ ॥ प्रसि-  
 द्धो धर्मी ॥ २२ ॥ विकल्पसिद्धे तस्मिन्सत्तरे साध्ये ॥ २३ ॥  
 अस्ति सर्वज्ञो नास्ति स्वरविषयः ॥ २४ ॥ प्रमाद्योभयसिद्धे तु  
 साध्यधर्मविशिष्टता ॥ २५ ॥ अग्निमानयं देशः परिष्कामी  
 शब्द इति यथा ॥ २६ ॥ व्याप्तौ तु साध्यं धर्म एव ॥ २७ ॥  
 अन्यथा तदघटनात् ॥ २८ ॥ साध्यधर्माधारसन्देहापनोदाय  
 गम्यमानस्यापि पक्षस्य वचनं ॥ २९ ॥ साध्यधर्मिणि साधन-  
 धर्माविबोधनाय पक्षधर्मोपसंहारवत् ॥ ३० ॥ को वा त्रिधा हेतु-  
 मुक्त्वा समर्थयमानो न पक्षयति ॥ ३१ ॥ एतद्द्वयमेवानुमानांगं  
 नोदाहरणं ॥ ३२ ॥ न हि तत्साध्यप्रतिपक्ष्यं तत्र यथोक्तहेतो-  
 रेव व्यापारात् ॥ ३३ ॥ तदविनाभावनिश्चयार्थं वा विपक्षे बाधा-  
 कादेव तत्सिद्धेः ॥ ३४ ॥ व्यक्तिरूपं च निदर्शनं सामान्येन तु  
 व्याप्तिस्तत्रापि तद्विप्रतिपक्षावनवस्थानं स्याद् दृष्टान्तान्तरा-  
 पेक्षयात् ॥ ३५ ॥ नापि व्याप्तिस्मरणार्थं तथाविधहेतुप्रयोगादे-  
 व तत्स्मृतेः ॥ ३६ ॥ तत्परमभिप्रीयमानं साध्यधर्मिणि साध्य-  
 साधने सन्देहयति ॥ ३७ ॥ कुतोऽन्यथोपनयनिगमने ॥ ३८ ॥  
 न च ते तदङ्गे, साध्यधर्मिणि हेतुसाध्ययोर्वचनादेवासंशयात्

॥ ३६ ॥ समर्थनं वा वरं हेतुरूपमनुमानावयवो वाऽस्तु साध्ये तदुपयोगात् ॥४०॥ बालव्युत्पत्त्यर्थं तत्रयोपगमे शास्त्र एवासी न वादेऽनुपयोगात् ॥४१॥ दृष्टान्तो द्वेषाऽन्वयव्यतिरेकमेदात् ॥४२॥ साध्यव्याप्तं साधनं यत्र प्रदर्शयते सोऽन्वय-दृष्टान्तः ॥४३॥ साधनाभावे साधनाभावो यत्र कथ्यते स व्यतिरेकदृष्टान्तः ॥४४॥ हेतोरुपसंहार उपनयः ॥४५॥ प्रतिज्ञायास्तु निगमनं ॥४६॥ तदनुमानं द्वेषा ॥४६॥ स्वार्थपरार्थमेदात् ॥४८॥ स्वार्थेऽनुक्तलक्षणां ॥४९॥ परार्थं तु तदर्थपरामर्शवचनाज्जातं ॥५०॥ तद्वचनमपि तद्वेतुत्वात् ॥५१॥ स हेतुर्द्विधोपलब्ध्यनुपलब्धिमेदान् ॥५२॥ उपलब्धिर्विधुप्रतिषेधयोरनुपलब्धिश्च ॥५३॥ अविरुद्धोपलब्धिर्विधौ षोढा व्याप्यकार्यकरणापूर्वोत्तरसहचरमेदात् ॥५४॥ रसादेकसामग्यनुमानेन रूपानुमानमिच्छद्भिर्मरिष्टमेव किञ्चत्कारणं हेतुर्यत्र सामर्थ्याप्रतिबन्धकारणान्तरवैकल्ये ॥५५॥ न च पूर्वोत्तरचारिणोस्तादात्म्यं तदुत्पत्तिर्वा कालव्यवधाने तदनुपलब्धेः ॥५६॥ भाष्यतीतयोर्मरणाग्रबोधयोरपि नारिष्टोद्बोधी प्रति हेतुत्वम् ॥५७॥ तद्व्यापाराभितं हि तद्भावमावित्वम् ॥५८॥ सहचारिणोरपि परस्परपरिहारेण्यवस्थानात्सहोत्पादाच्च ॥५९॥ परिणामो शब्दः कृतकत्वाद्य एवं स एवं दृष्टो यथा षटः, कृतकरचार्यं, तस्मात्परिणामीति, यस्तु न परिणामी स न कृतको दृष्टो यथा बन्ध्यास्तनन्धयः, कृतकरचार्यं, तस्मात्परिणामी ॥६०॥ अस्त्यत्र देहिनि बुद्धिर्वाहारादेः ॥६१॥



अस्त्यत्र च्छाया क्त्रात् ॥ ६२ ॥ उदेष्यति शकटं कृत्तिकोदयात् ॥  
 ६३ ॥ उद्गाद्भरखिः प्राक् तत एव ॥ ६४ ॥ अस्त्यत्र वान्तु-  
 ल्लिगे रूपं रसात् ॥ ६५ ॥ विरुद्धतदुपलब्धिः प्रतिषेधे तथा  
 ॥ ६६ ॥ नास्त्यत्र शीतस्पर्शं औष्ण्यात् ॥ ६७ ॥ नास्त्यत्र  
 शीतस्पर्शो धूमात् ॥ ६८ ॥ नास्मिन् शरीरिणि सुखमस्ति  
 हृदयशय्यात् ॥ ६९ ॥ नोदेष्यति मुहूर्तान्ते शकटं रेवत्युदयात्  
 ॥ ७० ॥ नोद्गाद्भरखिमुहूर्तात्पूर्वं पुष्योदात् ॥ ७१ ॥  
 नास्त्यत्र भित्तौ परभागामावोऽर्वागमागदर्शनात् ॥ ७२ ॥ अवि-  
 द्धानुपलब्धिः प्रतिषेधे सप्तधाऽन्वभावव्यापककार्यकारणपूर्वोत्तर-  
 सहचरानुपलम्भमेदात् ॥ ७३ ॥ नास्त्यत्र भूतले षटोऽनुप-  
 लब्धेः ॥ ७४ ॥ नास्त्यत्र शिंशपा वृक्षानुपलब्धेः ॥ ७५ ॥  
 नास्त्यत्राप्रतिवद्धसामर्थ्योऽग्निधूमानुपलब्धेः ॥ ७६ ॥ नास्त्यत्र  
 धूमोऽनग्नेः ॥ ७७ ॥ न भविष्यति मुहूर्तान्ते शकटं कृत्तिकोद-  
 यानुपलब्धेः ॥ ७८ ॥ नोद्गाद्भरखिमुहूर्तात्प्राक्त एव ॥ ७९ ॥  
 नास्त्यत्र समतुलायाश्चामोऽनामानुपलब्धेः ॥ ८० ॥ विरुद्धानु-  
 पुपलब्धिर्विधौ त्रेधा विरुद्धकार्यकारणस्वभावानुपलब्धिमेदात्  
 ॥ ८१ ॥ यथास्मिन्प्राक्षिनि व्याधिविशेषोऽस्ति निगमयषेष्टानु-  
 पलब्धेः ॥ ८२ ॥ अस्त्यत्र देहिनि दुःखमिष्टसंयोगामावात् ॥ ८३ ॥  
 अनेकान्तात्मकं वस्त्वेकान्तस्वरूपानुपलब्धेः ॥ ८४ ॥ परम्प-  
 रया संभवत्साधनमत्रैवान्तर्भावनीयम् ॥ ८५ ॥ अभूदत्र चक्रे  
 शिवकः स्यात्सात् ॥ ८६ ॥ कार्यकार्यमविरुद्धकार्योपलब्धौ  
 ॥ ८७ ॥ नास्त्यत्र सुदानां शृगङ्गीजनं सुगारिसंशब्दनात्,

कारणविकृद्धकार्योपलब्धौ यथा ॥८८॥ व्युत्पन्नप्रयोगस्तु तद्यो-  
 यपरयाऽन्यथानुपपन्नैव वा ॥८९॥ अग्निमानयं देहस्तस्यैव  
 धूमवत्नोपपत्तेर्धूमवत्वानुपपत्तेर्वा ॥९०॥ हेतुप्रयोगो हि यथा  
 व्याप्तिग्रहणं विधायते सा च तावन्मात्रेण व्युत्पन्नैरवधार्यते  
 ॥९१॥ तावता च साध्यसिद्धिः ॥९२॥ तेन पक्षस्तदाचार-  
 सूचनायोक्तः ॥९३॥ आप्तवचनदिनिबन्धनमर्थज्ञानमात्मनः  
 ॥९४॥ सहजयोग्यतासङ्केतवशाद्धि शब्दादयो वस्तुप्रतिप-  
 तिहेतवः ॥९५॥ यथा मेधादयः सन्ति ॥९६॥

इति परोक्षप्रपञ्चस्तृतीयः समुद्देशः ॥१॥

सामान्यत्रिशोपात्मातदर्थो विषयः ॥१॥ अनुपपन्नव्यावृ-  
 त्तप्रत्ययगोचरत्वात्पूर्वोचराकारापरिहारावाप्तिस्त्वितिलक्ष्यपरि-  
 खामेनार्थक्रियोपपत्तेश्च ॥२॥ सामान्यं द्वेषा तिर्यगूर्ध्वतामेदात्  
 ॥३॥ सदृशपरिखामस्तिर्यक् स्वयल्लभ्यहादिषु गोत्ववत् ॥४॥  
 परापरविवर्त्तव्यापिद्रव्यमूर्ध्वता सृदिव स्थानादिषु ॥५॥  
 विशेषश्च ॥६॥ पर्यायव्यतिरेकमेदात् ॥७॥ एकस्मिन्मूर्ध्वो  
 क्रमभाविनः परिखामाः पर्याया आत्मनिर्हर्षविवादादिषु  
 ॥८॥ अर्थान्तरगतौ विसदृशपरिखामो व्यतिरेको गोमहिम्न-  
 दिवत् ॥९॥

इति प्रमाणस्य विषयसमुद्देशस्तुतः ॥ ४ ॥

अज्ञाननिवृत्तिर्हानोपादानोपेक्षारश्च फलम् ॥१॥ प्रमाणा-  
 दभिन्नं किन्नं च ॥२॥ यः प्रमिमीते स एव निवृत्ताज्ञानो ज्ञा-  
 त्यादश्च उपेक्षते चेति प्रतीतेः ॥३॥

इति प्रमाणस्य फलसमुद्देशः पञ्चमः ॥५॥

ततोऽन्यत्तदामासम् ॥१॥ अस्वसंबिदितगृहीतार्थदर्शन-  
संशयादयः प्रामाण्याभासाः ॥२॥ स्वविषयोपदर्शकत्वाभावात्  
॥३॥ पुरुषान्तरपूर्वार्थगच्छत्तृणास्पर्शस्थानुपुरुषादिज्ञानवत् ॥४॥  
चक्षुरसयोर्द्रव्ये संयुक्तसमवायवच्च ॥५॥ अवैशद्ये प्रत्यक्षं तदा-  
मासं बौद्धस्याकस्माद्भूमदर्शनाद्द्विविज्ञानवत् ॥६॥ वैश-  
द्येऽपि परोक्षं तदामासं मीमांसकस्य करणज्ञानवत् ७ अतस्मिंस्त-  
दिति ज्ञानं स्मरणाभासं जिनदत्ते स देवदत्तो यथा ॥८॥ सदृशे  
तदेवेदं तस्मिन्नेव तेन सदृशं यमलकवदित्यादिप्रत्यभिज्ञानाभासं  
॥९॥ असम्बद्धे तज्ज्ञानं तर्कामासं यावांस्तत्पुत्र स श्याम इति  
यथा ॥१०॥ इदमनुमानामासम् ॥११॥ तत्रानिष्टादिः पक्षाभासः  
॥१२॥ अनिष्टो मीमांसकस्यान्त्यः शब्दः ॥१३॥ सिद्धः  
भावश्चः शब्दः ॥१४॥ बाधितः प्रत्यक्षानुमानागमलोकस्ववचनैः  
॥१५॥ तत्र प्रत्यक्षबाधितो यथा अनुष्योऽग्निर्द्रव्यत्वाज्जवत्  
॥१६॥ अपरिणामी शब्द कृतकत्वात् घटवत् ॥१७॥  
श्रेत्यासुखप्रदो घर्मः पुरुषाभितत्वादधर्मवत् ॥१८॥ शुचि नरशिर  
रूपालं प्राप्यङ्गत्वाच्चङ्कुशुक्तिवत् ॥१९॥ माता मे वन्ध्या पुरुष-  
संयोगेऽप्यगर्भत्वात्प्रसिद्धवन्ध्यावत् ॥२०॥ हेत्वामासा असिद्ध-  
विरुद्धानैकान्तिकाकिञ्चित्कराः ॥२१॥ असत्सत्तानिश्चयोऽसिद्धः  
॥२२॥ अविद्यमानसत्ताकः परिणामी शब्दश्चाञ्जुक्त्वात् ॥२३॥  
स्वरूपेणैवासिद्धत्वात् ॥२४॥ अविद्यमाननिश्चयो मृगबुद्धि  
प्रत्यग्नित्र धूमात् ॥२५॥ तस्य बाष्पादिभावेन भूतसंघाते संदे-  
हात् ॥२६॥ सार्थ्यं प्रति परिणामी शब्दः कृतकत्वात् ॥२७॥

तेनाज्ञातत्वात् ॥२८॥ विपरीतनिश्चितविनाभावो विरुद्धोऽपरि-  
 ष्यामी शब्दः कृतकत्वात् ॥२९॥ विषयेऽत्यविरुद्धवृत्तिरनैक-  
 न्तिकः ॥३०॥ निश्चितवृत्तिरनित्यः शब्दः प्रमेयत्वाद् घटवत्  
 ॥३१॥ आकाशे नित्येऽप्यस्य निश्चयात् ॥३३॥ शङ्कितवृत्तिस्तु  
 नास्ति सर्वज्ञो वस्तुत्वात् ॥३३॥ सर्वज्ञत्वेन वस्तुत्वावेरोषात्  
 ॥३४॥ सिद्धे प्रत्यक्षादिबाधिते च साध्ये हेतुरकिञ्चित्करः  
 ॥३५॥ सिद्धः श्रावणः शब्दः शब्दत्वात् ॥३६॥ किञ्चिदक-  
 रणात् ॥३७॥ यथाऽनुष्णोऽग्निर्द्रव्यत्वादित्यादौ किञ्चित्कर्तु-  
 मशक्यत्वात् ॥३८॥ लक्षण एवासौ दोषो व्युत्पन्नप्रयोगस्तय  
 यच्चदोषेणैव दृष्टत्वात् ॥३९॥ दृष्टान्ताभासा अन्वयेऽसिद्धसाध्य-  
 साधनेनामयाः ॥४०॥ अपौरुषेयः शब्दोऽपूर्तत्वादिन्द्रियसुख-  
 परमाणुघटवत् ॥४१॥ विपरीतान्वयश्च यदपौरुषेयं सदमूर्त्तम्  
 ॥४२॥ विद्युदादिनाऽतिप्रसङ्गत् ॥४३॥ व्यतिरेके सिद्धतद्व्यति-  
 रेकाः परमाण्विन्द्रियसुखाकाशवत् ॥४४॥ विपरीतव्यतिरेकश्च  
 यन्नामूर्त्तं तन्नापौरुषेयम् ॥४५॥ बालप्रयोगामासः पञ्चावयवेषु  
 कियद्दीनता ॥४६॥ अग्निमानय देशोधूमधत्वात् यदित्यं तदित्यं  
 यथा महानसः ॥४७॥ धूमवांश्चायमिति वा ॥४८॥ तस्माद्-  
 ग्निमान धूमवांश्चायम् ॥४९॥ स्पष्टतया प्रकृतप्रतिपक्षे रयोगात्  
 ॥५०॥ रागद्वेषमोहाक्रान्तपुरुषवचनाज्ज्ञातमागमाभासम् ॥५१॥  
 यथा नद्यास्तीरे मोदकराशयः सन्ति धावन्ध्वं माधवकाः ॥५२॥  
 अंगुल्यग्रे हस्तिपूयशतमास्त इति च ॥५३॥ विसंचदात् ॥५४॥  
 प्रत्यक्षमेवैकं प्रमाद्यमित्यादिसंख्यामाम् ॥५५॥ लौकिकप्रतिकल्प-

प्रत्यक्षतः परलोकादिनिषेधस्य परबुद्ध्यादेरचासिद्धेरतद्विषयत्वात्  
 ॥५६॥ सौम्यतसांख्ययौगप्रमाकरजैमिनीयानां प्रत्यक्षनुमानागमोपमा  
 नार्थाप्यमात्रैरेकैकाधिकैर्व्याप्तिवत् ॥५७॥ अनुमानादेस्तद्विषय  
 त्वे च प्रमाणांतरत्वम् ॥५८॥ तर्कस्येव व्याप्तिगोचरत्वे प्रमाणा-  
 न्तरत्वमप्रमाणास्यान्यवस्थापकत्वात् ॥५९॥ प्रतिभासमेदस्य च  
 भेदकत्वात् ॥६०॥ विषयामासः सामान्यं विशेषो द्वयं वा  
 स्वतन्त्रम् ॥६१॥ तथाप्रतिभासनात्कार्याकरणाच्च ॥६२॥ समर्थ-  
 स्य करणो सर्वदोत्पत्तिरनपेक्षत्वात् ॥६३॥ परापेक्षणे परिणामि-  
 त्वमन्यथा तदभावात् ॥६४॥ स्वयमसमर्थस्याकारकत्वात्पूर्ववत्  
 ॥६५॥ फलाभासं प्रमाणादभिन्नं मिश्रमेव वा ॥६६॥ अमेदे  
 तदव्यवहारानुपपत्तेः ॥६७॥ व्यावृत्त्याऽपि न तत्कल्पना फलान्त-  
 रन्यावृत्त्याऽलफलत्वप्रसंगात् ॥६८॥ प्रमाणांतरावृत्त्येवाप्रमाणत्वस्य  
 ॥६९॥ तस्माद्वास्तवोऽमेदः ॥ ७०॥ मेदे त्वात्मान्तरवचदनुपपत्ते  
 ॥७१॥ समवायेऽतिप्रसङ्गः ॥७२॥ प्रमाणात्तदामासौ दुष्टतपोद्भा-  
 वितौ परिहृतापरिहृतदोषौ वादिनः साधनतदामासौ प्रतिवादिना  
 दूषणभूषणौ च ॥७३॥ सम्भवदन्यद्विचारणीयम् ॥७४॥

परीक्षामुखमादर्शं हेयोपादेयतत्त्वयोः ।

संविदे मानुशो बालः परीक्षादक्षवद्व्यधाम् ।१।

## १३० विशेष गार्थासंग्रह

मिच्छोदयेषामिच्छत्तमसद्वृत्तवत्त्वत्वात् । एयंतं विवरीयं विख्यं  
 संसर्गिदमवत्त्वात् । मिच्छयंवेदंते जीवो विवरीयं संख्योद्देदि । ख्य  
 पञ्चरोपेदिहु महुरंखुरतं जहा अरिदो । आदिमसम्मचद्दासम-

यादोक्षावलिपि वासेसे । अथअपयदरुदयादोक्षासियसम्मोत्ति-  
 सासखकखोसे । सम्मानिच्छुदयेख य जचंतरसम्बर्चादिकञ्जेख ।  
 य य सम्ममिच्छदपियसम्मिस्सोहोदिपरिखामो । थोइदियेसु विर-  
 दोखो जीवेथावरे तसे वापि । जो सइहादिजिणुचं सम्माइही  
 अबिरदोसो । पञ्चकखाणुदवादे संजमभावोख होदिखवरिं तु ।  
 थोववदो होदितदोदेसवदोहोदिपंचमंओ । संजलखयोकसाणोणु-  
 दंओ मंदो जदा तदाहोदि । अपमत्तगुखोतेंख य अपमत्तो संकदो  
 होदि । थोइसेपमादोवयगुणशीलोलिमंजिओयाणी । अणुव  
 समंओ अखवंओ ज्ञायाणिलीथोहु अपमत्तो । इगवीसमोइखवणु-  
 वसमणयिमित्तायितिकरणाणि तहिं । पठमं अधापवत्तंकरणं तु  
 करेदि अपमत्तो ; अंतोमुहुत्तकालं गमिऊण अधापवित्तकरणं तं ।  
 पडिसमयंसुज्जंतो अपुव्वकरणां समान्लयई । एकान्ह कालसमये  
 संठाणाहीहि जहणिवदंति । थ थिवंदति तदावियपरिखामेहिं  
 मिहेजिहिं । हेति अणियहिथोते पडिसमयंजेस्सिमेकपरिखामा ।  
 विमलयरभाखहुयवहसिहाहिंमिइइइकम्मवया । धुदकेसुं मयवत्थं  
 होदि जहा मुहुमरायसंजुचं । एवं मुहुमकसाओ मुहुमसरणोत्ति  
 थोदग्गे । कइकफलजुदजलंवारए सराखियं वंखिम्लयं ।  
 सयलोवसंतमोहो उवसंतकसायओ होदि । थिस्सेसखीथमोहो  
 फलिहामलमायणुदयसमत्तित्तो । खीथकसाओ मयथादिथिग्गंओ  
 वीयरयेहिं । केवलथाथदिथायरकिरंथकलावप्यथासियएथाथो ।  
 थवकेवललंहु ग्गमसुजखियपरमप्यवंपसा । असहायथायादंसख  
 संहिओरदि केवलोहु जीगेथ । जुत्तोत्ति संजागिभियो अदथाथि

हृत्कारिसे उक्तो । सीजेभिसंपत्तोखिरुद्धखिस्सेसआसवो जीवो ।  
 कम्मरयविपग्गुक्को गयजेगो केवली होदि । जेहिं अखेया जीवा  
 गज्जंते बहुविहावि तज्जादो । ते पुण संगहित्या जीवसमासात्ति  
 विण्णेषा जेहि दुलक्खिज्जंते उदयादिसु संभवेहिं भावेहिं । जीवा  
 ते गुणसयणा खिदिट्ठा सत्वदरसीहिं । जह पुण्णापुण्णाइं गिइ-  
 क्कवत्थादियाइं दब्बाइं । तह पुण्णदरा जीवा पञ्चदिदरा-  
 मुण्णेषा वाहिरपाखोहिं जदातहेव अरुभंतरेहिं पाखेहिं ।  
 पाखात्ति जेहिं जीवा पाणा ते होत्तिखिदिट्ठा । इह जाहि वाहिया  
 विय जीवा पार्वति दारुखं दुक्खं । सेवताविय उभये ताओ  
 चत्तारि सण्णाओ । जाहि व जामु व जीवा मग्गिज्जंते जहा  
 तहा दिट्ठा । ताआ चोदस जाणे सुपणाणे मग्गणाहोत्ति ।  
 गइउदयजपञ्जाया च उगइगमणस्सहेउवा गई । खारयतिरिक्ख  
 माणुसदेवगइत्तिय इवे चहुधा । असमिदो जहदेवा अविसेसं अह  
 महंति मण्णाता ईसंतिएकमेकं इंदा इव इंदिये जाण । जाई  
 अविद्याभावी तसथावर उदयजो इवेकाओ । सो जिणमहत्ति  
 मण्णो पुठ्ठीकायादिक्कमेयो । पुग्गलविवाइदेहोइयेख मणव-  
 यण्णकायजुत्तस्स । जीवस्य जा हुसत्तो कम्मानमकारणं जोगो ।  
 पुरुसिञ्जिसंठवेदोदयेण पुरुसिञ्जिसंठओ भावे । खामोदयेण  
 दग्घेपाएण समा क्कहिं विसमा । सुहुदुक्खसुवहुसस्सं कम्मक्खेणं  
 करोदि जीवस्स । सँसारदूरमेरं तेण कसाओत्तिणं वेत्ति । जाखाइ  
 तिकालविस्ए दव्वगुणे पञ्जएय बहुमेदे । पच्चक्खं च परोक्खं  
 अणेण खालोत्तिणं वेत्ति वदसमिदिकसायाणां दंडात्तहिंदियाख

पंचवर्ह । भारखयालयाखिग्गहचागजओ संजमो भखिओ । जं  
सामएणां गहणां मानरांखेव कट्टुमायारं । अबिसैसदूख अहु  
देंसखमिदि भएणये समये । लिपइ अप्पीकीरइएहीए खिय  
अपुएणपुएणां च । जीवोत्तिहोदिलेभसा लेस्सागुणजावयवखादा ।  
चंडाणमुचइ वे' मंडणाशीलोय धम्मदयरहिओ । दुट्टोखयएदि  
वसं लकखणमेयंतु किएइस्स । मंदोवुद्धिविहीयोशिखिणयाणीय  
विसयलोलोय । माणीमायी च तंदा आलस्सो चैवमेओय ।  
शिंदावंचणवहुलो धणधएणेहोदि तिन्वसएणाय । लकखणमेयं  
भवियं समासदेणीललेस्सस्स । रूसईणिदइ अएणेदसइ वहुसो  
यसोयभयवहुलो । असुपइ परिभवइ पर पसंसये अप्पयं वहुसो ।  
खयणत्तियई परं सो अप्पाखं वियं परंपिमएणांतो । थूसइ अभि-  
त्युवंतोखय जाणइ हाखिवड्ढिं वा । मरणापत्थेइ रखे देइ सुव-  
हुंगवि थुव्वमाएणेहु । य गणइ कजाकज्जं लकखणमेयं तु  
काउस्स । जाणइ कजाकज्जं सेयमसेयं च सन्वसमयासी । दय-  
दाणरदोयमिदू लकखणमेयं तु तेउस्स । चागीमहो चोक्खो  
उज्जवकम्मो य खवदि वहुंगपि । साहुगुरुपूजणरदोलकखणमेयं  
तु पम्मस्स । यय कुयाइ पकखयायं एावि य शिंदायां समो य  
सन्वेसिं । एत्थि य रायदोसाणेहोवियसुक्कलेस्सस्स । भविया  
सिद्धी जोसिं जीवायां ते हवंति भवसिद्धा । तन्निवरीयाऽभक्या  
संसारादेणसिज्जंति । छप्पंचणवविहायां अत्थायां जिणवरोवइ-  
ट्टायां । आणाए अहिगमेण थ सइइयां होइ सम्मचं । खोइंदिय  
आवरणखओवसर्म तज्जवोइयां सएणा । सा जस्स सोहुसयणी



इदरोसेसिदिभववोहो । उदयावणसरीरोदयेण तद्देहवपणचि-  
त्ताणं । शोकम्मवग्गणाणं गहणं आहारयं णाम । वत्तुण्णिमिचं  
भावो जादो जीवस्य जोहु उवजोगो । सो दुविहोणायव्वो  
सायारो चवमाय.रो । सोलस पणबीस णमं दस चउल्लभकेकक  
बंधवोच्छ्रयणा । दुग तीस चहुरपुव्वे पणसोलस जोगिणो  
एकको । मिच्छत्तहुंडसंढासंपणोयकसुखावरादावं । सुहुमतियं विय-  
लिदी थिरयदुथिरयाउगं मिच्छे । विदियगुणे अणथीणतिदुम-  
गतिसंठाणासंहदिचउककं । दुग्गमणित्थीणीचंतिरियदुगुज्जोवति-  
रियाऊ अयदेविदियकसाया वज्जं ओरालमणुहुमणुवाऊ । देसे  
तदियकसाया वियमेण्हि बंधवोच्छ्रयणा । छट्ठे अथिरं असुहं  
असादमजसं च अरदिसागं च । अपमत्ते देवाऊण्हिदुवणं चव  
अत्थिचि । मरण्णमिहणियद्वोपढमेण्हिदा तदेव पयला य । छट्ठे  
भागेतित्थं विमियां सग्गमणपंचिदी । तेजदुहारहु समचउसुख-  
एणागुरुचउककतसखावयं । चरमे हस्सं च रदी मयं जुगुच्छाय  
बंधवोच्छ्रयणा पुरिसं चहुसंजलणं क्रमेण अणियहि पंचभागेसु ।  
पढमं विग्घं दंसणचउजसउण च सुहमंते । उवसंतखीणमोहे  
जोगिम्मि य समयियद्विदी सादं । णायव्वो पयडांणं बंधसंठो  
अणतो य । अत्तरसेकग्गसयं चउसचचरि सग्गहि तेवट्ठी ।  
बंधाणवट्ठठाणादुवीससचारसेकोवे । पण्णव इति सचारसं अह  
पंच च चउर छद्दु छच्चेव । इति दुग सोलस तीसं बारस उदये  
अजोलांता मिच्छेमिच्छादावं सुहुमतियं सासखे अणोइदी । थावर-  
वियलं मिस्सेमिस्से च य उदयवेच्छ्रयणा अयदेविदिवकसाया

वेगुव्वियळ्ळकशिरयदेवाळु । मणुयतिरियाणुपुवी हुम्भगणादेज्ज  
 अज्जसयंदेसे । तदियक्कसायातिरियाउज्जोवखीचतिरियगदी ।  
 छट्टेआहारदुगं थीणतियं उदयवोच्छिण्णया । अपमसे सम्मत्तं  
 अन्तिमतियसंहदीयऽपुव्वमिह । छच्चेवणोकसाया अशियण्णी-  
 मागमागेसु वेदतिय कोहमाणं मायासंजलणमेव सुहुमते  
 सुहुमोलोहो संते बज्जंणारायणारायं । खीणकसाय दुचरिमे-  
 णिहापयला य उदयवोच्छिण्णया । णाणांतरायदसय दंसणच-  
 चारिचरिमिह । तदियेक्कवज्जणिमिणं थिरसुहसरगदि  
 उरालतेज्जदुगं । संठायावण्णयागुरुचउक्क पणेयजोगिमिह  
 तदियेक्कमणुवगदीपंचदियसुमगतसतिगादेज्जं । जसतित्थंमणुवाळु  
 उच्चं च अजोगिचरिमिह । सत्तरसेक्कारखचदुमशियसयं  
 सगिगिसीदिच्छुदुसदरी । छावट्टिसट्टिणवसगवण्णयासदुदालवा-  
 रुदया पण्णवइगि सत्तरसं अट्टट्टय चदुरळ्ळकछच्चेव ।  
 इगिदुगसोलुगदालं उदीरखाहोति जोगंता । सोलट्टेकिगि-  
 छक्कं चदुसेक्कं वादरे अदो एककं । खीणो सोलसऽजोगे  
 वायचरि तेक्कचंते । थिरयतिरिक्कदुवियर्णथीणतिगुज्जोव-  
 तावपइंदी । साहरणासुहुमथावर सोलं मज्झिमकसायांऽठ्ठं  
 संदित्थिळ्ळकसाया पुरिसोकोहो य माण्णमाणां च । थूले सुहुमे  
 लोहो उदयं वाहोदि खीणमिह । देहादीफस्संता थिरसुहसर  
 सुरविहाय दुगदुमगं । णिमिणाजसयादेज्जं पणेयापुण्णया  
 अगुरुचळु, अणुदयतदियंथीचमजोगिदुचरिमिह सचवोच्छिण्णया ।  
 उदयगवार थाराणु वेरस चरिमिह वोच्छिण्णया चमतिगिखम

शगिदोद्दोदसदस सोलडुगदिहीखेसु । सत्ता इवन्ति एवं  
 असहायपरकक मुदिङ्क । छसुसगविहमडुविहं कम्मवंधान्त  
 तिसुयसचविहं । छन्विहमेककडुखेतिमु एककमबंधगो एकको ।  
 चत्तारि तिणितियचउपयडिडुग्याणिमूलपयडीणं । भुजगा-  
 रप्पदराणिय अवडुदाणिविकमे होति अडुदओ सुहुमोत्तिय  
 मोहेण विणाहु संतरवीणेषु । घादिदराणचउककस्सुदओ  
 केवलिदुगेखियमा संतोत्ति अडुसत्ता खीखे सत्तेव होतिसत्ताणि ।  
 जोगिम्ह अजोगिम्ह य चत्तारि इवन्ति सत्ताणि । खवळकक  
 चदुक्कंच य विदियावरणस्य बंधणयाणि । भुजगारप्प-  
 दराणि य अवडुदाणिविय जाणाहि । खव सासणोत्तिबंधो  
 छच्चेव अपुण्वपढमभागोत्ति । चत्तारिहोत्ति ततो सुहुमकसा-  
 यस्स चरिमोत्ति खीखोत्ति चार उदया पंचसुणिदासुदोसुणिदासु ।  
 एक्के उदयंपत्ते खीखदुचरिमोत्तिय पंचुदया । मिच्छादुवसंतोत्तिय  
 अणियट्टीखवगपढमभागोत्ति । खवसत्ता खीखस्सदुचरिमोत्तिय  
 छब्बद्वरिमे । वावीसमे कवीसं सत्तारस तेरसेवखवपंच । चहुत्तिय  
 दुगं च एककं बंधट्टाणाणिमोहस्स । वावीसमेकवीसंसत्तार सत्तारतेर-  
 तिसुखवयं । थूलेपणचहुत्तिय हुगमेककं मोहस्सठाणाणि । छन्वावीसे  
 चदुहुगवीसे दोदो इवन्ति छट्टोत्ति । एक्केककमदो भंगोबंधट्टाणेषु  
 मोहस्स । दसवीसं एककारस तेचीसं मोहबंधट्टाणाणि ।  
 भुजगारप्पदराणि अवडुदाणिविय सामण्ये । सत्तावीसदियसयं  
 पणदालं पचहत्तारिदियसयं । भुजगारप्पदराणि य अवडुदा-  
 णिविसेसेण । खम चउवीसं वारस बीसं चउरडुवीस दोदाय ।  
 थूले पणगादीखं तियतियमिच्छादिभुजगारा । अप्यहरा

पुण्यतीसं शम शम छदोणिय दोणिय शम एककं । धूले  
 पण्यगादीणं एककेकके अन्तिमे सुएणां । दसणव अट्टयसचाय  
 छप्पण चचारिदोणिय एककंच । उदयट्टाणा मोहे शव चैव  
 षड्होति खियमेण । एककपछककेवारं एयारेयारसेव शव तिणिय ।  
 एदे चउवीसगदा चदुवीसेयार दुगठाणे । अट्टय सचाय छककप  
 चदुतिदुगेगाधिगाणि वीसाणि वीसाणि । तेरसवारेयारं पणादि  
 एगूण्यंसचं । पढमतियं च य पढमपढमंचउवीसयं च मिस्सम्हि  
 पढमं चउवीसचऊ अविरददेसेमचिदरे । अउचउरेककावीसं  
 उवसमसेट्ठिम्हि खवगसेट्ठिम्हि । एककावीसंसत्ता अट्टकसाया  
 णियट्ठिचि । इरिचदुवंधकखवगे तेरस बारस एगार चउसत्ता ।  
 तिदुइगिवंधे तिदुइ गि शव गुच्छिट्टाणमविचकखा तेवीसं, पण्यवीसं  
 छव्वीसं, अट्टवीस, म्मगतीसं । तीसे, ककतीस, मेवंएकको, वंधोदुसेट्ठि-  
 म्हि ष्यक्खअपज्जचं, इगिपज्जचवितिचपण्यरापज्जतं, एइदिपज्जचं  
 सुरणिययगईहिं संजुत्तं । पज्जत्तगवितिचपमणुसदेवगदिसंजुदाणि,  
 दोणिया, पुण्यो । सुरगइज्जुद, मगइज्जुदं वंधट्टाणाणि शामस्स  
 वीसंइगिचउवीसं तत्तो इगितीसओत्ति एयधियं । उदयट्टाणा एवं

शवअट्टय होति शामस्से । चदुगदिया एइंदी विसेसणुदेवणि-

२१

२४

२५

रयएइंदी । इगिवितिचपसामणया विसेससुरणारगेइंदी । सामण्य-

२६-२६

३०

सयलवियलविसेसमणुस्ससुरणारयादोएइं । सयलवियलसामणया

पुरुष

पुरुष

सजोगपंचकखववियलया सामी तिदुइगिणउदीणउदी अउचउदो  
अयोगो

अद्वियसीदि सीदीय । उखासीदुदुतरि सत्तचरिदसय खवसत्ता ।  
सर्व्वतित्थोहारुमउखं सुरखीरयदुचारिदुगे । उव्वालेदेहदे च  
उतेरे जोगिस्स दसणवयं । भिच्छसं अविरमणं कसायजोगाय  
आसवाहोति । पणवारस पणुवीसं पणरसा होति तव्वमेया  
पणवण्णा पणसासातिदाल छादाल सत्ततीसाय चदुवीसा  
वावीसामपुव्वकरंणोत्ति थूलेसेलसपहुदी एगूणं जाव होदि दस  
ठाणं । सुहुमादिसुदसणवयं खक्यं जोगिम्मि सत्तेव । दस  
अट्टारस दसयं सत्तर खवसेलसच दोणहंपि । अट्टय चोदम,  
पणयंसत्ततिपे, दुगेगमेगमदो चउगइ भन्वो सण्णी पुण्णो  
गम्भज विसुद्ध सागारे । पढमुवसमं स गिएहदि पंचमवरलद्धि  
चरिमग्घि । खयउवसमियविसोही देसणयाउगगकरखलद्धीए ।  
चचारिणि सामण्णा करणं सम्मत्त चारित्ते । कम्ममलप-  
हलसत्ती पणिसमयमयांतगुणविहंखकमा । होदूपुहीर-  
दिज्जदातदा खणीव समलद्धीहु । आदिमलद्धिभवो जो भावो  
जीवस्य सादपहुदीए । सत्थाणं पयणीणं वंधखजोगोविसुद्धलहीसो  
ख्खव्वणवपयत्थोपदेस परस्सरिपहुदिलाहो जो । देसिदपदत्थ  
धारख लाहोवा तदियलद्धीहु । अंतो कोडाकोडी विट्ठार्योठिदिरसाख  
जं करख । पाउगगलद्धिवामा भव्वाभव्वेसु सामण्णा ।

आउपडि खिरयदुगे सुहुमतियं सुहुमदोखिणपत्तेय' । वादर-

१०-१४

जुददोरिणपदे अपुण्यजुदवितिचसण्णिसु । अङ्गुअपुण्य-

१५-२२

जुदेसुविपुण्यजुदेसुनेसु तुरियपदे । एहं दियआदावं थावरखामं

२३

२४

२५

च मिलिदब्बम् । तिरिगदुगुओवोविय णीचे अपसत्थगमखदुम-

२६

२७

२८

२९

गतिये । हुंढासंपत्ते विजयणओसएवामरवीलीए । खुअद्वथाराए

३०

३१

३२

३३

इत्थीवेदेय सादियाराए । खग्गोभवजथाराए मणुजोरालदुगवज्जे ।

३४

अथिरअसुहजस अरदी सोय असन्दे य होंति  
 चोतीसा । बंधोसरखट्ठाया मन्वाभव्वेसु सामण्णा । जागदी  
 अरहंताणं थिद्धिट्ठुट्ठाण जागदी । जागदी वीदमोहार्यं  
 सामेभवदु सस्सदा भिक्खं चर वस रण्ये योवंजेमेहिमावहू जंय  
 दुक्खं सह जिण्णिहा मेत्ति भावेहि सुट्ठु वेग्गं । खरतिरि-  
 यग्गं ओघो भवणतिसोहम्मिजुगलए विदियं । तिदियं अट्टार  
 समं तेवीसदिभादिदसपदंचरिम । ते चेवचोदस्पदा अट्टारसमेथ  
 इणिया होंति रयणादि पुढविद्धक्के सखकुमारादिदसकप्पे ।  
 ते तेरसविदियेय य तेवीसहिमेण चावि परंहीया । आणदक  
 प्पादुवरिम गेवेज्जतोत्ति ओसरथा । ते चेवेकारपदा तदिऊणा  
 विदियठाण संपत्ता । चउवीसदिमेण्णा सत्तमिपुढविन्धि  
 ओसरथा । दुत्तिआउत्तिव्यहार च अक्कणासम्ममथे डीयावा ।  
 मिस्सेण्णा वावियसन्वे पाडिहवे सत्तं । दंसखमोहवा वथा

पट्टवगो कम्मभूमिजो मणुसो । तित्थयरपायमूले केवलिसुद  
केवलीमूले । शिड्डवगोतदाणे विमाळमोगावणोसु धम्मयेय ।  
किद्धकरणिजो चहुसुविदीसु उप्पज्जे जम्हा आवलिय अणायारे ।

२ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ १०

चक्खिदिय सोद घाण जिम्भाए । मण वणण काय पासे अवाय  
११ १२ १३ १४ १५ १६ १७

ईहा सुदु स्सारेन । केवलदंसणणाणे कसाय सुक्केकये पुधतेय  
१८ १९ २० २१ २२ २३

पडिवादुवासामेतय खवेतए संपराये य । माणद्धा कोहद्धा मायद्धा  
२४ २५ २६

तह यचेव लोहद्धा । खुद्भवगाहणं पुण किट्ठीकरणं च वोद्धव्वा ।  
२७ २८ २९ ३० ३१

संकायण ओवट्टण उवसंतकसाय खीणमोहद्धा । उवसामेतयअद्धा  
खवेत<sup>३१</sup> अद्धा य वोद्धव्वा । शिवाघादेशेदा हीति जहणणावे  
आणुपुव्वीए । एत्तो अणाणुपुव्वी उक्कस्सा हीति भजियव्वा ।

चक्खु सुदं पुधर्चं माणो वाओ तहेव उवसंते । उवसामेतयअद्धा  
दुगुणा सेसाहु सविसेसा । चदुरेकदुषण पंच छत्तिगठाणाणि  
अप्पमर्चता । तिसु उवसमगे संतेत्तिय तिय तिय दोण्णि  
गच्छन्ति । सासणमत्तवज्जं अपमत्तत्तं समन्तियइ मिच्छे ।

मिच्छन्तं विदिसगुणे ि स्संपढमं चउत्थं च । अविरदसम्मोदेसो  
पमत्तपरिहीणमप्पमत्तत्तं । छट्ठामाणि पमत्तो छट्ठगुणं अप्पमत्तोदु  
हीति खवा इगि समये वोहिबुद्धाय पुरिसवेदाय । उक्कस्सेणट्ठ-  
तरसयप्पमा सग्गदो य बुद्धा । पणेयबुद्धितित्थपरत्थिणइसम

मणोहिशाण जुदा । दसवीसछक दसवीसट्टाबीसं अहाकमसे ।  
जेट्टावरबहुमज्जिमओगाहणगादुचारि अट्ठेय । जुगवं हवन्ति  
खवगा उवसमगा अद्दमेदेसि ।

## १४ समाधिमरण भाषा ।

पं० सूरजचन्द जी रचित नरेन्द्र छंद

बंदों श्रीअरहंत परमगुरु, जो सबको सुखदाई । इस जगमें  
दुख जो मैं भुंगते, सो तुम जानो राई । अब मैं अरज करूं  
प्रभु तुमसे, करसमाधि उर माहीं । अंतसमयमें यह वर मांगूं  
से। दीजै जगराई । १। भवभवमें तनधार नये में, भव भव शुभ  
सङ्ग पायो । भव भवमें नृपरिद्धि लई मैं, माता पिता सुत थायो  
भव भवमें तन पुरुषतनों घर, नारी हू तन लीनों । भवभवमें  
मैं मयो नपुंसक, आतमगुण नहिं चीनो । २। भवभव में सुरपद-  
वीपाई, ताके सुख अति भोगे । भवभव में गति नरकतनी घर,  
दुख पाये विधि योगे ॥ भव भवमें तिर्यंच योनिघर, पायो दुख  
अति मारी । भवभवमें साधर्मीजनको, सङ्ग मिन्धो हितकारी  
। ३। भवभवमें जिनपूजन कीनि, दान सुपात्रहिं दीनो । भवभवमें  
मैं समवसरखमें, देख्यो जिनगुण मीनों । एती वस्तु मिली  
भव भव में सम्यकगुण नहिं पायो जिनगुण मीनो । एती



वस्तु मिली भव भवमें मैं सम्यक्गुण नहीं पायो । ना समाधियुत मरण कियो मैं तातैं जग भरमायो ।४। काल अनादि भयो जग अमते सदा कुमरगहि कीनों । एकबारहूँ सम्यक्युत मैं, निज आतम नहीं चीने । जो निजपरके ज्ञान होय तो, मरण समय दुख काई । देह निवासी मैं निजभासी, जोतिस्वरूप सदाई ।५। विषयकषायनके बश होकर देह आपनो जान्यो । कर मिथ्यासर धान ।हयेविच, आतम नाहिं पिछन्यो । यों क्लेश पिषधार मरणकर, चारों गति भरमायो । सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन ये, हिरदेमें नाहिं लायो ।६। अब या अरज करूँ प्रभु सुनिये, मरण समय यह मांगों । रोगजनित पीड़ा मत होवो, अरु कषाय मत जागो । ये मुक्त मरणसमय दुखदाता । इन दरसाता कीजै, जो समाधियुतमरण होय मुक्त, अरु मिथ्यागद छोड़ै ।७। यह तन सात कुधातमई है, देखतही धिन आवै । चर्मल पेटी ऊपर सोहै, भीतर बिष्टा पावै ॥ अतिदुर्गंध अपावनसों यह, मूरख प्रीति बढावै । देह विनासी, जियअविनासी नित्यस्वरूप कहावै ।८। यह तन जीर्ण कुटीसम आतम, यातैं प्रीति न कीजै । नूतन महल मिलै जब भाई, तब यामैं क्या छोड़ै । मृत्युहोनासे हानि कौन है, याके भय मत लावो । समतासे जो देह तजोगे तो शुभतन तुम पावो ।९। मृत्यु मित्र उपकारी तेरो, इस अवसरके मोहीं । जोरनतनसे देत नयो यह, या सम साहू नाहीं । या सेती इस मृत्युसमयपर, उत्सव अति ही कीजै । श्लेश भाव के त्याग सपाने समताभाव धरोजै ।१०। जो तुम पूरव पुण्य

किये हैं, तिनको फल सुखदाई । मृत्युमित्र बिन कौन दिखावै,  
 स्वर्गसंपदा भाई ॥ रागरोषको छोड़ सयाने, सात व्यसन दुख-  
 दाई । अंतसमयमें समता धारो, परमव पंथ सदाई । ११। कर्म  
 महादुठ बैरी मेरो, तासेती दुख पावै । तन पिंजरमें बंध कियो  
 मोहि-यासों कौन छुडावै ॥ भूख तथा दुख आदि अनेकन,  
 इस ही तनमें गाढै । मृत्युराज अब आय दया कर, तन-  
 पिंजरसों काढै । १२। नाना वस्त्राभूषण मैंने, इस तनको पहारये ।  
 गंधसुगंधित अतर लगाये, पटरस असन कराये ॥ रात दिना  
 में दास होयकर, सेव करी तनकेरी । सो तन मेरे काम न आयो,  
 भूल रह्यो निधि मेरी । १३। मृत्युरायको शरन पाय तन, नूतन  
 ऐसो पाऊं । जामें सम्यक रतन तीन लहि आठों कर्म खपाऊं ॥  
 देखो तन सम और कृतघ्नी, नाहिं सु या जग माहीं । मृत्यु  
 समयमें ये ही परिजन, सब ही हैं दुखदाई । १४। यह सब मोह  
 बढावनहारे, जियको दुर्गतिदाता । इनसे ममत निवारो जियरा  
 जो चाहो सुख साता ॥ मृत्यु कल्पद्रुम पाय सयाने, मांगो  
 इच्छा जेती । समता धरकर मृत्यु करो तो पावो संपति तेती  
 । १५। चौआराधन सहित प्राण तज, तौ ये पदवी पावो । हरि  
 प्रतिहरि चक्री तीर्थेश्वर, स्वर्गशुक्तिमें जावो । मृत्युकल्पद्रुम  
 सम नहिं दाता, तीनों लोक मझारै । ताके पाय क्लेश करो  
 मत; अन्म ब्रवाहर हारे । १६। इस तनमें क्या राचै जियरा, दिन  
 दिन जीरन होहै । तेजकांति बल नित्य घटत है, या सब अधिर-  
 सु को है । पाचों इंद्रो शिखिल भई अब, स्वांस शुद्ध नहिं

आवै । तापर भी ममता नहि छोडै, समता उर नहि लावै।१७।  
 मृत्युराज उपकारी जियको, 'तनसों तोहि छुडावै । नातर या  
 तनबंदीग्रहमें, परयो परयो बिललावै । पुदगलके परमाणु मिलकैं,  
 पिंडरूप तन भासी । याही मूरत में अमूरती, ज्ञानजोति गुण-  
 खासी ।१८। रोगशोक आदिक जो वेदन, ते सब पुदगलहारें ।  
 में तो चेतन व्याधि विना नित, हैं सो भाव हमारे ॥ या तनसों  
 इस छेत्र संबंधो, कारण आन बन्यो है । खानपान दे याको  
 पोष्यो, अब सम भाव ठन्यो है ।१९। मिथ्यादर्शन आत्मज्ञान  
 विन, यह तन अपनो जान्यो । इंद्रिभोग गिने सुख मैंने, आपो  
 नाहिं पिछान्यो ॥ तन विनशनतैं नाश जानि निज, यह अयान  
 दुखदाई । कुटुम आदिको अपनो जान्यो, भूल अनादो छाई  
 ।२०। अब निज भेद जथारथ समझयो, में हूं ज्योतिस्वरूपी ।  
 उपजै विनसै सो यह पुदगल जान्यो याको रूपी ॥ इष्टनिष्ट  
 जेते सुख दुख हैं, सो सब पुदगल सागै । में जब अपनो रूप विचारों,  
 तब वे सब दुख भागै ।२१। विन समता तनऽनंत धरे में,  
 तिनमें ये दुख पायो । शस्त्रघात तैं ऽनन्त बार भर  
 नाना योनि भ्रमायो ॥ बार अनंतहि अग्नि माहिं जर,  
 मूवो सुगति न लायो । सिंह व्याघ्र अहिऽनन्त बार मुक्क,  
 नाना दुःख दिखायो ।२२। विन समाधि ये दुःख लहे में, अब  
 उर समता आई । मृत्युराजको भय नहिं मानो, देवै तन सुखदाई ॥  
 यातैं जब लग मृत्यु न आवै, तब लग जप तप कीजै । जप-  
 तपविन इस जगके माहीं, कोई भी ना सीजै ।२३। स्वर्गसंपदा

तपसों पाव, तपसौ कर्म नसावै । तपही सों शिवकामिनिपति  
है, यासों तप चित लावै ॥ अब मैं जानी समता बिन मुझ  
कोऊ नाहि सहाई । मात पित सुत बांधव तिरिया ये सब हैं  
दुखदाई । २५। मृत्यु समयमें मोह करे ये तातैं आरत हो है ।  
आरततैं गति नीची पावे, यों लख मोह तज्यो हे ॥ और  
परिग्रह जेते जग में तिनसों प्रीत न कीजे । परभव मैं ये संग  
न चालैं, नाहक आरत कीजे । २५। जे जे वस्तु लखत हैं ते  
पर, तिन्सों नेह निवारो । परगति मैं ये साथ न चालैं,  
ऐसो भाव विचारो ॥ जो परभव मैं संग चलै तुझ, तिनसों  
प्रीत सु कीजै । २६। पाप तज समता धारो, दान चार  
धि दीजै । २६। दशलक्षणमय धर्म धरो उर, अनुकंपा उर  
लावो । षोडशकारण नित्य विचारो, द्वादश भावन भावो ॥  
चारों परवी प्रोषध कीजे, अशन रातको त्यागो । समता घर  
दुरभाव निवारो, संयमसों अनुरागो । २७। इत समयमें यह  
शुभ भावहि, होवैं आनि सहाई । स्वर्गमोक्षफल तोहि दिखावैं,  
ऋद्धि देहि अधिकाई । छोटे भाव सकल जिय त्यागो, उरमें  
समता लाकै । जासेतो गतिचार दूरकर, बसहु मोक्षपुर जाकै  
। २८। मनधिरता करकें तुम चिंतो, चौ आराधन भाई ।  
येही लोकों सुख की दाता, और हितु कोउ नाहीं ॥ आगैं बहु  
मुनिराज भये हैं, तिन गहि धिरता मारी । बहु उपसर्ग सहे  
शुभ पावन, आराधन उरधारी । २९। तिनमें कछुहक नाम कई  
में, तो सुन जिय चित लाकै । भावसहित अनुकोड़े तासों,

दुर्गति होय न तकै ॥ अरु समता निज उरमें आवै; माव  
 अधीरज जावै । यों निश दिन जो उन मुनिवरको, ध्यान हिये विच  
 लावै ।३०। धन्य धन्य सुकुमाल महामुनि, कैसे धीरज धारी ।  
 एक श्यालनी जुगबन्धाजुत पाव मरुयो दुखकारी ॥ यह उपसर्ग  
 सखो धर धिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे जिय  
 कौन दुःख है ? मृत्यु महोत्सव भारी ।३१। धन्य धन्य जु  
 सुकौशल स्वामी, व्याघ्रीने तन खायो । तौ भी श्रीमुनि नेक  
 छिगे नहिं, आतम सों हित लायो ॥ यह उपसर्ग सखो धर  
 धिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ।३२। देखो गजमुनिके  
 शिर ऊपर, विप्र अग्नि बहु बारी । शीश जलै जिम  
 लकड़ी तिनको, तौ भी नाहिं चिंगारी ॥ यह उपसर्ग सखो  
 धर धिरता, आराधन चित धारी । तौ तुमरे०  
 ।३३। सनतकुमार मुनिके तनमें, कुष्ट वेदना व्यापी । छिन्न  
 भिन्न तन तासों हूयो, तब चित्यो गुण आपी ॥ यह उपसर्ग  
 सखो धर धिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥३४॥  
 श्रेष्ठिकसुत गंगामें डूब्यो, तब जिननाम चितारयो । धर  
 सलेखना परिग्रह छोड्यो, शुद्ध भाव उर धारयो ॥ यह उपसर्ग  
 सखो धर धिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥३५।  
 समतमद्र मुनिवरके तनमें, ह्रुषावेदना आई । तौ दुखमें मुनि  
 नेक न बिगियो, चित्यो निज गुण भाई । यह उपसर्ग सखो  
 धर धिरता, आराधन चितधारी, तौ तुमरे० ।३६। ललितषट्प-  
 दिक तीस दीय मुनि कौशात्रीतट जानो । नईमें मुनि बहकर

मूवे, सो दुख उन नहिं माने ॥ यह उपसर्ग सखो घर थिरता  
 आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥३७॥ धर्मबोध मुनि  
 चंपानगरी, बाह्य ध्यान घर ठाढ़े । एक मास की कर  
 मर्यादा, तृषा दुःख सह गाढ़े ॥ यह उपसर्ग सखो घर थिरता  
 आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥ ३८ ॥ श्रीदत्त  
 मुनिके पूर्वजन्मके, वैरी देव सु आके । विक्रिय  
 कर दुख शीततनो सो, सखो साध मन लाके ॥ यह उपसर्ग  
 सखो घर थिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥३९॥ श्रुम-  
 सेन मुनि उष्णशिलापर, ध्यान घरयो मनलाई । सूर्यधाम अरु  
 उष्ण पवनकी, वेदन सहि अधिकई ॥ यह उपसर्ग सखो घर  
 थिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥४०॥ अमयबोध-  
 मुनि काकंदीपुर, महावेदना पाई । वैरी चंडने सब तन छेद्यो,  
 दुख दीनो अधिकई ॥ यह उपसर्ग सखो घर थिरता, आराधन  
 चितधारी । तौ तुमरे० ॥४१॥ विद्युतचरने बहु दुख पायो, तौ  
 भी धीर न त्यागी । शुभमावनसों प्राण तजे निज, धन्य और  
 बद्धमागी ॥ यह उपसर्ग सखो घर थिरता, आराधन चितधारी ।  
 तौ तुमरे० ॥४२॥ पुत्रचिलाती नामा मुनिके, वैरीने तन घाता ।  
 मोटे मोटे कौट पडे तन, तापर निज गुण राता ॥ यह उपसर्ग  
 सखो घर थिरता आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥४३॥  
 दंडकनामा मुनिकी देहो, बाखन कर अरि भेदी । तापर नेक डिगे  
 नहिं वे मुनि, कर्म महारिपुं छेदी ॥ यह उपसर्ग सखो घर  
 थिरता, आराधन चितधारी । तौ तुमरे० ॥४४॥ अभिनंदन मुनि

आदि पांचसौ, घानो पेलिजु मारे । तौ भी श्रीगुनि समताधारी  
 पूरबकर्म विचारे ॥ यह उपसर्ग सद्यो धर थिरता, आराधन  
 चित्तधारी । तौ तुमरे० ॥४५॥ चाणक्यगुनि गौबरके माहीं, मृद  
 अग्नि परजाल्यो । श्रीगुरु उर समभाव धारकै अपनेो रूप  
 सम्हाल्यो ॥ यह उपसर्ग सहो धर थिरता आराधन चित्तधारी ।  
 तौ तुमरे० ॥४६॥ सःतशतक मुनिवर दुख पायो, ह्यनापुरमें  
 जानो । बलि ब्राह्मणकृत घोर उपद्रव, सो मुनिवर नहिं मानो ॥  
 यह उपसर्ग सद्यो धर थिरता आराधन चित्तधारी । तौ तुमरे०  
 ॥४७॥ लोहमयी आभूषण गढके, ताते कर पहराये । पांचों  
 पांडव मुनिके तनमें, तौ भी नाहिं चिगाये ॥ यह उपसर्ग सद्यो  
 धर थिरता आराधन चित्तधारी । तौ तुमरे० ॥४८॥ और  
 अनेक भये इस जगमें, समता रस के स्वादी । वे ही हमको  
 हों सुखदाता, हर हैं टेव प्रमादी ॥ सम्यकदर्शन ज्ञान चरन  
 तप ये आरासनचारी । ये ही मेको सुखकी दाता, इन्हें सदा  
 उर धारों ॥४९॥ यों समाधि उर माहीं लावो, अपनेो हित  
 जो चाहो । तज ममता अरु आठों मदको, जोति स्वरूपी  
 ध्यावो ॥ जो कोई नित करत पयानो, ग्रामांतरके काजै ।  
 सो भी शकुन विचारै नीके, शुभके कारण साजै ॥५०॥ मात  
 पितादिक सर्व कुटुम सब, नीके शकुन बनौवै । हलदी धनिया  
 पुंगी अन्नत, दूब दही फल लावै ॥ एक ग्राम जानेके कारण,  
 करै शुभाशुभ सारे । जब परगति को करत पयावो, तब  
 नहिं सोचौ प्यारे ॥५१॥ सर्व कुटुम जब रोवन लागै, तोहि

रुलावै सारे । ये अपशकुन कैं सुन तोकों तू यों क्यो न  
विचारै ॥ अब परगतिको चालत बिरियां धर्मध्यान उर आने ।  
चारों आराधन आराधे। मोहतने। दुख हाने । १५२। होय  
निःशून्य तजे। सब दुविधा, आतमराम सु घ्यावे । जब पर-  
गतिके करहु पयाने परम तत्व उर लावे ॥ मोह बालके  
काट पियारे, अपनो रूप विचारो । मृत्युमित्र उपकारी तेरो,  
यो उर निरचय धारो । १५३।

देहा-मृत्युमहोत्सव पाठको, पढे। सुने। बुधिवान् ।

सरधा घर निः सुख लहे, सरचन्द शिवधान । १५४।

पंच उभय नव एक नभ, संवत सो सुखदाय ।

आश्विन श्यामी सप्तमी, बहो पाठ मन लाय । १५५।



## भक्तामरस्तोत्रम् ।

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाषामुद्योतक दलितपापतमोविता  
नम् । सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं पुगादाबालंबनं भवजले पततां  
जनानां ॥१॥ यः संस्तुतः सकलबोह्मयतस्त्रयोधादुद्भूतबुद्धि-  
पटुमिः सुरलोकनाथैः । स्तोत्रैर्जगात्प्रतयचित्तहरैरुदारैः स्तोत्र्ये-  
किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ॥२॥ बुद्धया विनापि विबुधाक्षित  
पादपीठ स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहं । बालं विहाय जल-  
संस्थितमिदुर्विबमन्यः क इच्छति जनः सहसा गृहीतुं ॥३॥  
वस्तुं गुणान्गुणसमुद्रसशांकर्काताम् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोपि  
बुद्धया । कल्पात्कालपवनोद्धतनक्रचक्रं, को वा तरीतुमलमंभु-



निधिं भुज्याभ्यां ॥४॥ सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मृगीश  
 कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः । प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्यमृगो-  
 मृगेंद्रं नाम्नेति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ॥५॥ अल्पश्रुतं  
 श्रुतवतां परिहासधाम त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।  
 यस्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति तच्चात्रचारुकलिकानिकरै-  
 कहेतु ॥६॥ त्वत्संस्तवेन भवसंततिसनिबद्धं पापं क्षणात्क्षय-  
 मुपैति शरीरभाजाम् । आक्रांतलोकमलिनीलमशेषमाशु सूर्या-  
 शुभिमिव शर्वरमंधकारम् ॥७॥ मत्वेति नाथ तव संस्तवनं  
 मयेदमारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् । चेतो हरिष्यति सतां  
 नलिनीदलेषु मुक्ताफलधुतिमुपैति ननुदबिंदुः ॥८॥ आस्तां तव  
 स्तवनमस्तसमस्तदोषं त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति ।  
 दूरे सहस्रकिरणः बुरुते प्रभैव पद्माकरेषु जलजानि विकास-  
 माञ्जि ॥९॥ नास्यद्भुतं भुवनभूषणभूतनाथ भूतैर्गुणैर्भुवि  
 भवंतमभिष्टुवन्तः । तुज्या भवंति भवतो ननु तेन किं वा, भूत्या-  
 श्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥१०॥ दृष्ट्वा भवंतमनिमेष-  
 विलोकनीयं नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः । पोत्वा पयः  
 शशिकरद्वयुतिदुग्धसिन्धोः क्षारं जलं जलनिधेरसितुं क  
 हृच्छेत् ॥११॥ यैः शांतरागरुचिभिः परमाणुमिस्त्वं निर्मापित-  
 स्त्रिभुवनैकललामभूत । तावन्त एव खलु तेऽप्यश्ववः पृथिव्यां  
 यथे समानमपरं न हि रूपमस्ति ॥१२॥ वक्त्रं क्व ते सुरनरो-  
 रगनेत्रहारि, निश्शेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् । विम्बं कलङ्क-  
 मलिनं क्व निशाकरस्य यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ॥१३॥

सम्पूर्णमण्डलशशाङ्ककलाकलापशुभ्रा गुष्ठास्त्रिभुवनं तव लंघ-  
यन्ति । ये संश्रितास्त्रिजगदास्वरनाथमेकं कस्ताभिवारयति  
संचरते। यथेष्टम् ॥१४॥ चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गना-  
भिनीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् । कल्पान्तकालमरुता  
चलिताचलेन किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ॥१५॥  
निर्धूमवर्तिरपवर्जितदैलूरः कृत्स्नं जगत्प्रमिदं प्रकटीकरोषि ।  
गम्भी न द्रातु मरुतां चलिताचलानां दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ  
जगत्प्रकाशः ॥१६॥ नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः  
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपजगन्ति । नाम्मोघरोदरनिरुद्धमहां-  
प्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र लोके ॥१७॥ नित्योदयं  
दलितमोहमहान्नकारं गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।  
विभ्राजते तव मुखान्जमनन्पकान्ति विद्योतयजगदपूर्वशशाङ्क-  
बिम्बम् ॥१८॥ किं शर्वरीषु शशिनान्हि विवस्वता वा युष्मन्मुखे-  
न्दुदलितेषु तमःसुनाथ । निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके  
कार्यं कियञ्जलधरेर्जलमारनम्रैः ॥१९॥ ज्ञानं यथा त्वयि  
विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु । तेजो  
महामणिषु याति यथा महत्त्वं नैवं तु काचशकले किरणा-  
कुलेऽपि ॥२०॥ मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु  
हृदयं त्वयि तोषमेति । किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः  
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥ स्त्रीषां शतानि  
शतशो जनयन्त पुत्राभान्पा स्त्रितं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।  
सर्वा दिशो दधति मानि सहस्ररश्मि प्राप्येव दिग्जनयति

स्फुरदंशुजालम् ।२२। त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांसमा-  
 दित्पवर्णममलं तमसः परस्तात् । त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति  
 मृत्युं नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पंधाः ।२३। त्वामव्ययं  
 विभ्रमचिन्त्यमसङ्ख्यमाद्यं ब्रह्माद्यमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।  
 योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति  
 सन्तः ।२४। बुद्धस्त्वमेव विबुधाचितबुद्धिबोधान्त्वं शङ्करोऽसि  
 भुवनत्रयशङ्करत्वात् । धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानाद्युक्तं  
 त्वमेव भगवन्पुरुषोत्तमोऽसि ।२५। तुभ्यं नमस्त्रिभुवनातिहराय  
 नाथ तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय । तुभ्यं नमस्त्रिजगतः  
 परमेश्वराय तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशोषणाय ।२६। को  
 विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैर्गोशैर्देवैस्त्वं संश्रितो निरवकाश-  
 तथा मुनीश । दोषेरुपात्तविबुधाभयजातगर्भैः स्वप्नान्तरेऽपि  
 न कदाचिदपीक्षितोऽसि ।२७। उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूख-  
 मामाति रूपममलं भवतो नितान्तम् । स्पष्टोऽन्लसत्किरणमस्ततमो  
 वितानं विम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ।२८। सिंहासने  
 मणिमयूखशिखाविचित्रे विभ्राजते तव वपु कनकावदातम् ।  
 विम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्र-  
 रश्मे ।२९। कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं विभ्राजते तव वपुः  
 कलधौतकान्तम् । उयच्छशाङ्कशुचिनिर्भरवारिधारमुच्चैस्तटं सुर-  
 गिरेरिव शातकौम्मम् ।३०। छत्रत्रयं तव विमाति शशाङ्क-  
 कान्तमुच्चैः स्थितं स्थगितमानुकरप्रतापम् । मुक्ताफलप्रकरजाल-  
 विबुद्धस्योभं प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ।३१।



फणिनमुत्फणमापतन्तम् । आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशङ्कस्त्व-  
 क्षामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥ वल्गस्तुरगगजगञ्जित-  
 भीमनादमाजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम् । उद्यद्दिवोकरमयूख-  
 शिखापावेदं त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदास्यपैति ॥४२॥  
 कुन्ताग्रमिन्नगजशोखितवारिबाहवेगावतारतरणातुरयोधभीमे ।  
 युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षास्त्रत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो  
 लमन्ते ॥४३॥ अम्भोनिधौ सुमितभीषणनक्रचक्रपाठीनपीठमथ-  
 दोन्वणवाहवाग्नी । रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयानपात्रास्त्रासं विहाय  
 भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥४४॥ उद्भूतभीषणजलोदरभारभृग्नाः  
 शोच्यां दशामुगतास्त्रयुतजीविताशाः । त्वत्पादपङ्कजरज्जोमृत-  
 दिग्घदेहा मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुन्यरूपाः ॥४५॥ आपाद-  
 कण्ठमुखशृङ्खलवेष्टिताङ्गा गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः ।  
 त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतबन्धमया  
 भवन्ति ॥४६॥ मयाद्विप्रेन्द्रमृगराजदवानलादिसंग्रामवारिधि-  
 महोदरबन्धनोत्थम् । तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव यस्ता-  
 बर्कं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥ स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र  
 गुणैर्निबद्धां मस्त्या मया विविधवर्षाविचित्रपुष्पाम् । धरो  
 जनो य इह कण्ठगतामजस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति  
 लक्ष्मीः ॥४८॥

॥ इति श्रीमान् तुङ्गाचार्यविरचितं भक्तमरस्तोत्रम् ॥

## श्रीसिद्धसेनदिवाकरप्रणीतं कल्याणमन्दिरस्तोत्रम् ।

कल्याणमन्दिरसुदारमवद्यमेदि मीतामथप्रदमनिन्दितमंघ्रि-  
पद्मम् । संसारसागरनिमज्जदशेषजन्तुपोतायमानमभिनम्य  
जिनेश्वरस्य । १। यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमाम्बुराशेः स्तोत्रं  
सुविस्तृतमतिर्न विभ्रुर्विधातुम् । तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमके-  
तोस्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये । २। (युग्मम्) सामान्य-  
तोऽपि तव वर्णयतुं स्वरूपमस्मादृशाः कथमधीश भवन्त्यधीशाः ।  
धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा द्विवान्धो रूपं प्ररूपयति किं  
किल घर्मरश्मेः । ३। मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ मर्या नूनं  
गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत । कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि  
यस्मान्मीवेतकेन जलधेर्ननु रत्नराशिः ॥४॥ अभ्युद्यतोऽस्मि  
तव नाथ जडाशयोऽपि कर्तुं स्तर्षं लसदसंख्यगुणाकरस्य ।  
बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं विद्वत्य विस्तीर्यतां कथयति  
स्वधियाम्बुराशेः ॥५॥ ये योगिनामपि नयन्ति गुणास्तवेशः  
वक्तुं कथं भवति तेषु ममात्रहाशः । जाता तदेवमसमीक्षित-  
कारितेयं जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि ॥६॥  
आस्तामचिन्त्यमहिमा जिन संस्तवस्ते नामापि पाति भवतो  
भवतो जगन्ति । तीव्रात्तपोपहतपान्थजनाभिदावे प्रीत्याति पद्म-

सरसः सरसोऽनिलोऽपि ॥७॥ हृद्वर्तिनि त्वयि विभो  
 िषिलीभवन्ति जन्तोः क्षयेन निविद्धा अपि कर्मबन्धाः । सद्यो  
 भुजङ्गममया इव मध्यभागमभ्यागते वनशिलखण्डिनि चन्द-  
 नस्य ॥८॥ मूच्यन्ते एव मनुजाः सहसा त्रिनेन्द्र रौद्रैरुपद्रव-  
 शतैस्त्वयि बीक्षितेऽपि । गोत्रामिनो स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रे  
 चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः ॥९॥ त्वं तारको जिन कथं  
 मर्दिना त एव त्वामुद्दहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः । यद्वा दृतिस्त-  
 रति यज्जलमेष नूनमन्तर्गतस्य मरुतः स किलालुभावः ॥१०॥  
 यस्मिन्दरप्रभृतयोऽपि हतप्रभावाः सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः,  
 क्षयेन । विष्यत्पिता हुतभुजः पयसाथ येन पीतां न किं तदपि  
 दुर्धरवाङ्मनेन ॥११॥ स्वामिन्नल्पगरिमाणमपि प्रपन्नस्थां  
 जन्तवः कथमहो हृदये दधानः । जन्मोदधिं लघु तरन्त्वति-  
 लाषवैन चिन्तयो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः ॥१२॥ क्रोध-  
 स्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो ध्वस्तस्तदा वद कथं किल  
 कर्मचौराः । प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके नीलद्रुमाणि  
 विपिनानि न किं हिमानी ॥१३॥ त्वां योगिनो जिन सदा  
 परमात्मरूपमन्वेषयन्ति हृदयाम्बुजकोपदेशे पूतस्य निर्मलरुचे-  
 र्यदि वा किमन्यदक्षस्य सम्भवपदं घनु कश्चिकायाः ॥१४॥  
 ध्यानाग्निनेश भवतो भविनः क्षयेन देहं विःशय परमात्मदर्शां  
 ब्रह्मन्ति । तीव्रानलादुरज्जभावमयास्य लोके चाभीकरत्वमविरा-  
 दिव घातुमेदाः ॥१५॥ अन्तः सदैव जिन यस्य विभाव्यसे  
 त्वं भव्यैः कथं तदपि नारायणे शरीरम् । एतत्स्वरूपमथ मध्य-

विवर्तिनो यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥१६॥ आत्मा  
मनोविभियं त्वदमेदबुद्ध्या घ्यातौ जिनेन्द्र भवतीह भवत्प्रभावः।  
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमान किं नाम नो विषविकारमपा-  
करोति ॥१७॥ त्वामेव वीततमसं परवादिनोऽपि नूनं विमो  
हरिहरादिधिया प्रपन्नाः । किं काचकामलिमिरीश सितोऽपि  
शङ्को नो गृह्यते विविधवर्णाविपर्ययेण ॥१८॥ धर्मोपदेशसमवे  
सविधानुभावादास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः । अभ्युद्गतै  
दिनपतौ समहीरुहेऽपि किं वा विषोषमुपयाति न जीवलोकः । १९।  
चित्रं विमो कथमवाह्मुखपृन्तमेव विष्वक्पतत्यविरला सुरपुष्प-  
वृष्टिः । त्वद्गोचरैः सुमनसां यदि वा मुनोशा गच्छन्ति नूनमथ एव  
हि बन्धनानि ॥२०॥ स्थाने गभीरहृदयोदधिसम्भवायाः पीयूषता  
तव गिरः समुदीरयन्ति । पीत्वा यतः परमसंदसङ्गमाजो भव्या  
व्रजन्ति तरसाप्यजरामःत्वम् ॥२१॥ स्वामिन्सुदूरमवनम्य  
समुत्पतन्तो मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौषाः । येऽस्मै नतिं  
विदधते मुनिपुङ्गवाय ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ॥२२॥  
श्यामं गभीरगिरमुज्ज्वलहेमरत्नसिंहासनस्थामिह भव्यशिखरिह-  
नस्त्वाम् । आलोकयन्ति रमसेन नदन्तमुच्चैश्चामीकराद्रिशिर-  
सीवनवाम्बुवाहम् ॥२३॥ उद्गच्छता तव शित्तिष्ठु तिमण्डलेन  
लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव । सानिष्यतोऽपि यदि वा तव  
वीतराग ! नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ॥२४॥ मे।  
मोः प्रमादमवधूय मज्जच्चमेनमागत्य निर्वृतिपुरीं प्रतिसार्धवाहम् ।  
एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय मन्ये नदन्नमिनःभः सुरदुन्दुभिस्ते



॥२५॥ उद्योतितेषु भवता भुवन्षु नाथ नारान्वितो विधुर्यं  
विहतान्धकारः । मुक्ताकलापकलितोरुसितातपत्रव्याजात्त्रिधाघृत-  
घनुध्रुवमभ्युपेतः ॥२६॥ स्वेन प्रपूरितजगत्त्रयपिपिहितेन  
कान्तिप्रतापयशसामिव सञ्जयेन । माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन  
सालत्रयेण भगवन्नमितो विमासि ॥२७॥ दिव्यस्रजो जिन  
नमस्त्रिदशादिपानामुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिवन्धान् । पादौ  
अश्रन्ति भवता यदि वा परत्र त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव  
॥२८॥ त्वं नाथ जन्मजन्मधेर्विपरांगमुखोऽपि यत्तारयस्यसुमतो  
निजपृष्ठलग्नान् । युक्तं हि पार्थिवनिपस्य सतस्तथैव चित्रं विभो  
यदसि कर्मविपाकशून्यः ॥२९॥ विश्वेश्वरोऽपि जनपालक  
दुर्गतस्त्वं किंवाचरप्रकृतिप्यलिपिस्त्वमीश । अज्ञानवत्यपि सदैव  
कथंचिदेव ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकासहेतु ॥३०॥  
प्राग्भारसम्भृतनभांसि रजांसि रोषादुत्थापितानि कमठेन शठेन  
यानि । छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो ग्रस्तस्त्वमीभि-  
रयमेव परं दुरात्मा ॥३१॥ यद्गजेदृजितघनौघमदभ्रमीम-  
भ्रश्यत्तडिन्मुखसलमांसलघोरधारम् । दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि  
दध्रे तेनेव तस्य जिन दुस्तरवारिकृत्यम् ॥३२॥ ध्वस्तोर्ष्वकेश-  
विकृताकृति मर्त्यमुखप्रालम्बभृद्भयदक्त्रविनिर्यदग्निः । प्रेतव्रजः  
प्रतिभवन्तमपीरितो यः सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भवदुःखहेतुः ॥३३॥  
धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसन्ध्यमाराधयन्ति विधिवद्विधु-  
तान्यकृत्याः । मक्त्योन्लसत्पुलकपत्तमलदेहदेशाः पादद्वयं तव  
विभो भुवि जन्ममाजः ॥३४॥ अस्मिन्पारभववारिनिघौ मुनीश

मन्ये नमे भवणमोचरतां गतोऽसि । आकर्णिते तु तव मोत्र-  
पवित्रमन्त्रे किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति ॥ ३५ ॥ चन्मां-  
तरेऽपि तव पादयुगं न देव मन्ये मया महिषमीहितदानदक्षम् ।  
तेनेह जन्मनि मुनीश ! परामवानां जातो निकेतनमहं मथिता-  
शयानम् ॥ ३६ ॥ नूनं न मोहतिमिराश्रुतलोचनेन पूर्वं विमो  
सकृदपि प्रबिलोकितोऽसि । मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः  
प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ॥ ३७ ॥ आकर्णितोऽपि महि-  
तोऽपि निरीक्षितोऽपि नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ।  
जातोऽस्मि तेन जनवान्धवदुःखपार्श्वं यस्मात्किंयाः प्रतिफलन्ति  
न माशून्याः ॥ ३८ ॥ त्वं नाथ दुःखिजनवत्सल हे शरण्य  
कारुण्यपुण्यवसते वशिनां वरेण्य । भक्त्या नते मयि महेश दयां  
विधाय दुःखाङ्कुरोदल नतत्परतां विधेहि ॥ ३९ ॥ निःसख्य-  
सारशरखं शरखं शरण्यमासाद्य सादितरिपुप्रथितावदानम् ।  
त्वत्पादपङ्कजमपि प्रखिधानवन्धो वन्धोऽस्मि तद्भुवनपावन  
हा इतोऽस्मि ॥ ४० ॥ देवेन्द्रवन्द्य विदिताखिलवस्तुसारसंसार-  
तारक विमो भुवनाधिनाथ । त्रायस्व देव ककशाह्वद मां पुनीहि  
सीदन्तमद्य मयदन्पसनाम्बुराशोः ॥ ४१ ॥ यद्यस्ति नाथ मनु-  
दंघ्रिसरोरुहायां भक्तेः फलं किमपि सन्ततसञ्चितायाः । तन्मे  
न्वदेकशरण्यस्य शरण्य भूयाः स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र मथान्त्र-  
रेऽपि ॥ ४२ ॥ इत्थं समाहितधियो त्रिधिवज्जिनेन्द्र सान्द्रोन्मत्स-  
स्पुलकञ्चुकिताङ्गमागाः । त्वद्विम्बनिर्मलसुखाङ्गुजबद्धलक्ष्या  
ये संस्तवं तव विमो रचयन्ति भक्त्याः ॥ ४३ ॥ जननपनकमुद-

चन्द्र प्रभास्वराः स्वर्गसम्पदो भुक्त्वा । ते विगलितमलनिचया  
अधिरान्मोक्षां प्रपद्यन्ते ॥ ४४ ॥

। इति मिद्धसेनद्विवाकरप्रणीतं कल्याणमन्दिरस्तोत्रम् ॥



## श्रीवादिराजप्रणीतम्

### १७ एकीभावस्तोत्रम् ।

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्मबन्धो घोरं दुःखं भव-  
भवगतो दुर्निवारः करोति । तस्याप्यस्य त्वयि जिनवरे भक्ति-  
रुन्मुक्तये चेज्जेतुं शक्यो भवति न तथा केऽपरस्तापहेतुः । १॥  
ज्योतीरूपं दुरितनिवहध्वान्तविध्वंसहेतुं त्वामेवाहुर्जिनवर चिरं  
तत्त्वविद्यामियुक्ताः । चेतोवासे भवसि च मम स्फारमुद्गासमान-  
स्तस्मिन्नेहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥२॥ आनन्दाश्रु-  
स्नपितवदनं गद्गदं चामिज्जल्पन्पश्चायेत त्वयि दृढमनाः स्तोत्र-  
मन्त्रैर्मन्तम् । तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देहबन्धोऽकमध्यानि  
ध्यायन्ते विविधविषमव्याधयः काद्रवेयाः ॥३॥ प्रागेवेह त्रिदिव-  
भवनादेभ्यता मय्यपुण्यात्पृथ्वीचक्रं कनकमयतां देव निन्द्ये त्वये-  
दम् । ध्यानद्वारं मम रुचिकरं स्वान्तगेहं प्रविष्टस्तत्किं चित्रं जिन  
वपुरिदं यत्सुवर्षीं करोषि ॥४॥ लोकस्यैकस्तमसि भगवन्निर्निमि-  
त्तेन बन्धुस्त्वद्येवासौ सकलविषया शक्तिरप्रत्यनीका । भक्ति-  
स्कीर्तां चिरमधिबसन्मामिकां चित्तशय्यां मय्युत्पन्नं कथमिव

ततः क्लेशयुषं सहेयाः ॥ ५ ॥ जन्माटव्यां कथमपि मया देव  
दीर्घं भ्रमित्वा प्राप्तैवेयं तव नयकथा स्फारपीयूषवापी । तस्या  
मध्ये हिमकरहिमच्यूहशीते नितान्तं निर्मग्नं मां न वहति कथं  
दुःखदावोपतापाः ॥ ६ ॥ पादन्यासादपि च पुनतो यात्रया ते  
त्रिलोकीं हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनिवासरथ पथः । सर्वा-  
ङ्गेषु स्पृश्यति भगवंस्त्वद्यशेषं मनो मे भ्रयः किं तस्त्वयमहर-  
हर्यन्नं मामभ्युपैति ॥ ७ ॥ पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं भक्तिपाश्या  
पिबन्तं कर्मारण्यात्पुरुषमसमानन्दधाम प्रविष्टम् । त्वां दुर्वारस्मर-  
मदहरं त्वत्प्रसादैकभूमिक्रूराकाराः कथमिव कृजाद्वष्टका निरु-  
ठन्ति ॥ ८ ॥ पाषाणात्मा तदितरसमः केवलं रत्नमूर्तिर्मानस्तम्भो  
भवति च परस्तादृशो रत्नवर्गः । दृष्टिप्राप्तो हरति स कथ  
मानरेगं नराणां प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य तच्छक्तिहेतुः ॥ ९ ॥  
दृष्टः प्राप्ता मरुदपि भवन्मूर्तिर्शैलोपवाही सद्यः पुंसां निरवधि-  
रुजाधुलिबन्धं धुनोति । ध्यानाहृतो हृदयकमलं यस्य तु त्वं  
प्रविष्टस्तस्याशक्यः क इह भुवने देव लोकौपकारः ॥ १० ॥  
जानासि त्वं मम भवभवे यच्च यादृक्च दुःखं जातं यस्य  
स्मरणमपि मे शस्त्रवन्निष्पिनष्टि । त्वं सर्वेशः सकृप इति च  
त्वामुपेतोऽस्मि मक्त्या यत्कृतं व्यं तदिह विषये देव एव  
प्रमाणम् ॥ ११ ॥ प्रापद्दिवं तव नुतिपदैर्जीवकेनोपदिष्टैः पापाचारी  
मरणसमये सारमेयोऽपि सौख्यम् । कः संदेहो यद्दुपलभते  
वासवश्रीप्रभुत्वं जल्पञ्जायैर्मखिभिरमलैस्त्वन्नमस्कारचक्रं ॥ १२ ॥  
शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्शयनीचा भक्तिर्नो वेद-

नवधिसुखावञ्चिका कुञ्चिकेयम् । शक्योद्घाटं भवति हि कथं  
 मुक्तिकामस्य पुंसेः मुक्तिद्वारं परिदृढमहामोहमुद्राकवाटम् ॥१३॥  
 प्रच्छन्नः खन्वयमधमयैरन्धकारैः समन्तात्पन्था मुषतेः स्थपुटत-  
 पदः क्लेशगतैरगाधैः । तत्कस्तेनव्रजति सुखतो देव तस्वावभासी  
 यद्यत्रेऽग्रे न भवति भवद्भारतीगल्नदीपः ॥१४॥ आत्मज्योति-  
 र्निधिरनवधिद्रुष्टुरानन्दहेतुः कर्मघोषीपटलपिहितो योऽनवाप्या  
 परेषाम् । हस्ते कुर्वन्त्यनतिचिरतस्तं भवद्भक्तिमाजः स्तोत्रैर्बन्ध-  
 प्रकृतिपुरुषोद्दामप्रात्रीखनित्रेः ॥ १५ ॥ प्रत्युपमानयहिमगिरेरा-  
 यता चामृताब्धेर्षादेव त्वत्पदकमलयोः सङ्गता भक्तिगङ्गा ।  
 चेतस्तस्यां मम रुचिवशादाप्लुतं क्षालिताहः कन्माषं यद्भवति  
 किमियं देव संदेहभूमिः ॥ १६ ॥ प्रादुर्भूतस्थिरपदसुखत्वामनु-  
 ध्यायतो मे त्वय्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्प्या । मिथ्यै-  
 वेयं तदपि तनुते तृप्तिमन्नेषरूपां दोषात्मानोऽप्यभिमतफलास्त्व-  
 त्प्रसादाद्भवन्ति ॥१७॥ मिथ्यावादमलमपनुदन्सप्तमङ्गीतरङ्ग-  
 वाहुगम्भोधिष्ठुर्बनमखिलं देव पर्येति यस्ते । तस्यावृत्तिं सपदि  
 विषुषाश्चेतसैवाचलेन ध्यातन्वन्तः सुचिरममृतासेवया तृप्नु-  
 वन्ति ॥१८॥ आहार्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावादहृद्यशस्त्र  
 ग्राही भवति सतर्त वैरिणा यश्च शक्यः । सर्वाङ्गेषु त्वमसि  
 सुमगस्त्वं न शक्यः परेषां तर्किक भूषावसनकुसुमैः किं च  
 शस्त्रैरुदस्त्रैः ॥१९॥ इन्द्रः श्रेयं तव सुहृतां किं तथा श्लाघनं ते  
 तस्यैवेयं भवलयकरी श्लाघ्यतामातनोति । त्वं निस्तारी जनन-  
 बन्धनैः सिद्धिकान्तापतिस्त्वं त्वं लोकानां प्रहुरिति तवश्लाघ्यते

स्तोत्रमित्यम् ॥ २० ॥ वृत्तिर्वाचामपरसदृशी न त्वमन्नेन तुष्य  
 स्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्त्वयमी न क्रमन्ते । मैवं भूर्वस्तद्वि  
 भगवन्भक्तिपीयूषपुष्टान्ते भग्यानामभिमतफलाः पारिजाता  
 भवन्ति ॥ २१ ॥ कोपावेशो न तव न तव क्वापि देव प्रसादोव्याप्तं  
 चेतस्तव हि परमोपेक्ष्यैवानपेक्षम् । आज्ञावश्यं तदपि भुवनं  
 मनिधिर्वैरहारी क्वैवभृतं भुवनतिलक ! प्राभवं त्वत्परेषु ॥ २२ ॥  
 देव स्तोतुं त्रिदिग्गणिकामण्डलीगीतकीर्तिं तोतूतिं त्वां सकल-  
 विषयज्ञानमूर्तिं जनो यः । तस्य चेमं न पदमटतो जातु जाहूर्तिं  
 पन्यास्तस्त्वग्रन्थः मरणाविषये नैव मोमूर्ति मर्त्यः ॥ २३ ॥ चित्ते  
 कुर्वन्निवधिसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपं देव त्वां यः समयनियमादादरेषु  
 स्तवीति । भ्रयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा कल्या-  
 णानां भवति विषयः पञ्चधापञ्चितानाम् ॥ २४ ॥ भक्तिप्रह-  
 महेन्द्रपूजितपदत्वत्कीर्तने न क्षमाः सूक्ष्मज्ञानदृशोऽपि संयममृतः  
 के हन्तमन्दा वयम् । अस्माभिः स्तवनच्छलेन तु परस्त्वस्यादरस्त-  
 न्यते स्वात्माधीनसुखैषिणां स खलु न कल्याणकल्पद्रुमः ॥ २५ ॥  
 वादिराजमनुशाब्दिकलोको वादिराजमनु तार्किकसिंहः । वादि-  
 राजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्यसहायः ॥ २६ ॥

॥ इति श्रीवादिराजकृतमेकीभावस्तोत्रम् ॥

अथ श्राधनजयकावप्रणोतम्

१८-विषापहारस्तोत्रम् ।

सात्मस्थितः सर्वगतः समस्तव्यःपारवेदी विनिवृत्तसङ्गः ।  
 प्रवृद्धकालोऽप्यजरोवरेण्यः पोयादपायात्पुरुषः पुराणः ॥ १ ॥  
 परैरचिन्त्यं युगभारमेकः स्तोतुं बहन्योगिमिरप्यशक्यः ।  
 स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न मानोः किमप्रवेशे विशतिप्रदीपः ॥२॥  
 तत्याज शक्रः शकनाभिमानं नाहं त्यत्रामि स्तवनानुबन्धम् ।  
 स्वल्पेन बोधेन तरोऽत्रिकार्थं वातायनेनेव निरूपयामि ॥ ३ ॥  
 स्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्ये निदानशेषं नितिलैरवेधः । वक्तुं  
 कियान्कीदृशमित्यशक्यः स्तुस्तिस्ततोऽशक्तिकथा तवास्तु ॥४॥  
 व्यापीडितं बालमित्रात्मदे<sup>१</sup>रुन्लाषतां लोकमवापिपस्त्वम् । हिता-  
 हितान्वेषणामान्द्यमाजः सर्वस्य जन्तोरसि बालवैद्यः ॥५॥ दाता  
 न हर्ता दिवसं विवस्वामघश्च इत्यच्युतदर्शिताशः । सव्याजमेवं  
 गमयत्यशक्तः क्षणेन दत्थेऽमिमत्तं नताय ॥६॥ उपैति मङ्गत्या  
 सुमुखः सुखानि त्वयि स्वभावाद्भिमुखश्च दुःखम् । सदावदा-  
 तद्युतिरेकरूपरतयोस्त्वमादर्श इवाऽऽवमासि ॥७॥ अगाद्यताऽब्धेः  
 स यतः पयोधिर्मैरोश्च तुङ्गा प्रकृतिः स यत्र । द्यावापृथिव्योः  
 पृथुता तथैव व्याप त्वदीया भुवनान्तराणि ॥ ८ ॥ तवानवस्था  
 परमार्थतत्त्वं तस्या न गीतः पुनरागमश्च । इष्टं विहाय त्वमदृष्ट-

मैषीर्विरुद्धवृत्तोऽपि समंजसस्त्वम् ॥ ६ ॥ स्मरः सुदग्धो भव-  
 तैव तस्मिन्नुद्धूलितात्मा यदि नाम शम्भुः । अशेत वृन्दो-  
 पहतोऽपि विष्णुः किं गृह्यते येन भवानजागः ॥ १० ॥ स नीरजा  
 स्यादपरोऽघवान्ना तदोषक्रीत्यैव न ते गुणित्वम् । स्वतोऽम्बुरा-  
 शेर्महिमा न देव स्तोकापवादेन जलाशयस्य ॥ ११ ॥ कर्मस्थितिं  
 जन्तुरनेकभूमिं नयत्यमुं सा च परस्परस्य । त्वं नेतृमावं हि  
 तयोर्भवाब्धौ जिनेन्द्र नौनाविक्रयोरिवालयः ॥ १२ ॥ सुखाय  
 दुःखानि गुण्णाय दोषान्धर्माय पापानि समाचरन्ति । तैलाय  
 बालाः सिकतासमूह निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः ॥ १३ ॥  
 विषापहारं मणिमौषदानि मन्त्रं समुद्दिश्य रसापन च । आम्य-  
 न्यहे । न त्वमिति स्मरन्ति पर्यायनामानि तदैव तानि ॥ १४ ॥  
 चित्ते न किञ्चित्कृतवानसि त्वं देवः कृतरचेतसि येन सर्वम् ,  
 हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रं सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः ॥ १५ ॥  
 त्रिकालतत्त्वं त्वमवैस्त्रिलोकीस्वामीति संख्यानियतेरमीषाम् ।  
 बाधोऽधिपत्यं प्राते नाभविष्यंस्तेऽन्येऽपि जेद्वयाप्स्यद्मूनपीदम्  
 ॥ १६ ॥ नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं नामभ्यरूपस्य तवोपकारि ।  
 तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य मानोरुद्विभ्रतश्छत्रमिवादरेण ॥ १७ ॥  
 क्वोपेककस्त्वं क्वसुखोपदेशः स चेत् किमिच्छाप्रतिकूलबाहः ।  
 क्वोसौ क्व वा सर्वजगत्प्रियत्व-तन्नो यथातथ्यमवेविजं ते ॥ १८ ॥  
 तुङ्गात्फल यत्तदकिञ्चनान्च प्राप्यं समृद्धाभ घनेश्वरादेः ।  
 निरम्भसोऽप्युच्यतमादिबान्द्रैर्नैकापि निर्यातिघुनी पयोधेः ॥ १९ ॥  
 त्रैलोक्यसेवांनियमाय दयवं हृद्ये यदिन्द्रो विनयेन तस्य ।



तत्प्रातिहार्यं भवतः कृतस्त्वं तत्कर्मयोगाद्यदि वा तवास्तु ॥२०॥  
 भ्रियं परं पश्यति साधु निःस्वः श्रीमात्रं कश्चित्कृपणं त्वदन्यः।  
 यथा प्रकाशस्थितमन्वकारस्थायीक्षतेऽसौ न तथा तमःस्थम् ॥२१॥  
 स्वप्नद्विनिःश्वासनिमेषमात्रं प्रत्यक्षमात्मानुभवेऽपि मूढः। किं  
 च प्रखिलज्ञेयविवर्तिरोधस्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः ॥२२॥ तस्या-  
 त्यजस्तस्य पितेति देव त्वां येऽवगायन्ति कुलं प्रकाश्य।  
 तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं पाञ्चौ कुरुं हेमपुनस्त्यजन्ति ॥२३॥  
 दक्षस्त्रिलोक्यां पटहोऽभिभूताः सुरासुरास्तस्य महान्स लामः।  
 मोहस्य मोहस्त्वयिको विरोद्धुर्मूलस्य नाशो बलवद्विरोधः ॥२४॥  
 मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्तेरवतुर्गतीनां गहनं परेण। सर्वं मया  
 दृष्टमिति स्मयेन त्वं मा कदाचिद्भुजमालुलोके ॥२५॥ स्वर्भा-  
 नुरर्कस्य हविर्भुजोऽम्भः कल्पान्तवातोऽम्बुनिधेर्विधातः। संसार-  
 भोगस्य वियोगभावे विपक्षपूर्वाम्युदयास्त्वदन्ये ॥ २६ ॥  
 अज्ञानतस्त्वां नमतः फलं यत्तज्ज्ञानतोऽन्यं न तु देवतेति।  
 हरिन्मणिं काचविया दधानस्तंतस्य बुद्ध्या बहतो न रिक्तः ॥२७॥  
 प्रशस्तवाचश्चतुराः कषायैर्दग्धस्य देवैश्चवहारमाहुः। गतम्य  
 दीपस्य हि नन्दितत्वं दृष्ट कपालस्य च मङ्गलत्वम् ॥ २८ ॥  
 नानार्थमेकार्थमदस्त्वदुक्तं दितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः।  
 निर्दोषतां के न विभावयन्ति ज्वरेण मूक्तः सुगमः स्वरेण ॥२९॥  
 न क्वापि वाञ्छा बधुतेचवाक्ते काले क्वचित्केशपि तथानिवोगः।  
 न पूरयाम्यम्बुधिमित्युदंशुः स्वयं हि शीतघुतिरभ्युदेति ॥३०॥  
 गुणा गभीराः परमाः प्रसन्ना बहुप्रकारा बहवस्तथेति। दृष्टोऽन-

मन्तः स्तवने न तेषां गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति ॥ ३१ ॥  
 स्तुत्या परं नामिमतं हि मक्त्या स्मृत्या प्रखत्या च ततो  
 मजामि । स्मरामि देवं प्रणमामि नित्यं केनाप्युपावेन फलं हि  
 साध्यम् ॥ ३२ ॥ ततस्त्रिलोकोनगराविदेवं नित्यं परं ज्योति-  
 रनन्तशक्तिम् । अपुण्यपापं परपुण्यहेतुं नमाम्यहं बन्धमबन्दि-  
 तारम् ॥ ३३ ॥ अशब्दमस्पर्शमरूपगन्धं त्वां नीरसं तद्विषया-  
 बबोधम् । सर्वस्य मातारममेयमन्यैर्जिनेन्द्रमस्मार्यमनुस्मरामि  
 ॥ ३४ ॥ अगाधमन्यैर्मनसाऽप्यलङ्घ्यं निष्किञ्चनं प्रार्थितमर्थ-  
 बद्धिः । विश्वस्य पारं तमदृष्टपारं पतिं जिनानां शरणां व्रजामि  
 ॥ ३५ ॥ प्रैलोक्यदीक्षागुरवे नमस्ते यो वर्धमानोऽपि निजो-  
 न्ततोऽभूत् । प्राग्गण्डशैलः पुनरद्रिकल्पः पश्चात्तमेकः कुलपवंतो-  
 ऽभूत् ॥ ३६ ॥ स्वयं प्रकाशस्य दिवा निशा वा न बाध्यता यस्य  
 न बाधकत्वम् । न लाघवं गौरवमेकरूपं बन्दे विद्मं कालकला-  
 मतीतम् ॥ ३७ ॥ इति स्तुतिं देव विधाय दैन्याद्भरं न पाप्मे  
 त्वमुपेक्षकोऽसि । छायातरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्करछापया  
 याचितयात्मलाभः ॥ ३८ ॥ अथास्ति दित्सा यदि वैपरोष-  
 स्वथ्येव सक्तां दिश मक्तिबुद्धिम् । करिष्यते देव तथा कृपां मे  
 को वात्मपोष्ये सुमुखो न शरिः ॥ ३९ ॥ चित्तरति विदिता  
 यथाकथञ्चिज्जिन विनताय मनीषितानि मक्तिः । त्वच्चि श्रुतिविषया  
 पुनर्विशेषादिशति मुखानि यशो घनं जय च ॥ ४० ॥

॥ इति श्रीघनंजयकृतं विद्यापहारस्तीव्रम् ॥

## श्रीभूपालकविप्रणीता

## १६-जिनचतुर्विंशतिका

श्रीलीलायतनं महीकुलगृहं कीर्तिप्रमोदास्पदं वाग्देवीरतिषेतनं  
 जयरमाक्रीडानिधानं महत् । सः स्यात्सर्वमहोत्सवकमवनं यः  
 प्राक्षिन्तार्यप्रदं प्रातः पश्यति कल्पपादपदलच्छायं जिनाह्वि-  
 द्रयम् ॥१॥ शान्तं वपुः श्वणहारि वचश्चरित्रं सर्वोपकारि तव  
 देव ततः भुतज्ञाः । संसारमारवमहत्स्थलरुद्रसान्द्रच्छायामहीरुः  
 मवन्तमुपाश्रयन्ते ॥ २ ॥ स्वामिष्य विनिर्गतोऽस्मि जननी-  
 गर्मान्धकूपोदरादघोदाटितदृष्टिरस्मि फलवज्जन्मास्मि चाद्य  
 स्फुटम् । त्वामद्राक्षमहं यदक्षयपदानन्दाय लोकत्रयीनेत्रेन्दी-  
 वरकाननेन्दुममृतस्यन्दिप्रमाचन्द्रिकम् ॥ ३ ॥ निःशेषात्रदशेन्द्र-  
 शोखरशिखारस्नप्रदीपावली- सान्द्रीभूतमृगेन्द्रदिष्टरतटीमाखिक्य-  
 दीपावलिः। क्वेयं श्रीः क्व च निःस्पृहत्वमिदमित्यूहातिगस्त्वाद्यः  
 सर्वज्ञानदशश्चरित्रमहिमा लोकेश लोकोत्तरः ॥ ४ ॥ राज्यं  
 शासनकारिनाकपति यस्यक्तं तृणावज्ञया, हेलानिर्दलितत्रिलोक-  
 महिमा यन्मोहमन्त्रो जितः । लोकालोकमपि स्वबोधमुकुुरस्यान्तः  
 कृतं यस्वया, सेषाऽऽश्चर्यपरम्परा जिनवर क्वान्यत्र संमाव्यते ॥५  
 दानं ज्ञानधनाय दक्षमसकृत्पात्राय सदृष्टये चीरान्युग्रतपांसि-  
 तेन सुचिरं पूजार्थं बह्व्यः कृताः । शीलानां निचयः सहामल-  
 गुणैः सर्वैः समासादितो दृष्टस्त्वं जिन येन दृष्टिसुमगः भद्रा-

परेण चक्षुः ॥ ६ ॥ प्रज्ञापारमितः स एव भगवान्पारं स एव  
 भ्रुतस्कन्धाब्धेर्गुं खरत्नभूषण इति श्लाघ्यः स एव ध्रुवम् । नीयन्ते  
 जिन येन कर्णाद्दयालंकारतां त्वदगुणाः संसाराद्विषापहारमख-  
 यस्त्रैलोक्यचूडामयोः ॥ ७ ॥ जयति दिविजबुन्दान्दोलितैरिन्दुरो-  
 चिर्निचयरुचिभिरुच्चैश्चामरैर्वीज्यमानः । जिनपतिरनुरज्यन्मुक्ति-  
 साम्राज्यलक्ष्मीयुवतिनवकटाक्षक्षेपलीलां दधावे; ॥ ८ ॥  
 देवः श्वेतातपत्रत्रयचमरिहृद्वाशोकभारचक्रभाषापुष्पीष्णामारसिंहासन-  
 सुरपटहैरष्टभिः प्रातिहार्यैः । साञ्चर्यैर्भ्राजमानः सुरमनुजसमा-  
 म्मोजिनीमानुमाली पायाश्रः पादपीठीकृतसकलजगत्पादमौलि-  
 जिनेन्द्रः ॥ ९ ॥ नृत्यत्स्वर्दन्तिदन्ताम्बुरुश्चननटश्राकनारीनिकायः  
 सद्यस्त्रैलोक्ययात्रात्सवकरनिनदाजोद्यमाद्यन्निलिम्प्यः हस्ताम्भो-  
 जातलीताविनिहितसुमनोद्दामरम्यामरस्त्रोकाम्यः कन्याणपूजा-  
 विधिषु विजयते देव देवागमस्ते ॥ १० ॥ चक्षुष्मानइमेव देव भुवने  
 नेत्रामृतम्यन्दिनं त्वद्वक्त्रेन्दुमतिप्रसादसुमगैस्तेजोभिरुद्भासि-  
 तम् । तेनालोक्यता मयाऽनतिचिराच्चक्षुः कृतार्थीकृतं द्रष्टव्या-  
 ववित्रीक्षणव्यति करव्याजम्भमाशोत्सवम् ॥ ११ ॥ कन्तोः सकान्त-  
 मपि मल्लमवैति कश्चिन्मुग्धा मुकुन्दमरविन्दजमिन्दुमौलिम् । मोघी-  
 कृतत्रिदशयोपिदपाङ्गपातस्तस्य त्वमेव विजयी जिनराजमल्लः  
 ॥ १२ ॥ किसलयितमनस्यं त्वद्विलाकाभिजापात्कसुमितमतिसान्द्रं  
 त्वत्समीपप्रयाणात् । मम कलितममन्दं त्वन्मुखेन्दोरिदानीं नयन-  
 पथमवाप्ताद्देव पुण्यद्रुमेण ॥ १३ ॥ त्रिभुवनवनपुष्प्यत्पुष्पकोदण्ड-  
 दर्पप्रसरदवनवाम्भोजसुकिप्रवृत्तिः । स जयति जिनराजव्रात-  
 जीमूतसङ्घः शतमखशिखिनृत्यारम्भनिर्वन्धवन्धुः ॥ १४ ॥

भूपालः स्वर्गपालप्रमुखनरसुरश्रेष्ठिनेत्रालिमालालीलाचैत्यस्य  
 चैत्यालयमखिलजगतकौमुदीन्दोर्जिनस्य । उर्वासीभूतसेवाञ्जलि-  
 पुटनलिनीकुङ्कुमलास्त्रिः परीत्य श्रीपादच्छाययापस्थितमवदवयुः  
 सश्रितोऽस्मीष मुक्तिम् ॥१५॥ देव त्वदङ्घ्रिनखमण्डलदर्शयो-  
 ऽस्मिन्नदृश्ये निसर्गरुचिरे चिरदृष्टवक्त्रः । श्रीकीर्तिकान्ति-  
 ष्टितसङ्गमकारणानि मय्यो न कानि लभते शुभमङ्गलानि  
 ॥ १६ ॥ जयति सुरनरेन्द्रश्रीसुधानिर्भरिण्याः कुलधरशिघरोऽयं  
 जेनचैत्याभिरामः । प्रविपुलफलधर्मानोकहाप्रप्रवालप्रसरशिखर-  
 शुम्भत्केतनः श्रीनिकेतः ॥१७॥ विनमदमरकान्ताकुन्तलाकान्त-  
 कान्तिस्फुरितनखमपूखद्योतिताशान्तरालः । दिविजमनुजराज-  
 ब्रातपूज्यक्रमस्त्रो जयति विजितकर्मारतिजालो जिनेन्द्रः ॥१८॥  
 सुप्तोत्थितेन सुमुखेन सुमङ्गलाय द्रष्टव्यमस्ति यदि मङ्गलमेव  
 वस्तु । अन्येन किं तदिह नाथ तवैव वक्त्रं त्रैलोक्यमङ्गलनि-  
 केतनमीदृशीयम् ॥ १९ ॥ त्वं धर्मोदयतापसाभमशुकस्त्वं  
 काव्यबन्धकमक्रीडानन्दनकोकिलस्त्वमुचितः श्रीमन्लिकाषट्पदः ।  
 त्वं पुन्नागकभारविन्दसरसीहंसस्त्वमुत्सुकः कैम्पाल न धार्यसे  
 गुणमखिलकुमालिमिमौलिभिः ॥२०॥ शिवसुखमजरश्रीसङ्गमं  
 धामिलप्य स्रमधिनिगमयन्ति क्लेशपाशेन केचित् ॥ वयमिह तु  
 वचस्ते भूपतेर्भावयन्तस्तदुभयमपि शरवल्लीलयानिर्विशामः ॥२१॥  
 देवेन्द्रास्तव मञ्जुजानि विदधुर्देवांगना मंगलान्यापेदुः शरदिन्दु-  
 निर्मलयशो मन्त्रवदेव्रा जगुः । शोषारचापि प्रधानियोगमखिलाः  
 सर्वा सुरारुचिरे तर्कि देव वयं विदधम इति नश्चिरं तु दोलायते

॥२२॥ देव त्वज्जननाभिवेकसमये रोमाञ्चसत्कञ्चुकैर्देवेन्द्रैर्य-  
दनर्ति नर्तनविधौ लम्बप्रमावैः स्फुटम् । किञ्चान्यत्सुरसुन्दरीकुच-  
तटप्रान्तावनद्धोत्तमप्रेक्खद्भ्रूलकिनादभङ्कृतमहो । तत्केन सबर्ण्यते  
॥२३॥ देव त्वत्प्रतिबेम्बमम्बुजदलस्मेरेषु पश्यतां यत्रास्माक-  
महो महोत्सवरसो दृष्टेरियान्वर्तते । साष्वात्तत्रभवन्तमीक्षितवतां  
कन्याशकाले तदा देवानामनिमेषलोचनतया वृत्तः स किं वर्ण्यते  
॥ २४ ॥ दृष्टं धाम रसायनस्य महतां दृष्टं निधीनां षडं दृष्टं  
सिद्धरसस्य सद्य सदनं दृष्टं च चिन्तामखेः । किं दृष्टेश्चालु-  
षङ्गिकफलैरेमिर्मयाद्य ध्रुव दृष्टं मुक्तिविवाहमङ्गलगृहं दृष्टे जिनभी-  
गृहे ॥२५॥ दृष्टस्त्वं विनराजचन्द्र विकसद्भूपेन्द्रनेत्रोत्पलैः स्नातं  
त्वन्नुतिचन्द्रिकामसि भवद्विदम्बकोरोत्सवे । नीतरचाथ निदाघजः  
क्लमभरः शान्तिं मया मग्न्यते देव त्वद्गतचेतसैव भवतो भूया-  
त्पुनर्दर्शनम् ॥२६॥

॥ इति श्रीभृशालकविप्रणीता जिनचतुर्विंशतिका ॥

—•—

## निर्वाणकाण्ड (गाथा)

अद्वावयस्मि उसहो, चम्पाए वासुपुज्जजिञ्जवाहो ।  
उज्जते खेमिजिहो, पात्राए विम्बुदो महावीरो ॥१॥  
वीसं तु जिञ्जवरिहा अमरासुर-र्नदिदा धुदकिलेसा ।  
सम्भेदे गिरिजिहरे, जिञ्जाखगया खमो तेसिं ॥ २॥  
वरदत्तो य वरिजो, सायरदत्तोय तारवरखधरे ।

आहुद्वयकोडीयो, शिवाय गया शमो तेषि ॥ ३ ॥  
 शोमिस्सामि पजुणयो, सञ्जुमारो तहेव अशिरुद्धो ।  
 बाहत्तरिकोडीओ, उज्जते सत्तया सिद्धा ॥ ४ ॥  
 रामसुआ वधिय जखा, लाहत्तरिदाय पञ्चकोडीओ ।  
 पावागिरिवरसिहरे, शिवाय गया शमो तेषि ॥ ५ ॥  
 पंहुसुआ तिण्णज्जा, दविडत्तरिदाय अट्टकोडीओ ।  
 सत्तुञ्जय गिरिसिहरे शिवाय गया शमो तेषि ॥ ६ ॥  
 संते जे वलमहा, जहुवत्तरिदाय अट्टकोडीओ ।  
 गजपंथं गिरिसिहरे, शिवाय गया शमो तेषि ॥ ७ ॥  
 रामहत्तुसुमीओ, गवयगवक्खो य शीलपहखीलो ।  
 शवखबदीकोडीओ, तुङ्गीगिरिशिबुदे वंदे ॥ ८ ॥  
 यांगाणां गकुमारा, कोडीपञ्चदशुशिवरा सहिया ।  
 सबणागिरिवरसिहरे, शिवाय गया शमो तेषि ॥ ९ ॥  
 दहसुहरायस्स सुआ, कोडीपञ्चदशुशिवरा सहिया ।  
 रेवाउहयतहग्गेशिवायगयाशमो तेषि ॥ १० ॥  
 रेवायइये तीरे पञ्चममायम्मि सिद्धवरकूटे ।  
 दो चक्की दहकप्पे, आहुद्वयकोडांशुवुदे वंदे ॥ ११ ॥  
 बहवाशीवरणयरे, दक्खिणमायम्मि चूलगिरिसिहरे ।  
 इन्दजीदकुंमण्ये, शिवाय गया शमो तेषि ॥ १२ ॥  
 पावागिरिवरणयरे, सुवयसमहाइशुशिवरा चउरो ।  
 कलखायईतहग्गे, शिवाय गया शमो तेषि ॥ १३ ॥  
 कलहोडीवरगामे, पच्छिममायम्मि दोशगिरिसिहरे ।

गुरुदत्ताह मुर्खिदा, खिन्वाण गया खमो तेसि ॥१४॥  
 श्यायकुमारमुर्खिदा, बालि महाबालि चैव अज्मेया ।  
 अद्वावयगिरिसिहरे, खिन्वाण गया खमो तेसि ॥१५॥  
 अञ्चलपुरवरखयरे, ईसाखे भायमेहृगिरिसिहरे ।  
 आहुद्वयकोडीओ, खिन्वाण गया खमो तेसि ॥ १६॥  
 वंसत्थलम्मिखयरे, पच्छिमभायम्मिकुन्थगिरिसिहरे ।  
 कुलदेसभूषणमुणी, खिन्वाण गया खमो तेसि ॥१७॥  
 जसहररायस्स सुभा, पंचसयाह कलिगदेसम्मि ।  
 कोडिमिला कोडिमुणी, खिन्वाण गया खमो तेसि ॥१८॥  
 पासस्स समवसरणे, गुरुवरदत्त पचरिसिपमुहा ।  
 रेसिदीगिरिसिहरे, खिन्वाण गया खमो तेसि ॥ १९ ॥  
 जे जिणु जित्पु तत्या, जे दु गया खिन्वुदि परमं ।  
 ते बंदामि य खिन्वं, तिपरणमुद्धो खमंसामि ॥ २० ॥  
 सेसाणं तु रिसीणं, खिन्वाणं बम्मि बम्मि ठाखम्मि ।  
 ते हं वदे सव्वे, दुक्खकखयकारणुहाए ॥ २१ ॥  
 पासं तह अदिणंदण, श्यायदहि मङ्गलाउरे बंदे ।  
 अस्सारं मे पट्टखि, मुखिसुव्वओ तहेव बंदामि ॥ १ ॥  
 बाहुबलि तह-बंदमि, पौदनपुर हत्थिनापुरे बंदे ।  
 संतीकुन्धुव अरिहो, वाराणसिए सुपास पासं च ॥ २ ॥  
 माहुरए अहिच्छिसे, वीरं पासं तहेव बंदामि ।  
 जंबुमुर्खिदा बंदे, खिन्वुरपत्तोवि जंबुवणगहखे ॥ ३ ॥  
 पञ्चकन्ताणठाखद, जाणि त्रि संजादमञ्चलोयाम्मि ।  
 मखवयखकायमुद्धो, सव्वे सिरसा खमंसामि ॥ ४ ॥



अमालदेवं बंदमि, वरशयरे शिवहकुयहखी बंधे ।  
 पासं सिरिपुरि बंदमि, होला गिरसंखदेवम्मि ॥ ५ ॥  
 गोम्मटदेवं बंदमि पंचसयं धणुहउच्चं तं ।  
 देवा कुर्याति बुट्टी, केसरकुसुमाख तस्स उवरिम्मि ॥ ६ ॥  
 खिच्चाण्ठाख जाणिवि, अइसयठाणाणि अइसये सहिया ।  
 संजादमिच लोष, सध्ये सिरसा खमंसांमि ॥ ७ ॥  
 जो जण पठइ तिपालं, खिच्चुइकंडंपि भावसुद्धाप ।  
 भुंजदि थारसुरसुनखं, पच्छा सोलिहइ खिच्चाणं ॥ ८ ॥

— ❧ —

## २२ वीतरागस्तोत्रम् ।

शान्तं शिवं शिवपदस्य परं निदानं, सर्वज्ञमीशममलं नित-  
 मोहमानम् । संसारनीरनिधिमन्थनमंदरागं, पश्यन्ति पुरय्यरहिता  
 न हि वीतरागम् ॥१॥ अभ्यक्तमुक्तिपदपङ्कजराजहंसं, विश्रवावतं-  
 सममरं विहितप्रशंसम् । कर्दर्यभूमिरुहमंजनमरानागं, पश्यन्ति०  
 ॥ २ ॥ संसारनीरनिधितारक्षयानपार्श्वं, ज्ञानैकपात्रमतिगात्र-  
 मनेह्यगात्रम् । दुर्बारमारघनपातनवातरागं, पश्यन्ति० ॥ ३ ॥  
 दान्तं नितान्तमतिकान्तमनन्तरूपं योगीश्वरं किमपि संबिदितस्व-  
 रूपम् । संसारमारवपथाद्भुतनिर्मरागं, पश्यन्ति० ॥४॥ दुष्कर्म-  
 मीतजनताशरणां सुरेन्द्रैः निःशेषदोषरहितं महितं महेन्द्रैः ।  
 तीर्थङ्करं भविकदापतमुक्तिभागं, पश्यन्ति० ॥ ५ ॥ कन्याखव-  
 म्लिनवपन्वनाम्बुवाहं त्रैलोक्यलोकनयनैकसुधाप्रवाहम् ।  
 सिद्ध्यङ्गनावरविलासनिबद्धरागं, पश्यन्ति० ॥६॥ लोकान्तलोक

नकलातिशयप्रकाशं, ध्यालोककीर्तिवरनिर्जितकम्बुदास्यं । वायी-  
तरङ्गनवरङ्गलसराडागं, पश्यन्ति० ॥ ७ ॥ कन्याखकीर्तिरचि-  
तालवकम्पवृत्तां, ध्यानानले दलितपद्ममुपासदक्षम् । नित्यं चमा-  
भरधुरन्धरशेषनागं, पश्यन्ति० ॥ ८ ॥ श्रीजैनसूरिबिनतक्रमपद्मसेनं,  
हेलाविनिर्दलितमोहनरेन्द्रसेनम् । लीलाविलङ्घितमहाम्बुधि-  
मध्यमागं, पश्यन्ति पुण्यरहिता न हि वीतरागम् ॥ ९ ॥

## २३ परमानन्दस्तोत्रम्

परमानन्दसंयुक्तं निर्विकारं निरामयम् । ध्यानहीना न  
पश्यन्ति निजदेहे व्यवस्थितम् । १ ॥ अनन्तसुखसम्पन्नं ज्ञानामृतपयो-  
धरम् । अनन्तवीर्यसम्पन्नं दर्शनं परमात्मनः ॥ २ ॥ निर्विकारं  
निराबाधं सर्वसंगविवर्जितम् । परमानन्दसम्पन्नं शुद्धचैतन्यलक्ष-  
णम् ॥ ३ ॥ उपामा स्वात्मचिन्ता स्यान्मोहचिन्ता च मध्यमा ।  
अधमा कामचिन्ता स्यात्परचिन्ताधमाधमा ॥ ४ ॥ निर्विकारसमु-  
त्पन्नं ज्ञानमेव सुधारसम् । विवेकमञ्जुलिं कृत्वा तत्पिबन्ति  
मनीषिणः ॥ ५ ॥ सदानन्दमयं जीवं यो जानाति स पयिडतः ।  
स सेवते निज्जत्मानं परमानन्दकारणम् ॥ ६ ॥ नस्तिन्यां च  
यथा नीरं मिथं तिष्ठति सर्वदा । अयमात्मा स्वभावेन देहे ति-  
ष्ठति निर्मलः ॥ ७ ॥ द्रव्यकर्ममलैर्मुक्तं भावकर्मविवर्जितम् ।  
नोक्तमरहितं विद्धि निश्चयेन चिदात्मनः ॥ ८ ॥ अनन्दं ब्रह्मणो रूपं  
निजदेहे व्यवस्थितम् । ध्यानहीना न पश्यन्ति निजदेहे व्यवस्थि-

तत् ॥६॥ तद्व्यमानं क्रियते मय्यैर्मना येन विलीयते । तत्त्वयां  
 दृश्यते शुद्धं चिच्चमस्कारलक्ष्यम् ॥१०॥ ये ध्यानशीला ह्यनयः  
 प्रथानास्ते दुःखहीना नियमाद्भवन्ति । संप्राप्य शीघ्रं परमात्म-  
 तत्त्वं व्रजन्ति मोक्षं क्षणमेकमेव ॥ ११ ॥ आनन्दरूपं परमात्म-  
 तत्त्वं, समस्तसंकल्पविकल्पमुक्तम् । स्वभावलीना निवसन्ति नित्यं  
 जानाति योमी स्वयमेव तत्त्वम् ॥ १२ ॥ चिदानन्दमयं शुद्धं  
 निराकारं निरामयम् । अनन्तसुखसम्पन्नं सर्वसङ्गविवर्जितम्  
 ॥ १३ ॥ लोकमात्रप्रमाथोऽयं निश्चयेन हि संशयः । व्यवहारे  
 तन्मात्रः कथितः परमेश्वरः ॥ १४ ॥ यत्त्वयां दृश्यते शुद्धं,  
 तत्त्वयां गतविभ्रमः । स्वस्वचित्तः स्थिरीभूत्वा निर्विकल्प समा-  
 धिना ॥ १५ ॥ स एव परमं ब्रह्म स एव जिनपुङ्गवः । स एव  
 परमं तत्त्वं स एव परमो गुरुः ॥ १६ ॥ स एव परमं ज्योतिः  
 स एव परमं तपः । स एव परमं ध्यानं स एव परमो गुरुः ॥१७॥  
 स एव सर्वकल्याणं स एव सुखमाजनम् । स एव शुचिनिर्वाणं  
 स एव परमः शिवः ॥ १८ ॥ स एव सुखदायकः । स एव  
 परचैतन्यं स एव गुणसागरः ॥ १९ ॥ परमाह्लादसंपन्नं राग-  
 द्वेषविवर्जितम् । अर्हन्तं देहमध्ये तु यो जानाति स पण्डितः ॥२०॥  
 आकाररहितं शुद्धं स्वस्वरूपव्यवस्थितम् । सिद्धमष्टगुणोपेतं  
 निर्विकारं निश्चलनम् ॥ २१ ॥ तत्सदृशं निजात्मानं ब्रह्मसाय  
 महीयसे । सहजानन्दचैतन्यं यो जानाति स पण्डितः ॥२२॥  
 पापाद्येऽप्यप्यप्ये दुःखमध्ये यथा घृतम् । तिलमध्ये यथा तैलम्

देहमञ्चे तथा शिवः ॥२३॥ काष्ठमञ्चे वधावह्निः शक्ति रूपेण  
तिष्ठति । अथनात्मा शरीरेषु यो जानाति स पविर्देवः ॥२४॥

श्रीमदुभट्टाकलकदेवविरचितम्

२४ स्वरूपसम्बोधनम्

मुक्तामुक्तैकरूपो यः कर्मभिः संविदादिना । अथर्व परमात्मान  
ज्ञानमूर्तिं नमामि तम् ॥ १ ॥ सोऽस्वमात्मा सोऽपयोगोऽर्थ  
क्रमाद्देतुफलावहः यो ब्राह्मोऽब्राह्मनाद्यन्तः स्थित्युत्पत्तिभ्ययात्मकः  
॥ २ ॥ प्रमेयत्वादिभिर्धर्मैरधिदात्मा चिदात्मकः । ज्ञानदर्शन-  
तस्तस्माच्चेतनाचेतनात्मकः ॥ ३ ॥ ज्ञानाग्निषो नृणांभिषो भिषा-  
मिन्न कर्षचन । ज्ञानं पूर्वापरीभूतं सोऽज्यमात्मेति कीर्तितः ॥ ४ ॥  
स्वदेहप्रमितश्चायं देहमात्रोऽपि नैव सः । ततः सर्वगतश्चायं  
विश्वव्यापी न सर्वथा ॥ ५ ॥ नानाज्ञानस्वभावत्वात्किञ्चिदेकोऽपि  
नैव सः । चेतनैकस्वभावत्वादेकानेकात्मको भवेत् ॥ ६ ॥ नाव-  
क्तव्यः स्वरूपाद्यैर्निर्वाच्यः परभावतः । तस्मान्नेकात्मको वाच्यो  
नैववाचाजगोचरः ॥ ७ ॥ स स्याद्विधिनिषेधात्का स्वधर्मप्ररधर्मयोः  
समूर्तिर्वैधर्मत्वाद्दमूर्तिश्च विपर्ययात् ॥ ८ ॥ इत्याद्यनेकधर्मत्व  
बन्धमोक्षौ तयोः फलम् । अत्मा स्वीकृते तत्काले च स्वयमेव  
तु ॥ ९ ॥ कर्ता यः कारुणं योका तत्कालात् स एव तु । बहि-  
स्तत्कालायाम्यां तेषां मुक्तस्त्वमेव हि ॥ १० ॥ सद्बुद्धिर्ज्ञानचारि-  
गुणावः स्वात्मज्ञानव्ये । इत्येवावाचात्म्यं संस्थित्यन्तर्गत्येवैवदर्शनं

मतम् ॥ ११ ॥ यथावद्वस्तुनिष्ठीतिः सम्यग्ज्ञानं प्रदीपवत् ।  
 तत्स्वार्थम्बवसावात्म कथंचित्प्रमितेः पृथक् ॥ १२ ॥ दर्शनज्ञान-  
 चारित्रेषुचरोत्तरमाविषु । स्थिरमालम्बनं यद्वा माध्यस्थ्यं सुख-  
 दुःखयोः ॥ १३ ॥ ज्ञाता दृष्टाहमेकोऽहं सुखे दुःखे न चापरः ।  
 इतीदं भावनादाढ्यं चारित्रमथवाऽपरम् ॥ १४ ॥ तदेतन्मूलहेतोः  
 स्यात्कारणं सङ्कारकम् । तद्बाह्यं देशकालादि तपश्च बहिःकृ-  
 कम् ॥ १५ ॥ इतीदं सर्वमालोच्य सौस्थ्ये दौस्थ्ये च शक्तितः ।  
 आत्मानं भावयेन्नित्यं रागद्वेषविवर्जितम् ॥ १६ ॥ कषायै-  
 रञ्जितं चेतस्तत्त्वं नैवावगाहते । नीलीरक्तेऽम्बरे रागो दुराधेयो  
 हि कौकुम्भः ॥ १७ ॥ ततस्त्वं दोषनिर्मुक्तस्यै निर्मोहो भव सर्वतः ॥  
 उदाग्नीनत्वमालम्ब्य तत्त्वचिन्तापरो भव ॥ १८ ॥ हेयोपादेयत-  
 तत्त्वस्य स्थिति विज्ञायाहेयतः । निरालम्बो भवान्यस्मादुपेये साव-  
 लम्बनः ॥ १९ ॥ स्वं परं चेति वस्तुत्वं वस्तुरूपेण भावय ।  
 उपेक्षाभावनेत्कर्षपर्यन्ते शिवमाप्नुहि ॥ २० ॥ मोक्षेऽपि यस्य  
 नाकांक्षा स मोक्षमधिगच्छति । इत्युक्तत्वाद्विदितान्वेषी कांक्षा ना-  
 स्तपि बोधयेत् ॥ २१ ॥ सापि च स्वात्मनिष्ठत्वात्सुलभा यदि  
 चिन्त्यते । आत्माधीने सुखे तात यत्नं किं न करिष्यसि  
 ॥ २२ ॥ स्वं परं विद्धि तत्रापि ध्यामोहं  
 जिनिषि किन्त्रिम् अनाकुलस्वसंवेद्ये स्वरूपे तिष्ठ केवले ॥ २३ ॥  
 स्वः स्वस्येन स्थितं स्वभ्रमे स्वस्मात्स्वस्याविनश्वरे । स्वस्मिन्  
 प्यात्वा लभेत्स्योत्थमानन्दममृतं परम् ॥ २४ ॥ इति स्वतत्त्वं परिभाष्य  
 बाहुमयं य एतदाख्याति शृणोति चादरात् । करोति तस्मै पर-

मार्थसम्पदं स्वरूपसंबोधनपञ्चविंशतिः ॥ २५ ॥

—०—

## श्री अमितगतिसुरिविरचिता २५ द्वात्रिंशतिका ।

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं बिलप्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।  
 माध्यस्थ्यभावं विपरीतवृत्तौ सदा ममात्मा विदधातु देव ॥१॥  
 शरीरतः कर्तुं मनन्तशक्तिं विभिन्नमात्मानेमपास्तदोषम् । जिनेन्द्र !  
 केषादिव खङ्गयष्टिं तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ॥ २ ॥ दुःखे  
 सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे योगे वियोगे भुवने बने वा । निराकृताशे-  
 षममत्वबुद्धेः समं मनो मेऽस्तु सदापि नाथ ॥ ३ ॥ मुनीश !  
 लीनाविव कीलिताविव स्थिरी निशाताविव विविताविव । पादौ  
 त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा तमोधुनानीं हृदि दीपकाविव ॥ ४ ॥  
 एकेन्द्रियाद्याः यदि देव देहिनः प्रमादतः संचरता इतस्ततः । अथा  
 विभिन्ना मिलिता निधीहिता, तदरतु मिथ्या दुरनुष्टितं तदा  
 ॥५॥ विमुक्तिमार्गप्रतिफलवर्तिना मया कषायाद्यवशेन दुर्विधया,  
 चारित्रशुद्धेर्यदकारि श्लोपनं तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतप्रमो ॥६॥  
 विनिन्दनालोचनगर्हणैरहं मनोवचःकायकषायनिर्मितम् । निहन्मि  
 पापं भवदुःखकार्यं भिषग्विवं मन्त्रमुखैरिवाखिलम् ॥ ७ ॥ अति-  
 क्रमं यद्विप्रतेर्भ्यतिक्रमं जिनातिचारं सुचरित्रकर्मणः । व्यधामना-

चारमपि प्रमादतः प्रतिकर्म तस्य करोमि शुद्धये ॥ ८ ॥  
 अति मनःशुद्धि विधरेतिकर्म व्यतिक्रमं शीलवृत्ते-  
 विलङ्घनम् । प्रमोडतिचारं विषयेषु वर्तनं बदन्त्यमाचारमिहाति-  
 सक्तताम् ॥ ९ ॥ यदर्थमात्रापदवाक्यहीनं मया प्रमादाद्यदि किञ्च-  
 नोक्तम् । तन्मे क्षमित्वा विदधामु देवी सरस्वती केवलवाघलम्बिम्  
 ॥ १० ॥ बोधिः समाधिः परिग्रामशुद्धिः स्वात्मोपलम्बिः शिवसौख्य-  
 सिद्धिः । चिन्तामणि चिन्तितवस्तुदाने स्त्री इद्यमानस्य ममास्तु  
 देवि ॥ ११ ॥ यः स्मरति सर्वशुनीन्द्रवृन्दैर्यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः ।  
 वो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १२ ॥  
 यो दर्शनज्ञानसुखस्वभावः समस्तसंसारविकारबाधः । समाधि-  
 गम्यः परमात्मसङ्गः स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १३ ॥  
 निबूदते यो भवदुःखजालं निरीचते यो जमदन्तराल योऽन्तर्गतो  
 योगिनिरीचणीयः स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १४ ॥ विद्युक्ति-  
 मार्गप्रतिपादको यो यो जन्ममृत्युव्यसनाद्यतीतः । त्रिलोकलोकी  
 विकलोऽकलङ्कः स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १५ ॥ क्रीडीकृता-  
 शेषशरीरिबर्गा शगादयो यस्य न सन्ति दोषाः । निरिन्द्रियो  
 ज्ञानमवोऽनपायः स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १६ ॥ यो  
 व्यापको विष्वक्मीनवृत्तेः सिद्धो विबुद्धो संसृज्जन्मवन्धः । ध्यातो  
 धुनीते सकलं विकारं स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ॥ १७ ॥ न  
 स्पृश्यते कर्मकलङ्कदोषैर्वो ध्वान्तसर्वैरिषि सिम्बरिमः निरञ्जं  
 नित्यमनेकमेकं तं देवमाप्तं शरणां प्रपद्ये ॥ १८ ॥ विमासते यत्र  
 मरीचिमाली न विद्यमाने वृषणावभासि । स्वात्मस्थितं बोधमय-

प्रकाशं तं देवमाप्तं शरणां प्रपद्ये ॥ १६ ॥ बिलोक्यमाने सति  
 यत्र विश्वं बिलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् । शुद्ध शिवं शान्तमना-  
 घनन्तं तं देवमाप्तं शरणां प्रपद्ये ॥ २० ॥ येन ह्यता मन्मथमान-  
 मूर्च्छा विषादनिद्रामवशोकचिन्ता । ह्यतोऽनलेनेव तरुप्रपञ्चस्तं  
 देवमाप्तं शाश्वं प्रपद्ये ॥ २१ ॥ न संस्तरोऽस्मा न तृषां न मेदिनी  
 विधानतो नो फलको विनिर्मितः । यतो निरस्ताश्चकावविद्विषः  
 सुधीमिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ॥ २२ ॥ न संस्तरो मद्रसमाधि-  
 साधनं न लोकपूजा न च संचमेलनम् । यतस्ततोऽध्यात्मरतो  
 मवानिशं विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम् ॥ २३ ॥ न सन्ति  
 बाह्या मम केचनार्था मन्नाये तेषां न कदाचनान्दम् । इत्थं विनि-  
 श्चित्य विमुच्य बाह्यं स्वस्थः सदा त्वं मत्र मद्र मुक्त्यै ॥ २४ ॥  
 आत्मानमात्मन्यवलोकमानस्त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः । एकाग्र-  
 चित्तः खलु यत्र उत्र स्थितोपि साधुर्लभते समाधिम् ॥ २५ ॥  
 एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा विनिर्मलः साधिगमस्वभावः ।  
 बहिर्मवाः सन्त्यपरे समस्ता न शाश्वताः कर्ममवाः स्वकीयाः  
 ॥ २६ ॥ यस्यास्ति नैक्यं कृपापि साद्धं तस्यास्ति किं पुत्रकलत्र-  
 मित्रैः । पृथक्कृते चर्मणि रोमकृपाः कुतोहि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये  
 ॥ २७ ॥ संयोगतो दुःखमन्त्रेकमेदं यतोऽस्तुते जन्मवने शरीरो  
 ततश्चिन्तासौ परिवर्तनीयैरियामुना निवृत्तिमात्मनीनम् ॥ २८ ॥  
 सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं संसारकान्तारनिपातहेतुम् । विद्विक्त-  
 मात्मानमवेषमासौ निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे ॥ २९ ॥ स्वयं  
 कृतं कर्म यदात्मना पुरा कृतं तदीयं लभते शुभाशुभम् । परेषु



दत्तं यदि लभ्यसे स्फुटं स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा ॥ ३० ॥  
 निजाजितं कर्म विहाय देहेनो न कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन ।  
 विचारयन्नेव मनन्पमानः परो ददातीति विमुञ्च शोषणीम् ॥ ३१ ॥  
 यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः सर्वविविक्तो भृशमनवधः । शश्व-  
 दधीतो मनसि लभन्ते मुक्तिनिकेतं विभववर्षं ते ॥ ३२ ॥ इति  
 द्वात्रिंशतिवृत्तैः परमात्मानमोचते । योऽन्यगतचेतस्का यात्पत्नी  
 पदमव्ययम् ॥ ३३ ॥

## २६ अकलङ्कस्तोत्रम्

( शार्दूलविक्रीडितछन्दः )

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोक्यमालोकितं । साक्षाद्येन  
 वचा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि ॥ रागद्वेषमयामयान्तकज-  
 रालोलत्वलोभादयो । नालं यत्पदलघनाय स महादेवो मया  
 बंधते ॥ १ ॥ दग्धं येन पुरत्रयं शरमत्रा तीव्राविषा बद्धिना ।  
 यो वा नृत्पति मत्तत्पितृवने यस्मात्तत्रो वा गुहः । सोऽयं किं  
 मम शङ्करो मयत्पारोपार्तिमोहद्वयं । कृत्वा यःस तु सर्ववित्तनु-  
 भृतां क्षेमंकरः शङ्करः ॥ २ ॥ यत्नाद्येन विदारितं कररुहैर्दैत्येन्द्र-  
 वचःस्थलं सारथ्येन धनंजयस्य समरे योऽमारयत्कौरवान् ॥  
 नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमब्बाहृतं । विश्वं व्याप्य  
 विजृम्भते स तु महाविष्णुः सदृशो मय ॥ ३ ॥ उर्वरयामुदपादि  
 रागबहुलं चेतो पदीयं पुनः । पात्रोदपडकर्मदुष्पमृतयो यस्या-

कृतार्थस्त्विति ॥ आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्मा भवेन्मा-  
दृशां । लुप्तं षष्ठाश्रमरागरोगरहितौ ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ॥१॥  
यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवन्नं जीवं च शून्यं वदन् । कर्त्ता  
कर्मफलं न भुक्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथम् ॥ यज्ज्ञानं चक्ष-  
वति वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा यो ज्ञानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं  
साक्षात्स बुद्धो मम ॥ ५ ॥

ईशः किं छिन्नलिङ्गो यदि विगतमयः शूलपाणिः कथं स्यात् ।  
नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजरच ॥  
आर्द्राजः किन्त्वज्जन्मा सकलविदिति किं वेदि नात्मान्तरायं ।  
संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपान्ते ॥ ६ ॥  
ब्रह्मा चर्माक्षत्रो सुरयुवतिरसावेशविभ्रान्तचेताः । शम्भुः खट्-  
वाङ्गवारी गिरिपतितनयापाङ्गलीलानुविद्धः ॥ विष्णुश्चक्राविपः  
सन्दुहितरमगमद्गोपनाथस्य मोहा । दर्हन्विष्वस्तरागो जितसकल-  
मयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ॥७॥ एको नृत्यति विप्रसार्यं कुकुर्भा  
चक्रे सङ्खञ्जना-नेकः शेषशुर्जगभोगशयने व्यादाय निद्रापते ॥  
दृष्टुं चारुतिलोत्तमासुखमगादेकशतुर्वक्त्रता । मेते मुक्तिपथं वदन्ति  
विदुषामित्येतदत्यद्बुद्धतम् ॥ ८ ॥ यो विश्व वेदवेद्यं जननजल-  
निधेर्मङ्गिनः पारदरवा । पीर्वापर्षाविरुद्धं बचनमनुपमं निष्कलं  
यदीयम् ॥ तं वन्दे साधुवन्द्यं सल्लगुणनिधिं स्वस्तदापद्विषं च बुद्धं  
वा बर्हमानं शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ॥ ९ ॥ मायी  
नास्ति जटा कपालं मुकुटं चन्द्रो न मूर्धावली । खट्वाङ्गं न च  
वासुकिर्न च धनुः शूलं न चाग्रं मुष्टं ॥ कामो यस्य न कामिनी

न च हृषो गीतं न नृत्वं पुनः सोऽस्मान्पातु निरखनो जिनपतिः  
 सर्वत्र स्रवणः शिवः ॥ १० ॥ नो प्रसङ्गाकितभूतलं न च हरेः  
 शम्भोर्न मुद्राकितं । नो चन्द्रार्ककराकितं सुरपतेर्वजाकितं नैव च ॥  
 षड्वक्त्राकितबौद्धदेवहुतभुग्व्यचोरगैर्नाङ्कितं । नम्रं पश्यत वादिनो  
 जगदिदं जैनेन्द्रमुद्राकितम् ॥ ११ ॥ मौजीर्दंडकमंडलुप्रमत्तयो नो  
 लाम्बकनं प्रक्षयो । रुद्रस्यापि जटाकपालमुकुटं कौपीनखट्वाङ्गनाः ॥  
 विश्वोश्चक्रगदादिशङ्खमतुलं ब्रह्मस्य रकाम्बरं । नम्रं पश्यत वादिनां  
 जगदिदं जैनेन्द्रमुद्राकितम् ॥ १२ ॥ नाहंकारवशीकृतेन मनसा न  
 द्रेषिया केवर्त्त । नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या  
 मया ॥ राहः श्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्मनो ।  
 बौद्धीषान्सकलान् विजित्य स घटः पादेन विस्फालितः ॥ १३ ॥  
 खट्वाङ्गं नैव हस्ते न च हृदि रचिता लम्बते मुण्डमाला । मस्माङ्गं  
 नैव शूलं न च गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं । चन्द्रार्धं नैव  
 मूर्धन्यपि-वृषगमनं नैव कंठे फणीन्द्रः । तं वन्दे त्यक्तदोषं भव-  
 मयमथनं चेरवरं देवदेवं ॥ १४ ॥ किं वाचो भगवानमेयमहिमा  
 देवोऽकलंकः कलौ । काले यो जनतामुधर्मनिहितो देवोऽ-  
 कलंको जिनः ॥ यस्य स्फारविवेकमुद्रलहरीजाले प्रमेयाकुला ।  
 निर्भग्ना तनुतेतरां भगवती तारा शिरःकम्पनम् ॥ १५ ॥  
 सा तारा खलु देवता भगवतीमन्यापि मन्यामहे । षण्मासा-  
 वधिजाड्यसारूपभगवद्बृहदाकलंकप्रभोः । वाक्कुक्षोलपरम्परा-  
 मिरमते नूनं मनोबलजन- । व्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः  
 सन्वाहितेवस्ततः ॥ १६ ॥

## २७-मृत्युमहोत्सव

उपसर्गे दुर्मिच्छे द्रसि रुजायां च निःप्रतीकारे । धर्माय तनु-  
विमोचनमाहुः सन्लेखनामार्याः ॥१॥ अन्तःक्रियाधिकरणं तपः-  
फलं सकलदर्शिनः स्तुवते । तस्माद्यावद्विमवं समाधिमरखे प्रयति-  
तव्यं ॥२॥ स्नेहं वैरं संगं परिग्रहं चापहाय शुद्धमनाः । स्वजनं  
परिजनमपि च चान्त्वा क्षमयेत्प्रियैर्वचनैः ॥३॥ आलोक्य सर्व-  
मेनः कृतकारितमनुमतां च निर्व्याजम् । आरोपयेन्महाव्रतमामरख-  
स्थायि निःशेषम् ॥ ४ ॥ शोक मयमवसादं क्लेशं कालुष्यमरति-  
मपि हित्वा । सत्त्वात्साहयुदोर्यं च मनः प्रसाद्य श्रुतं मृतैः ॥५॥  
आहारं परिहाप्य च क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत् पानम् । स्निग्धं  
च हापयित्वा खरपानं पूरयेत्क्रमशः ॥ ६ ॥ खरपानहापनामपि  
कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्यम् । पंचनमस्कारमनास्तनुं त्यजेत्  
सर्वयत्नेन ॥ ७ ॥

मृत्युमार्गे प्रवृत्तस्य वीतरागो ददातु मे समाधिबोधपाथेवं  
यावन्मुक्तिपुरी पुरः ॥८॥ कृमिजालशताक्षीर्णे जर्जरे देहपञ्जरे ।  
मज्जमाने न मेऽव्यं यतस्त्वं ज्ञानविग्रहः ॥ ९ ॥ ज्ञानिन् मयं  
मवेत्कस्मात्प्राप्ते मृत्युमहोत्सवे । स्वरूपस्थः पुरं याति देहो देहा-  
न्तरस्थितिम् ॥१०॥ सुदृढं प्राप्यते यस्माद् दृश्यते पूर्वसत्तमैः ।  
भुज्यते स्वर्गं सौरुपं मृत्युमीतिः कृतः सताम् ॥११॥ आगमाद्-  
दुःखसंतप्तः प्रक्षिप्तो देहपञ्जरे । नात्मा विद्युत्पतेऽन्वेन मृत्यु-  
भूमिपतिं विना ॥१२॥ सर्वदुःखप्रदं पिण्डं दूरीकृत्यात्मदर्शिभिः ।  
मृत्युमित्रप्रसादेन प्राप्यते सुखसम्पदा ॥ १३ ॥ मृत्युकल्पद्रु मे

प्राप्ते येनात्मार्थो न साधितः । निमग्नेो जन्मजन्माले स पश्चात्किं  
 करिष्यति ॥ १४ ॥ जीर्णं देहादिकं सर्वं नूतन जायते यतः । स  
 मृत्युः किं न मोदाय सतां सातोत्थितिर्यथा ॥ १५ ॥ सुखं दुःखं  
 सदा वेत्ति देहस्थरश्च स्वयं व्रजेत् । मृत्युमीतिस्तदा कस्य जायते  
 परमार्थतः ॥ १६ ॥ संसारासक्तचित्तानां मृत्युभीत्यै भवेन्नृणाम् ।  
 मोदायते पुनः सोऽपि ज्ञानवैराग्यवासिनाम् ॥ १७ ॥ पुराधीशो  
 यदा याति सुप्तस्य बुधुत्सया । तदासौ वार्यते केन प्रपञ्चैः  
 पाञ्चभौतिकैः ॥ १८ ॥ मृत्युकाले सतां दुःखं यद्भवेद्द्वयात्रि-  
 सम्भवम् । देहमोहविनाशाय मन्ये शिवसुखाय च ॥ १९ ॥  
 ज्ञानिनोऽमृतसंगाय मृत्युस्तापकरोऽपि सन् । आमकुम्भस्य लोके  
 ऽस्मिन् भवेत्पाकविधिर्यथा ॥ २० ॥ यत्फलं प्राप्यते सद्भिर्ब्र-  
 तायासषिडम्बनात् । तत्फलं सुखसाध्यं स्यान्मृत्युकाले समाधिना  
 ॥२१॥ अनार्तः शांतिमान्मर्त्यो न तिर्यग् नापि नारकः । धर्मध्यानी  
 पुरो मर्त्योऽनशनी त्वमरेश्वरः ॥२२॥ तप्तस्य तपसरश्चापि पालि-  
 तस्य व्रतस्य च । पठितस्य श्रुतस्यापि फलं मृत्युः समाधिना ॥२३॥  
 अतिपरिचितेष्ववज्ञानवे भवेत्प्रीतिरिति हि जनवादः । चिरतर-  
 शरीरनाशे नवतरलामे च किं भीरुः ॥ २४ ॥ स्वर्गादित्य पवित्र-  
 निर्मलकुले संस्मर्यमाणा जनैः । दत्त्वा भक्तिविधायिनां बहुविधं  
 वाञ्छानुरूपं धनम् ॥ श्रुत्वा भोगमहर्निशं परकृतं स्थित्वा क्षणं  
 मयदले पात्रावेशविष्वर्षनामिदं मूर्तिं सन्तो लभन्ते स्वतः ॥२५॥

## २८ प्रश्नोत्तररत्नमालिका

प्रणिपत्य वर्द्धमानं प्रश्नोत्तररत्नमालिकां वक्ष्ये । नागनराम-  
 रबन्धं देवं देवाधिपं वीरम् ॥१॥ कः खलु नालंक्रियते दृष्टा-  
 दृष्टार्थसाधनपटीयान् । कण्ठस्थितया विमलप्रश्नोत्तररत्नमालि-  
 कया ॥२॥ भगवन् किमुपादेयं ? गुरुवचनं हेयमपि च किमकार्यम् ।  
 को गुरुरधिगततत्त्वः सच्च हिताभ्युद्यतः सततम् ॥३॥ त्वरितं किं  
 कर्तव्यम् विदुषा संसारसंततिच्छेदः । किं मोक्षतरोर्वीजं सम्यग्ज्ञानं  
 क्रियासहितम् ॥ ४ ॥ किं पथ्यदनं धर्मः कः शुचिरिह यस्य  
 मानसं शुद्धम् । कः पण्डितो विवेकी किं विषमवधीरिता गुरवः  
 ॥५॥ किं संसारे सारं बहुशोऽपि विचिन्त्यमानमिदमेव । मनु-  
 जेषु दृष्टतत्त्वं स्वपरहितायोद्यतं जन्म ॥६॥ मदिरेव मोहजनकः  
 कः स्नेहः के च दस्यवो विषयाः । का भववल्ली तृष्णा को वैरी  
 नवनुद्योगः ॥७॥ कस्माद्भयमिह मरणादन्धादपि को विशि-  
 प्यते रागी । कः शूरो यो ललनालोचनवाहीर्न च व्यथितः ॥८  
 पातुं कर्णाञ्जलिभिः किममृतमिव बुष्यते सदुपदेशः । किं गुरु-  
 ताया मूलं यदेतदप्रार्थनं नाम ॥९॥ किं गहनं स्त्रीचरितं कश्च-  
 तुरो यो न खण्डितस्तेन । किं दारिद्र्यमसंतोष एव किं लाघवं  
 याञ्चा ॥१०॥ किं जीवितमनवर्थं किं जाड्यं पाटवेऽप्यनभ्यासः  
 को जागर्ति विवेकी का निद्रा मूढता ज्ञानीः ॥११॥ नलिनीदलगत-  
 जललवतर्गलं किं यौवनं धनमघाणुः । के शशधरकरनिकरानुका-  
 रिणः सज्जना एव ॥१२॥ को नरकः परवशता किं सौख्यं सर्व-

संगविरतिर्या । किं सत्यं भूतद्विनं किं प्रेयः प्राणिनामसवः ॥१३  
 किं दानमनाकाक्षं किं मित्रं यन्निवर्तयति यापात् । कोऽलंकारः  
 शीलं किं वाचां मण्डनं सत्यम् ॥१४॥ किमनर्थफलं मानसम-  
 संगतं का सुखावहा मैत्री । सर्वव्यसनविनाशे को दक्षः सर्वथा  
 त्यागः ॥१५॥ कोऽन्धो योऽकार्यरतः को बधिरः यः शृणोति न  
 हितानि । को मूको यः काले प्रियाणि वक्तुं न जानाति ॥१६॥  
 किं मरणं मूर्खत्वं किं चानर्घ्यं यदवसरे दत्तम् । आमरखात्किं  
 शन्यं प्रच्छन्नं यत्कृतमकार्यम् ॥१७॥ कुत्र विधेयो यत्नो विद्या-  
 भ्यासे सदैवधेदाने । अवधीरणा क्व कार्या खलपरदोषित्परधनेषु  
 ॥१८॥ काहर्निशमनुचिन्त्या संसारासारता न च प्रमदा । का  
 प्रेयसी विधेया करुणा दाक्षिण्यमपि मैत्री ॥१९॥ कण्ठगतैरप्य-  
 सुभिः कस्यात्मा नो समर्प्यते जातु । मूर्खस्य विषादस्य च  
 गर्वस्य तथा क्रुतघ्नस्य ॥२०॥ कः पूज्यः सद्बुद्धः कमधनमाच-  
 क्षते चलितबुद्धम् । केन जितं जगदेतत् सत्यतितिक्षावता पुंसा  
 ॥२१॥ कस्मै नमः सुरैरपि सुतरां क्रियते दयाप्रधानाय । कस्मा-  
 दुद्विजितव्यं संसारारण्यतः सुधिया ॥२२॥ कस्य वशे प्राणि-  
 ण्यसत्यप्रियभाविषो विनीतस्य । क्व स्थातव्यं न्याये पथिः  
 दृष्टादृष्टलाभाय ॥२३॥ विद्युद्विलसितचपलं किं दुर्जनसंघतं  
 युवतयश्च । कुलभौलनिष्प्रकम्पाः के कलिकालेऽपि सत्पुरुषाः ॥२४॥  
 किमशौच्यं कार्पण्यं सति विमर्शे किं प्रशस्यमौदार्यं । तनुतर-  
 विचस्य तथा प्रभविष्णोर्यात्सहिष्णुत्वम् ॥२५॥ चिन्तामश्चिरिव  
 दुर्लभमिदं किं ननु कथयामि चतुर्भद्रम् । किं तद्ददन्ति भूयो

विधूततमसो विशेषेण ॥२६॥ दानं प्रियवाक्सहितं ज्ञानमगर्वं  
 क्षमान्वितं शौर्यम् । त्यागसहितं च विश्वं दुर्लभमेतच्छतुर्भद्रम्  
 ॥२७॥ इति कण्ठगता विमला प्रश्नोत्तररत्नमालिका येषां । ते  
 मुक्ताभरणा अपि विमान्ति विद्वत्समाजेषु ॥२८॥ विवेकास्यक्त-  
 राज्ञेन राज्ञेयं रत्नमालिका । श्रिताऽमोघवर्षेण सुधियां सद-  
 लंकृतिः ॥२९॥



अध्यात्मयोगिपूज्यश्रीमनोहरवर्णिप्रणीता सहजानन्द गीता

## २९ 'सहजानन्दगीता'

रागाभावः स्वयं स्वाप्तावाप्तस्वो हि स्वभाववत् ।  
 स्वे स्वं परं नमस्कृत्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१॥  
 यादृक् सिद्धात्मनो रूपं तादृग्रूपं निजात्मनः ।  
 भ्रान्त्या क्लिष्टस्तु लोकेऽद्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२॥  
 विश्वतो भिन्न एकोऽपि कर्ता योगोपयोगयोः ।  
 रागद्वेषविघाताऽऽसम् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३॥  
 न करोमि न चाक्षर्यम्, न करिष्यामि किञ्च ।  
 विकल्पेनैव व्रस्तोऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४॥  
 स्वरागवेदनाविद्वद्द्वेषेष्टे स्वस्थैव शान्तये ।  
 नोपकुर्वे च नो शान्तिः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५॥  
 याति नेतो न वायाति जातुचित्किञ्चिदन्वयतः ।  
 खिन्नो हीनाधिकमन्यः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥६॥



स्वातन्त्र्यं वस्तुनो रूपं तत्र कः किं करिष्यति ?  
 हानिर्मे हि विकल्पेषु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥७॥  
 ज्ञाता दृष्टादमेकोऽस्मि निर्विकारो निरञ्जनः ।  
 नित्यः सत्यः समाधिस्थः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥८॥  
 अमरोऽहमजन्माहं निःशरीरो निरामयः ।  
 निर्ममो नैर्जगत्योऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥९॥  
 नोपद्रवो न मे द्वन्द्वो निर्विकल्पोऽपरिग्रहः ।  
 दृश्यः कैवल्यदृष्ट्याऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१०॥  
 निर्वाणश्चेतनावंशो निर्गृहश्चेतनागृहः ।  
 चेतनान्यन्न मे किञ्चित्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥११॥  
 निर्मित्त्रश्चेतनामित्रा निर्गुरुश्चेतनागुरुः ।  
 चेतनान्यन्न मे किञ्चित् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१२॥  
 निर्दिचश्चेतनाविचो निष्कलश्चेतनाकलः ।  
 चेतनान्यन्न मे किञ्चित् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१३॥  
 निष्कीर्तिश्चेतनाकीर्तिर्निष्कृतिश्चेतनाकृतिः ।  
 चेतनान्यन्न मे किञ्चित् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१४॥  
 जीविताशा प्रतिष्ठाशा विषयाशा जनैषणा ।  
 आभिर्मुग्धो विनष्टोऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१५॥

१—किसी किसी श्लोकमें तीसरे चरणके बाद अतः, च, साम्प्रतं आदि शब्दों का अथायोग्य अर्थवाहार करना चाहिये अथवा तीसरे चरण के बाद अथ गतमतीतोते विनाम श्लेकर बीया चरण पठना चाहिये।

भवेऽप्यस्मिन् मुहुर्नाना दुःखं प्रापं क्व रचकः ?

को भूतः कस्य भूतोहं ? स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १६ ॥

दुस्त्याज्या चेद्रतिस्त्यक्ता मृतत्यक्तकुटुम्बिनाम् ।

स्वातन्त्र्यं स्यानि किं स्वस्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१७॥

ज्ञात्वा रागकलं दुःखं जीवानां भ्रमतामिह

रागं मुञ्चानि नो मुक्त्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१८॥

द्रष्टारं स्वयमात्मानं पश्य पश्य न चेतारम् ।

तिष्ठानि निर्विशेषं चेत् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१९॥

अङ्गारादिना दष्टः कर्त्ता भोक्ता भवेन्न मे ।

ममत्वाहंत्वभावेऽपि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२०॥

वाञ्छन् गृह्यन् त्यजन् हर्षन् शोचन् कृष्यन्न वर्तते ।

यत्रास्ते तन्स्वसाभ्राज्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२१॥

यदाऽङ्गता तदासीन्मे प्रीतिभोगे स्वविभ्रमात् ।

दीनवज्जोपि धावानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ २२॥

ज्ञातृत्वं मयि सर्वेषु स्वायत्तं साम्यसंयुतम् ।

कस्य कः ? ज्ञातृतां दृष्ट्वा, स्यां स्वस्मैस्वे सुखी स्वयम् ॥२३॥

यत्रैव भासते विश्वं सोहं विश्वं न साकृतिः ।

ज्ञाता दृष्टा स्वतन्त्रोऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२४॥

स्वभिन्ने न द्वितं किञ्चिदद्वैतोऽहं हिते क्षमः ।

द्वैताश्रिता मृषा बुद्धिः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२५॥

सहजानन्दभावः क्व क्व मे रागादिवैरिणः ?

सहजानन्दसम्पन्नः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२६॥

प्रयत्नो वाञ्छया तस्माद्वातो यन्त्रं प्रवर्तते ।  
 स्वे तान्यारोप्य किं दुःखी ? स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२७॥  
 पञ्जीर्णद्विष्यथान्धे न तथा स्वस्यैव नो तनोः ।  
 दर्शनं मात्रमस्म्यस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ २८ ॥  
 यस्मिन् ज्ञानमये यत्ने मत्तपापाखवत्क्रमात् ।  
 विकल्पो नापि तत्रान्ते स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२९॥  
 आत्मजागरणं यत्र चामावे लोकजागृतिः ।  
 अहं स ज्ञानमात्रोऽस्मि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३०॥  
 अहं स्वं जन्ममृत्यादि सुखं दुःखं नयाम्यहम् ।  
 मुक्तौ नेता गुरुस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३१॥  
 देहे बुद्ध्या वपुः स्वस्य बुद्ध्या स्वः प्राप्स्यते मया ।  
 ज्ञानमात्रमतिर्मेऽस्तु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३२ ॥  
 महान् स्वभ्रान्तिजः क्लेशो भ्रान्तिनाशेन नक्ष्यति ।  
 यथात्म्यं अद्वैतस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३३ ॥  
 देहे स्वबोधता दुःखं सुखं स्वे स्वस्य चेतनम् ।  
 सुखं स्वायत्तमेवातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३४॥  
 तिर्यङ्नारकदेवानां देहे तिष्ठन् पृथक् तथा ।  
 नृदेहेऽपि नरो नाहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३५ ॥  
 अन्योऽन्यत्वेन दुःखं स्वः स्वत्वेन सुखपूरितः ।  
 यतै स्वदृष्टितः स्वार्थे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३६ ॥  
 आत्मज्ञानमप्यहं मे तदन्वयान्तु मा गतिः ।  
 नश्यत्वन्तर्जगच्चादः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३७॥

यत्र चित्तस्य न शोभः स्वे वैकान्ते वसाग्ग्रहम् ।  
 जनव्यूहे हितं किं मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३८॥  
 हितैषी हितयन्ताऽस्मि हितज्ञाऽस्मादर्ह गुरुः ।  
 अस्पैव साक्षितायां शं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३९॥  
 ज्ञानं स्वमेव जानाति तदा स्वस्वामिता कुतः ?  
 अहमर्द्धतबुद्धिः सन् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४० ॥  
 ज्ञप्तिमात्रदशायां न दुःखं स्यात्कर्मनिर्जरा ।  
 सैषोऽहं ज्ञप्तिमात्रोऽस्तः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४१॥  
 यदुपासै तदाप्तिः स्वादतःशुद्धात्मतां मजै ।  
 शुद्धाप्तिः शान्तिसम्पत्तिः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४२॥  
 संयम्याद्याखि मुक्त्वा च कल्पनां मोहसंभ्रमवाम् ।  
 अन्तरात्मस्थितः दान्तः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४३॥  
 भावनाप्रभवः क्लेशो भावनातः शिबं सुखम् ।  
 भावयस्तः शिबं स्व शं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४४॥  
 सारे देहिषु सर्वेषु व्यक्ताव्यक्ते बुधाज्ञयोः ।  
 ज्ञानमात्रे चिरं तिष्ठन् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४५॥  
 सद्दृष्टज्ञानचारित्रैकत्वं मुक्तिरदः सुखम् ।  
 तच्च ज्ञानमर्यं तस्मात्स्यां स्व स्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४६॥  
 तत्त्वतो ज्ञानमत्रोऽहं क्व विकल्पावकाशता ?  
 ततोऽहं निर्विकल्प सन् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४७॥  
 स्वैकत्वस्य रुचिस्तस्माद् भव्यता निरचयेन मे ।  
 अम्बभावे कथं वृत्तः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४८॥

अद्वैतानुभवः सिद्धिर्द्रैतबुद्धिरसिद्धता ।  
 सिद्धेरन्यश्च पन्था न स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४६॥  
 स्वैकत्वं मंगलं लोके उत्तमं शरणं महत् ।  
 रक्षादुर्गं तदेवास्ति स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४७॥  
 स्वैकत्वमौषधं सर्वकलेशनाशनदक्षकम् ।  
 चिन्ता-खिस्तदेवाभिन्नु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४८॥  
 ज्ञायकत्वे विकारः क्व रागादेः सन्निधावपि ।  
 सोऽहं ज्ञायकमात्रोऽस्मि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४९॥  
 दुःखी किं ? विवशः किं ? मेऽत्रैव न्यायो विधिर्जगत् ।  
 सुखागागोऽप्ययं तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५० ॥  
 ज्ञानपिण्डोऽन्यभिन्नोऽहं निन्कारी स्वभावतः ।  
 स्वतन्त्रः सहजानन्दः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५१ ॥  
 निजचेष्टाफलं ह्यन्ये दृष्टिः संसार उच्यते ।  
 विज्ञाय तत्त्वतस्तत्त्वं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५२॥  
 अनन्तज्ञानसौख्यादि गुणपिण्डोऽपि तृष्णया ।  
 भ्रमाखि दीनवत्कल्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५३॥  
 ज्योतिर्मयो महानात्मा वञ्चितोऽवविरहम् ।  
 सम्बन्धमात्ररम्यंस्तु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५४॥  
 पूर्वाहणज्ञानसत्सौख्यी सिद्धात्मा देशतोऽप्यहम् ।  
 पूर्वाहणं भवितुं शक्यः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५५॥  
 निद्रा-याज्ञानजान्धं स्वं दृष्ट्वा घ्यानाग्निना विधिम् ।  
 हानि निष्कलङ्कः सन्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५६॥

रामादि पीडयेचावन्नाविष्टो ज्ञानसागरे ।

अतो ज्ञानेऽवगाह्याहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥६०॥

स्वभावः सिद्धनैते तु पर्यायाः कर्मविक्रमाः ।

ततः स्वविक्रम कुर्वां स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥६१॥

समाप्तोऽयम् प्रथमोऽध्यायः ।

यः संयोगजया दृष्ट्या भाति संयोगजः किल ।

तौ नाहं मे न तौ हित्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१॥

नाहमन्यत्र नान्यस्य न नष्टो न बहिर्गतः ।

किन्तु ज्ञायकभावोऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२॥

विषवद्विषयांस्त्यक्त्वा पृथक्कुत्य वपुर्धिषा ।

स्वात्मनामेव पश्यानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३॥

न मे बर्णा न मे जातिर्न मे देशो न विग्रहः ।

नैवामहं त्वहं त्वेकः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४॥

कल्पना यत्र भासन्ते सोऽहं नास्थिरकल्पनाः

श्रद्धामृतं पिबानीदं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५॥

भिन्नदर्शी भवेदिभन्नः संकरैषी च संकरः ।

तत्पतः सर्वतः प्रत्यक् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥६॥

न मे लोको न चाज्ञातोऽनष्टो नष्टे विकल्पिते ।

तदित्यं ज्ञानमात्रोऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ७ ॥

देहे स्थित्वापि न स्पृष्टो नानाकारो निराकृति ।

ज्ञानन् सर्वं न सर्वोऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥८॥

विभक्तैकत्वबोधस्य न स्वप्नः पुण्यपापयोः ।  
 सैव वस्तुत्वितिर्मेऽस्तु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥६॥  
 नानामतानि तत्क्षेपु विवादे न प्रयोजनम् ।  
 म्रुक्त्वाऽन्यत् त्वं तु पश्येयं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१०॥  
 हर्षादिवासनाजन्यमौपाधिकविनश्वरम् ।  
 तद्भिन्नं प्रपश्येयं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥११॥  
 वासनान्ते न संसारः संसारत्याग एष हि ।  
 स्वदृष्टया वासनान्तोऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१२॥  
 कामे बोधरिपावधेऽनर्थे तन्मूलधर्मके ।  
 त्वक्त्वाद्दरं स्वमर्चेयं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१३॥  
 सुखारिदुर्गतिर्देिन्यं पापं तद्धेतुकं ततः ।  
 दूरं वसानि पापेभ्यः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१४॥  
 कार्यहेतुर्न चान्यन्मे भाति विश्वं स्वसत्तया ।  
 ज्ञानं सुखं परस्मान्न स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१५॥  
 जीवो दृश्यो न यो दृश्योऽजीवो वा कोऽपि मे न हि ।  
 कस्मै सीदानि नश्यानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१६॥  
 परः कोऽपि हितो मे नो यो हितोऽहं न मूर्तिकः ।  
 चिन्तने कस्य नश्यानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१७॥  
 यावत्प्रवर्तनं लोके तपोषामङ्गताफलम् ।  
 निवृत्तिर्ज्ञानसाम्राज्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१८॥  
 कर्मकथादेकन्याः स्पुर्देहादिष्वनुबन्धिनः ।  
 पूर्यते तैर्न कश्चिन् मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१९॥

इच्छा बन्धो न मे हानिर्ज्ञानमात्रस्य दर्शिनः ।  
 पुर्यते ज्ञानमात्रेण स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२०॥  
 नाना चेष्टै न मे लाभश्चेन्न चेष्टै न मे क्षतिः ।  
 ज्ञानमात्रैव चेष्टा मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२१॥  
 तत्त्वज्ञो जायते मूको लुब्धैस्त्यक्तमिदं क्षलात् ।  
 शान्तिस्तु तत्त्वतस्तत्त्वे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२२॥  
 तत्त्वज्ञ आलसो भूतो लुब्धैस्त्यक्तमिदं क्षलात् ।  
 नैष्कर्म्य एव शान्तिस्तु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२३॥  
 मनो मे न स्वभावोऽहं मनः कार्यं न तत्फलम् ।  
 औपाधिकमसत्त्वेऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२४॥  
 यत्रैव माति रागादि सोऽहं रागादिनैव हि ।  
 रागादौ निर्ममस्तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२५॥  
 अन्यथानुपपत्तेः स्याद्रागादेः कर्म कर्तृ हि ।  
 तत्कर्म व्याहतिर्ज्ञप्तौ स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२६॥  
 जागृतिः शयनं पानमत्तिवर्गदर्शनं श्रुतिः ।  
 ज्ञप्तिक्रियस्य किं कृत्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२७॥  
 सङ्कल्पेऽज्ञानि संसारो ज्ञाने नश्यति कल्पितः ।  
 निर्विकल्पे रतो भूत्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२८॥  
 परायत्ताः परार्थाः स्वायत्तं ज्ञानस्य वेदनम् ।  
 पराप्राप्ये न धावानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२९॥  
 राज्ये क्लेशः क्षयं मत्नो मिषावृत्तौ तु तत्त्वतः  
 तत्त्वं हि नोमयत्रास्ति स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३०॥



परस्थितेः परं स्थानं पराभावो हि स्वास्थितेः ।  
 तच्चतु नोमयत्रास्ति स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३१॥  
 जनौघे बाहुमनःकर्म चैकाग्रच्यवसरो बने ।  
 तत्त्वं तु नोमयत्रास्तिः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३२॥  
 ज्ञानदृष्टौ क्व मोक्षाध्वा क्वार्थः काम क्व धर्मकः ।  
 सहजानन्ददृष्टिः सन् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३३॥  
 किं कृत्वा क्व रमै चित्तमस्थिरं चाहितं जगत्  
 ज्ञानमात्रे रतो भूत्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३४॥  
 कर्तृत्वं न स्वभावो मे क्रिया ष्टा उपाधितः ।  
 वातवन्धुर्धर्षस्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३५॥  
 वृत्तिदृष्टी तपो ध्यर्थं निवृत्तौ न क्षतिः कुत ।  
 क्षतिरेव निवृत्तिश्च स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३६॥  
 प्ररे दृष्टे न पृष्टे स्व पृष्टे स्व न विकल्पना ।  
 अविकल्पेन सन्तापः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३७ ॥  
 मयि सौख्यं मया मे मत् ज्ञप्तिमिन्नं न साधनम् ।  
 आशुहृत्मानि बधं वृत्तौ स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३८ ॥  
 नाहं देहो न जातिर्मे न स्थानं न च रक्षकः ।  
 गुप्तं ज्ञानं प्रपश्यामि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३९॥  
 क्वान्योऽहं क्व च चिन्ता क्व क्वैक प्रभस्यं क्व शुभाशुभम् ।  
 इमे स्वस्माच्च्युतेस्तर्का स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४०॥  
 को दूरे कश्च सामीप्ये को बाह्ये को मयि स्थितः ।  
 ज्ञानमात्रमहं यस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४१ ॥

सञ्चितं कर्म चेदस्तु तेन स्पृष्टोऽपि नोद्धहम् ।  
 अद्वैतोऽहमयं तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४२॥  
 ग्रामे बने निवासो मे विकल्पोऽनात्मदर्शिनः ।  
 स्वे ज्ञाने ज्ञस्य वासोऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४३॥  
 यातायाताणुपुञ्जेऽयं देहोऽहं तु स्थिर परः ।  
 मे प्रवेशो न कस्मिश्चित् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४४॥  
 व्यवहारे परावस्था निश्चये ज्ञानमात्रता ।  
 ज्ञानमात्रे परा शान्तिः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४५॥  
 रागादिवर्जितः प्रत्यग्ज्ञाते प्राप्स्यामि शं शिवम् ।  
 विकल्पो विघ्नकृद्यात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४६॥  
 देशो देहश्च भिन्नात्मा विकारस्तस्ययोगतः ।  
 सर्वे मिन्नाः स्वतस्तमात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४७॥  
 नाकारो न विकल्पो न द्वैविध्यं न विपत्तयः ।  
 स्वःस्व एव शिवस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४८॥  
 कृष्टे प्राणानुपेचन्ते ज्ञानं रक्षन्ति योगिनः ।  
 ज्ञानं ज्ञाय प्रियं तंस्वे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४९॥  
 ज्ञानमस्तीति कर्तृत्वं मोक्षतृत्वं च ततोऽन्यके ।  
 त्रिकालेऽपि न तत्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५०॥  
 दृश्यं न दर्शकस्तत्त्वमुमे संयोगजे दशे ।  
 किन्तु ज्ञायकभावोऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५१॥  
 यदा देहोऽपि नैवाहं नृश्र्यादेस्तर्हि का कथा ।  
 ज्ञानमैवास्ति देहो मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५२॥

यत्र बासो रतिस्तत्र तत्रैकत्वं ततो निजे ।

उषित्वा ज्ञानदृष्टिर्बाहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५३॥

यज्ज्ञानेन जगन्मन्ये तत्र मे किं तदादृतिः ।

स्वादृतिः सा स्वदृतिर्हि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५४॥

कः कस्य कीदृशः क्वेति देहमप्यत्रिशेषयन् ।

सहजानन्दसम्पन्नः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५५ ॥

समाप्तोऽयं द्वितीयोऽध्यायः

नखरे चेन्द्रियाधीने सुखे सारो न विद्यते ।

का रतिस्तत्र विज्ञस्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १ ॥

यतोऽन्ते क्लेशदाः सर्गे सम्बन्धा, विपदास्पदाः ।

ततः संगं परित्यज्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ २ ॥

यौवनं जरया व्याप्तं शरीरं व्याधिर्मंदिरम् ।

समृत्यु जन्म कः सारः ? स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३ ॥

येषां योगो वियोगो हि नियमेन भविष्यति ।

तेभ्यो नु किं युधाऽखिन्दम् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४॥

केनपुञ्जेऽपि सारः स्यान्न तथापि शरीरके ।

विरज्य देहतस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५॥

विषं पीत्वाऽपि जीवेच्चेन्न भुक्त्वा विषयं सुखी ।

विरज्य भोगतस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥६॥

देही करिचन्न यो मृत्युं न प्राप्तस्तर्हि को मम ।

त्राटा स्वदृष्टिरेवातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥७॥

बालबृद्धयुवग्रसे यमस्य समता भवेत् ।  
 साम्यपुञ्जस्य मे किं न स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥८॥  
 रागद्वेषी हि संसारः संसारो दुःखपूर्णिमः ।  
 संसारतो विरज्यातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥९॥  
 संसारजो हि पर्यायः संसार उपचारतः ।  
 त्वक्त्वा तन्मूलसंसारं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१०॥  
 यन्न रागवशः प्राप योनिदेशकूलं न तत् ।  
 मुक्त्वा रागमतः स्वस्थः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥११॥  
 कीटो भूयो नृपः कीटो जायते विषमे भवे ।  
 स्वास्थ्यमेव स्थिरं स्थानं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१२॥  
 प्राप्ता ये दुर्गतिः क्रोशाः भ्रान्त्या भ्रान्त्वा मयैव ते ।  
 मुक्त्वा भ्रान्तिमतः कालात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१३॥  
 आपत्पूर्णे भवे ह्येको भ्राम्यामि तत्त्वतो निजे ।  
 उपयोगे ततः स्वस्थः, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१४॥  
 देहान्तरः ब्रजाम्येको देहमेकस्त्यजाम्यहम् ।  
 परदृष्टिं हि तत्स्वस्थः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१५॥  
 वियोगयोगदुःखादौ किञ्चिन्मित्रं न तत्त्वतः ।  
 स्वादिष्टः स्वस्य मित्रं स्वः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥१६॥  
 यदन्येषां कृते चेष्टं, एको ह्युभौ हि तत्फलम् ।  
 स्वस्मै तत्रापि चेष्टासीत् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१७॥  
 कास्यां सर्वदुःखानां स्वज्ञानामाव एव हि ।  
 येनैको बञ्चितस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१८॥

असंकुतेर्हि वस्तुनां स्वम्य स्वेनैव बद्धता ।  
 स्वे ह्यखे बद्धता नातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१६॥  
 बन्धैकत्वेऽपि देहादेर्मिन्न एव स्वभावतः ।  
 परमिन्नात्मवृत्तिः शं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२०॥  
 देहादेव यदा मिन्नः कथं बन्धुभिरेकता ।  
 विमलस्य सदा सौख्यं स्या स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२१॥  
 देहोऽणुव्रजजः स्वात्मातीन्द्रियो ज्ञानविग्रहः ।  
 स्वात्मन्येव स्थिरस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२२॥  
 यैरर्थैर्मम सम्बन्धस्ते स्वरूपात्पृथक् सदा ।  
 तत्स्वदृष्ट्याऽसुखं तेन स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२३॥  
 पलास्थिरुधिरे देहे स्वबुद्ध या क्लेशमाग्भवेत् ।  
 तत्र रागे न को लाभः ? स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२४॥  
 देहो न शुच्यते सिन्धोर्वाग्निभिः शुच्यते त्वयम् ।  
 स्वात्मा स्वात्मधिया तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२५॥  
 दुःखाश्रयो हि देहोऽयं देहतो व्यसनानि वै ।  
 विरज्य देहतस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२६॥  
 निन्दे देहेऽप्युषित्वात्मसिद्धिः शक्या वसन्नपि ।  
 विरज्य देहतस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२७॥  
 मनोवाक्कायिकी चेष्टोच्छ्वातो दुःखं ततस्ततः ।  
 इत्येच्छां प्रहृष्या मिन्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२८॥  
 शुभः कषायमान्द्येनाऽशुभस्तीव्रकषायतः ।  
 अकषायेन शं नित्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२९॥

मनोवाक्कायवृत्तीनां निवृत्तेरुपदेशनम् ।  
 स्वस्थित्यै स्वस्थितौ शांतिः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥३०॥  
 शुद्धोपदे।गलक्ष्येनात्मा स्वयं रक्षते तदा ।  
 स्वस्मिन् स्वमेव ज्ञेयस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३१॥  
 नश्येते निर्ममत्वेन रागद्वेषौ ततः सुखम् ।  
 निर्ममत्वं विचिन्त्वातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३२॥  
 भुक्त्स्वेदं कल्पनाजालं मनोऽदो निश्चलं भवेत् ।  
 न क्लेशो निर्विकल्पः सन् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३३॥  
 ज्ञानं ज्ञानं न कोपादि तत्तज्ज्ञानं न सुस्फुटम् ।  
 स्वस्मिन् ज्ञानं स्थिरीभूय स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३४॥  
 तप इच्छानिरोधोऽतः कर्त्तुं निर्जीर्यते ततः ।  
 तपस्तप्त्वा च शुद्धः सन् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३५॥  
 अग्नि नाकाञ्चनं यद्वत् तप्य मानस्तपोऽग्निना ।  
 शुद्धोभूय लभै स्वास्थ्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३६॥  
 विरागपरिहात्या मे जायते कर्मणां क्षयः ।  
 रागभिन्नमतो विन्दन् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३७॥  
 बाह्यं तपोऽपि नाशयाशया यस्मात्तपस्यपि ।  
 आशानाशाय सेवै स्वं, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३८॥  
 धर्म उदारकस्त्राता पावको बान्धवो गुरुः ।  
 सोऽहं रागादिकं मुक्त्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३९॥  
 धर्मो वेशे न यात्रायां बन्दने न च मन्दिरे ।  
 धर्मे श्रुतिमये तिष्ठन्, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४०॥

मोहसोमौ न यत्र स्तः स धर्मो बीतरागता ।

सा मे परिश्रुतिस्तस्मात्, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४१॥

लोके रिक्तं न तत्स्थानमनन्ता जन्ममृत्यवः ।

नाभूवन् यत्र किं रज्यै स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४२॥

लोकं कृतवाञ्छ कोपीमं हरिष्वत्यपि नो तथा ।

अमरोऽहमजन्माहं, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४३॥

लोके द्रव्याण्यनेकानि वर्तन्ते किन्तु वै निजे ।

अहन्तां किं पुनः कुर्यां स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४४॥

अधिपूर्णत्वसज्जातिष्यादिदुर्लभवस्तुनि ।

प्राप्ते लामो यदि स्वस्थः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४५॥

आत्मथायात्म्यविज्ञानं दुर्लभादपि दुर्लभम् ।

लभै रमै च तत्रैव स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४६॥

यस्य ज्ञायकभावस्य स्वस्थ चित्तिं विना जगत् ।

ज्ञातं व्यर्थं हि तं ज्ञात्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४७॥

समाप्तोऽयं तृतीयोऽध्यायः ।

ज्ञानं सुखं न चान्यन्न ज्ञोहं ज्ञानमहं सुखम् ।

सर्वाशामहितां त्यक्त्वा, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१॥

ज्ञायकोऽजोऽमरोऽहं कौ जीविताशां करोमि किम् ।

वातन्त्र्यं तत्परित्यागे स्वां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥२॥

अदृश्यो ज्ञायकोऽहं कां कीर्तिमिच्छामि काचिह ।

त्वादान्त्र्यं तत्परित्यागे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३॥

ज्ञायकस्याप्यवद्वस्थ विषयाशैव बन्धनम् ।  
 स्वातन्त्र्यां तत्परित्यागे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४ ॥  
 आशात्यागो हि मे बन्धुमित्रं त्राता गुरुः पिता ।  
 तत्रैव शरणं सत्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५ ॥  
 नैराश्वेषि हि नैराशयं तस्य का तुलना भुवि ।  
 अतो नैराश्यमालम्ब्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ६ ॥  
 वीततृष्णस्य केऽप्यर्थाः क्लेशदाः सुखदा नहि ।  
 ततोऽर्थाः स्युनं वाताशः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ७ ॥  
 सतृष्णस्य सदाकुल्यमर्थाः सन्तु न सन्तु वा ।  
 धीसारं न मवेदिच्छा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ८ ॥  
 पूर्णं कस्यापि कृत्यं किं ? चिकीर्ष्येऽद्वन्द्वता कदा ।  
 न वैश्यक्त्वा हि सर्वाशा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ९ ॥  
 प्रवृत्तानेव नानात्वं निवृत्तानेकरूपता ।  
 शान्तिमार्गे निवृत्तिर्हि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १० ॥  
 लोभादघस्ततः क्लेशोऽतस्तृष्णालुः सदाकुलः ।  
 वीततृष्णः स्वभावो मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ११ ॥  
 तृष्णा बन्धश्च संसारोऽताप्यर्थं भुक्तिः स्वतन्त्रता ।  
 वीततृष्णः स्वभावो मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १२ ॥  
 ताप्यर्थेऽताप्यर्थेऽपि बन्धूनां विभोगो नार्थकृत् ततः ।  
 वीततृष्णः स्वभावो मे स्यां स्वस्मै सुखी स्वयम् ॥ १३ ॥  
 पूर्यते पुण्यकामार्थैर्न किञ्चिन्मे ततो हि तान् ।  
 त्यक्त्वात्मन्येव तिष्ठेयमस्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १४ ॥



भूतो मवेषु सम्पन्नो न तुष्टोऽभूदनर्थता ।  
 मायाविनीं क्रिमाशासे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१५॥  
 पुण्यपुण्यफलं हरयमहरया चिच्चमत्कृति ।  
 वीततृष्णस्य स्वस्थस्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१६॥  
 वर्तते मेघ किं सम्पज्जन्मजन्मार्जितं यशः ।  
 दूरमास्तां विपन्मूलं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १७ ॥  
 स्वात्मचिन्तापि चिन्तेव चिन्तास्वानन्दवाधिनी ।  
 सर्वचिन्तां विमुच्यतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१८॥  
 विचं विषयदस्यु क्व मित्रं शत्रुः क्व पाटवम् ।  
 तन्मूलाशा न मे यस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१९॥  
 निर्वाणं भोगवैरस्य बन्धे भोगेषु गृह्यता ।  
 स्वायत्तमेव निर्वाणं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२०॥  
 भोगमोक्षैषिणोऽनेके वाञ्छाहीनो हि दुर्लभः ।  
 स एव सहजानन्दः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२१॥  
 ज्ञाने रतस्य धर्मार्थकाममोक्षे जनौ भृतौ ॥  
 हेयादेयेऽपि चिन्ता न स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२२॥  
 लामेऽपि भूतिकीर्तीनां तस्यागेन विना न शम् ।  
 प्रत्याख्यानमये ज्ञाने स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२३॥  
 मुमुक्षुर्यो बुमुक्षुश्चालम्बतां हि शिवाशिवम् ।  
 इच्छाहीनः स्वधिभ्रातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२४॥  
 देहादिकं पृथक्कृत्य ज्ञाने तिष्ठानि केवले ।  
 स्यानि भोगयशोवाञ्छां स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२५॥

इदं ज्ञानं न मे ज्ञानं दर्शनं च न दर्शनम् ।  
 चिन्तयालं न मेऽन्नर्वाक् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२६॥  
 यशस्वी वैभवी वा स्यां शान्तिस्तत्रापि नो यतः ।  
 इन्धनं तदशान्त्यग्रैः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ २७ ॥  
 आर्तकारणमाशैव कमाशासेऽत्र को मम ।  
 दूरमास्तां न मेऽर्थो हि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ २८ ॥  
 बहिर्बहिर्भ्रमो व्यर्थो ज्ञानतत्त्वमिदं स्फुटम् ।  
 इतोऽन्यन्मे सहायं न स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ २९ ॥  
 मूढोऽन्यममृतं मत्त्वा भ्रमेन्मे त्विह निश्चयः ।  
 क्वे कत्वममृत तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३० ॥  
 रागद्वेषरित्यागे कर्म मे किं करिष्यति ।  
 त्यागो हि केवलं ज्ञानं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३१॥  
 रागो यागेऽपि हेयश्चेदसम्बन्धे पुनर्न किम् ।  
 अयागे रागता चेद्धा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३२ ॥  
 श्रद्धात्मानं विहायान्यचिन्ता पापोदयस्ततः ।  
 अन्यचिन्तां पृथक्कृत्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३३ ॥  
 परोशाजीवितो मूढः स्वातन्त्र्यं मन्यते बुधः ।  
 शं स्वातन्त्र्यं विना नातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३४॥  
 देवभक्तावपि ध्यानं भावः स्वस्यैव वर्तते ।  
 स्वः स्वस्मै शरणां तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३५॥  
 किं स्वानुकूलनेऽन्येषां किं स्वस्याम्पानुकूलने ।  
 शं स्वानुकूलने स्वस्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३६॥

न हानिः सहजे ज्ञाने किन्त्विहानीं न सा दशा ।  
 अतश्चिन्तानिरोधेन स्वां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३७ ॥  
 सुखं हि सर्वसन्यासस्तु कुर्वे सर्वसंग्रहम् ।  
 दुःखोपायेन किं शं स्यात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३८॥  
 परसंगरतो बद्धः स्वस्थो मुक्तोऽग्रहो ग्रहः ।  
 तस्याग्राह्यस्य ग्राह्यस्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३९ ॥  
 सुखायान्यत्प्रतीक्षैव सुखइत्या मता यतः ।  
 सुखेनास्मि स्वयं पूर्णः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४०॥  
 उत्तमस्त्याग आशा न प्रतोक्षा यत्र वर्तते ।  
 परादृष्टर्था न सा स्वास्थ्ये स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४१॥  
 भोगे योगे न शान्तिस्त्विच्छाहीनो वर्तते हि यः ।  
 शान्त्याधारः स एवातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४२॥  
 कृपां कर्तुं न शक्योऽन्यो मय्यहमेव तत्त्वमः ।  
 ततोऽन्याशां परित्यज्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४३॥  
 सुखं नैराश्यमेवास्ति दुःखमाशैव केवलम् ।  
 स्वदृष्टेः काचिदाशा न स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४४॥  
 इन्द्रोऽप्याशान्वितो दुःखी गताशोऽसंगकः सुखी ।  
 स्वास्थ्यमेव गताशत्वं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४५ ॥  
 आशा गतास्तदा सिद्धिर्नाभिलष्यं यतस्तदा ।  
 स्ववृत्तिस्तत्पदं तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४६॥  
 यावन्मूर्खास्ति कस्मिश्चित्तावभिः शन्लता न हि ।  
 स्ववृत्तौ नास्ति मूर्खातः तस्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४७॥

देहिनां देहमोगानां दुःखं संयोगतस्ततः ।

संयोगं कस्य वाञ्छास्न स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४८॥

समाप्तोऽयं चतुर्थोऽध्यायः

यदाप्नोति सुखं स्वस्थो न तन्लेशं प्रतिष्ठितः ।

स्वास्थ्ये शं न हि रागेऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१॥

चिन्तेच्छया ततः बलेशो गताशः सौख्यसागरः ।

गतार्थं मंगलं स्वास्थ्यं भ्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ २ ॥

आकिंचिन्यमवं स्वास्थ्यं स्वास्थ्यं सुखस्वरूपकम् ।

नकिंचिन्मे न किंचिन्मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३ ॥

यदा यत्कतुर्मायात्वायातु चेन्न मया कृतम् ।

ज्ञप्तिमात्रविधौ शक्तः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४ ॥

शास्त्राण्यधीत्य स्वास्थ्यं न सर्वविस्मरणाद्विना ।

तस्माद्विकल्पनास्त्यक्त्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५ ॥

ज्ञात्वात्सः श्रमं व्यर्थं नेत्रोन्मेषनिमेषयोः ।

स्वस्थ्यः सुखी स एवातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ६ ॥

दिशेदीशोऽपि साक्षाच्चेद् विना स्वास्थ्यान्न मंगलम् ।

सुखदुःखे स्वयं दायी स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ७ ॥

निश्चं सुखाशमूलं न, शं ज्ञानत्यागयोः फलम् ।

स्वस्मै स्वे च तुष्यानि, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥८॥

अद्वैते स्वेऽस्तु दृष्टिर्मा, द्वैतेऽद्वैते न सम्भ्रमः ।

विपज्जन्म न मृत्युर्वा, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥९॥

यत्र कुत्राप्यवस्थायामस्मि तत्रैव यत्नतः ।  
 कृत्वा सत्याग्रह शान्तः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१०॥  
 कश्चित् कालश्च देशः स्यात् पूर्तिर्मे तद्गुणैर्न हि ।  
 शुद्धबुद्धिर्यतः स्वास्थ्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ११ ॥  
 मे चैतन्यस्य शास्त्रं क्व ? चर्चा ज्ञानं क्व कल्पना ?  
 स्वतो बहिर्न धावानि स्वां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १२ ॥  
 मे चैतन्यस्य भोगः क्व ? तृप्तिस्तृष्णा क्व बन्धनम् ?  
 क्वाज्ञानं क्व विपत्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१३॥  
 दुःखे ज्ञानच्युतिर्न स्यात् कायक्लेशोऽपि स्वस्थितिः ।  
 उद्देश्यं ज्ञानिनस्तस्मात्, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१४॥  
 न स्वज्ञप्तिं विना ध्यानं यतः स्वोपासनामयम् ।  
 शुद्धात्मोपासनं तस्मात्, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१५॥  
 ज्ञप्तिस्त्वस्त्वह सर्वत्र, स्वबुद्धेः स्वस्यदर्शनम् ।  
 स्वाचरणं ततोऽस्त्वरमात्, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥१६॥  
 सुप्रमत्तदशा लोके, भ्रमो हि स्वच्युती दशाः ।  
 सर्वाभ्रमास्ततः स्वस्थः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१७॥  
 यततामव्रती बृते, न तुष्येत्तु ये व्रती व्रते ।  
 ज्ञानस्थिर्व्रतार्थोऽतः, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१८॥  
 पुष्यपापे व्रताव्रचौर्नस्तद्द्वयशून्यता ।  
 ज्ञानमात्रस्वबुद्धिः स, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१९॥  
 शृण्वतो वदतोऽप्यात्मचर्चा न ज्ञानमावनाम् ।  
 विना मुक्तिस्ततोऽत्रैव, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२०॥

मनोवाक्कायवृत्तीनां, ग्रहणो संसार एव हि ।  
 रमै ततः पृथग्ज्ञाने, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२१॥  
 वदानीच्छानि पृच्छान्यात्मानं ज्ञानमयं शिवम् ।  
 अत्रैव विहराण्येष, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२२॥  
 भिन्नं स्वस्य धिया स्वस्माच्च्युतो बध्नाम्यतः परा—  
 च्युतः शाम्यानि बुद्धया स्वे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी० ॥२३॥  
 स्वस्थं स्वं पश्यतो मे न, रागद्वेषौ कुतोऽसुखम् ?  
 शंकाशब्दं कुतस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२४॥  
 भ्रान्त्या लुब्धं मनस्तस्माद्व्यग्रता नान्यतथा भवेत् ।  
 स्वं पश्यतो न मे हानिः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२५॥  
 तत्किं यन्मयि मुञ्चानि ? यन्न तत्किं नयानि वै ?  
 जानन्नैवं हि तिष्ठानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२६॥  
 जीवाजीवपृथग्ज्ञानान्निवृत्तिर्जायते परात् ।  
 तत स्यान्ध्यं ततः शान्तिः स्या स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥२७॥  
 स्वस्थस्य सहजानन्दोऽक्षोभतामाः परच्युतेः ।  
 एकत्वनियतिः स्वास्थ्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२८॥  
 संविरयभ्यासशिखातः स्वान्यभिन्मोक्षसौख्यवित् ।  
 स्वस्थितिर्मोक्षसौख्यं हि, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२९॥  
 स्वालक्ष्योऽन्योपकारी चेत्किलष्टः परकृतावपि ।  
 स्वलक्ष्योस्मान्न मुच्येत स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३०॥  
 निर्द्वन्द्वेऽजेमरे शान्तेऽर्हते ज्ञानिनि निर्ममे ।  
 स्वस्मिन् स्थित्वा स्थिरो भूत्वा, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी० ॥३१॥

ह्रस्वभावे मयि ज्ञाते सर्वं ज्ञातं स्वभावतः ॥  
 तत्रा स्थितौ सुखं तस्मात्, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३२॥  
 कल्पनालोलकण्ठीस्थक्तः शान्तः स्वयं सुधी ।  
 तत्राभयः परो नास्ति स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३३ ॥  
 इदं सुखमिदं दुःखमज्ञस्यैव हि कल्पना ।  
 स्वच्युतौ सर्वकः क्लेशः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३४॥  
 नृत्वं कुलं मतिः सत्त्वं, सत्संगो देशना व्रतम् ।  
 स्वस्थित्यर्थाय सन्त्यस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥३६॥  
 रागिणो जन्मने मृत्युर्वीतरागस्य मुक्तये ।  
 स्वस्थितेर्वीतरागत्वं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३६ ॥  
 वर्षाद्यं नूतनं लोके, तत्त्वतस्तत्त्वबोधनम् ।  
 स्ववृत्तियत्र तत्तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३७ ॥  
 स्वयं यत्कतुमायाति तत्कृतौ न विपत्स्वचित् ।  
 अन्यथा क्लेशतातस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३८॥  
 संयमेन नरो धीरो गम्भीरः शन्यनिर्गतः ।  
 संयमः स्वस्थितिः तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३९॥  
 यावद्दूरं कषायेभ्यस्तावान् धीरः सुखीबुधः ।  
 अकषायः स्वेप्रचयातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४०॥  
 रागद्वेषोदयस्तस्मिन् नवहं का कृपा कृता ।  
 स्ववृत्तिः स्वदया तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४१॥  
 बंधिका किन्न चेष्टेयम् चेष्टेयं किन्न बंधिका ।  
 स्थित्वा ह्यचेष्टिते भावे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४२॥

दुःखं द्वन्द्वश्च संतापो विपत्तश्चान्ययोगतः ।  
 एकेऽनिष्टं न किञ्चिद्धि स्यात् स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४३ ॥  
 कषायविषवत्यागो, स्वास्थ्यमन्तर्बहिर्द्वयम् ।  
 तस्यागो ज्ञानमात्रं हि स्वां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४४ ॥  
 परैः शरणाभ्यान्वत्वं नाशोऽशरणाभ्यान्वता ।  
 सुखं स्वः शरणां तस्मात् स्यां स्वस्मै सुखी स्वयम् ॥ ४५ ॥  
 दुःखमूलं स्वधीरन्धे न परेऽर्थाः परे परे ।  
 स्वच्युतिः सा च स्वस्थोऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व ॥ ४६ ॥  
 स्वलक्ष्यता महादुर्गस्तत्रत्यस्य न बाधनम् ।  
 तत्र गुप्तो न जेषोऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४७ ॥  
 स्वलक्ष्यता सुधासिन्धुस्तत्रत्यस्य न तापनम् ।  
 तत्रानिष्टः सदा शान्तिः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४८ ॥  
 पापोदये न हानिर्मे हानिः पापमये निजे ।  
 पापं परच्युतिस्तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४९ ॥  
 पुण्योदये न लाभो मे लाभः पुण्यमये निजे ।  
 पुण्यं स्ववृत्तिता तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५० ॥  
 प्राङ्मया चेष्टितं यत्तत्स्वकषायविचेष्टितम् ।  
 अकषायः स्ववृत्तिः शं स्या स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५१ ॥  
 मनोवाक्यायिकी यावच्चेष्टे तस्ततोऽसुखम् ।  
 सुखं स्वास्थ्यमनिच्छो तत् स्या स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५२ ॥  
 भ्रमे नष्टे यथा स्वप्ने तथा भ्रान्तिर्हि सर्वदा ।  
 निष्क्रियोऽहं बतः स्वस्थः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५३ ॥

समाप्तोऽर्थं पञ्चमोऽध्यायः ।



सर्वेऽर्थाः सर्वथा मिन्नाः कृत्यं किं तत्र वर्तते ?  
 ते सर्वे तेषु तिष्ठन्तु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १ ॥  
 चेष्टन्ते स्वकपायेण प्रणिनो मे न वाञ्छकाः ।  
 केषु मोदै च शोचै किं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ २ ॥  
 ये दृश्यास्ते न जानन्ति जानन्तो निर्विकल्पकाः ।  
 कंब्रुवाणि क्व तुष्याणि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ३ ॥  
 स्तोतारः क्षणिकाः सर्वे स्तुत्यं मन्यः क्षणक्षयो ।  
 तुष्यः कस्तोषकः कश्च स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४ ॥  
 स्तुत्यं घृतं क्षणस्थायि क्षणिका वाङ्मयी स्तुतिः ।  
 न मे घृतं न मे वाणी स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ५ ॥  
 लोकोऽसंख्योऽमितः कालोऽनन्ताः जीवाः कदा कदा ।  
 स्तोष्यन्ते क्व क्व के केऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ६ ॥  
 स्वैकत्वेऽनुगताः स्वेभ्यः स्वस्य कुवन्ति ते क्रियाम् ।  
 भ्रान्त्यो विमुद्गा किं स्यानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ७ ॥  
 पुण्यं पापं मुखं दुःखं चेष्टा वाणी च कल्पना ।  
 विडम्बनाः परात्सन्ति स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ८ ॥  
 सम्पदा विपदा भूयाज्ज्ञानमात्रोऽस्मि ते न मे ।  
 मुतस्तुष्याणि रुष्याणि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ९ ॥  
 अयशो वा यशो भूयाज्ज्ञानमात्रोऽस्मि ते न मे  
 कुतस्तुष्याणि रुष्याणि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ १० ॥  
 जीवनं मरणं भूयाज्ज्ञानमात्रोऽस्मि ते न मे ।  
 कुतस्तुष्याणि रुष्याणि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ११ ॥

मायास्था मयि हृष्टाः स्युः, कृष्टा मे ज्ञस्य का क्षतिः ?  
 कुतस्तुभ्याखि कृष्याखि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१२॥  
 ज्ञानी ज्ञानरतोऽज्ञानो मायास्थः परलोचकः ।  
 मायास्यवाचि को रोषा, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१३॥  
 ये म्नुवन्ति च निन्दन्ति, ते दृश्यं न तु मामिमम् ।  
 प्रशंसा निन्दा न गुप्तस्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥१४॥  
 प्रशंसया न मे लोभो निन्दया का च मे क्षतिः ?  
 स्वं हन्म्येव विकल्पेन स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥ १५ ॥  
 ज्ञानमात्रमहं तस्माज्ज्ञानादन्यत्करोमि किम् ?  
 किं त्यजानोह गृह्ययाम् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥१६॥  
 संसारवाहिमूढेनामाभ्यमभ्रान्तवेदिनः ।  
 अलिप्तो हि सदा शान्तः स्यां स्वस्मै सुखी स्व० ॥१७॥  
 रागद्वेषौ हि संसारो भ्रमाचत्रापयोजनात् ।  
 शुद्धं शांतं विजानीयां स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥ १८ ॥  
 अन्तर्बाह्यं जगत्सर्वं नश्वरं तत्र किं हितम् ?  
 कर्त्तव्यमितरद्वयर्थं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१९॥  
 स्वातन्त्र्यं हं परास्तेषां तंत्रो योगणियोगोः ।  
 कथं हृष्याखि खिन्दानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० २० ॥  
 ज्ञानेन ज्ञानमात्रोऽहं मनाभ्यन्यगुणानपि ।  
 साक्षात्कर्तुः कुतः क्षोभः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२१॥  
 ज्ञानस्य चेष्टयाऽचेष्टोऽचेष्टीभूतः क्वो स्वयम् ।  
 अचेष्टनं द्वयो सारः स्यां स्वस्मै सुखी स्वयम् । २२ ॥

ध्यानेस्तुतौ च यात्रायां मनोवाक्काय खेदनम् ।

निर्विकल्पे कृतः खेदः ? स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२३॥

विरक्तो विषयद्वेषी रक्तोऽस्ति विषयस्पृहः ।

साक्षी रक्तो विरक्तो न स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२४॥

सुखं दुःखं स्तुतिं निन्दां कस्य कत्तुं हि कः क्षमः ?

किं भ्रमं स्वच्युतेः कुर्याम् ? स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२५॥

सुखे दुःखे च को मेदो ? द्वयौराकुन्यवेदनम् ।

शान्ते ज्ञे स्वे गतो भूत्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२६॥

नृस्यो रूपे कुरूपे वा को मेदोऽशुचिता समा ।

आकुन्यकारणं तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२७॥

सम्पद्विपत्सु को मेदः ? क्षोभः जाड्यकरीषु वै ।

शांते ज्ञे स्वे रतो भूत्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२८॥

सेवासेवे समे चेष्टे कषायस्याघपृणययोः ।

फले ज्ञप्तिस्तु तत्त्वं मे स्वां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२९॥

सर्वेऽनन्तगुणोपेता न स्तुतौ पूर्णवर्णनम् ।

किं कं कथं स्तुत्यां तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३०॥

प्रयोजनं न मे मत्तोऽन्यत्तत्सिद्धिर्न बान्यतः ।

किं कं कथं स्तुत्यां तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३१॥

तेषामौपाधिका भावा आसन् ये सन्ति निर्मलाः ।

किं कं कथं च निन्दानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३२॥

नैर्मन्यं नान्यनिन्दातो, मालिन्यं शून्यमेव च ।

किं कं कथं च निन्दानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३३॥

प्रशसकेन दत्तं किं ? क्षोभं कृत्वा पलापितः ।  
 किं हितं तेन किं रोचै स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३४॥  
 निन्दकेन हृतं किं मे ? दोयमुक्त्वा स्थिरीकृतः ।  
 का वितस्तेन किं रोचै स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३५॥  
 ज्ञप्तिक्रियस्य मे वृत्तौ निवृत्तौ चाग्रहः कुतः ?  
 यत्कर्तुमपि चायातु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३६॥  
 मानापमानतां मोहे पर्यायस्य न चान्यथा ।  
 तद्विविक्तस्य न क्षोभः स्यां स्वस्मै स्वे सुखो स्वयम् ॥३७॥  
 परान् शिष्यै परैः शिष्ये मोहचेष्टैव नान्यतः ।  
 गुणोद्यन्धेऽपि कल्पोऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३८॥  
 स्वद्रव्यचेत्रभावानामाप्ती भवति शुद्धता ।  
 नान्यभावविकल्पोऽस्तु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३९॥  
 कर्म कर्महिताय स्याच्चेदहं स्वहितं य हि ।  
 हितं नैर्मन्यमावोऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४०॥  
 ज्ञानी शत्रुः कुतो मित्रमज्ञः कस्य सहद्रिपुः ।  
 स्वपरस्थः सुहृच्छत्रुः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४१॥  
 स्वेकत्वस्याप्त्युपायो मे साम्यं नान्यत्कदापि हि ।  
 साम्यघातः परे बुद्धेः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४२॥  
 साम्यं विशुद्धविज्ञाने साम्यं विवर्जितम् ।  
 साम्यं स्वास्व्यं सुखागारः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥४३॥

श्रुतीन्द्रैरपि पूज्यं तत्साम्यं सर्वोत्तमं पदम् ।  
 साम्यं स्वस्य स्वयं रूपं स्पर्षा स्वस्मै स्वे सुखा स्वयम् ॥४४॥  
 मानापमानयोः साम्यं कीर्त्यकीर्त्योः सुखासुखे ।  
 व्यग्रता पश्यतो न स्यात् स्पर्षा स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥४५॥  
 शसा निन्दा विपत्सम्यत्स्वाकुलतैव केवलम् ।  
 नैर्द्वन्द्वयं ज्ञानमात्रेऽस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४६॥  
 अन्यवृत्तेर्न मे बाधा, बाधा स्वस्य विकल्पतः ।  
 प्रज्ञयाऽनाश्रयीकृत्य स्पर्षा स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४७॥  
 स्वाख्येच्छांजाऽन्यनिन्दा स्यात्तस्माभिन्दो हि निन्दकः ।  
 म्वं दृष्ट्वाऽनिन्दकाऽनिन्द्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥४८॥  
 सर्वे समाः समे मैत्री मैत्र्या शान्तिर्मतेह च ।  
 सुखं साम्यं हि तत्स्वा मध्ये स्यांस्वस्मै स्वे सुखी० ॥४९॥  
 इष्टे न हर्षभावश्चेदनिष्टे स्यान्न खेदता ।  
 रुन्ध्वेष्टेच्छां स्वबोधेन स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५०॥  
 आत्मरूपेऽन्ययोगो न वियोगस्य च का कथा ?  
 कथं हृष्याणि खिन्दानि स्पर्षा स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५१॥  
 कल्पितेऽर्थेऽनुतर्केशं शमन्वर्थे च कल्पिते ।  
 स्वतस्त्रोऽर्थो हि सर्वोऽतः स्पर्षा स्वस्मै स्वे सुखी स्व० ॥५२॥  
 हृद्यसाम्यं रतीं मोहे तस्माज्ज्ञायद्गुरुपिथम् ।  
 जानन्मुक्त्वा रतिं मोहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५३॥  
 यस्मिन्साम्ये विनष्टाः स्युराशाः साम्यं सदास्तु तत् ।  
 साम्येन सहजानन्दः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५४॥

श्रद्धा वृत्तं श्रुतं ज्ञानं मर्त्यं साम्यं भवेद्यदि ।  
तदेव स्वसुखं स्वास्थ्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५५॥

समाप्तोऽयं षष्ठी अध्यायः

कौ दृश्यं नश्वरं सर्वं दुःखपूलं पृथक् हि तत् ।  
निन्द्यं हेयमदस्तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१॥  
न कोऽपि शरणं भूतो न च कश्चिद्दविष्यति ।  
शरणस्य भ्रमं हत्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२॥  
न भूतो न भविष्यामि कस्यचिच्छरणं कदा ।  
कर्तृत्वचारुणीं क्षिप्त्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३॥  
बन्धुमिश्रं सुतो दारा भृत्यः शिष्यः प्रशंसकः ।  
गम्यो येन हितं शक्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४॥  
मृत्यो सत्यां न यात्यन्ति केऽपि ये रागदर्शिनः  
केभ्यः कुर्यामसद्धानं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५॥  
यथात्रत्यस्य नार्थाः प्रागन्यत्रेमे न केऽपि मे ।  
क्व हितं क्व सुखं मृज्यां ? स्यां स्वस्मै सुखी स्वयम् ॥६॥  
आस्तां दूरे पुरे वासः संगो दूरे जनैषिणाम् ।  
दूरे प्रशंसकाः सन्तु स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥७॥  
सुखं सत्त्वं हितं तत्र तेभ्यः किञ्चिन्न वर्तते ।  
न च वत्स्यामि तत्राहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥८॥  
दुःखं सुखं विपत्सम्पत् कल्पनामात्रमेव तत् ।  
किं मिन्नं खेदं कल्पे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥९॥

पराधीनं सुखामात्रं परकीयां कृतिं मुखा ।  
 लब्धुं क्लेशरानि किं ? स्वस्थः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी० ॥१०॥  
 म्वच्युतेर्हेतवो भोगा अशान्तिर्भोगवेदनम् ।  
 चेष्टं किमेतदर्थं ज्ञः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥११॥  
 स्वयं मिन्ने च किं हेयं मिन्ने काऽऽदेयता मम ।  
 अतर्क्यो ज्ञानमात्रोऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१२॥  
 किञ्चिद्विद्विप्रनिष्टं न कल्पना क्लेशदा भ्रमे ।  
 नाहमज्ञानरूपोतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१३॥  
 इति त्रयोदशमाह्निकम् ।  
 भोगभ्रमेण दुखानि भ्रान्त्या भुक्त्वा इतं जगत् ।  
 आयापायेऽपि तापोऽतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१४॥  
 व्रतेऽप्यहंत्वमज्ञत्वं सयोगी ज्ञो न दुःखमाक् ।  
 प्रीतिर्मे नास्तु कस्मिंश्चित्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१५॥  
 कातरो लोकदृष्ट्यं स्मि स्यां लोका न सहाटिनः ।  
 मोहस्वप्नमिदं दृश्यं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१६॥  
 स्ववाक् न हितं किञ्चित् किं कल्पै शृण्वानि किं ?  
 जानानि किञ्च पश्यानि ? स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१७॥  
 देहोऽस्तु वा न को लाभः ? का हानिर्मे तु शान्तिदा ?  
 ज्ञानदृष्टिः सदा भूयात्, स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१८॥  
 न मे द्वन्द्वो न मे संगः सर्वकृत्यं हि मत्पृथक् ।  
 कस्मै स्यामाकुलोऽद्वैतः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥१९॥

सर्वसारमिदं कार्यं निवृत्तिः सर्वकार्यतः ।  
 ततो विस्मृत्य सर्वाणि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२०॥  
 पुण्यार्थभोगसम्बन्धाः सन्त्यनर्थपरम्पराः ।  
 एषु कृत्यं हितं किं मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२१॥  
 जीवनं मरणं किं को लोकः का चास्ति लीनता ?  
 मायारूपाणि सर्वाणि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२२॥  
 सर्वचिन्ताकथाचेष्टामिरल तासु नो हितम् ।  
 यतो निष्क्रियभावोऽहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२३॥  
 दैतन्ये मायि नो देहो न प्राणा इन्द्रियाणि वा ।  
 रागादिरतान् कथं यानि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२४॥  
 क्षेमं करोऽक्षभोगो न तत्राहः सन् कथं रमै ।  
 क्षेमं करः स्वयं स्वस्मै स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२५॥  
 दृश्यो रम्यो न विश्वास्यो ज्ञानमात्रमहं यतः ।  
 विश्वसानि रमै क्वाहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२६॥  
 त्यागादाने परे भिन्ने किमौषाधिक एव हि ।  
 हेयोऽनाश्रित्य तं तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२७॥  
 हरय जडमदृश्योऽन्यश्चेतनश्च तथा पृथक् ।  
 कस्मिन् रुष्याणि तुष्याणि स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२८॥  
 वृत्ते खगा इवापांति क्षणं यान्ति स्वकर्मतः ।  
 विश्वास्यं मे किमत्रातः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥२९॥  
 एकान्तेऽस्तु निवासो मे सर्वविस्मरणं भवेत् ।  
 संयोगेन न मे लाभः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३०॥



भोगाः भुक्ता भुङ्क्ष्वस्त्यक्तास्तानुच्छिष्टान् किमर्थये ।  
 ज्ञानमात्रं हि भुञ्जानः स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३१॥  
 भुक्त्वा त्यजानि भावोऽयं सन्वाजो निवृत्तिस्तदा ।  
 भावयेयं निवृत्त्याहं स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३२॥  
 निरायूरैवये हेतोः कालस्येच्छा हि तृष्णा ।  
 तृष्णा स्वनाशिनी भुक्त्वा स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३३॥  
 परान् पश्यामि व्यापन्नान् तथा पश्यानि स्वं यदि ।  
 दोषमुक्तः स्वलक्ष्यः सत् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३४॥  
 स्वोपादानेन जायन्तेऽर्था जायन्तां न वा ततः ।  
 द्वितं नैव निज दृष्ट्वा र्था स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३५॥  
 आसमस्मि भविष्यामि सुखे दुःखेऽहमेकः ।  
 परयोगे न लाभो मे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३६॥  
 खोदेन विषये वृत्तिवृत्तौ पश्चाच्च खोदता ।  
 भोगः खेदमयस्तस्मात् स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३७॥  
 शंसकाः मां न पश्यन्ति पश्यन्तो व्यक्त्यलक्षकाः ।  
 कौ का निष्ठा निजास्थास्था स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥३८॥  
 भिन्नपूतितनोरास्था स्वं किं लामयते ततः ।  
 कौ का निष्ठा निजास्थास्था स्यां स्वस्मै स्वे सुखी ॥३९॥  
 नामाचरैर्न सम्बन्धं ह्यात्मनः किं तदारूढया ।  
 कौ का निष्ठा निजास्थास्था स्यां स्वस्मै स्वे सुखी ॥४०॥  
 न किमेद्दशारूपोऽनाद्यनन्तस्तदा रुचिः ।  
 कास्तु मेलोकनिषेपे स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥४१॥

रागबह्वीन्धनं दृष्यं किं संचित्येन्धनं स्वयम् ।  
 शीतलोऽपि पतान्यग्नौ स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४२ ॥  
 मृत्यैके ह्युद्यताः मृत्युरायात्याकस्मिकं ततः ।  
 सन्दिग्धायुषि सद्दृष्ट्या स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४३ ॥  
 ज्ञातुं कथं श्रमं कुर्यां ज्ञेया भान्ति स्वयं ततः ।  
 सर्वश्रमं परित्यज्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४४ ॥  
 न भोगो भोक्तुमागति सन् बुद्धिश्चोऽघकारणम् ।  
 किं तं बुद्धिगतं कुर्यां स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४५ ॥  
 कल्पनया यथा प्राप्तोऽकल्प्यः सापि न मे यदा ।  
 कोऽन्यो भव्यः पुनस्तस्मात्स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥ ४६ ॥

समाप्तोऽयं सप्तमोऽध्यायः ।

आर्या

वौन्देलदुमदुमापुर्वासि श्रीमद्गुलाबचन्द्रस्य  
 श्रीतुलसायास्तनयेन श्रीमद्गणेशशिष्येण  
 सहजानन्देन मनोहरेण सद्द्विंशशततमे व्यब्दे  
 शुक्ले पौषे रचिता श्री सहजानन्दगोतेयम् ॥ युग्मम् ॥  
 स्वस्ति श्री श्रीमतोऽध्यात्मसुधासिन्धोर्महात्मनः ।  
 न्यायाचार्यस्य सार्वस्य विष्टयाख्यातवर्णिनः ॥१॥  
 श्रीगणेशप्रसादस्य प्रसादेनानुशिचितः ।  
 श्रद्धानतः समामारी दीक्षितो लोचनीकृतः ॥२॥  
 ज्ञातस्वः सहजानन्दः शिष्यो वर्षी मनोहरः ।  
 संनारच्छेदसन्द्रष्टा कृतज्ञोऽहं पदाबलिम् ॥३॥

शिवादीनागुरोर्बान्धुगुरोश्चर्याप्रवर्तिनः ।

श्रद्धेयपुण्यसेवायामर्पयामि महादरम् ॥४॥

अर्पणस्य प्रसादेन स्वस्मै स्वे स्वयं स्वतः ।

अर्पयित्वा स्थिरीकृत्य स्यां स्वस्मै स्वे सुखी स्वयम् ॥५॥

कुलकम् ॥

इति सहजानन्दगीता समाप्ता ।

— : ० : —

## ३० सिद्ध भक्तिः

सगंधरा छंदः ।

परापरसिद्धि परमेष्ठिनः सिद्धान्त्यादिना स्तौति—

सिद्धानुद्धृतकर्मप्रकृतिसद्गुदयान्साधितात्मस्वभावान्

वंदे सिद्धिप्रसिद्धि च तदनुपमगुणप्रग्रहाकृष्टितुष्टः ।

सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः प्रगुणगुणगणोच्छादिदोषापहारा-  
द्योग्योपादानयुक्त्या दृषद इह यथा हेमभावोपलब्धिः ॥१॥

नाभावः सिद्धिरिष्टा न निजगुणहतिस्तत्तपोभिर्न युक्ते-

रस्त्वात्मानादिबद्धः स्वकृतजफलभुङ्क्ते तत्त्वयान्मोक्षभागा ।

ज्ञाता द्रष्टा स्वदेहप्रमितिरूपसमाहारविस्तारधर्मा

ध्रोव्येत्पत्तिव्ययात्मा स्वगुणयुत इतो नान्यथा साध्यसिद्धिः ॥२॥

स त्वन्तर्बाह्यहेतुप्रभवविमलसदर्शनज्ञानचर्या—

संपद्वेतिप्रघातच्चतदुरिततया व्यञ्जिताचिन्त्यसारैः ।

कैवल्यज्ञानदृष्टिप्रवरसुखमहावीर्यसम्यक्त्वलब्धि—

ज्योतिर्बातायनादिस्थिरपरमगुणैरद्भुतैर्मासमानः ॥३॥

ज्ञानन्दश्चन्समस्ते सममनुपराते सम्प्रतृप्यन्वितन्वन् ।  
 धुन्वन्ध्वान्तं नितातं निचितमनुमं प्रीणयन्नीशभावम् ।  
 कुर्वन्पर्वत्रातामपरममिवन् ज्योतिरात्मानमात्मा  
 आत्मन्येवात्मनासौ क्षणमुपजनयन्सत्स्वयम्भूः प्रवृत्तः ॥ ४ ॥  
 द्विदन्शेषानशेषान्निगलवत्कलींस्तेरनंतस्वभावैः ।  
 सूक्ष्मत्वाप्रचात्रगाहागुरुलघुकुण्डलैः क्षायिकैः शोभमानः ।  
 अन्यैश्चान्यव्यपोहप्रवणविषयतम्प्राप्तिलब्धिप्रभावै—  
 रूर्ध्वं ब्रज्यास्वभावात्समयमुपगतो घाम्नि सन्तिष्ठतेऽग्र्ये ॥ ५ ॥  
 अन्याकाराप्तहेतुर्न च भवति परो येन तेनाल्पहीनः ।  
 प्रागात्मोपासादेह इतिकृतिरुचिराकार एव क्षमूर्तिः ।  
 क्षुत्तृष्णाग्वासकापजरमरणजरानिष्टयोगप्रमोह—  
 व्यापच्याद्युग्रदुःखप्रभवभवदतेः कोस्य सौख्यस्य माता ॥ ६ ॥

किंविशिष्टं तत्सौख्यमित्याह—

आत्मोपादानसिद्धं स्वयमतिशयधृतीतवाधं विशालं  
 वृद्धिन्दासव्यपेतं विषयविरहितं निष्प्रतिद्वन्द्वभावम् ।  
 अन्यद्रूपानपेक्षं निरूपमममितं शाश्वतं सर्वकालं ।  
 उत्कृष्टानंतसारं परमसुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ॥ ७ ॥  
 नार्थः क्षुत्तृष्टिन्नाशाद्विविधरसयुतैरन्नपानैरशुच्या—  
 नास्पृष्टैर्गन्धमान्यैर्न हि मृदुशयनैर्ग्लानिनिद्राद्यभावात् ।  
 आतंकार्तेरभावे तदुपशमनसद्गेषजानर्थतावद् ।  
 दीपानर्थक्यवद्वा व्यपगततिमिरे दृश्यमाने समस्ते ॥ ८ ॥  
 तादृक्सम्पत्समेता विविधनयतपः संयमज्ञानदृष्टि—

चर्यासिद्धाः समन्तात्प्र विततयशसो विश्वदेवाधिदेवाः ।  
 भूता भव्या भवंतः सकलजगति ये स्तूयमाना विशिष्टै—  
 स्तान्सर्वान्नौम्यनंतान्निजिगमिषुरं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ॥६॥

अंचलिका प्राकृतसिद्धभक्तिवत्

### ३१ प्राकृत-सिद्धभक्तिः ।

अट्टविहकम्ममुक्के अट्टगुणहट्टे अणोवमे सिद्धे ।  
 अट्टमपुढविशिबिट्टे शिट्टियकज्जे य वंदिमो शिष्वं ॥१॥  
 तित्थयरेदरसिद्धे जलधलआयासशिष्वुदे मिद्धे ।  
 अन्तयडेदरसिद्धे उक्कस्सजहण्णमज्झिमोगाहे ॥ २ ॥  
 उड्डमहतिरियलोए छव्विहकाले य शिष्वुदे सिद्धे ।  
 उवसग्गणिरुवसग्गे दीवोदहिशिष्वुदे य वंदामि ॥ ३ ॥  
 वच्छायडेय सिद्धे दुगतिगचदुणाणपंचचदुरज्जे ।  
 परिवडिदापरिवडिदे संजमसम्मत्ताणाणमादीहिं ॥ ४ ॥  
 साहरणासोहरणे सम्मुग्घादेदरे य शिष्व्वादे ।  
 ठिदपलियंक्कणिसण्णे विगयमले परमणाणगे वंदे ॥५॥  
 पुंवेदं वेदंता जे पुरिसा खवगसेडिमारूढा ।  
 सेसोदयेण वि तथा ज्झाणुवजुत्ता य ते दु सिज्झन्ति ॥ ६ ॥  
 पणेयसयंबुद्धा बोहियबुद्धा य होंति ते सिद्धा ।  
 पणेयं पणेयं समये समयं पणिवदामि सदा ॥ ७ ॥  
 पणखवदुअट्टवीसाचउत्तियखवरी य दोण्ण पंचेव ।  
 वावण्णहीण्णवियसयपयडिचिणासेण होंति ते सिद्धा ॥ ८ ॥

अइसयमन्वावाहं सोखमणांतं अखोवमं परमं ।  
 इंदियविसयतीदं अप्पत्तं अखवं च ते पत्ता ॥ ९ ॥  
 लोयग्गमत्थयत्थां चरमसरीरेण ते हु किंचूखा ।  
 गयसित्थमूसगग्गे जारिअयायार तारिसायारा ॥ १० ॥  
 जरमरणजम्मरहिया ते सिद्धा मम सुभत्तिजुत्तस्स ।  
 देतु बरणाणलाहं बुहयणपरिपत्थणं परमसुद्धं ॥ ११ ॥  
 किञ्चा काउत्सग्गं चउरट्टयदोसविरहियं सुपरिसुद्धं ।  
 अइभत्तिसंपउत्तो जो वंदइ लहु लहइ परमसुहं ॥ १२ ॥

इच्छामि भंते सिद्धभक्तिकाउस्काउसग्गो कओ तस्सालोचेउं,  
 सम्मणाणसम्मदंमणसम्मचारित्तजुत्ताणं, अट्टविहकम्मविप्पमुक्काणं  
 अट्टगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोयमत्थयम्मि पयट्टियाणं, तवसिद्धाणं  
 णयसिद्धाणंसंजमसिद्धाणं, अतीताणागदवट्टमाणकालरायसिद्धाणं  
 सन्वसिद्धाणं णिचकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि,  
 दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोलिलाहो, सुगइमणं समाहिमरणं,  
 जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

## लघुभक्तयः

### ३२ लघुसिद्धभक्तिः

( १ )

संसारचक्रगमनागतिविग्रमुक्ता—

भित्त्यं जरामरणजन्मविकारदीनान् ।

देवेन्द्रदानवगणैरमिषुजयमानान् ।

सिद्धांस्त्रिलोकमहितान् शरणं प्रपद्ये ॥१॥

असरीरा जीवघटा उवजुचा दंभणे य णाणे य ।

सायारमणायारा लक्खणमेयं तु सिद्धाणं । २ ।

मूलुचारपयडीणं वंधोदयसत्तकम्मउम्मुक्का ।

मंगलभूदा सिद्धा अट्टगुणातीदसंसारा ॥ ३ ॥

अट्टविहकम्मवियडा सीदीभूदा शेरंजणा शिच्चा ।

अट्टगुणा किदक्किच्चा लोयग्गणिवासिणो सिद्धा ॥ ४ ॥

सिद्धा णट्टट्टमला विसुद्धवुद्धीय लद्धसन्भावा ।

तिहुवणसिरसेहरया पसियंतु भडारया सच्चे ॥ ५ ॥

गमणःगमणविमुक्के विहट्टियकम्मट्टपयडिसंघाए ।

सासहसुहसंपणे ते सिद्धे वंदिमो शिच्चे ॥ ६ ॥

जय मंगलभूदाण विमलाणं णाणदसणमयाणं ।

तइलोयसेहराणं णमो सया सच्चसिद्धाणं ॥ ७ ॥

सम्मस णाण-दंसण-वीरिय-सुद्धं तहेव अवगहणं ।

अरुलहुअच्चावाहं अट्टगुणा होंति सिद्धाणं ॥ ८ ॥

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।

णाणमि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ॥ ९ ॥

(अञ्चलिका प्राकृतसिद्धभक्तिवत्)

## ३३ श्रुतभक्तिः

इदानां सिद्धांस्तुत्वा श्रुतं स्तुवन् स्तोष्ये इत्याद्याह ।  
 स्तोष्ये संज्ञानानि परोक्षप्रत्यक्षभेदभिन्नानि ।  
 लोकालोकषिलोकनलोलितसल्लोकलोचनाति सदा ॥ १ ॥  
 अभिमुखनियमितबोधनमामिनिशेषिकमनिद्रियेंद्रियजं ।  
 बह्वाद्यवग्रहादिककृतषट्त्रिंशत्त्रिंशतभेदम् ॥ २ ॥  
 विविधद्विबुद्धि कोष्ठस्फुञ्जीजपदानुसारिबुद्ध्यधिकं ।  
 संभिन्नश्रोतृतपा सार्धं श्रुतभाजनं वन्दे ॥ ३ ॥  
 श्रुतमपि जिनवरविहितं गणधररचितं द्व्यनेकभेदस्थम् ।  
 अङ्गांगवाह्यभावितमनंतविषयं नमस्यामि ॥ ४ ॥  
 पर्यायाक्षरपदसंघातप्रतिपत्तिकानुयोगविधीन् ।  
 प्राभृतकप्राभृतकं प्राभृतकं वस्तुपूर्वं च ॥ ५ ॥  
 तेषां समासतोऽपि च विंशतिभेदान्समश्नु । नं तत् ।  
 वन्दे द्वादशघोक्तं रंभीरवग्शास्त्रपद्धत्या ॥ ६ ॥  
 आचारं सूत्रकृतं स्थानं समवायनामधेयं च ।  
 व्याख्याप्रज्ञप्तिं च ज्ञातृकथोपासकाध्ययने ॥ ७ ॥  
 वदे तद्दशमनुत्तरोपपादिकदशं दशावस्थम् ।  
 प्रश्नव्याकरणं हि विपाकसूत्रं च विनमामि ॥ ८ ॥  
 परिकर्म च सूत्रं च स्तौमि प्रथमानुयोगपूर्वगते ।  
 सार्द्धं चूलिकयापि च पंचविधं दृष्टिवादं च ॥ ९ ॥  
 पूर्वगतं तु चतुर्दशघोदितसुत्पादपूर्वमाद्यमहम् ।  
 आश्रायणीयमीडे पुरुवीर्यानुप्रवादं च ॥ १० ॥



संततमहमभिवंदे तथास्तिनास्तिप्रवादपूर्वं च ।  
 ज्ञानप्रवादसस्यप्रवादमात्मप्रवादं च ॥११॥  
 कर्मप्रवादमीहेऽथ प्रत्याख्याननामधेयं च ।  
 दशमं विद्याधारं पृथुविद्यानुप्रवादं च ॥१२॥  
 कल्याणनामधेयं प्राणावायं क्रियाविशालं च ।  
 अथ लोकविंदुसारं वंदे लोकाग्रसारपदम् ॥१३॥  
 दशं च चतुर्दशं चाष्टावष्टादशं च द्वयोर्द्विषट्कं च ।  
 षोडशं च विंशतिं च त्रिंशतमपि षवदशं च तथा ॥१४॥  
 वस्तूनि दशं दशान्देवैः प्रनुपूर्वं भाषितानि पूर्वाणाम् ।  
 प्रतिवस्तु प्राभृतकानि त्रिंशतिं विंशतिं नौमि ॥ १५ ॥  
 पूर्वान्तं ह्यपरान्तं ध्रुवमध्रुवञ्चवनलब्धिनामानि ।  
 अध्रुवसंप्रणधिं चाप्यर्थं भौमावयाद्यं च ॥ १६ ॥  
 सवार्थकल्पनीयं ज्ञानमतीतं त्वनागतं कालं ।  
 सिद्धिमुपाध्यं च तथा चतुर्दशवस्तूनि द्वितीयस्य ॥१७॥  
 पचमवस्तुचतुर्थप्राभृतकस्यानुयोगनामानि ।  
 कृतिवेदने तथैव स्पर्शनकर्म प्रकृतिमेव ॥ १८ ॥  
 बधननिबंधनः क्रमानुपक्रममथाभ्युदयमोक्षौ ।  
 संक्रमलेख्ये च तथा लेश्यायाः कर्मपरिणामी ॥ १९ ॥  
 सातमसातं दीर्घं ह्रस्वं भवधारणीयसंज्ञं च ।  
 पुरुषुद्गलात्मनामं च निश्चलमनिश्चलमनिनीमि ॥ २० ॥  
 सनिकाचितमनिकाचितमथ कर्म स्थितिकृपश्चिमस्कंधौ ॥  
 अल्पबहुत्वं च यजे तद्द्वाराणां चतुर्विंशम् ॥२१॥

कोटीनां द्वादशशतमष्टापंचाशतं सहस्राख्यम् ।  
 लक्षत्र्यशीतिमेव च पंच च वंदे श्रुतपदानि ॥२२॥  
 षोडशशतं चतुस्त्रिंशत्कोटीनां त्र्यशीतिलक्षाणि ।  
 शतसंख्याष्टासप्ततिमष्टाशीतिं च पदवर्णान् ॥२३॥  
 सामयिकं चतुर्विंशतिस्तवं वंदना प्रतिक्रमणं ।  
 वैनयिकं कृतिकर्म च पृथुदशवैकालिकं च तथा ॥२४॥  
 वरमुचाराध्ययनमपि कल्पव्यवहारश्रेवमभिवंदे ।  
 कल्पाकल्पं स्तौमि महाकल्पं पुण्डरीकं च ॥ २५ ॥  
 परिपाठ्या प्रणिपतितोऽस्म्यहं महापुण्डरीकनामैव ।  
 निपुणान्यशीतिकं च प्रकीर्णकान्यंगवाह्यानि ॥ २६ ॥  
 पुद्गलमर्षादोक्तः प्रत्यक्ष सप्रभेदमवधिं च ।  
 देशावधिपरमावधिसर्वावधिभेदमभिवंदे ॥ २७ ॥  
 परमनसि स्थितमर्थं मनसा परिविद्य मंत्रिमहितगुणम् ।  
 ऋजुविपुलमतित्रिकल्पं स्तौमि मनःपर्ययज्ञानम् ॥ २८ ॥  
 चायिकमनन्तमेक त्रिकालसर्वार्थधुगपदवभासम् ।  
 सकलसुखधाम सततं वंदेऽहं केवलज्ञानम् ॥ २९ ॥  
 एवमभिष्टुवतो मे ज्ञानानि समस्तलोकचक्षुषि ।  
 लघु भवताज्ज्ञानदिग्ं ज्ञानरत्नं सौख्यमन्यवनम् ॥३०॥

अंभलिकां प्राणतमुत्तभक्तिवत्



## ३४ प्राकृत श्रुतभक्तिः ।

सिद्धवरसासखायं सिद्धायं कम्मचक्रमुक्काणं ।  
 काऊण्य णमुक्कारं भचीए णमामि अंगाइं ॥१॥  
 आयारं सुइयहं ठाणं समवाप विहायपण्णत्ती ।  
 णाणाधम्मकहाओ उवासयाणं च अज्झयथां ॥२॥  
 वंदे अंतयहदसं अणुत्तरदसं च पण्हवापरणं ।  
 एयारसमं च तहा विबायसुत्तं णमंसामि ॥ ३ ॥  
 परियम्मसुत्त पढमाणुओयपुण्वगयचूलिया चेव ।  
 पवरवरदिट्ठिवादं तं पंचविहं पण्णिवदामि ॥ ४ ॥  
 उप्पायपुण्वमग्गायणीय बीरियत्थिणत्थि य पवादं ।  
 णाणासच्चपवादं आदाकम्मप्पवादं च ॥ ५ ॥  
 पञ्चक्खाणं विज्जाणुवाय कन्लाण्णामवरपुण्वं ।  
 पाणावार्यं किरियाविसालमथलोयत्रिंदुसारसुदं ॥ ६ ॥  
 दस चउदस अट्ट द्वारस वारस तह य दोसु पुण्वेसु ।  
 सोलस वीसं तीसं दसमम्मिय पण्णरसवत्थू ॥ ७ ॥  
 एदेसिं पुण्वार्यं जावदियो वत्थुसंगहो भण्णियो ।  
 सेसाणं पुण्वार्यं दसदसवत्थू पण्णिवंदामि ॥ ८ ॥  
 एककेकम्मिय य वत्थू वीसं वीसं पाहुडा भण्णिया ।  
 विसमसमा विय वत्थू सव्वे पुण्ण पाहुडेहि समा ॥९॥  
 पुण्वार्यं वत्थुसयं पंचाणवदी हवन्ति वत्थूओ ।  
 पाहुड तिण्णिसहस्सा णवयसया चउदसाणं पि ॥ १० ॥

एवमए सुदपवरा भतीरायेण संभुया तच्चा ।

सिग्धं मे सुदलाई जिणवरवसहा पयच्छंतु ॥११॥

इच्छामि मंते ! सुदभक्तिकाउस्सगो कम्मो तस्स आलोचेउ  
अंगोवंगपइएणए पाहुडयपरियम्मसुत्तपढमा खिओगपुव्वगयचूलि-  
या चेव सुत्तथपयुइ धम्मरुहाइयं खिच्चहालं अंचेमि, पूजेमि,  
वंदामि णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुग-  
इगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

### ३५ लघुश्रुतभक्तिः

अर्हद्वत्रप्रसृतं गणधररचितं द्वादशानं विशालं

चित्रं बहुर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्घोरितं बुद्धिमद्विमः ।

मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं ज्ञेयभोवप्रदीपं

भक्त्या नित्यं प्रवन्दे श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम् ॥१॥

जिनेन्द्रवक्त्रप्रतिनिर्गतं वचो पतीन्द्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपैः ।

श्रुतं धृतं तैरच पुनः प्रकाशितं द्विषट्प्रकारं ऽखमाम्यहं श्रुतम् ॥२॥

कोटीशतं द्वादश चैव कोटयो लक्षाण्यशीतिस्त्वधिकानि चैव ।

पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतां पंचपदं नमामि ॥३॥

अरहन्तभासियत्थं गणधरदेवैर्हि गंधियं सम्म ।

पणमामि मच्चिजुत्तो सुदण्णाम्महोवर्हि सिरसा ॥४॥

( अंचलिका प्राकृत श्रुतभक्तिवत् )

## ३६ चारित्रभक्तिः

श्रुतं स्तुत्वा पंचधाचारं स्तुवन् येनेन्द्रानित्याद्याह-  
 येनेन्द्रान्भुवनत्रयस्य विलसत्केयूरहारांगदान्  
 भास्वन्मौलिमणिप्रभाप्रविसरोत्तुं गोत्तुं माङ्गान्नतान् ।  
 स्वेषां पादपयोरुहेषु मुनयश्चक्रुः प्रकामं सदा  
 वन्दे पंचतयं तमद्य निगदन्नाचारमभ्यर्चितम् ॥१॥  
 अर्थव्यंजनतटद्वयाविकलताकालोपधाप्रश्रयाः  
 स्वाचार्याद्यनपह्ववो बहुमतिश्चेत्यष्टधा व्याहृतम् ।  
 श्रीमज्जातिकुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽजसा  
 ज्ञानाचारमहं त्रिधा प्रणिपताम्युद्धृतये कर्मणाम् ॥२॥  
 शंकादृष्टिविमोहकांक्षणविधिव्यावृत्तिसन्नद्धतां  
 वात्सल्यं विचिकित्सनादुपरति धर्मोपबृंहक्रियाम् ।  
 शक्त्या शासनदीपनं हितपथाद्भ्रष्टस्य सस्थापनं  
 वन्दे दर्शनगोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात् ॥३॥  
 एकान्ते शयनोपवेशनकृतिः संतापनं तानवं ।  
 संरुपावृत्तिनिवन्धनामनशनं विश्वाणमर्द्धींदरम् ।  
 त्यागं चेन्द्रियदन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशं ।  
 षोढा बाह्यमहं सुवे शिवगतिप्राप्त्यभ्युपायं तपः ॥४॥  
 स्वाध्यायः शुभकर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थानं ।  
 ध्यानं व्यापृतिरामयाविनि गुरौ वृद्धे च बाले यतौ ।  
 कायोत्सर्जनसत्क्रिया विनय इत्येवं तपः षड्विधं ।  
 वदेऽभ्यंतरमन्तरगबलवद्विद्वेषिविष्वसनम् ॥ ५ ॥

सम्यग्ज्ञानविलोचनस्य दधतः श्रद्धानमर्हन्मते ।  
 वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः ।  
 या वृत्तिस्तरणाव नौगविवरा लघ्वो भवोदन्वतो ।  
 वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं वंदे सतामचितम् ॥ ६ ॥  
 तिस्रः सत्तमगुप्तयस्तनुमनोभाषानिमिशोदयाः ।  
 पचेर्षादिसमःश्रयाः समितयः पंचव्रतानीत्यपि ।  
 चारित्र्योपहितं त्रयोदशतर्या पूर्वं न दृष्टं परै—  
 राचारं परमेष्ठिनो जिनपतेर्वीरं नमामो षपम् ॥ ७ ॥  
 आचारं सहपंचमेदमुदितं तीर्थं परं मंगलम् ।  
 निग्राथानपि सच्चरित्रमहतो दंदे समग्रान्यतीन् ।  
 आत्माधीनसुखोदयामनुपमां लक्ष्मीमविध्वीसनी—  
 मिच्छन्केवलदर्शनावगमनप्राज्यप्रकाशोज्ज्वलाम् ॥ ८ ॥  
 अज्ञानाद्यदत्रीवृत्तं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा ।  
 तस्मिन्नजितमस्यति प्रतिनवं चैनो निराकुर्वति ।  
 वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसामृद्धिं नयत्यद्भुतं ।  
 तन्मिथ्या गुरु दुष्कृतं भवतु मे स्वं निंदतो निंदितम् ॥ ९ ॥  
 संसारव्यसनाहतिप्रचलिता नित्योदयप्रार्थिनः ।  
 प्रत्यामन्नविमुक्तयः सुमतयः शांतैनसः प्राणिनः ।  
 मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानमुच्चैस्तरा—  
 मारोहन्तु चरित्रमुत्तममिदं जैनेन्द्रभोजस्विनः ॥ १० ॥

## ३७ प्राकृत-चारित्रभक्तिः ।

तिलोए सव्वज्जीवाणं हिदं धम्मो रदेसिणं ।  
 वद्धमाणं महावीरं वंदित्ता सव्ववेदिणं ॥ १ ॥  
 घादिकम्मविघादत्थं घादिकम्मविण्णासिणा ।  
 मासियं भव्वज्जीवाणं चारिचं पंचमेददो ॥ २ ॥  
 सामाहयं तु चारिचं छेदोवद्धावणं तथा ।  
 तं परिहारविसुद्धिं च संजमं सुद्धमं पुणो ॥ ३ ॥  
 बहाखाद तु चारिचं तथाखादं तु तं पुणो ।  
 किञ्चाहं पचहाचारं मंगलं मलसोहयं ॥ ४ ॥  
 अहिसादीणि उत्ताणि महव्वयाणि पंच य ।  
 समिद्धीओ तदो पंच पंचदन्दियणिग्गहो ॥ ५ ॥  
 छन्मेपावास भूसिज्जा अएहाणचोमचेलदा ।  
 लोपचं ठिदिभुत्तिं च अदतप्रावणमेव य ॥ ६ ॥  
 एयमचेण संजुत्ता गिसिमूळगुत्था तथा ।  
 दसधम्मा तिगुत्तीओ सी नाणि सयलाणि च ॥ ७ ॥  
 सव्वेवि य परीसहा उत्तु चारगुत्था तथा ।  
 अएणे वि मासिया सन्ता तेसिं हाणि मए कया ॥ ८ ॥  
 जइ राएण दोसे ऽ मोहेणएणादरेण वा ।  
 वंदित्ता सध्वांसद्धाणं संजदा सा मुमुक्खुत्था ॥ ९ ॥  
 संजदेए, मए सम्मं सव्वसंजममाविणा ।  
 सव्वसंजममिद्धीओ लन्मदे मुत्तिजं सुहं ॥ १० ॥

इच्छामि भंते ! चारित्र्यमशिकाउत्सर्गो कश्चो तस्सालोचेडं,  
 सम्मण्णाणुज्जोयस्स, सम्मत्ताहिद्धियस्स, सव्वपहण्णास, शिब्बा-  
 णामग्गस्स कम्मणिज्जरफलस्स, खमाहारस्स, पंचमहव्वयसंपु-  
 ण्णास्स, तिगुत्तिगुत्तस्स पंचसमिदिजुत्तस्स, श्याणज्झाणासाहणास्स  
 समयाइवपवेसयस्स, सम्मचारित्तस्स, शिब्बकालं, अंचेमि, पूजेमि,  
 वंदामि णामंसामि, दुक्खक्खओ, कमक्खओ, वोहिलाहो, सुगइ-  
 गमणां, समाहिमरणां, जिणागुणासंपत्ति होउ मज्झं ।

## ३८ लघुचारित्र्यभक्तिः ।

( ३ )

व्रतसमुदयमूलः संयमस्कन्धबन्धो

यमनियमपयोभिर्बन्धितः शीलशास्त्रः ।

समितिकलिकभारो गुप्तिगुप्तप्रबालो

गुणकुसुमसुगन्धि सत्तपरिचित्रपत्रः ॥१॥

शिवसुखफलदायी यो दयाद्धाययोधः

शुभजनपथिकानां खेदनोदे समर्थः ।

दुरितरविजितापं प्रापयन्तभावं

स भयविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्र्यवृद्धः ॥२॥

चारित्र्यं सर्वजिनैरचरितं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः ।

प्रणमामि पंचमेदं पञ्चमचारित्र्यलाभाय ॥३॥

धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधार्थिचिन्वते

धर्मेणैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः ।



धर्माभास्त्यपरः सुहृद्भवभर्ता धर्मस्य मूलं दया  
 धर्मे चिन्तयन् दधे प्रतिदिनं हे धर्मा मां पालय ॥४॥  
 धम्मो मंगलमुक्किक्कट्टं अहिंसा संजमा तन्नो ।  
 देवावि तस्स पण्णमंते जस्स धम्मे सथा मणो ॥५॥  
 अञ्चलिका प्राकृतचारित्रभक्तिवत्

### ३६-प्राकृत-योगिभक्तिः ।

थोस्सामि गुणवराणां अपावाराणां गुणेहि तच्चेहि ।  
 अञ्जलिमउलियहत्थो अभिवंदतो सविभवेण ॥ १ ॥  
 सम्मं चेव य भावे मिच्छाभावे तहेव बोधव्वा ।  
 चइऊण भिच्छभावे सम्माम्मि उवट्ठिदे वंदे ॥ २ ॥  
 दोदोसविप्पमुक्के तिदडविरदे तिसल्लपरिसुद्धे ।  
 तिण्णिणायगारवरहिण्णि तियरणसुद्धे एमंसामि ॥ ३ ॥  
 चउविहकसायमहणे चउगइसंमारगमणामयभीए ।  
 पञ्चासवपडिविरदे पंचिंदियणिज्जिदे वंदे ॥ ४ ॥  
 छज्जीवदयावण्णे छडापदपणाविवज्जिदे समिदभावे ।  
 सत्तभयविप्पमुक्के सत्ताणभयंकरे वंदे ॥ ५ ॥  
 एण्णुण्णपयट्ठाणे पण्ण कम्मट्ठण्णसंसारे ।  
 परमट्ठण्णिण्णिपट्ठे अट्ठगुह्ण्णिसरे वंदे ॥ ६ ॥  
 णववंभचेरगुणे णवण्णयसम्भावजाण्णो वंदे ।  
 दहविहधम्मट्ठाई दयसंजमसंजदे वंदे ॥ ७ ॥

एषारसंगसुदसापरपारगे वारसंगसुदखिउणे ।  
 वारसविहवखिरदे तेरसकिरियादरे वन्दे ॥ ८ ॥  
 भूदेसु दयावणणे चउदम चउदससुगंथपरिसुद्धे ।  
 चउदसपुव्वपगन्मे चउदसमलवज्जिदे वन्दे ॥ ९ ॥  
 वंदे चउत्थमत्तादिजावक्खम्पासखवणपडिवणणे ।  
 वंदे आदावन्ते सूरस्स य अहिष्णुहिट्ठिदे सूर ॥ १० ॥  
 बहुविहपडिमट्टाई खिसिञ्जवोरासखेक्कवासी य ।  
 अण्डिठ्ठोवकंडुवदीवे चत्तदेहे य वंदामि ॥ ११ ॥  
 ठायी मोखवदीए अम्भोवासी य रुक्खमूली य ।  
 धुवकेसमसुलोमे खिप्पडियम्मे य वंदामि ॥ १२ ॥  
 जल्लमल्ललित्तगणे वंदे कम्ममलकलुसपरिसुद्धे ।  
 दीहणमसुलोमे तवसिरिभरिए खमंसामि ॥ १३ ॥  
 खाणोदयाहिसिसे सीलगुणविहूसिए तवसुगंधे ।  
 ववगयरायसुदड्ढे सिवगइपहणायगे वंदे ॥ १४ ॥  
 उगगतवे दित्तवे तत्तवे महात्तवे य घोरतवे ।  
 वंदामि तवमहंते तवसंजमइड्ढिसंजुसे ॥ १५ ॥  
 आमोसहिए खेलोसहिए जल्लोसइए तवसिद्धे ।  
 विप्पोसहोए सब्बोमहीए वंदामि तिविहेण ॥ १६ ॥  
 अमयमहुखीरसप्पिसवीए अक्खिखमहाणसे वंदे ।  
 मखवज्जिवचवलिकायवलिसो य वंदामि तिविहेण ॥ १७ ॥  
 वाक्कुट्टोयबुद्धो पदाणुमारोय मिएणसोदारे ।  
 उगगहईहसमत्थे सुत्तत्थविम्रास्से वंदे ॥ १८ ॥

आभिषिबोहियसुदश्रोहिषाशिमखणाशिसन्वखाणीय ।  
 वंदे जगत्पदीवे पञ्चकखपरोक्खणाणी य ॥ १६ ॥  
 आयासतंतुजलसेट्टिचारणे जंघचारणे वंदे ।  
 विउवणइडिट्टपहाणे विज्जाहरपणसवणे य ॥ २० ॥  
 गइचउरंगुलगमणे तहेव फलफुल्लचारणे वंदे ।  
 अणुवमतवमईतेदेवासुगवंदिदे वंदे ॥ २१ ॥  
 जियभयजियउवसग्गे जियइंदियपरीसहे जियकसाए ।  
 जियरायदोसमोहे जियसुहदुक्खे शभंसामि ॥ २२ ॥  
 एवं मए भित्तुया अणयारा रायदोसपरिसुद्धा ।  
 संघस्स वरसमाहिं मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ॥ २३ ॥

अंचलिका संस्कृतयोगिभक्तिवत्

—: ० :—

## ४० संस्कृत-योगिभक्तिः



[ २ ]

जातिजरोरुगमरणातुरशोकसहस्रदीपिता ।  
 दुःसहनरकपतनसन्त्रस्तधियः प्रतिबुद्धचेतसः ।  
 जीवितमंबुर्षिदुचपलं तडिदभ्रसमा विभूतयः ।  
 सकलमिदं विचिन्त्य मुनयः प्रशमाय वनान्तमाश्रिताः ॥ १ ॥  
 व्रतसमितिगुप्तिसंयुताः शिवसुखमाधाय मनसि वीतमोहाः ।  
 ध्यानाध्ययनवशंगता विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति ॥ २ ॥  
 दिनकरकिरणनिकरसंतप्तशिलानिचयेषु निःस्पृहा ।  
 मलपटलावलिप्ततनवः शिथिलीकृतकर्मबंधनाः ।

व्यपगतमदनदर्परतिदोषरूपायविरक्तमत्सरा ।  
 गिरिशिखरेषु चंडकिरणाभिमुखस्थितयो दिगंबराः ॥३॥  
 सज्जानामृतपायिभिः क्षान्तिपयःसिन्धुमानपुण्यकायैः ।  
 धृतसंतोषच्छत्रकैस्तापस्तीव्रोऽपि सद्गते मुनीन्द्रैः ॥ ४ ॥  
 शिखिगजकज्जलालिमलिनैर्विबुधाधिपचापचित्रितै—  
 र्भौमरवैर्विसृष्टचण्डाशनिशीतलवायुवृष्टिभिः ।  
 गगनतलं विलोक्य जलदैः स्त्रगितं सहमा तपोधनाः ।  
 पुनरपि तरुतलेषु विषमासु निशासु विर्गकमासते ॥५॥  
 जलधाराशरताडिता न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः ।  
 संसारदुःखभोरवः परोषहारातिघातिनः प्रवीराः ॥६॥  
 अविरतबहलतुहिनऋणवारिभिरंघ्रिपपत्रपातनै—  
 रनवरतमुक्तसात्काररवैः परुवैरथानिलैः शोषितगात्रयष्टयः ।  
 इह श्रमया धृतिर्कबलावृताः शिशिरनिशां ।  
 तुषारविषमां गमयन्ति चतुःपथे स्थिताः ॥ ७ ॥

इति योगत्रयधारिणः सकलतपःशालिनः प्रवृद्धपुण्यकायाः ।  
 परमानन्दसुखैषिणः समाधिमग्र्यं दिशंतु नो मदन्ताः ॥८ ॥

इच्छामि भन्ते ! योगिमत्सिकाउस्सगो कञ्चो तरुसालोचेडं,  
 अड्ढाइज्जदीवदोसमुद्देसु पण्णारसकम्मभूमिसु आदावणरुक्खमूल-  
 अम्भोवासठाणमोणविरासणोक्कपासकुक्कुडासणचउत्थपक्खवणादि  
 योगजुत्तायां सब्बसाहूणां खिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसामि,  
 दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहिमरणं,  
 जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

## ४१ लघुयोगिभक्तिः

प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतितसलिले वृक्षमूलाधिवासा

हेमन्ते रात्रिमध्ये प्रतिविगतभयाः काष्ठवच्यवतदेहाः ।

ग्रीष्मे सूर्याशुतप्ता गिरिशिखरगताः स्थानकूटान्तरस्था-

स्ते मे धर्मं प्रदद्युर्मुनिगणवृषभा मोक्षनिःश्रेणिभूताः ॥१॥

गिंभे गिरिसिहरत्या वरिसायाले रुक्खमूल रयणीसु ।

सिसिरे बाहिरसयणा ते साहू वंदिमो खिच्चं ॥२॥

गिरिकन्दरदुर्गेषु वे वसन्ति दिगम्बराः ।

पाणिपात्रपुटाहारास्ते यान्ति परमां गतिम् ॥३॥

( अंचलिका संस्कृतयोगिभक्तिवत् )

## ४२-आचार्यभक्तिः

( १ )

सिद्धगुणस्तुतिनिरतानुद्धूतरुषाग्निजालबहुलविशेषान् ।

गुप्तिभिरभिसंपूर्णान्मुक्तियुतः सत्यवचनलक्षितभावान् ॥१॥

मुनिमाहात्म्यविशेषाञ्जिनशासनसत्प्रदीपमासुरमूर्तीन् ।

सिद्धिं प्रपित्सुमनसो बद्धरजोविपुलमूलघातनकुशलान् ॥२॥

गुणमखिविरचितवपुषः षड्द्रव्यविनिश्चितस्य घातृन्सत्तम् ।

रहितप्रमादचर्यान्दर्शनशुद्धान्गाणस्य संतुष्टिकरान् ॥३॥

मोहच्छिदुग्रतपसः प्रशस्तपरिशुद्धहृदयशोभनव्यवहारान् ।

प्रासुकनिलयाननघानाशाविष्वंसिचेतसो हतकुपयान् ॥४॥

धारित विलसन्मुण्डान्वर्जितयहुदंढपिंडमंडलनिकरान् ।  
 सकलपरीषद्जयिनः क्रियाभिरनिशं प्रमादतः परिरहितान् ॥५॥  
 अचलान्व्यपेतनिद्रान् स्थानयुतान्कष्टदुष्टलेस्याहीनान् ।  
 विधिनानाश्रितवासानलिप्तदेहान्विनिजितेन्द्रियकरिणः ॥६॥  
 अतुलानुत्कृटिकासान्विविक्तचिचानखंडितस्वाध्यायान् ।  
 दक्षिणभावसमग्रान्व्यपगतमदरागलोभशठमात्सर्यान् ॥७॥  
 भिन्नार्तरौद्रपक्षान्संभावितधर्मशुबलनिर्मलहृदयान् ।  
 नित्यं पिनद्धकुगतीन्पुण्यान् गणयोदयान्विलीनगारवचर्यान् ॥८॥  
 तरुमूलयोगयुक्तानवकाशातापयोगगगसनाथान् ।  
 बहुजनहितकरचर्यानिमयाननघान्महानुभावविधानान् ॥९॥  
 ईदृशगुणसंपन्नान्युष्मान्भक्त्या विशालया स्थिरयोगान् ।  
 विधिनानारतमग्यान्मुकुलीकृतहस्तकमलशोमितशिरसा ॥१०॥  
 अभिनौमि सकलकलुषप्रभवोदयजन्मजरामरणबंधनमुक्तान् ।  
 शिवमचलमनघमन्त्रयमव्याहृतमुक्तिसौरुयमस्त्विति सततम् ॥११॥  
 अंचलिका प्राकृताचार्यभक्तिवत्

## ४३ प्राकृताचार्यभक्तिः ।

[ २ ]

देसकुलजाइसुद्धा विसुद्धमणवयणकायसंजुता ।  
 तुम्हं पायपयोरुहमिह मगलमत्यु मे खिच्च ॥ १ ॥  
 देशकुलजातिशुद्धाः विशुद्धमनोवचनकायसंयुक्ताः ।  
 युष्माकं पादपयोरुहं इह मगलं अस्तु मे नित्यम् ॥१॥

सगपरसमयविदग्ह आगमहेदुहिं चावि जाणित्ता ।  
 सुसमत्था जिणवयणे विणये सत्ताणुरुवेण ॥२॥  
 बालगुरुबुद्धसेहे गिलाणथेरे य खमणसंजुत्ता ।  
 वट्टावयगा अण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता ॥३॥  
 वयसमिदिगुत्तिजुत्ता मुत्तिपहे ठावया पुणो अण्णे ।  
 अज्झावयगुणखिलये साहुगुणेणावि संजुत्ता ॥४॥  
 उत्तमखमःए पुढवी पसएणभावेण अच्छजलसरिसा ।  
 कम्मिधणदहणादो अगणी वाऊ असंगादो ॥५॥  
 गयणमिव खिरुवलेवा अस्सोहा सायरुव्व मुणिवसहा ।  
 एरिसगुणखिनयाणं पायं पणमामि सुद्धमणो ॥६॥  
 संसारआणणे पुण वंभममाणेहिं भव्वजीवेहिं ।  
 णिव्वाणस्म हु मग्गोः लद्धो तुम्ह पसाएण ॥७॥  
 अविमुद्धलेस्सरहिया विमद्धलेस्साहि परिणदा सुद्धा ।  
 रुद्धे पुण चत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता ॥८॥  
 उग्गहईहावायाधारुगुणसंपदेहि संजुत्ता ।  
 सुत्तत्थभावणाए भावियमाणेहि वंदामि ॥९॥  
 तुक्कं गुणगणसंयुदि अजाणमाणेण जो मया वुत्तो ।  
 देउ मम बोहिलाहं गुरुभत्तिजुदत्थओ णिव्वं ॥१०॥

इच्छामि भंते ! आयरियभक्तिकाउस्सग्गो कग्गो तस्सालो-  
 चेउ, सम्मणाणसम्मदसणसम्मचारित्तजुत्ताणां पंचविहाचाराणां  
 आयरियाणां, आयारादिसुदणाणोवदेसयाणां उवज्झायाणां, तिर-  
 यणपुणपालणरयाणां सव्वसाहूखं, णिव्वकालं अवेमि, पूजेमि,

वंदामि, शमंसामि, दुक्खक्खञ्चो कम्मक्खञ्चो, बोहिल्लोहो,  
सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

## ४४ आचार्य-लघुभक्तिः

प्राज्ञः प्राप्तसमस्तशास्त्रहृदयः प्रव्यक्तलोकस्थितिः

प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान प्रागेव दृष्टोत्तरः ।

प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनोहारी परानिन्दया

ब्र याद्धर्मकर्था गणी गुणनिधिः प्रस्पष्टमृष्टाक्षरः ॥१॥

श्रु तमविकलं शुद्धा वृत्तिः परप्रतिबोधने

परिणतिरुरुद्योगो मार्गप्रवर्तनसद्विधौ ।

बुभनुतिरनुत्सेको लोकज्ञता मृदुताऽस्पृहा

य िपतिगुणा यस्मिन्नन्ये च सोऽस्तु गुरुः सताम् ॥२॥

श्रु तजलधिपारमेभ्यः स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः ।

सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥३॥

छ्चीसगुणसमगो पंचविहाचारकरखसंदरिसे ।

सिस्साणुग्गहक्कुसले धम्माहरिण सदा वंदे ॥४॥

गुरुभतिसंजमेष य तरंति संसारसापरं घोरं ।

छ्रियणंति अट्टकम्मं जम्मखमरणं ण पावेत्ति ॥५॥

ये नित्यं व्रतमंत्रहोमनिरता ध्यानाग्निहोत्राकुलाः

षट्कर्माभिरतास्तपोधनधनाः साधुक्रियासाधवः ।

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चन्द्रार्कतेजोऽधिका

मोक्षद्वारकपाटपाटनमटाः प्रीणन्तु मां साधवः ॥६॥



गुरवः पान्तु वो नित्यं ज्ञानदर्शननायकाः ।  
 चारित्रार्थवर्गभोरा मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥७॥  
 अञ्चलिका प्राकृताचार्यभक्तिवत्

## ४५ संस्कृत पञ्चमहागुरुभक्तिः

श्रीमदमरेन्द्रमुकुटप्रघटितमणिकिरणवारिधाराभिः ।  
 प्रक्षालितपदयुगचान् प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या ॥१॥  
 अष्टगुणैः समुपेतान् प्रणष्टदुष्टाष्टकर्मरिपुममितीन् ।  
 सिद्धान् सततमनन्तान्नमस्करोमीष्टतुष्टिसंसिद्धिचै ॥ २ ॥  
 साचारश्रुतजलधीन् प्रतीर्थं शुद्धोरुचरणनिरतानाम् ।  
 आचार्याणां पदयुगकमलानि दधे शिरसि मेऽहम् ॥ ३ ॥  
 मिथ्यावादिमदोषध्वान्तप्रध्वंसिवचनसंदर्भान् ।  
 उपदेशकान् प्रपद्ये मम दुरितारिप्रणोशाय ॥ ४ ॥  
 सम्यग्दर्शनदीपप्रकाशका मेयबोधसंभूताः ।  
 भूरिचित्रपताकास्ते साधुगणास्तु मां पान्तु ॥ ५ ॥  
 जिनसिद्धसूरिदेशकसाधुवरानमलगुणगणोपेतान् ।  
 पञ्चनमस्कारपदैस्त्रिसन्ध्यममिनौमि मोक्षलाभाय ॥ ६ ॥  
 एष पञ्चनमस्कारः सर्वपापप्रणाशनः ।  
 मंगलानां च सर्वेषां प्रथमं मंगलं मतं ॥ ७ ॥  
 अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायाः सर्वसाधवः ।  
 कुर्वन्तु मङ्गलाः सर्वे निर्वाणपरमभियम् ॥ ८ ॥

सर्वान् जिनेन्द्रचन्द्रान् सिद्धानाचार्यपाठकान् साधून् ।  
 रत्नत्रयं च वन्दे रत्नत्रयसिद्धये भक्त्या ॥ ९ ॥  
 पान्तु श्रीपादपद्मानि पंचानां परमेष्ठिनाम् ।  
 लालितानि सुराधीशचूडामणिमरीचिभिः ॥ १० ॥  
 प्रातिहार्यैर्जिनान् सिद्धान् गुणैः सूरीन् स्वमातृभिः ।  
 पाठकान् विनयैः साधून् योगाङ्गैरष्टभिः स्तुवे ॥ ११ ॥  
 (अञ्चलिका प्राकृतपञ्चमहागुरुभक्तिवत्)

## ४६ प्राकृत पंचमहागुरुभक्तिः ।

मणुय-खाइंद-सुरधरियछत्तया, पंचकल्लाणसोकखावलीपत्तया ।  
 दंभणां थाण भाणं अणांतं भलं, ते जिणा दिंतुअमहं वरंमङ्गलां ।  
 जेहिं भाणगिगवाणेहिं अइधइयं, जम्म-जर-मरणनयरत्तयं दइइयं ।  
 जेहिं पत्तं सिवं सासयं थाणयं, ते महं दिंतु सिद्धा वरं थाणयां ।  
 पंचहाचार-पंचगिगससाइया,

वारसंगाइंमुअ-जलहिअवगाहया ।

मोक्खलच्छी महंती महं ते सया,

सरिणो दिंतु मोक्ख गयासं गया ॥ ३ ॥

घोरसंसारमीमाडवीकाणखे, तिक्खवियरालणहपावपंचाणखे ।  
 खड्डमगाण जीवाण पइदेसिय, वंदिमी ते उवज्जायअमहे सया ।  
 उगतवचरणकरखेहिं भीखंगया, धम्मवरभाण सुक्केक्कभाणंगया ।  
 निम्मरं तवसिरीण समालिंगया, माहवेते महं मोक्खपथमग्गया ॥५॥

एष्य थोत्तेश जो पंचगुरु बंदए, गुरुयसंसारघणवेन्लि सो छिंदए ।  
लहइसो सिद्धि सोक्खोइंवरमाणयां, कुणइ कम्मिघणां पुं जपजालयां ६  
अरुहा सिद्धाहरिया उवज्झाया साहु पंचपरमेद्धी ।

एयाण खल्लुक्कारा भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥ ७ ॥

इच्छामि मंते ! पंचामहागुरुमच्छिका उस्सग्गो कओ तस्सा-  
लोत्तेउ', अट्टमहापाडिहेरसंजुचार्या, अट्टगुणसंपणयाणं उद्धलो-  
यमत्थयम्मि पइट्टियाणं सिद्धाणं, पट्टपवयणमउसंतुत्ताणं आय-  
रियाणं, आयारादिसुदयाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, तिरयण-  
गुणापालणारयाणं सब्बसाहूणं, पिच्चकालं अंचेमि पूजेमि बंदामि  
यामं सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं,  
समाहिमरणं, जिणायुणासंपत्ति होउ मज्झं ।



## ४७ अथ शान्तिभक्तिः ।

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पादद्वयं ते प्रजाः । हेतुस्तव  
विचित्रदुःखनिचयः संसारघोरार्णवः ॥ अत्यंतस्फुरदुग्ररश्मिकर-  
व्याकीर्णभ्रूगंडलो । ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायाजुरागं रविः  
॥ १ ॥ क्रुद्धाशीविषदष्टदुर्जयविषज्वालावलीविक्रमो, विद्यामेषज-  
मंत्रतोयहवनेर्याति प्रर्शाति यथा ॥ तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तो-  
त्रोन्मुखानां नृणाम् । विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा शाम्य-  
न्त्यहो विस्मयः ॥ २ ॥ संतप्तोत्तमकांचनचित्तिधर श्रीस्पद्विगौर-  
वुते । पुनर्सा त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति चयं ॥ उद्य-

द्भास्करविस्फुरत्करशतव्याघातनिष्कासिता । नानादेहिविलोचन-  
द्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ॥३॥ त्रैलोक्येश्वरमंगलम्बविजया-  
दत्यंतरीद्रात्मकान् । नानाजन्मशर्तारेषु पुरतो जीवस्य संसा-  
रिणः ॥ को वा प्रसन्नलतीह केन विधिना कालोद्गदावानलान् । न  
स्याच्चेत्सव पादपद्मयुगलस्तुत्यापगावारणम् ॥ ४ ॥ लोकालोक-  
निरंतरप्रविततज्ञानैकमूर्ते विभो , नानारत्नपिनद्धदंडरुचिरश्वेता-  
तपत्रत्रय ॥ त्वत्पादद्वयपृतगीत्तरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः । दर्पा-  
ध्मातमृगेंद्रमीमनिनदाद्वन्या यथा कुञ्जराः ॥ ५ ॥ दिव्यस्त्रीनय-  
नाभिरामविपुलश्रोमेरुचूडामण्ये भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहर प्राणी-  
ष्टमामंडल ॥ अव्यावाधमचिन्त्यसारमतुलं त्यलोपमं शारवतं ।  
सौख्यं त्वच्चरणारविंदियुगलस्तुत्यैव संप्राप्यते ॥६॥ यावन्नोदयते  
प्रभापरिकरः श्रीभास्करो मासरां । स्तावद्धारयतीह पंकजवनं  
निद्र निमारश्रमम् ॥ यावत्त्वच्चरणद्वयस्य , भगवन्न स्यात्प्रसादोदय-  
स्तावज्जीवनिकाय एष बहति प्रायेण पापं महत् ॥ ७ ॥ शान्ति  
शान्तिजिनेन्द्र शान्तमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात् । संप्राप्ताः शुद्धिवीत-  
लेषु बहवः शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ॥ कारुण्यान्मम भोक्तिकस्य च  
विमो दृष्टिं प्रसन्ना कुरु । त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदतः शान्त्यष्टकं  
भविततः ॥८॥ शान्तिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रं । शीलगुणध्रतसंयम-  
पात्रम् ॥ अष्टशतार्चितलक्षणात्रं । नौमि जिनोत्तममंजुजनेत्रम्  
॥ ९ ॥ पंचममीप्सितचक्रधराणां । पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगशैश्च ॥  
शान्तिंकरं गणशान्तिममीप्सुः । षोडशतीर्थकरं प्रथमामि ॥१०॥  
दिव्यतरुःसुरपुष्पसुषुष्टिदुन्दुभिरासनयोजनघोषौ ॥ आतपवारण-

चामरयुग्मे यस्य विभाति च मंडलतेजः ॥ ११ ॥ तं जगदचित्त-  
 शान्तिजिनेन्द्रं शान्तिकरं शिरसा प्रथमामि ॥ सर्वगन्धाय तु यच्छ्रुत-  
 शान्ति । मद्यमरं पठते परमां च ॥१२॥ येऽभ्यर्चिता मृकुटकुण्ड-  
 लहाररत्नैः ॥ शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्मः ॥ ते मे जिनाः  
 प्रवरवंशजगत्प्रदीपाः । तीर्थकराः सततशान्तिकरा भवंतु ॥१३॥  
 संपृजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानाम् । देशस्य  
 राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्ति भगवाञ्जिनेन्द्रः । १४ ॥  
 चेर्म सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धार्मिको भूमिपालः । काले काले  
 च सम्यग्वर्षतु मघवा व्याधयो यान्तु नाशम् । दुर्मिच्छं चौरमारिः  
 क्षणमपि जगतां मास्म भूज्जीवलोके ॥ जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु  
 सततं सर्वसौख्यप्रदायि ॥ १५ ॥ तद्द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभः स  
 देशः । संतन्यतां प्रतपतां सततं स कालः ॥ भावः स नन्दतु  
 सदा यदनुग्रहेण । रत्नत्रयं प्रतपतीह मृमुक्षुवर्गे ॥१६॥ प्रध्वस्त-  
 धातिकर्माणां केवलज्ञानभास्कराः ॥ कुर्वन्तु जगतां शान्तिं वृष-  
 भाद्या जिनेश्वराः ॥ १७ ॥ इच्छामि मंते ! शान्तिमत्तिकाउ-  
 स्सगो कश्चो, तस्सालोचेउ' पंचमहाकल्पायासंपण्याणं अट्टमहा-  
 पाडिहेरसहियाणं, चउतीसातिसपविसेससंजुत्ताण, वत्तीसदेविदं-  
 मणिमपमउडमत्थयमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्रहररिसिमुण्णिज-  
 दिअणगारोवगूढाणं, धुइसयसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिम-  
 मंगलमहापुरिसाणं शिबकालं अंचेमि, पूजेमि वंदामि, णमंसाभि,  
 दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं  
 जिण्णुणसंपत्ति होउ मज्झं ॥

## ४८ अथ चैत्यभक्तिः

श्रीगौतमादिपदमद्भु तपुरयबंधमुद्योतिताखिलममोघमघप्रणा-  
 शम् । वक्ष्ये जिनेश्वरमहं प्रणिपत्य तथ्यं निर्वाणकारणमशेष-  
 जगद्धितार्थम् ॥१॥ जयति भगवन् हेमाम्भोजप्रचारविजृम्भिता- ।  
 वमरमुकुटच्छापोद्गोर्णप्रभापरिचुम्बितौ ॥ कलुषहृदया मानोद्-  
 भ्रान्ताः परस्परवैरिणः । विगतकलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विश-  
 श्वसुः २॥ तदनु जयति श्रेयान्धर्मः प्रवृद्धमहोदयः । कुगति-  
 विषयक्लेशाद्योसौ विपाशयति प्रजाः ॥ परिणतनयस्यांगीभावा-  
 द्विविक्तविकल्पितम् । भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा त्रिनेन्द्रवचोऽमृतम्  
 ॥२॥ तदनु जयताज्जैनी विक्तिः प्रभंगतरंगिणी । प्रभवविगमध्रौ-  
 व्यद्रव्यस्त्रभावविभाविनी ॥ निरुपमसुखस्येदं द्वारं विषट्च निर-  
 र्गलम् । विगतरजसं मोक्षं देयाभिरत्ययमव्ययम् ॥३॥ अर्हत्सि-  
 द्धाचार्योपाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्यः । सर्वजगद्बंधेभ्यो नमोस्तु  
 सर्वत्र सर्वेभ्यः ॥४॥ मोहादिसर्वदोषारिघातवेभ्यः सदा हत-  
 रजोभ्यः । विरहितरहस्कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः ॥५॥  
 चान्त्यार्जवादिगुणगणसुसाधनं सकललोकहितहेतुं । शुभवामनि  
 धातारं वंदे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम् ॥ ६ ॥ मिथ्याज्ञानतमोवृत्तलोकैक-  
 ज्योतिरमितगमयोगि । सांगोपांगमजेयं जैनं वचनं सदा वंदे ॥७॥  
 भवनविमानज्योतिर्व्यतरनरलोकविश्वचैत्यानि । त्रिजगदभिवदि-  
 तानां त्रेधा वंदे जिनेन्द्राणाम् ॥८॥ भुवनत्रयेऽपि भुवनत्रयाधिपाभ्य-  
 र्च्यतीर्थकर्तृणां । वंदे भवाग्निशान्त्यै विभवानामालपालीस्ताः ॥९॥

इति पंचमहापुरुषाः प्रणुता जिनधर्मवचनचैत्यानि । चैत्यालपारच  
विमलां दिशन्तु बोधिं बुधजनेष्टाम् ॥ १० ॥ अकृतानि कृतानि  
चाप्रमेयद्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मंदिरेषु । मनुजामरपूजितानि वंदे  
प्रतिबिंबानि जगत्त्रये जिनानाम् ॥ ११ ॥ द्युतिमंडलमासुराङ्ग-  
यष्टीः प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम् । भुवनेषु विभूतये  
प्रवृत्ता वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वंदमानः ॥ १२ ॥ विगतायुधविक्रि-  
याविभूषाः प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणां ॥ प्रतिमाः प्रतिमा-  
गृहेषु कान्त्या प्रतिमाः कन्मषशान्तयेऽभिवंदे ॥ १३ ॥ कथयन्ति  
कषायमुक्तिलक्ष्मीं परया शान्ततया भवांतकानाम् । प्रहृमाम्यभि-  
रूपमूर्तिमंति प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम् ॥ १४ ॥ यदिर्द-  
मम सिद्धभक्तिनीतं सुकृतं दुष्कृतवर्त्मरोधि तेन । पटुना जिनधर्म-  
एव भक्तिर्भवताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे ॥ १५ ॥ अहर्ता सर्व-  
भावानां दर्शनज्ञानसंपदाम् । कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथाबुद्धि-  
विशुद्धये ॥ १६ ॥ श्रीमद्वमवनवासस्था स्वयमामुरमूर्तयः । वंदिता  
नो विधेयासुः प्रतिमाः परमां गतिम् ॥ १७ ॥ यावन्ति संति  
लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च । तानि सर्वाणि चैत्यानि वंदे  
भूयांसि भूतये ॥ १८ ॥ ये व्यंतरविमानेषु स्थेयांसः प्रतिमागृहाः ।  
ते च संख्यामतिक्रान्ताः संतु नो दोषविच्छिदे ॥ १९ ॥ ज्योति-  
षामथ लोकस्य भूतयेऽद्भुतसंपदः । गृहाः स्वयंभूतः संति विमा-  
नेषु नमामि तान् ॥ २० ॥ वंदे सुरतिरीटाग्रमणिच्छायाभिषेच-  
नम् । याः क्रमेणैव सेवन्ते तदर्चाः सिद्धिलक्ष्ये ॥ २१ ॥ इति  
स्तुतितथातीतश्रीभृतामर्हतां मम । चैत्यानामस्तु संकीर्तिः सर्वा-

स्रवनिरोधिनो ॥ २२ ॥ अर्हन्महानदस्य त्रिभुवनमव्यजनतीर्थ-  
 यात्रिकदुरितम् । प्रवालनैककारणमतिलौकिककुहकतीर्थमुत्तमती-  
 र्थम् ॥ २३ ॥ लोकालोकसुतस्त्रप्रत्यवबोधनसमर्षदिव्यज्ञान ।—प्रत्य-  
 हवदत्प्रवाहं व्रतशीलामलविशालकूलद्वितयम् ॥ २४ ॥ शुकलघ्वान-  
 स्तिमितस्थितराजद्राजहंसराजितमसकृत् । स्वाध्यायमंद्रघोषं नाना-  
 गुणसमितिगुप्तिसिकतासुभगम् ॥ २५ ॥ क्षान्त्यावर्तसहस्रं सर्वदया-  
 विकचकुसुमविलसल्लतिकम् । दुःसहपरीषहाण्यद्रुततररंगसरङ्ग-  
 भंगुरनिकरम् ॥ २६ ॥ व्यपगतकषायफेनं रागद्वेषादिदोषशैवल-  
 रहितं । अत्यस्तमोहकर्दममतिदूरनिरस्तमरणमकरप्रकरम् ॥ २७ ॥  
 ऋषिषुषमस्तुतिमंद्रोद्रेकितनिर्घोषविविधविहगव्वानम् । विविध-  
 तपोनिधिपुलिनं सास्त्रवसंवरणनिर्जरानिःस्रवणम् ॥ २८ ॥ गणधर-  
 चक्रधरेन्द्रप्रभृतिमहामव्यपुण्डरीकैः पुरुषैः । बहुभिः स्नातं भक्त्या  
 कलिकलुषमलापकर्षणार्थमपेयम् ॥ २९ ॥ अवतीर्णवतः स्नातुं  
 ममापि दुस्तरसमस्तदुरितं दूरम् । व्यवहरतु परमपावनमनन्य-  
 ज्यस्वस्वभावगंभीरम् ॥ ३० ॥ अताम्रनयनोत्पलं सकलकोपवह्ने-  
 र्जयात् । कटाक्षशरमोक्षहीनमविकारतोद्रेकतः ॥ विषादमदहानितः  
 प्रहसितायवानं सदा । मुखं कथयतीव ते हृदयशुद्धिमात्यन्ति-  
 कीम् ॥ ३१ ॥ निरामरणमासुरं विगतरागवेगोदयात् । निरंवर-  
 मनोहरं प्रकृतिरूपनिर्दोषतः ॥ निरायुधसुनिर्मयं विगतहिंस्य-  
 हिसाक्रमात् । निरामिषसुतुप्तमद्विविधवेदनानां क्षयात् ॥ ३२ ॥  
 मितस्थितनखांगजं गतरज्जोमलस्पर्शनम् । ननांबुरुहचंदनप्रतिम-  
 दिव्यगंधोदयं ॥ रवीन्दुकुलिशादिदिग्बहुलक्षणालंकृतम् । दिवा-



करसहस्रमासुरमपोक्षणां प्रियम् ॥३३॥ द्वितार्थपरिपथिभिः  
 प्रबलरागमोहादिभिः । कलंकितमना जनो यदमिवीक्ष्य शोशु-  
 ध्यते ॥ सदाभिमुखमेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः । शरद्विमलचंद्रमंड-  
 लमित्रोत्थितं दृश्यते ॥३४॥ तदेतदमरेश्वरप्रचलमौलिमालामणि-  
 स्फुरत्किरणचुम्बनीयचरणान्विन्दद्वयम् ॥ पुनातु भगवज्जिनेन्द्र  
 तव रूपमन्धीकृतम् । जगत्सकलमन्यतीर्थगुरुरूपदोषोदयैः ॥३५॥  
 मानस्तथाः सरांसि प्रविमलजलसत्स्रक्तिका पुष्पवाटी । प्राकारो  
 नाट्यशालाद्वितयमुपवन वेदकांतर्ध्वजाद्याः ॥ शालः कल्प-  
 द्रुमाणां सुपरिवृतव्रनं रतूपहर्म्यावली च । प्राकारः स्फाटिकोन्त-  
 न्तुसुगुणिसभा पीठिकाग्रे स्वयंभूः ॥३६॥ वर्षेषु वर्षान्तरपर्व-  
 तेषु, नंदोश्वरे यानि च मंदरेषु । यावन्ति चैत्यायतनानि लोके  
 सर्वाणि वंदे जिनपुङ्गवानाम् ॥३७॥ अवनितलगतानां कृत्रिमा-  
 ऽकृत्रिमाणाम् । वनभवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ॥ इह मनुज-  
 कृतानां देवराजार्चितानाम् । जिनवरनिलयानां भावतोऽहं स्मरामि  
 ॥३८॥ जम्बूघातकिपुष्करार्द्धवसुधाक्षेत्रत्रयेभवाः । श्चंद्रांभोजशिखं-  
 डिकंठकनकप्राष्टडघनाभाः जिनाः ॥ सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा  
 दग्वाष्टकभेन्धनाः । भूतानागतवर्तमानसमये तेभ्यो जिनेभ्यो  
 नमः ॥३९॥ श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शान्मलौ जंबुवृक्षे ।  
 वक्षारे चैत्यवृक्षे रत्नकररुचकेकुण्डले मानुषांके ॥ इष्वाकारेऽजनाद्रौ  
 दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके । ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनम-  
 हितले यानि चैत्यानि तानि ॥४०॥ देवासुरेन्द्रनरनागसर्पि-  
 तेभ्यः । पापप्रनाशकरभव्यमनोहरेभ्यः ॥ घंटाघ्वजादिपरिवार-

विभूषितेभ्यो । नित्यं नमो जगति सर्वं जिनालयेभ्यः ॥४१॥  
 इच्छामि भंते ! चेद्यमत्तिकाउस्सग्गो कम्मो ) तस्सालोचेउ' अह-  
 लोयतिरियलोयउट्ठलोयम्मि किट्ठिमाकिट्ठिमाणि जाणि त्रिखवेह-  
 याणि ताणि सव्वाणि तिसुवि लोएसु भवखावासियवाणवितर  
 जोहसिपकप्पवासियसि चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण  
 दिव्वेण चुण्णेषण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण धहाखेण, खिच्चकालं  
 अच्चन्ति, पुज्जन्ति, वंदंति, णमंसंति । अहमवि इह संतो तत्थ  
 संताइ खिच्चकाल अंचेमि, पूजेमि, वंरामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ  
 कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-  
 संपत्ति होउ मज्झं ॥

### ४६-लघुचैत्य भक्तिः

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मन्दरेषु ।  
 यावन्ति चैत्यापतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिनपुङ्गवानाम् ।१।  
 अबन्तिलगतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणां  
 वनमवनगतानां दिव्यवैमानिकानाम् ।  
 इह मनुजकृतानां देवराजार्चितानां  
 जिनवरनिलयानां भावतोऽहं नमामि ॥२॥  
 जम्बूघातकिपुष्करार्धवसुधाक्षेत्रत्रये ये भवा-  
 रचन्द्राम्भोजशिखंडिकंडकनकप्रापुडघनामा जिनाः ।  
 सम्यग्ज्ञानचरित्रलक्षणधरा दग्धाष्टकर्मधना  
 भूतानागतवर्तमानसमवे तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ॥३॥

श्रीमन्मेरी कुलाद्री रजतगिरिवरे शान्मलौ जम्बुवृक्षे  
 वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकररुचके कुण्डले मानुषांके ।  
 इष्वाकारेऽञ्जनाद्री दक्षिणमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके  
 ज्योतिर्लोकेऽभिवन्दे भवनमहितले यानि चैत्यालयानि ॥४॥  
 द्वौ कुन्देन्दुतुषारहारधवलौ द्वाविन्द्रनीलप्रभौ  
 द्वौ बन्धूकसमप्रभौ जिनवृषौ द्वौ च त्रिर्यगुप्रभौ ।  
 देवाः षोडशजन्मधृत्युरहिताः सन्तप्तहेमप्रमा-  
 स्ते संज्ञानदिवाकराः सुरनुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ॥५॥  
 अञ्चलिका चैत्यभक्तिवत्



## ५० समाधिभक्तिः ।

स्वात्माभिमुखसंवित्तिलक्षणं श्रुतचञ्चुषा । पश्यन्पश्यामि देव  
 त्वां केवलज्ञानचञ्चुषा ॥ १ ॥\* शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः  
 संगतिः सर्वदार्यैः । सद्ब्रह्मचरानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ॥

\* व्युत्सृज्य दोषान्निःशेषान्सद्व्यानेस्यान्तनूत्सृती । सहेतात्युपसर्गा-  
 र्मीन्कर्मैवं भिद्यतेतरां । १। ध्यानाशुशुच्युणा विद्धे मनोरुत्तिकसमाहितः ।  
 स्वकर्म समिधो भावसर्पिषा जुहुमोऽधुना ॥२॥ अहमेवाहमित्यात्मज्ञाना-  
 दन्यत्र चेतनां । इदमस्मि करोमीदमिदं भुञ्ज इति क्षिपेत् ॥३॥ अहमेवा-  
 हमित्यन्तर्जल्पसंपृक्तकल्पनां त्यक्त्वाऽवामोचरं ज्योतिः स्वयं पश्यामि  
 शाश्वतम् ॥४॥ अमुष्णं तमरज्यंतमद्विषंतं च यः स्वयं । शुद्धे निधत्ते स्वे  
 शुद्धमुपयोगं स शुद्धयति ॥५॥ बोधिसमाधिविशुद्धस्वचिदुपलब्धुच्छल-  
 त्प्रमोदभराः ब्रह्म विदन्ति परं ये ते सद्गुरवो मम प्रसीदंतु ॥ ६ ॥

सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे । संपदंतां मम भव-  
 भवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ २ ॥ जैनमार्गरुचिरन्यमार्गनिर्वेगता  
 जिनगुणस्तुतौ मतिः । निष्कलं कविमलोक्तिभावनाः संभवन्तु मम  
 जन्मजन्मनि ॥३॥ गुरुमूले यतिनिचिते चैत्यसिद्धान्तवार्धिसद्घोषे  
 मम भवतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम् ॥ ४ ॥ जन्म-  
 जन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमाजितम् ॥ जन्ममृत्युज्वरामूलं हन्यते  
 जिनवन्दनात् ॥ ५ ॥ आवाग्याजिनदेवदेव भवतः श्रोपादयोः  
 सेवया । सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालेऽध्ययावद्गतः त्वां तस्याः  
 फलमर्थये तदधुना प्राणप्रयाणक्षणे । त्वन्नामप्रतिषद्बवर्षपठने  
 कण्ठोऽस्त्वक्कुण्ठो मम ॥ ६ ॥ तव पादौ मम हृदये मम हृदयं  
 तव पदद्वये लीनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः  
 ॥७॥ एकापि समर्थेयं जिनमक्तिदुर्गतिं निवारयितुम् । पुण्यानि  
 च पूरयितुं दातुं श्रुक्तिश्रियं कृतिनः ॥ ८ ॥ पंच अरिजयणामे  
 पंच य गदिसायरे जिणे वंदे । पंच जसोपरणामे पंच य सीमंदरे  
 वंदे ॥ ९ ॥ रयणतयं च वंदे चउवीसजिणे च सव्वदा वंदे ॥  
 पंचगुरूण वंदे चारणचरणं सदा वंदे ॥१०॥ अर्हमित्यचरब्रह्म-  
 वाचकं परमेष्ठिनः । सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रखिदध्महे । ११।  
 कर्माष्टकं विनिर्मुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् । सम्यक्त्वादिगुणोपेतं  
 सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ॥१२॥ आकृष्टिं सुरसपर्दां विदधते श्रुक्ति-  
 श्रियो वश्यतां । उच्चाटं विपदां चतुर्गतिशुभां विद्वेषमात्मैतसाम् ॥  
 स्तंभं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम् । पायात्पंचन-  
 मस्क्रियाक्षमयी साराधना देवता । १३ ॥ अनंतानन्तसंसार-

संततिच्छेदकारणम् । जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणां मम ॥२४॥  
 अन्यथा शरणां नास्ति त्वमेव शरणां मम ॥ तस्मात्कारुण्यभावेन  
 रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥ १५ ॥ नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता  
 जगत्त्रये ॥ वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ १६ ॥  
 जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ॥ सदा मेऽस्तु सदा  
 मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥ १७ ॥ याचेऽहं याचेऽहं जिन  
 तव चरणारविन्दयोर्भक्तिम् । याचेऽहं याचेऽहं पुनरपि तामेव  
 तामेव ॥ १८ ॥ विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनीभृतपद्मगाः । विषं  
 निर्बिषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥ १९ ॥ इच्छामि भंते !  
 समाहिभक्तिकाउस्सम्भो कम्मो, तस्सालोचेउं, रयणायपरूपपर-  
 मप्पज्झाखलकखणं समाहिभक्तीये खिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि.  
 वंदामि, शमंसामि, दुक्खक्खम्मो, कम्मक्खम्मो, बोहिलाहो,  
 सुगहगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

## ५१ लघुसमाधिभक्तिः (प्रियभक्तिः)

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः संगतिः सर्वदार्ढ्यः, सद्वृत्तानां  
 गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् । सर्वस्यापि प्रियहितवचो भाव-  
 ना चात्मतन्त्रे संपद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽप्यवर्गः ॥१॥ तव  
 पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् । तिष्ठतु जिनेन्द्र  
 तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः ॥२॥ अक्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च  
 अं मए भाखियं । तं खमहु णायदेव म लज्झवि दुक्खक्खयं

दितु ॥३॥ दुःखकृत्तमो कम्मकृत्तमो बोधिलाहो सुगङ्गमयं  
समाहिमरयं त्रिखगुणसंपत्ति होउ मउभम् ।

( अंचलिका समाधि भक्तिवत् )

## ५२ - निर्वाणभक्तिः ।

विबुधपतिखगपनरपतिधनदोरगभूतयक्षपतिमहितम् । अतुल  
सुखविमलनिरूपमशिवमचलमनामयं हि संप्राप्तम् ॥१॥ कन्याखैः  
संस्तोष्ये पंचमिरन्धं त्रिलोकपरमगुरुम् । भव्यजनतुष्टिजननैर्दुर्-  
वापैः सन्मतिं भक्त्वा ॥ २ ॥ आषाढमुसितषष्ठ्यां हस्तोत्तरम-  
ध्यमाश्रिते शशिनि । आयातः स्वर्गमुखं भुक्त्वा पुष्पोत्तराधीशः  
॥ ३ ॥ सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे । देव्यां  
प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान्संप्रदर्श्य विभुः ॥ ४ ॥ चैत्यसितपद्म-  
फाल्गुनि शशांकयोगे दिने त्रयोदश्याम् ॥ जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु  
सौम्येषु शुभलग्ने ॥५॥ इस्ताश्रिते शशांके चैत्रज्योत्स्ने चतुर्दशी-  
दिवसे । पूर्वाह्णे रत्नघटैर्विबुधेन्द्रारचक्रुरभिषेकम् ॥६॥ भुक्त्वा  
कुमारकाले त्रिंशद्वर्षाण्यनंतगुणराशिः । अमरोपनीतभोगान्सहसाः-  
भिनिबोधितोऽन्येषु ॥७॥ नानाविधरूपचितां विचित्रकूटोच्छ्रितां  
मखिविभूषाम् । चंद्रप्रभाख्यशिविकामारुह्य पुरादिनिःक्रान्तः ॥८॥  
मार्गशिरकृष्णदशमीहस्तोत्तरमध्यमाश्रिते सोमे । षष्ठेन त्वपराह्णे  
भक्तेन जिनः प्रवव्राज ॥९॥ ग्रामपुरखेटकर्वटमटंबघोषाकरान्प्रवि-  
जहार । उग्रैस्तपोविधानर्द्धादशवर्षाण्यमरपूज्यः ॥ १० ॥ अजु-

कृत्वायास्कीरेशालद्रुमसंश्रिते शिलापट्टे । अपराङ्खेष्ठेनास्थितस्य  
 खलु जृम्भिकाग्रामे ॥ ११ ॥ वैशाखसितदशम्यां हस्तोत्तरमध्य-  
 माश्रिते चंद्रे । लपकश्रेण्यारूढस्योत्पन्नं केवलज्ञानम् ॥ १२ ॥ अथ  
 भगवान् संप्रापद्दिव्यं वैभारपर्वतं रम्यम् । चातुर्वर्ण्यसुसंघस्तत्रा-  
 भूद्गौतमप्रभृति ॥ १३ ॥ छत्राशोकौ घोषं सिंहासनदुन्दुमी कुसुम-  
 वृष्टिम् । वरचामरमामंडलदिव्यान्यन्यानि चावापत् ॥ १४ ॥  
 दशविधमनगाराणामेकादशधोत्तरं तथा धर्मम् । देशयमानो  
 व्यहरत्त्रिंशद्दर्पाण्यथ जिनेन्द्रः ॥ १५ ॥ पञ्चवनदार्षिकाकुलविवि-  
 धद्रुमखण्डमण्डिते रम्ये । पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स  
 मुनिः ॥ १६ ॥ कार्तिष्कृष्णस्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्य कर्मरजः ।  
 अवशेषं संप्रापद्दिव्यजरामरमलयं सौख्यं ॥ १७ ॥ परिनिर्वृतं  
 जिनेन्द्रं ज्ञात्वा विबुधा ह्यथाशु चागम्य । देवतरुत्तचंदनकाला  
 गुरुसुरमिगोशीर्षैः ॥ १८ ॥ अग्नीन्द्राजिनदेहं मुकुटानलसुरमि-  
 धूपचरमान्यैः । अम्यर्च्य गणभरानपि गता दिव स्व च वनमवने  
 ॥ १९ ॥ इत्येवं भगवति वर्धमानचंद्रे, यः स्तोत्र पठति सुसंघ्य  
 योर्द्धयोर्द्धिं ॥ सोऽनंतं परममुखं नृदेवलोके भुक्त्वांति शिवपदमलय  
 प्रयाति ॥ २० ॥ यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां । निर्वाण-  
 भूमिरिह भारतर्षजानाम् ॥ तामद्य शुद्धमनसा क्रियया बभोभिः ।  
 संस्तोतुमुद्यतमतिः परिख्यौमि भवत्या ॥ २१ ॥ कलारुशैलशिखरे  
 परिनिवृत्तोऽसौ । शैलेशिमावस्युपपद्य वृषो महोत्तमा ॥ र्चपापुरे च  
 वसुपूज्यसुतः सधीमान् । सिद्धिपरास्युपगता गतरागबंधः ॥ २२ ॥  
 यत्रप्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः । पास्त्रिंशद्विभिरच परमार्थगवेष

शीलैः ॥ नष्टाष्टकर्मसमये तदरिष्टनेमिः । संप्राप्तवान् चित्तिधरे  
 बृहद्दर्जयन्ते ॥ २३ ॥ पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे । पञ्चोत्प-  
 लाकुलवतां सरसां हि मध्ये ॥ श्रीवर्द्धमानजिनदेव इति प्रतीतो ।  
 निर्वाणमाय भगवान्प्रविधूतपाप्मा ॥ २४ ॥ शेषास्तु ते जिनवरा  
 जितमोहमन्त्रा । ज्ञानाकंभूरिकिरणैरवभास्य लोकान् ॥ स्थानं  
 पर निरवधारितसौख्यनिष्ठं । सम्मेदपर्वततले समवांपुरीशाः  
 ॥२४॥ आद्यश्चतुर्दशदिनैर्विनिवृत्तयोगः । षष्ठेन निष्ठितकृति-  
 र्जिनवर्द्धमानः ॥ शेषा विधूतघनकर्मनिबद्धपाशाः मासेन ते  
 यतिवरास्त्वभवन्वियोगाः ॥ २६ ॥ मान्यानि वाक्स्तुतिमयैः  
 कुसुमैः सुहृन्वाद्यादाय मानसकरैरमित्रः किरंतः ॥ पर्येन आद्यति-  
 युता भगवन्निषद्याः । संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः ॥२७॥  
 शत्रुजये नगवरे दमितारिपचाः । पंडोः सुताः परमनिर्वृतिमभ्यु-  
 पेताः ॥तुङ्गयां तु संगरहितो बलभद्रनामा । नद्यास्तटे जितरिपुश्च  
 सुवर्णभद्रः ॥२८॥ द्रोणीमति प्रबलकुण्डलमेदके च । वैमारपर्वतले  
 वरसिद्धकूटे ॥ ऋष्याद्रिके च विपुलाद्रिबलाहके च, विष्ये च  
 पौदनपुरे वृषदीपके च ॥२९॥ सखावले च हिमवत्पि सुप्रतिष्ठे ।  
 दंडात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ ॥ ये साधवो इतमलाः सुगतिं  
 प्रयाताः । स्थानानि तानि जगति प्रथितान्यभूवन् ॥३०॥ इक्षो-  
 विकाररसपृक्तगुणेन लोके । पिष्टोऽधिकं मधुरतामृषयाति यद्वत् ॥  
 दद्रव पुण्यपुरुषैरुषितानि नित्यं । स्थानानि तानि जगतामिह  
 पावनानि ॥ ३१ ॥ इत्यर्हतं शमवतां च महासुनीनां । प्रोक्ता  
 मयात्र परिनिवृत्तिभूमिदेशाः ॥ ते मे जिना जितभया मुनयश्च



शान्ताः । दिश्वसुराशु सुगतिं निरवघसौक्याम् ॥ ३२ ॥  
 कैलासाद्रौ मुनीन्द्रः पुरुरपदुरितो मुक्तिमाप प्रखूतः । चंपार्या  
 वासुपूज्यस्त्रिदशपतिनुतो नेमिरपूज्यते ॥ पात्रार्या वर्षमान-  
 स्त्रिभुवनगुरवो विंशतिस्तोर्थनाथाः सम्मेदाग्रे प्रजग्मुर्ददतु विन-  
 मतां निवृत्तिं नो जिनेन्द्राः ॥ ३३ ॥ गौर्गजोश्वः कपिः काकः  
 सरोजः स्वस्तिकः शशी । मकरः श्रीयुतो वृक्षो गंडो महिषसूकरी  
 ॥ ३४ ॥ सेधा बज्रभृगच्छागाः पाठीनः कलशुस्तथा । कच्छप-  
 र्चोत्पलं शंखो नामराजश्च केसरी ॥ ३५ ॥ शान्तिकुंठ्वर-  
 कौरव्या यादवो नेमिसुव्रतौ ॥ उग्रनाथौ पार्श्ववीरौ शेषा इत्वाकु-  
 वंशजाः ॥ ३६ ॥ इच्छामि भंते ! परिशिखाणमसि .काउ-  
 स्सगो कथो तस्सालोचेउं, इमम्म अवसप्पिखीये चउत्थ-  
 संमयस्स पच्छिमे भाए आउडुमासहीखे वासचउकम्मि सेसका-  
 लम्मि पावाए शयरीए कत्तियमामस्स किएहचउदसीए रत्तीए  
 सादीए शकलत्ते पच्चूसे भयधदो महदि महावीरो बढढमाणो सिद्धिं  
 गदो । तिसुवि लोएसु, भवणवासिपवाणवित्तरजे।इसियकप्पवासि-  
 यत्ति चउव्विहा देवा सपरिवागा दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण पुप्फेण,  
 दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण वासेण, दिव्वेण यहाणेण,  
 शिषकालं, अच्चंति, पूजति, वंदति, शभंसंति, परिशिखाणमहा-  
 कल्लाणपुजं करंति । अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं शिचचकालं  
 अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, शभंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ,  
 बोहिलाहो, सुगईगमणं, समाहिमरणं, जिखुण्णसंपत्ति होउ मज्झं ॥

निर्वाणकाण्डं पठित्वेकामंचलिकां पठेत्

## ५४ नंदीश्वरभक्तिः ।

त्रिदशपतिमुकुतटगत्मणिगणकरनिकरसलिलधाराधौतक्रम-  
 कमलयुगलजिनपतिरुचिरंप्रतिविंबविलयविरहितनिलयान् ॥ ६ ॥  
 निलयानहमिह महसां सहसाप्रणिपतनपूर्वमवनौम्यवनौ । त्रय्यां  
 त्रय्या शुद्ध्या निसर्गशुद्धान्विशुद्धये धनरत्नसाम् ॥ २ ॥ भावन-  
 सुरभवनेषु द्वासप्ततिशतसहस्रसंख्याऽम्पधिकाः । कोटयः सप्त  
 प्रोक्ता भवनानां भूरितेजसां भुवनानाम् ॥ ३ ॥ त्रिभुवन  
 भूतविभूनां संख्यातीतान्यसंख्यगुणयुक्तानि ॥ त्रिभुवनजन-  
 नयनमनः प्रियाणि भवनानि भौमविभुधनुतानि ॥४ ॥ यावन्ति  
 सन्ति कान्तज्योतिर्लोकाधिदेवताभिनुतानि । कल्पेऽनेककल्पे  
 कल्पातीतेऽहमिन्द्रकल्पानल्पे ॥५॥ विंशतिरथ त्रिसहिता सहस्र-  
 गुणिता च सप्तनवति प्रोक्ता । चतुरधिकाशीतिरतः पंचकशून्येन  
 विनिसतान्यनघानि ॥६॥ अष्टापंचाशदत्तचतुःशतानीह मानुषे  
 च क्षेत्रे ॥ लोकालोकविभागप्रलोकनालोकसंयुजां जपमाजाम् ।७।  
 नवनवचतुःशतानि च सप्त च नवतिः सहस्रगुणिताः षट् च ।  
 पंचाशत्पंचवियत्प्रहताः पुनरत्र कोटयोऽष्टौ प्रोक्ताः ॥८॥ एतावत्स्येव  
 सतामकृत्रिमाण्यथ जिनेशिनां भवनानि । भुवनत्रितये त्रिभुवन-  
 सुरसमितिसमर्च्यमानसत्प्रतिमानि ॥ ९ ॥ वच्चारुरुचककुण्डलरी-  
 प्यनगोत्तरभुलेषुकारनगेषु । कुरुषु च जिनभवानि त्रिशतान्यधि-  
 कानि तानि षड्विंशत्या ॥ १० ॥ नंदीश्वरसद्वहीपे नंदीश्वरजं-  
 धिपरिद्धते धृतशोभे । चंद्रकरनिकरसंनिभरुद्रयशोविततदिङ्मही-

मंडलके ॥ ११ ॥ तत्रत्यांजनदधिमुखरतिकरपुरुनगवराख्यपर्वत-  
मुख्याः । प्रपिदिशमेषामुपरि त्रयोदशेन्द्रार्चितानि जिनभवनानि  
॥ १२ ॥ आषाढकार्तिकाख्ये फान्गुनमासे च शुक्लपक्षेऽष्टम्याः ।  
आरभ्याष्टदिनेषु च सौधर्मप्रमुखविबुधपतयो भक्त्या ॥ १३ ॥  
तेषु महामहमुचितं द्रव्युराक्षतगंधपुष्पधूपैर्दिव्यैः । सर्वज्ञप्रतिमाना-  
मप्रतिमानां प्रकुर्वते सर्वहितम् ॥ १४ ॥ मेदेन वर्धना का सौधर्मः  
स्नपनकर्तृतामापन्नः । परिचारकभावमिताः शेषेन्द्रा रुन्द्रचंद्रनिर्म-  
लयशसः ॥ १५ ॥ मंगलपात्राणि पुनस्तद्देव्यो विभ्रति स्म शुभ्र-  
गुणाढ्याः । अप्सरसो नर्तक्यः शेषमुरास्तत्र लोकनाभ्यग्रभियः  
॥ १६ ॥ वाचस्पतिवाचामपि गोचरतां संव्यतीत्य यत्क्रममा-  
शम् ॥ विबुधपतिविहितविभवं मानुषमात्रस्य कस्य शक्तिः स्तोतुम्  
॥ १७ ॥ निष्ठापितजिनपूजाश्चूर्णास्नपनेन दृष्टविकृतविशेषाः । सुर-  
पतयो नंदीश्वरजिनभवनानि प्रदक्षिणीकृत्य पुनः ॥ १८ ॥ पंचसु  
मंदरगिरिषु श्रीमद्रशालनंदनसौमनसम् । पांडुकवनमिति तेषु  
प्रत्येकं जिनगृहाणि चत्वार्येव ॥ १९ ॥ तान्यथ परीत्य तानि च  
नमसित्वा कृतसुपूजनास्तत्रापि । स्वास्पदमीयुः सर्वे स्वास्पद-  
मून्यं स्वचेष्टया संगृह्य ॥ २० ॥ सहतोरणसद्वेदीपरीतवनयाग-  
वृक्षमानस्तंभ- । ध्वजपंक्तिदशकगोपुरचतुष्टयत्रितयशालमंडपवयैः  
॥ २१ ॥ अभिषेकप्रेषणिका क्रीडनसंगीतनाटकालोकगृहैः ।  
शिन्धिपिकल्पितकल्पनसंकल्पातीतकल्पनैः समुपेतैः ॥ २२ ॥  
वापीसत्पुष्करिणीसुदीर्घिकाद्यम्बुसंभ्रितैः समुपेतैः । विकसितजल-  
रुहकुसुमर्नभस्यमानैः शशिशहचैः शरदि ॥ २३ ॥ भृङ्गाराद्वक-

कलशाद्युपकरशौरष्टशतकपरिसंख्यानैः । प्रत्येकं चित्रगुणैः कृतभ्रू-  
 ऋणनिनदविततघंटाजालैः ॥ २४ ॥ प्रविभाजंते नित्यं हिरण्यमय-  
 यानीश्वरेशिनां भवनानि । गंधकुटीगतमृगपतिविष्टरुचिराणि  
 त्रिविधविभवयुतानि ॥ २५ ॥ येषु जिनानां प्रतिमाः पंचशतशरा-  
 सनोच्छ्रिताः सत्प्रतिमाः । मणिकनकरजतविकृता दिनकरकोटि-  
 प्रभाधिकप्रभदंदाः ॥ २६ ॥ तानि सदा वंदेऽहं भानुप्रतिमानियानि  
 कानि च तानि । पशसां महसां प्रतिदिशमतिशयशोभाविमांजि  
 पापविमंजि ॥ २७ ॥ सप्तत्यधिकशतप्रियधर्मक्षेत्रगततीर्थकरवर-  
 वृषमान् । भूतभविष्यत्संप्रतिकालभवान्भवविहानये विनतोऽस्मि  
 ॥ २८ ॥ अस्वामवमर्षिण्यां वृषमजिनः प्रथमतीर्थकर्ता भर्ता ।  
 अष्टापदगिरिमस्तकगतस्थितो मुक्तिमाप पापान्मुक्तः ॥ २९ ॥  
 श्रीवासुपूज्यभगवान् शिवासु पूजासु पूजितस्त्रिदशानां । चंपायां  
 दुरितहरः परमपदं प्रापदापदामन्तगतः ॥ ३० ॥ मुदितमतिबल-  
 मुरारिप्रपूजितो जितकषायरिपुरथ जातः । बृहदर्जयन्तशिखरे  
 शिखामणिस्त्रिभुवनस्य नेमिर्भगवान् ॥ ३१ ॥ पावापुरवरसरसां  
 मध्यगतः सिद्धिषुद्धितपसां महर्सा । वीरो नीरदनादो भूरिगुण-  
 श्चारुशोभमास्पदमगमत् ॥ ३२ ॥ सम्मदकरिवनपरिवृत्त-सम्मे-  
 दगिरोन्द्रमस्तके विस्तीर्णं । शेषा ये तीर्थकराः कीर्तिभृतः प्रार्थि-  
 तार्थसिद्धिमवापन् ॥ ३३ ॥ शेषाणां केवलिनामशेषमतवेदि-  
 गणभृतां साधूनां । गिरितलविवरदरीसरिदुरुवनतरु-विटपिञ्ज-  
 त्रिदहनशिखामु ॥ ३४ ॥ मोक्षगतिहेतुभूतस्थानानि सुरेन्द्ररुद्रम-  
 क्तिनुतानि । मंगलभूतान्वेतान्यङ्गीकृतधर्मकर्मणामस्माकम् ॥ ३५ ॥

जिनपतयस्तत्प्रतिमास्तदालयास्तन्निषयका स्थानानि । ते तारच  
 ते च तानि च भवन्तु भवघातहेतवो भव्यानाम् ॥३६॥ संध्यासु  
 तिस्रुषु नित्यं, पठेद्यदि स्तोत्रमेतदुत्तमयशसाम् । सर्वज्ञानां सार्व,  
 लघु लभते श्रुतधरेद्धितं पदममितम् ॥ ३७ ॥ नित्यं निःस्वेदत्वं  
 निर्मलता क्षीरगौररुधिरत्वं च । स्वाद्याकृतिसंहने सौरूप्यं सौरभं  
 च सौलचयम् ॥ ३८ ॥ अप्रमितवीर्यता च प्रियद्वित्वादित्वमन्य-  
 दमितगुणस्य । प्रथिता दशसंख्याता स्वतिशयधर्माः स्वयंभुवो  
 देहस्य ॥ ३९ ॥ गव्यूतिशतचतुष्टयसुभिन्नतागगनगमनमप्राधि-  
 वधः ॥ भुक्त्युपसर्गाभावश्चतुरास्यत्वं च सर्वविद्येश्वरता ॥४०॥  
 अञ्छायत्वमपचमस्पंदश्च समप्रसिद्धनखकेशत्वं । स्वतिशयगुणा  
 भगवतो घातिचंद्रजा भवन्ति तेपि दशैव ॥ ४१ ॥ सार्वार्धमाग-  
 धीया भाषा मैत्री च सर्वजनताविषया । सर्वतु फलस्तवकप्रवाल-  
 कुसुमोपशोभिततरुपरिष्णामा ॥ ४२ ॥ आदर्शतलप्रतिमा रत्नमयी  
 जायते मही च मनोज्ञा । विहरणमन्वेत्यनिलः परमानंदश्च भवति  
 सर्वजनस्य ॥ ४३ ॥ मरुतोऽपि सुरभिर्गंधव्यामित्रा योजनान्तरं  
 भूभागं । व्युपशमितधूलिकंटकतृणकीटकशर्करोपलं प्रकुर्वन्ति ॥४४॥  
 तदनु स्तनितकुमारा विद्युन्मालाविलासहासविभूषाः । प्रकिरन्ति  
 सुरभिर्गंधिं गंधोदकवृष्टिमाज्ञया त्रिदशपतेः ॥ ४५ ॥ वरपञ्चराग-  
 केसरमतुलसुखस्पर्शहेममयदलनिचयम् । पादन्यासे पद्मं सप्त  
 पुरः पृष्टतश्च सप्त भवन्ति ॥४६॥ फलभारनम्रशालित्रीक्षादिसम-  
 स्तसस्यधृतरोमांचा । परिहृषितेव च भूमिस्त्रिभुवननाथस्य वैभवं  
 पश्यन्ती ॥४७॥ शरदुदयविमलसलिलं सर इव गगनं विराजते

विगतमलम् । जहति च दिशस्तिमिरिकां विगतरजःप्रभृतिजिह्वा-  
तामावं सद्यः ॥४८॥ एतेतेति त्वरितं ज्योतिर्व्यंतरदिबौकसाम-  
मृतभुजः । कुलिशमृदाज्ञापनया कुर्वन्त्यन्ये समन्ततो व्याह्वानम्  
॥ ४९ ॥ स्फुरदरसहस्ररुचिरं त्रिमलमङ्गारस्नकिरणनिकरपरीतम् ।  
प्रहसितकिरणसदृसद्युतिमंडलमग्रगामिं धर्मसुचक्रम् ॥ ५० ॥  
इत्यष्टमंगलं च स्वादर्शप्रभृति भक्तिरागपरीतैः । उपकल्प्यन्ते त्रिद-  
शैरेतेऽपि निरुपमातिविशेषाः ॥ ५१ ॥ वैदूर्यरुचिरविटपप्रवाल-  
सृदुपल्लवोपशोमितशास्त्रः । श्रीमानशोकशुद्धौ वरमरकतपत्रगहन-  
बहलच्छायः ॥५२॥ मंदारकुन्दकुवलयनीलोत्पलकमलमालतीवकु-  
लाद्यैः । समदभ्रमरपरीतैर्व्यामिश्रा पतति कुसुमशृष्टिर्नग्नसः ॥५३॥  
कटकटिभ्रत्रकुण्डलकेयूरप्रभृतिभूषितांगौ स्वंगौ । यद्यौ कमल-  
दलाद्यौ परिनिक्षिपतः सलीलचामरयुगलम् ॥५४॥ आकस्मि-  
कमिव युगपद्विसरसरसहस्रमपगतव्यवधानम् । मामंडलमविभा-  
वितरात्रिदिवमेदमतितरामाभाति ॥ ५५ ॥ प्रबलपवनाभिघात-  
प्रक्षुभितसमुद्रघोषमन्द्रध्वानम् । दंष्ट्रन्यते सुवीणावंशादिसुबाद्यदु-  
न्दुमिस्तालसमम् ॥ ५६ ॥ त्रिभुवनपतितालाञ्जनमिन्दुत्रयतुल्यम-  
तुलमुक्ताजालम् । छत्रत्रयं च सुबृहद्वैदूर्यविकल्पतदंडमधिकमनोज्ञम्  
॥५७॥ ध्वनिरपि योजनमेकं प्रजायते श्रोत्रहृदयहारिगमीरः ।  
ससलिलजलधरपटलध्वनितमिव प्रविततान्तराशावलयम् ॥५८॥  
स्फुरितांशुरत्नदीधितिपरिविचक्रुरितामरेन्द्रचापच्छायम् । ध्रियते  
भृगेन्द्रवर्षैः स्फटिकशिलाघटितसिंहविष्टरमतुलम् ॥५९॥ यस्येह  
चतुस्त्रिंशत्प्रवरगुणा प्रातिहार्यं लक्ष्यश्चाष्टौ तस्मै नमो भगवते

त्रिभुवनपरमेश्वरार्हते गुणमहते ॥ ६० ॥ इच्छामि भंते ! षांदी-  
सरमत्तिकाउत्सर्गो कश्चा । तस्सालोचेउं षांदीसरदीवम्मि चउ-  
दिसिविदितासु अंजणदधिमुहरदिकरपुरुषगवरेसु जाणि जिण-  
चेइयाणि ताणि सब्वाणि तिसुवि लोएसु भवणवासियवाणवितर-  
जेइसियकप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेहि गंधेहि,  
दिव्वेहि पुप्फेहि, दिव्वेहि धुव्वेहि, दिव्वेहि चुण्णोहि, दिव्वेहि  
वासेहि, दिव्वेहे एहाणेहि आसाढकत्तियफागुणमासाणं अट्टमि-  
माहं काऊण जाव पुण्णमंति णिच्चकालं अच्चंति पूजन्ति, वंदंति,  
णमंसंति, षांदीसरमहाकल्लाणं करंति । अहमविं इह संतो तत्थ-  
संताइं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्ख-  
क्खओ, कम्मक्खओ, बोद्धिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं,  
जिणगुणसंपत्ति होउ मज्जं ॥

## ५५-द्वैवसिकरात्रिकप्रतिक्रमणम् ।

जीवे प्रमादजनिताः प्रचुराः प्रदोषा

यस्मात् प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति ।

तस्मात्तदर्थममलं मुनिबोधनार्थम्

वक्ष्ये विचित्रभवकर्मविशोधनार्थम् ॥१॥

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया मायाविना लोमिना

रागद्वेषमलीमसेन मनसा दुष्कर्मयन्निर्मितम् ।

त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र ! भवतः श्रीपादमूलेऽधुना

निन्दापूर्वमहं जहामि सततं वर्धतिषुः सत्पथे ॥२॥

खम्मामि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे ।

मिच्ची मे सव्वभूदेसु वेरं मज्झं ण केष वि ॥३॥

रागबंधपदोसं च हरिसं दीणभावयं ।

उभ्सुगत्तं मयं सोग रदिमरदिं च वोस्सरे ॥४॥

हा ! दुड्ढकयं हा ! दुड्ढचितियं भासियं च हा दुड्ढं ।

अंतोअंतो डज्झामि पच्छुत्तावेण वेदंतो ॥५॥

दव्वे खेत्ते काले भावे य कदावराहसोहणयं ।

खिंदणअरहणजुत्तो मणवचकारएण पट्टिमणं ॥६॥

एइंदिया, वेइन्दिया, तेइन्दिया, चतुरिंदिया, पंचिद्रिया, षुठ-  
विअइया, आउकाइया, तेउकाइया, वाउकाइया, वणफफदिकाइया,  
तसकाइया, एदेसिं उदावणां परिदावणां विराहरणां उवघादो कदो  
वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुवकहं ।

वदसमिदिदिपरे।धो लोचो आवासयमचेलमणहाणं ।

खिदिसयणमदंतवणां ठिदिमोयणमेयभर्णा च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा समणाणां जिणवरेहिं पएणत्ता ।

एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥ २ ॥

छेदोवट्टावणां होदु मज्झं ।

पंचमहाब्रह्म-पंचसमिति-पंचेंद्रियरोध-लोच-बडावरयकक्रिया  
अष्टाविंशतिमूलगुणाः उत्तमद्वयमार्दवार्जवशौचसत्यसंयमतप-  
स्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि दशलोचणिको धर्मः, अष्टादशशील-



सदस्राण्ये, चतुरशीतिलक्षगुणाः, त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं  
तपश्चेति सकलं सम्पूर्णं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुसाक्षिकं,  
सम्पत्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ।

अथ सर्वातिचारविशुद्धयर्थं दैवसिकप्रतिक्रमणक्रियायां कृत-  
दोषनिराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजाबन्ध-  
नास्तवसमेतं आलोचनासिद्ध भक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं--

इति प्रतिज्ञाप्य एमो अरहंताणमित्यादि सामायिकदंडकं पठित्वा कायो-  
त्सर्गं कुर्यात् । शोसामीत्यादि (चतुर्विंशतिस्तवं पठेत्)

श्रीमते वर्धमानाय नमो नमितविद्विषे ।

यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदायते ॥१॥

तवसिद्धे शयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।

शाश्वमि दंशश्वमि य सिद्धे सिरसा श्वमंशामि ॥ २ ॥

इच्छामि भते ! सिद्धभक्तिकाश्रोसगो कश्चो तस्सालोचेडं,  
सम्मखाश्वसम्मदंसश्वसम्मचरित्तजुत्तायां, अद्भुविहकम्मसुक्काणां,  
अद्भुगुणसंपण्णाणां, उद्दुलोयमत्थयमि पपिट्टियाणां, तवसिद्धाणां  
शयसिद्धाणां, संजमसिद्धाणां, चरित्तसिद्धाणां, अतीदाखागदवट्टमाश-  
कालत्तयसिद्धाणां, सन्वसिद्धाणां शिञ्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि  
श्वमंशामि दुक्खकञ्जओ कम्मक्खओ बोहिलाहे सुगइगमणां  
समाहिमरथां जिखगुणसंपत्ती होउ मज्झ ।

आलोचना--

इच्छामि भते ! चरित्तापागे तेरसदिदो परिविहाविदो, पंच-  
महव्वदाश्व पंचसमिदीओ तिगुत्तोओ वेदि । तत्थ पढमे महव्वदे

पाशादिवादादो वेरमणं, से पुढविकाइया जीवा असंखेजासंखेजा,  
आउकाइया जीवा असंखेज्जा संखेजा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जा-  
संखेज्जा, वाउकाइया जीवा असखेज्जासंखेज्जा, वण्फदिकाइया  
जीवा अणता हरिआ वीआ अंकुरा छिएणा भिएणा, तेसिं उदा-  
वण परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो  
वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ १ ॥

वेइन्दिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खिकिमि-संखेखुण्णुय-  
वराहय-अक्ख-रिट्ठवाल-संबुक्क-सिप्पि-पुलविकाइया तेसिं  
उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादे कदो वा कारिदो वा  
कीरंतो वा समणुमणिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ २ ॥

तेइंदिया जीवा असंखेजासंखेज्जा कुण्यु-इहिय-विद्धिय-  
गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, तेसिं उदावणं परिदावणं  
विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो  
तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ ३ ॥

चउरिदिया जीवा असंखेजासंखेजा दंसमसय-मक्खि-पयग-  
कीड-मनर-महुयर-गोमच्छियाइया, तेसिं उदावणं परिदावणं विरा-  
हणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो  
तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ ४ ॥

पंचिदिया जीवा असंखेजासंखेजा अंढाइया पोदाइया जरा-  
इया रसाइया ससेदिमा समुच्छिमा उम्भेदिमा उववादिमा अवि  
चउरासीदिजोखिपम्महसदसहस्सेसु, एदेसिं उदावणं परिदावणं  
विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिदो

तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ ५ ॥

प्रतिक्रमणपीठिकादण्डकः—

इच्छामि मंते ! देवसियम्मि (राईयम्मि) आलोचेउं, पंच-  
महव्वदाणि, तत्थ पढम महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं, विदिय  
महव्वदं मुसावादादो वेरमणं, तिदिय महव्वदं अदत्तादाणादो  
वेरमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वद परि-  
ग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राईभोयणदो वेरमणं, ईरियासमि-  
दीए भासासमिदीए, एसखासमिदीए आदाननिक्खेवएसमि दीए,  
उच्चारपस्सवण-खेल सिंहाण-विपडिपइट्ठावणियासमिदीए, मणुगु-  
त्तीए वचिगुत्तीए कायगुत्तीए, णाणेसु दंसणेसु चरिचेसु, बावीसाए  
परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्टारस-  
सीलसहस्सेसु, चउरासीदिगुणसयसहस्सेसु, वारसएहं मंजमाणं,  
वारसएहं तवाणं, वारसएहं अङ्गाणं चोदसएहं पुब्बाणं, दसएहं  
मुएडाणं दसएहं समणधम्माणं, दसएहं धम्मज्झाणाणं णवएह  
बंमचेरगुत्तीणं णवएहं खोकसायाणं, सोलसएहं वसायाणं  
अट्टएहं कम्माणं, अट्टएहं पवयणमाउयाणं, अट्टएहं सुद्धीणं, सत्तएहं  
मयाणं, सत्तविहसंसाराणं, छएहं जीवणिकायाणं छएहं आवास-  
याणं, पचएहं इन्दियाणं, पंचएहं महव्वयाणं, पंचएहं चरित्ताणं,  
चउएहं सएणाणं, चउएहं पच्चयाणं, चउएहं उवसग्गाणं, मूल-  
गुणाणं, उशरगुणाणं, दिट्ठियाए पुट्ठियाए पदोशियाए परदाव-  
खियाए, से कोहेण वा माणेण वा माएण वा लोहेण वा रोणेण वा  
दोसेण, वा मोहेण वा हस्सेण वा मएण वा पदोसेण वा पमादेण

वा पिम्भेष वा पिवासेष वा लज्जेष वा गारवेष वा, एदेसि  
अच्चास्यदाए, तिएहं टंडार्यं, तिएहं ल्लेस्साणं, तिएहं गारवाणं  
दोएहं अट्टरुहसंकिलेस-परिणामाणं, तिएहं अप्पसत्थसंकिलेस-  
परिणामाणं मिच्छयाण-मिच्छदंसण-मिच्छचरित्ताणं; मिच्छत्त-  
पाउग्गं, असंयमपाउग्गं, कसायपाउग्गं, जोगपाउग्गं, अपाउग्ग-  
सेवणदाए, पाउग्गगरहणराए इत्थं मे जो कोई देवसिओ राईओ  
अदिककमो वदिककमो अइचारो अणाचारो आमोगो अणाभोगो  
तस्स भते ! पडिककमामि, मए पडिककनं तस्स मे सम्मत्तमरणं  
समाहिमरणं पंडियमरणं वीरियमरणं दुक्खक्खओ कम्मक्खओ  
वाहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपचिहोउमज्झं॥२॥

वद समिदिंदियरोषो लोचो आवासयमचेलमएहाणां ।

खिदिसयणमदंतवणां ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥ १ ॥

एदे खलु मूलगुणा समणाणां जिणवरेहिं पएणत्तो ।

एत्थ पमादकदादा अइचारादो खियत्तो इं ॥ २ ॥

छेदोवट्ठावणां होदु मज्झं ।

( इतिक्रमणपीठिकादंडकः । )



अथ सर्वातिचारविशुद्धयर्थं दैवसिक (रात्रिक) प्रतिक्रमण-  
क्रियायां कृतदोषनिराकरणार्थपूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं  
भावपूजावन्दनास्त्वसमेतीश्रीप्रतिक्रमणमक्तिकायोत्सर्गकरोम्यह-  
णमो अरहंताणं (इत्यादि दंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् ।  
अनन्तरं) योरुपामीत्यादी (पठेत्)

( निषिद्धिकादंढकाः )

शमो अरहंताणं शमो सिद्धाणं शमो आद्वीयाणं ।

शमो उवज्ज्जायाणं शमो लोए सव्वसाहूणां ॥ ३ ॥

शमो जिणार्या ३, शमो शिस्सिहीए ३, शमोत्थु दे ३,  
अरहंत ! सिद्ध ! बुद्ध ! शोरय ! शिम्मल ! सममण ! सुभमण !  
सुसमत्थ ! समजोग ! समभाव ! सल्लघट्ठाण सल्लघत्ताण !  
शिब्भय ! शीराय ! शिहोस ! शिम्मोइ ! शिम्मम ! शिस्सङ्ग !  
शिस्सल्ल ! माया-माय-मोस मूरण ! तवप्पहावणा ! गुणारया-  
सीलसायर ! अणंत ! अप्पमेय ! महदिमहारवीरवड्ढमाणबुद्धरि-  
सिणो चेदि शमोत्थु ए शमोत्थु ए गमोत्थु ए ।

मम मंगलं अरहंता य सिद्धा य बुद्धा य जिणा य केव-  
ल्लिणो ओहिणाणिणो मणपज्जवणाणिणो चउदपपुब्बंगमिणो  
सुदसमिदिसमिद्धा य तवो य वारहविहो तवस्सो, गुणा य गुण  
वंतो य, महरिसी तित्थं तित्थंकरा य, पवयणं पवयणी य, शायां  
शाया य, दंसणं दंसणी य संजमो संजदा य, विणीओविणदा  
य, बंभचेरवासो बंभचारी य, गुत्तीओ चैव गुत्तिमंतो य, मुत्तीओ  
चैव मुत्तिमंतो य, मुत्तोओ चैव मुत्तिमंतो य, समिदीओ चैव  
समिदिमंतो य, सुसमयपरसकपविद्, खंतिक्खवणा य खंतिदंतो  
य खीणमोहा य खोणवंतो य, बोहियबुद्धा य बुद्धिमंतो य,  
चेह्यरुक्खा य चेहयाणि ।

उड्ढमहतिरियलोए सिद्धायदणाणि शमंसामि, सिद्धशिषी-  
हियाओ अट्ठावयपव्वए सम्मेदे उज्जते र्त्तपाए पावाए मज्झि

माय हृत्थिवालिपसहाए जाओ अएखाओ काओवि शिसीदि-  
याओ जीवलोयम्मि, इतिपञ्चभारतलगयाणं विद्वाणं बुद्धाणं  
कम्मचककमुक्काणं शीरयाणं शिम्मलाणं गुरु-आइरिय-उवज्झा-  
याणं पञ्चत्ति.त्थेर कुल-यराणं चाउअणो य समणपणो य भर-  
हेरावएसु दससु पवसु महाविदेहेसु । जे लोए संति साइवो  
संजदा तवसो एदे मम मंगलं पविचं । एदेहं मंगलं करोमि  
भावदो विसुद्धो सिरसा अहिवंदिऊण सिद्धे काऊण अज्जलि मत्थ-  
यम्मि. तिविहं तियरणमुद्धो ॥ ६ ॥

( इति निषिद्धिकादण्डकः । )

पडिक्कमामि भंते ! देवसियस्स अइचारस्स अणाचारस्स  
मखदुच्चरियस्स वविदुच्चरियस्स कायदुच्चरियस्स खाणाइचार-  
स्स दंसणाइचारस्स तवाइचारस्स वीरियाइचारस्स चारित्ताइचा-  
रस्स । पंचएहं महव्वयाणं पंचएहं समिदीणं तिएहं गुचीणं छएह  
आवासयाणं छएह जीवणिकायाणं विराहणाए पील कदो वा  
कारिदो व कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं । १ ।

पडिक्कमामि भंते ! अइगमणे शिग्गमणे ठाणे गमणे  
चंक्रमणे उव्वत्तणे आउन्टणे पसारणे आमामे परिमामे कुइदे  
कक्कराइदे चलिदे शिसएणो सयणे उव्वट्टणे परियट्टणे एइन्दि-  
याणं वेइन्दियाणं तेइन्दियाणं चउरिंदियाणं पंचिंदियाणं जीवाणं  
संघट्टणाए संघादणाए उदावणाए परिदावणाए विराहणाए एत्थ  
मे जो कोई देवसिओ राईओ अदिकरुमो वदिकरुमो अइचारो  
अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ २ ॥

पढिक्रमामि भंते ! इरियावहियाए विराहणाए उडहमुहं चरतेण वा अधोमुहं चरतेण वा तिरिमुहं चरतेण वा दिसिमुहं चरतेण वा विदिसिमुहं चरतेण वा पाणचंक्रमणदाए वीयचंक्रमण-  
दाए हरियचंक्रमणदाए उत्तिग-पणय-दय मड्डिय-मककडय-तंतु-  
सत्ताण चक्रमणदाए पुढविकाइयसंघट्टणाए आउकाइय संघट्टणाए  
तेउकाइयसंघट्टणाए वाउकाइयसंघट्टणाए वणफुदिकाइयसंघट्टणाए  
तसकाइयसंघट्टणाए उदावणाए परिदावणाए विराहणाए इत्थ मे  
जो कोई इरियावहियाए अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे  
दुक्कडं ॥ ३ ॥

पढिक्रमामि भंते ! उच्चा-पस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडियपह  
ट्टावणियाए पड्डावणतेण जे केई पाणा वा भूदावा जीवा वा सत्ता  
वा संघट्टिदा वा संघादिदा वा उदाविदा वा परिदाविदा वा इत्थ  
मे जो कोई देवसिओ गइओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा  
मे दुक्कड ॥ ४ ॥

पढिक्रमामि भंते ! अणेसणाए पाणभोगणाए पणयभोगणाए  
वीयभोगणाए हरियभोगणाए आहाकम्मेण वा पच्छाकम्मेण वा  
पुराकम्मेण वा उदिट्टयडेण वा णिदिट्टयडेण वा दयसंसिद्धयडेण वा  
रससंसिद्धयडेण वा परिसाद णयाए पड्डावणियाए उहे सियाए  
निहे सियाए कीदयडे मिस्से जादे ठविदे भइदे अणसिद्धे वलिपा-  
हुडदे पाहुडदे घट्टिदे मुच्छिदे अइमत्तभोगणाए इत्थ मे जो कोई  
गोवरिस्स अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ५ ॥

पढिक्रमामि भंते ! समण्हिदियाए विराहणाए इत्थिविप्य-

रियासियाए दिाड्विप्परियासियाए मणविप्परियासियाए वचि-  
विप्परियासियाए कायविप्परियासियाए भोयखविप्परियासियाए  
उच्चावयाए सुमए दंसएविप्परियासियाए पुञ्जरए पुब्बखेलिए  
यायाचितासु तिसोतिवासु इत्य मे जो कोई देवसिओ राईओ  
अइचारो अणचारा तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ६ ॥

पडिक्कमामि भंते ! इत्थीकडाए अत्थकहाए भत्तकहाए राय-  
कहाए चोरकहाए वेरकहाए परपासंडकहाए देसकहाए भासकहाए  
अकहाए विकहाए शिट्टुण्लकहाए परपेसुण्णकहाए कदप्पियाए  
कुक्कुच्चियाए उंवरियाए मोक्खरियाए अप्पपंसंसादाए परपरिवा-  
दयादाए परदुगंछयादाए परपीडाकराए सावजाणुभोयणियाए  
इत्य मे जो कोई देवसिओ राईओ अइचारो अणचारा तस्स  
मिच्छा मे दुक्कड ॥ ७ ॥

पडिक्कमामि भंते ! अट्टज्जाणे रुहज्जाणे इहलोयसएणाए  
परलोयसएणाए आहारसएणाए भयसएणाए मेहुखसएणाए परि-  
ग्गहसएणाए केहसन्लाए माणसन्लाए मायसन्लाए लोहसन्लाए  
पेम्मसन्लाए पिवाससन्लाए णियाणसन्लाए मिच्छाटंसणसन्लाए  
काहकसाए माणकसाए मायकसाए लोहकसाए किएहलेस्सपरिणामे  
शीललेस्सपरिणामे काउलेस्सपरिणामे आरम्मपरिणामे परिग्गह-  
परिणामे पडिसयाहिलासपरिणामे मिच्छादहणपरिणामे असंजम  
परिणामे पावज्जोगपरिणामे कायसुहाहिलासपरिणामे सहेसु रूवेसु  
गंधेसु रसेसु फासेसु काइयाहिकरणियाए पदोसियाए पारंदाव-  
णियाए पाणाइवाइयासु इत्य मे जो कोई देवसिओ राईओ



अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ८ ॥

पडिक्कमामि भंते एक्के भावे अणाचारे, वेसु रायदोसेसु, तीसु दंडेसु, तीसु गुत्तीसु, तीसु गारवेसु, चउसु कसाएसु, चउसु सण्णासु पंचसु महव्वएसु, पंचसु समिदीसु छसु जीवणिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु मणसु, अट्टसु मएसु, णवसु गंभचेरगुत्तीसु, दसविहेसु समणधम्मेषु, एयारसविहेसु उवासयपडिमासु, वारसविहेसु भिक्खुषडिमासु, तेरसविहेसु किरियाट्ठाणेषु, चउदसविहेसु भूदगामेषु, पण्णारसविहेसु पमायठाणेषु, सोलसविहेसु पवयणेषु सत्तारसविहेसु असंजमेषु, अट्टारमविहेसु असंपराएसु, उणवीसाण णाहज्जाणेषु, वीसाण असमादिट्ठाणेषु, एक्कवीसाण सवलेसु, बावीसाण परीसहेसु, तेवीसाण सुदपडज्जाणेषु, चउवीसाण अरहंतेसु, पणवीसाण भावणासु, पणवीसाण किरियट्ठाणेषु, छवीसाण पुढवीसु, सचावीसाण अणगारगुणेषु, अट्ठावीसाण सुआयारकप्पेषु एउणतीसाण पावसत्तपसंगेसु, तीसाण मोहणीठाणम् एक्कतीसाण कम्मविवाएसु, वत्तीसाण जिणोवएसेषु, तेत्तीसुसाण अच्चासणदाण, संखेवेण जीवाण अच्चासणदाण, अजीवाणं अच्चासणदाण, णाणस्स अच्चासणदाण, दंसणस्स अच्चासणदाण, अरत्तस्स अच्चासणदाण, तवस्स अच्चासणदाण, वारियस्स अच्चासणदाण, तं सब्बं पुब्बं दुच्चरिय गरहामि, आगामेसीएसु पच्चुपण्णं इक्कंतं पडिक्कमामि, अणागयं पच्चक्खामि, अगरदियं गरहामि, अल्लिदियं णिंदामि, अणालोच्चियं आलोचेमि, आराहणमच्छुद्धेमि, विराहणं पडिक्कमामि इत्थ मे जो वेई देवसिओ

राईओ अइचारो अखाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ६ ॥

इच्छामि भंते ! इमं शिग्गंथं पावयएणं अणुत्तरं केवलियं पडिपुएणं शेगाइयं सामाइयं संसुद्धं सल्लघट्टायां सल्लघट्टायां सिद्धि-  
मग्गं सेट्ठिमग्गं खंतिमग्गं मुत्तिमग्गं पमुत्तिमग्गं मोक्खमग्गं पमोक्ख-  
मग्गं शिज्जाणमग्गं शिञ्चाणमग्गं सच्चदुक्खपरिहायिमग्गंसुचरियप-  
रिशिञ्चाणमग्गंअवित्तहं अविसंति पवयएणंउत्तमं तं सहहामि तं पत्ति-  
यामि तं रोचेमि तं फासेमि इदोत्तरं अएणंअत्थि ख भूदं (ख भवं)  
ख भविस्सदि खाखेण वा दंसखेण वा चरिणेण वा सुचेण वा  
इदो जीवा भिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिणिब्बयंति सच्चदुक्खा-  
णमतं करंति पडिवियाणंति समखोमि संजदोमि उवरदोमि  
उत्तसंतोमि उवहिशियडिमायमोसमिच्छत्ताण-मिच्छदंसण-  
मिच्छचरिचं च पडिन्निरदोमि, सम्मखाण-सम्मदंसण-सम्मचरिचं  
च रोचेमि जं जिणवरेदिं पएणचं, इत्थ मे जो कोई देवसिओ  
राईओ अइचारो अखाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१०॥

पडिक्कमामि भते ! सच्चस्स सच्चकालियाए इरियासमिदीए  
भासासमिदीए एसणासमिदीए आदाणनिक्खेवणासमिदीए उष्वा-  
रपस्सवणखेलसिहाणयत्रियडिपइट्टाव-शिसमिदीए मणगुत्तीए वचि-  
गुत्तीए कायगुत्तीए पाणादिवादादो वेरमणाए मुसावादादो  
वेरमणाए अदिण्णादाणादो वेरमणाए मेहुणादो वेरमणाए, परि-  
ग्गहादो वेरमणाए राईमोयणदो वेरमणाए इत्थ मे जो कोई देव-  
सिओ राईओ अइचारो अखाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥११

इच्छामि भंते ! वीरभत्तिकाउस्समो जो मे देवसिओ

राईओ अइचरो अशाचरो आमोगो अशाभोगो काइओ वावओ  
 माखसिओ दुखिंतीओ दुन्मासिओ दुप्पारिखामीओ दुस्समिणीओ  
 खाखे दंसखे चरिरे सुत्ते समाइए, पंचएहं महव्वयाणं पंचएहं  
 समिदीयां, तिएहं, गुत्तीयां, छएहं जीवणिकायायां, छएहं आवासयाए  
 विराहयाए अट्टविहस्स कम्मस्सशिग्घादयाए अएणहा उस्सासिएण  
 वा खिस्सासिएण वा उम्मसिएण वाणिम्मिसि १ण वा खासेएण  
 वा किंकिएण वा जंमाइएण वा सुहुमेहिं अङ्गचलाचलेहि दिट्ठिच-  
 लाचलेहिं, एदेहिं सन्वेहिं असमाहिपचेहिं आयारेहिं जाव अरहं-  
 तायां भयवतायां पज्जुवासां करेमि ताव कायां पावकम्मं दुच्चरियां  
 वोस्सरामि ।

वदसमिदिदियरोघो लोचो आवासयमचेलमवहार्यां ।

खिदिसयणमदंतवणां ठिदिभोयणमेयमचं च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा समणार्यां जिणदरेहिं पएणत्ता ।

एत्थ पमादकदादो अइचारादो खियणो हं ॥२॥

छेदोवट्टावणां होहु मज्जं ।

अथ सर्वातिचारविशुद्धयर्थं द्वैतसिकप्रतिक्रमणक्रियायां पूर्वा-  
 चार्यानुक्रमेणसकलकर्मचयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं निष्ठित-  
 करणवीरमक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(इति प्रतिज्ञाप्य) दिवसे १०८ रात्रौ च ५४ उच्छ्वासेषु  
 शमो अरहंतायां इत्यादि (दंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् परचात्)  
 थोस्सा भीत्यादि (चतुर्विंशतिस्तवं पठेत्) ।

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद्ब्रुव्यान्नि तेषां गुणान्

पर्यायानपि भूतमाविभवतः सर्वान् सदा सर्वदा ।  
 जानीते युगपत् प्रतिचक्ष्यमतः सर्वज्ञ इत्युच्यते  
 सर्वज्ञाय जिनेश्वराय मदते वीराय तस्मै नमः ॥१॥  
 वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिता  
 वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः ।  
 वीराचौर्यमिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य वीरं तपो  
 वीरे श्री-द्युति-कांति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! मद्र त्वयि ॥२॥  
 ये वीरमादौ प्रणमन्ति नित्यं  
 ध्यानस्थिताः संयमयोगयुक्ताः ।  
 ते वीतशोका हि भवन्ति लोके  
 संसारदुर्गं विषमं तरन्ति ॥ ३ ॥  
 व्रतसमुदयमूलः संयमस्कन्धवन्धो  
 यमनियमपयोभिवर्धितः शीलशाखः ।  
 समितिकलिकभारो गुप्तिगुप्तप्रबालो  
 गुणकुसुमसुगन्धिः सत्तपरिचित्रपत्रः ॥४॥  
 शिवसुखफलदायी यो दयाल्लाययोधः  
 शुभजनपथिकानां खेदनोदे समर्थः ।  
 दुरितरविजतापं प्रापयन्नन्तभावं  
 स भवविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्रवृष्टः ॥५॥  
 चारित्र सर्वजिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः ।  
 प्रणमामि पंचमेदं पंचमचारित्रलामाय ॥६॥  
 धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधांश्चिन्वते ।

धर्मैशैव समाप्यते शिवसुख धर्माय तस्मै नमः ।

धर्माशास्त्यपरः सुहृद्भवभृतां धर्मस्य मूलं दया,

धर्मे चिन्तामहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ॥७॥

धम्मो मंगलमुद्दिष्टं अहिंसा संयमो तवो ।

देवा वि तम्म पणमंति जस्स धम्मे सया मणो ॥८॥

अंबलिका—

इच्छामि भंते ! पडिकमणादिचारमालोचेउ, सम्माणाय-  
सम्मदंसण-सम्मचरित्त-तव-वारियाचारेसु जम-णियम-संजम सील  
मूलुसारगुणेषु सन्वमईचारं सावज्जजोगं पडिविरदोमि असंखेज्ज-  
लोगअज्जभवसाठाणायि अप्पसत्थजोगसण्णायिदियकसायमार-  
वकिरियासु भणवयणकायकरणदुप्पण्णिहाणायि परिचिंतिपाण्णि  
किण्णायीलकाउलेस्साओ विकहापलिकुं चिण्ण उम्मगहस्सरदिअर  
दिसोपभयदुगंछवेयणविज्जंभजंभाइआण्णि अट्टरुहसंक्खिलेसपरिणा-  
माण्णि परिणामदाण्णि अण्णिहुदकरचरणणवयणकायकरणेण  
अण्णित्तबहुलपरायणेण अपडिपुण्णेण वासरक्खरावयपरिसंघा-  
यपडिवत्तिण्ण वा अण्णकारिदं मिण्ण मेलिद आमिण्णिदं वा मेलिदं  
वा अण्णहादिएणं अण्णहापडिण्णदं आवासण्णसु परिहीण्णदाण्ण  
कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समण्णुमण्णिदो वस्स मिण्ण  
मे दुक्कण्णं ।

वदसमिदिदियरोघो लोचो आत्रासयमचेलमयइत्थं ।

खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयमत्तं च ॥ १ ॥

एदे खलु मूलगुणा समयाणं जिण्णववेदिं पयण्णचा ।

एत्थ पमादबदादो अइचारादो गियसो हं ॥ २ ॥  
 छेदोवट्टावणं होदु मज्झं ।

—०—

अथ सर्वातिचारविशुद्धयर्थं दैवसिकप्रतिक्रमणक्रियायां कृत-  
 दोषनिराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मव्ययार्थं भावपूजावन्द-  
 नास्तवसमेतं चतुर्विंशतितीर्थंकरभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(इति प्रतिज्ञाप्य) शमो अरहंताणं इत्यादि दंडकं पठित्वा  
 कायोत्सर्गं कुर्यात् थोस्समीत्यादि चतुर्विंशतिस्तवं पठेत्  
 चउवीसं तित्यपरे उमहाइवीरपच्छिमे वंदे ।

सच्चे सगणगणहरे सिद्धे सिरसा शमंसामि ॥१॥

ये लोकेऽष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवान्तर्गता

ये सम्यग्भवजालहेतुमथनारचन्द्रार्कतेजोधिकाः ।

ये साध्विन्द्रसुरापसरोगणशतैर्गीतप्रणुत्याचिता-

स्तान् देवान् वृषभादिवीरचरमान् भक्त्या नमस्याम्यहम् ॥२॥

नाभेर्यं देवपूज्यं जिनवरमजितं सबलोकप्रदीपं

सर्वज्ञं संभवाख्यं मुनिगणवृषभं नंदनं देवदेवं ।

कर्मारिध्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धं

चांतं दातं सुपाश्वं सकलशशिनिभं चन्द्रनामानमोडे ॥३॥

विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं

भेर्यासं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।

मुक्तं दान्तेन्द्रिपाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनीन्द्रं

धर्मां सद्धर्मकेतुं शमदमनिज्जयं स्तौमि शान्तिं शरययम् ॥४॥

कुन्पुं सिद्धालयस्थं श्रमणवतिमरं त्यक्तभोगेषु चक्रं

मन्त्रिलं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यरोशिम ।

देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तं

पार्ष्णीं नागेन्द्रवन्धं शरणमहमितो वर्धमानं च भक्त्या ॥५॥

अंचलिका

इच्छामि मंते ! चउवीयतित्थयरभक्तिकाउस्सगगो कओ तम्सा  
लोचेउं, पंचमहाकन्लाणसंपण्यायां अट्टमहापाडिहेरसहियाणां  
चउतीसातिसयविसेससजुत्तायां वत्तीसदेविंदमणिमउडमत्यमद्विदायां  
वलदेववासुदेवचक्रकहररिमिमुण्णिजइअणगारोवगूढायां थुइसहस्सणि  
लयायां उमहाइवीरपच्छिममगलमहापुरिसायां खिच्चकालं अंचेमि,  
पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाहो  
सुगइगमयां समाहिमयां जिणगुणसंपत्ती होउ मज्झं ।

वदसमिर्दियरोधो लोचो आवासयमचेलमण्णहाणं ।

खिदिसयणमदंतवण्ण ठिदिभोयण्णमेयमत्तं च ॥ १ ॥

एदे खलु भूलगुणा समणायां जिणवरेहिं पण्णत्ता ।

एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥ २ ॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचारविशुद्धयर्थं दैवसिद्धप्रतिक्रमणक्रियायां  
श्रीसिद्धमक्ति-प्रतिक्रमणमक्ति-निष्ठितकरणवीरमक्ति-चतुर्विंशति-  
तीर्थकरमक्तीः कृत्वा तद्धोनादिकदेवविशुद्धयर्थं आत्मपवित्रीकर-  
णार्थं समाधिभक्तिः कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(इति विज्ञाप्य) श्रमो अरहंताणं इत्यादिद्वंद्वकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् । शोस्सामीत्यादिस्तवं पठेत् । अथेष्टप्राथनेत्यादि पूर्वोक्तं समाधिभक्तिं पठेत् ।

इति दैर्घ्यमकप्रतिक्रमणं रात्रिप्रतिक्रमणं वा समाप्तम् ।

## ५६ पात्निकादि-प्रतिक्रमणम् ।

(शिष्यसधर्माणः पात्निकादिप्रतिक्रमे लघ्वीभिः सिद्धश्रुताचार्य-भक्तिभिराचार्यं वन्देत्)

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां प्रतिष्ठापनसिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्--

( जाप्य ६ )

सम्मक्षणदंसखवीरियसुहुमं तहेव अवगहर्ण ।

अगुरुलहुमन्वाहः अद्वुगुणा होति सिद्धाणं ॥१॥

तवसिद्धे खपसिद्धे संजमसिद्धे चरिससिद्धे य ।

खाणम्मि दसखम्मि य सिद्धे सिरसा खमंसामि ॥२॥

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां प्रतिष्ठापनश्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्

( जाप्य ६ )

कोटीशर्तं द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिःपञ्चिकानि चैव ।

पंचाशदष्टौ च सहस्रसख्यमेतच्छ्रुतं पंचपदं नमामि ॥१॥



अरहंतमासियत्थं गणहरदेवेहि गंधियं सम्मं ।

षष्ठमामि मच्चिजुचो सुदख्याणमहोवहिं सिरसा ॥२॥

नमोऽस्तु आचार्यवन्दनायां प्रतिनिष्ठापनाचार्यभक्तिकायेत्सर्गं  
करोम्यहम्—

( जप्या ६ )

श्रुतजलधिपारगोम्पः स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः ।

सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥१॥

छत्तीसगुणसमग्गे पंचविहाचारकरणसंदरिसे ।

सिस्साणुगहकुमले घम्माइरिए सदा बंदे ॥ २ ॥

गुरुमशिसंज्ञमेण य तरंति संसारसायरं घोरम् ।

छिण्णाति अट्टकम्मं जम्मयां जम्मणमयां ण पावेंति ॥३॥

ये नित्यं व्रतमंत्रहोमनिरता ध्यानाग्निहोत्राकुलाः

षट्कर्माभिरतास्तपोधनाः साधुक्रियाः साधवः ।

शीलप्रवरणा गुणप्रहरणाच्चन्द्रार्कतेजोधिका

मौञ्चद्वारकपाटपाटनभटाः प्रीर्णतु मा साधवः ॥ ४ ॥

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानदर्शननायकाः ।

चारित्रार्णवगंधीरा मौञ्चमार्गोपदेशकाः ॥ ५ ॥

ततः हृष्टदेवतानमस्कारपूर्वकं "समता सर्वभूतेषु" इत्यादि पठित्वा गणां 'शिष्यसधर्मगणयुक्तः "विद्वानुद्धूतकर्म" इत्यादिकां गुर्वां सिद्धभक्ति साचलिकां, "येनेद्रान्" इत्यादिकां च चारित्रभक्ति वृहदालोचनासठितां, अहंद्भ्रष्टारकस्याग्रे कुर्यात् । सैषा सूरैः शिष्य-सधर्मणां च साधारणी क्रिया ।

नमः श्रीवर्धमानायनिर्धूतकलिलात्मने ।

सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ॥१॥

समता सर्वभूतेषु संयमः शुभभावना ।  
आर्तरीत्रपरित्यागस्तद्धि सामायिकं मतम् ॥२॥

—०—

सर्वातिचारविशुद्धयर्थं \*पाक्षिकप्रतिक्रमणायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भाषपूजावन्दनास्तवसमेतं सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहम्—

(एगो अरहंतायां इत्यादिदंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं कृत्वा योस्सामि इत्यादिकं विधाय सिद्धानुद्धूतकर्म इत्यादिसिद्धभक्तिं सांचलिकां पठेत् । )

### सिद्धिभक्तिः—

सिद्धानुद्धूकर्मप्रकृतिसमुदयान्साधितात्मस्वभावान्-  
वन्दे सिद्धिप्रसिद्धयै तदनुपमगुणप्रग्रहाकृष्टितृष्टः ।  
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः प्रगुणगुणगणोच्छादिदोषापहारा-  
द्योग्योपादानयुक्त्या दृषद् इह यथा हेमभावोपलब्धिः ॥१॥  
नाभावः सिद्धिरिष्टा न नित्रगुणहतिस्तत्तपोभिर्न युक्ते-  
रस्त्यात्मानादिवद्धः स्वकृतजफलशुक्तत्वयान्मोक्षभागी ।  
ज्ञाता द्रष्टा स्वदेहप्रमितिरुपसमाहारविस्तारधर्मा  
ध्रौवोत्तत्तिव्यपात्मा स्वगुणयुत इतो नान्यथां साध्यसिद्धिः ॥२॥  
स त्वन्तर्चाह्यहेतुप्रभवविमलसद्दर्शनज्ञानचर्या-  
संपद्धेतिप्रघातक्षतदुरिततया व्यञ्जिताचिन्त्यसारैः ।

\*—चातुरमासिकप्रतिक्रमणायां सांबत्सरिकप्रतिक्रमणायां चैति तत्प्रतिक्रमणायां पठेत् ।

कैवल्यज्ञानदृष्टिप्रवरसुखमहावीर्यसम्यक्त्वलब्धि-  
 ज्योतिर्वातापनादिस्थिरपरमगुणैरद्भुतैर्मासमानः ॥३॥  
 ज्ञानन्पश्यन्समस्तां सममनुपरतं सम्प्रतृप्यन्वितन्वन्  
 घुन्वन्ध्वान्तं नितांतं निचितमनुसभं प्रीणयन्नीशभावम् ।  
 कुर्वन्सर्वप्रजानामपरमभिभवन् ज्योतिरात्मानमात्मा-  
 आत्मन्येवात्मनामौ क्षणमुपजनयन्सस्त्वयम्भूः प्रवृत्तः ॥४॥  
 छिन्दन् शेषानशेषाग्निगलवलकलीस्तैरनंतस्वभावाः  
 सूक्ष्मत्वाग्रधावगाहागुरुलघुकुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।  
 अन्यैश्चान्यव्यपोहप्रवणविषयसंप्राप्तिलब्धिप्रभावा-  
 रुर्ध्वब्रह्मस्वभावात्समयमुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्रे ॥ ५ ॥  
 अन्याकाराप्तिहेतुर्न च भवति परो येन तेनाल्पहीनः  
 प्रागात्मोपात्तदेहप्रतिकृतिरुचिराकार एव ह्यमूर्तः ।  
 क्षुत्तृष्णाश्वासकामज्वरमरणाचरानिष्टयोगप्रमोह-  
 व्यापत्याद्युग्रदुःखप्रभवभवहतेः कोस्य सौरुयस्य माता । ६॥  
 आत्मोपादानसिद्धं स्वयमतिशयवद्दीतबाधं विशालं  
 वृद्धिहासव्यपेतां विषयविरहितं निष्प्रतिद्वन्द्वभावम् ।  
 अन्यद्रव्यानपेक्षं निरुपममितं शाश्वतं सर्वकाल—  
 मुत्कृष्टानन्तसारं परमसुखमतस्तस्य सिद्धस्य ज्ञातम् ॥ ७ ॥  
 नार्थः क्षुत्तृष्णादिनाशाद्विषयसयुतैरक्षपानैरशुन्या—  
 नास्पृष्टेर्गन्धमान्यैर्न हि मृदुशयनैर्ग्लानिनिद्राद्यभावात् ।  
 आतङ्कात्तेरभावे तदुपशमनसङ्गेषजानर्थतावद्  
 दीपानर्थक्यवद्वा व्यपगततिमिरे दृश्यमाने समस्ते ॥ ८ ॥

तादृक्सम्पत्समेता विविधनयतपः संयमज्ञानदृष्टि-

चर्यासिद्धाः समन्तात्प्रविततयशसो विश्वदेवाधिदेवाः ।

भूता भव्या भवन्तः सकलजगति ये स्तूयमाना विशिष्टै—

स्तान्सर्वाङ्गैश्चानन्ताभिर्जिगमिषुरं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ॥६॥

इच्छामि भन्ते ! सिद्धिभक्ति-काउस्सम्भो कश्चो तस्सालोचेउं

सम्भयाखसम्भदसखसम्भचारित्तजुत्ताणं, अट्टविहकम्मविप्पमु-  
क्काणं, अट्टगुणसंपएणाण, उड्ढलोयमत्थयम्मि पहट्टियाणां,  
तवसिद्धाणं खयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, अतीताणागदवट्टमाणाका-  
लत्तयसिद्धाणं, सब्भसिद्धाणं सया णिच्चकालं अंचेमि, वंदामि,  
पूजेमि, णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाहो सुगई-  
गमणं समाहिमणं जिणगुणसंपत्ती होउ मज्झं ।

सर्वातिचारविशुद्धयर्थं आलोचनाचारित्रभक्तिकायोत्सर्गं  
करोम्यहं—

(इत्युक्त्वा “गमो अरहंताणं” इत्यादि दंडकं पठित्वा कायमुत्सृज्य  
“शोस्सामि” इत्यादि दण्डकमधीत्य “येनेन्द्रान्” इत्यादि चारित्रभक्ति  
सालोचनां पठेत्—)

येनेन्द्रान्श्रुवनत्रयस्य विलसत्केयुरहारांगदान्

भ स्वन्मौलिमणिप्रभाप्रविसरोत्तुङ्गोत्तमाङ्गाञ्जतान् ।

स्वेषां पादपयोरुहेषु मुनयश्चक्रुः प्रकामं सदा

वन्दे पंचतयं तमद्य निगदन्नाचारमम्यर्चितम् ॥१॥

अर्थभ्यं जनतद्द्वयाविकलताकालोपभाप्रश्रयाः

स्वाचार्याद्यनपह्वो बहुमतिश्चेत्यष्टधा व्याहृतम् ।

श्रीमज्जातिकुलेन्दुना मगवता तीर्थस्य कर्त्राञ्जसा  
 ज्ञानाचारमहं त्रिधा प्रणिपताम्युद्धूतये कर्मशाम् ॥ २ ॥  
 शंकादृष्टिबिभोहकांक्षणविधिष्यावृत्तिसन्नद्धतां  
 वात्सल्यं विचिकित्सनादुपरति धर्मोपशृंहक्रियाम् ।  
 शक्त्या शासनदीपनं हितपथाद्भ्रष्टस्य संस्थापनम्  
 वन्दे दर्शनगोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात् ॥ ३ ॥  
 एकांते शयनोपवेशनकृतिः सन्तापनं तानवम्  
 संख्यावृत्तिनिबन्धनमनशनं विष्वाणमद्धोदरम् ।  
 त्यागं चेन्द्रियदन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशम्  
 षोढा बाह्यमहं स्तुवे शिवगतिप्राप्त्यभ्युपायं तपः ॥ ४ ॥  
 स्वाध्यायः शुभकर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनं  
 ध्यानं व्यापृतिरामयाविनि गुरौ वृद्धे च बाले यतौ ।  
 कायोत्सर्जनसत्क्रिया विनय इत्येवं तपः षड्विधं  
 वन्देऽभ्यन्तरमन्तरङ्गवलवद्विद्वेषिविष्वंसनम् ॥ ५ ॥  
 सम्यग्ज्ञानविलोचनस्य दघतः श्रद्धानमर्हन्मते  
 वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः ।  
 या वृत्तिस्तरणीव नौरविवरा लघ्वी भवोदन्वतो  
 बीर्याचारमहं तमूर्जितगुर्णं वन्दे सतामर्चितम् ॥ ६ ॥  
 तिस्रः सत्तमगुप्तपस्तनुमनोभाषानिमित्तोदयाः  
 पंचेयादिसमाश्रयाः समितयः पंचव्रतानीत्यपि ।  
 चारित्र्योपहितं प्रयोदशतयं पूर्वं न दृष्टं परै-  
 राचारं परमेष्ठिनो जिनपतेर्वीरं नमामो वयम् ॥ ७ ॥

आचारं सहपंचमेदमुादतं तीर्थं परं मंगलं  
 निग्रधानपि सच्चरित्रमहतो वंदे समग्रान्यतीन् ।  
 आत्माधीनमुखोदयामनुपर्मा लक्ष्मीमविध्वंसिनी-  
 मिच्छन्केवलदशनावगमनप्राज्यप्रकाशोज्वलाम् ॥ ८ ॥  
 अज्ञानाद्यदवीशृतं नियमिनोऽवतिष्यहं चान्यथा  
 तस्मिन्नर्जितमस्यति प्रतिनवं चैनो निराकुर्वति ।  
 वृत्तेसप्ततयीं निधि सुतपसाभधि नयत्यद्भुतं  
 तन्मिथ्या गुरु दुष्कृत भवतु मे स्वं निंदतो निदितम् ॥९॥  
 संसारव्यसनाहतिप्रचलितः नित्योदयप्रार्थिनः  
 प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः शक्तिनसः प्राणिनः ।  
 मोक्षस्यैव कृत विशालमतुलं सोपानमुच्चैस्तरा-  
 मारोहन्तु चरित्रमुत्तममिदं जैनेन्द्रमोजस्विनः ॥ १० ॥

### आलोचना

इच्छामि भंते ! अट्टमियम्मि आलोचेउं, अट्टएहं दिवसायां  
 अत्रएहं राईयां अन्मंतरादेो पंचविहो आयारो शाखायारो दंसखायारो  
 तवायारो बीरियायारो चरिायारो चेदि ।

इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं, पयणरसएहं दिव-  
 सायां पयणरसएहं राईयां अन्मंतराओ पंचविहो आयारो शाखा-  
 यारो दंसखायारो तवायारो बीरियायारो चरिायारो चेदि ।

इच्छामि भंते ! चाउमासियम्मि आलोचेउं, चउएहं मासायां  
 अट्टएहं पक्खायां बीसुत्तरसयदिवसायां बीसुत्तरसयराईयां अन्मं-  
 तराओ पंचविहो आयारो शाखायारो दंसखायारो तवायारो

वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।

इच्छामि भवे संवच्छरियम्मि आलोचेउं, वारमएहं मोसायं, चउवीसएहं पक्खाण, तिएहं छावड्डिसयदिवमाणं, तिएहं छावड्डिसय-  
राईयं अब्भंतराओ पंचविहो आयारो खाणायारो दंसणायारो  
तवायारो वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।

— — —

तत्थ खाणायारो : काले, विणर, उववाणे, बहुमाणे, तहेव  
अणिएहवणे, विंजण-अत्थ-तदुमये चेदि खाणायारो अट्टविहो  
परिहाविदो, से अक्खरहीणां वा, सरहीणां वा, पदहीणां वा,  
विंजणहीणां वा, अत्थहीणां वा, गंथहीणां वा, धएमु वा, थुईसु  
वा, अत्थक्खाणेषु वा, अणियोगेषु वा, अणियोगहारेषु वा,  
अकाले सज्झाआ कओ वा, कारिदा वा, कीरतो वा समणुम-  
ण्हदो, काले वा परिहाविदो, अच्छाकारिदं, मिच्छा मेलिदं,  
आमेलिदं, वामेलिदं अएणहादिणं, अएणहा पडिच्छिदं आवा-  
सएसु परिहीणदाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ १ ॥

दसणायारो अट्टविहो, शिस्संकिय शिक्कस्खिय शिच्चिदिगिंछा  
अमूददिट्ठी य, उवगूहणं ठिदिकरणं वच्छल्ल पहावणा चेदि ।  
अट्टविहो परिहाविदो, संकाए कंखाए विदिगिंछाए अएणदिट्ठी-  
पर्ससणदाए पापालएहपसंसणदाए अणायदणसेवणदाए अवच्छ-  
ल्लदाए अप्पहावणदाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ २ ॥

तवायारो वारसविहो, अब्भतरो छच्चिहो बाहिरो छच्चिहो  
चेदि तत्थ बाहिरो अणसणं आमोदरियं विचिपरिसंखा रसपरि-

चाओ सरीरपरिच्चाओ विविचासयणासणं चेदि । तत्थ अन्मतरो पायच्छिचं विणओ वेज्जावच्चं सज्जाओ भाणं विउस्सग्गो चेदि । अन्मंतरं वादिरं वारसविहं तवोकम्मं ण कदं शिसएण्ण, पडिक्कतं, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ३ ॥

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वरवीरियपरिक्कमेण जहुचामाण्ण वलेण वीरिण्ण परिक्कमेण शिगूहियं तवोकम्मं ण कम्मं शिपएण्ण पडिक्कतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ४ ॥

चरिन्नायारो तेरसविहो परिहाविदो, पंचमहव्वयाणि, पच समिदीओ, तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढममहव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं । से पुढविकाइया जीवा असंखेजासंखेजा, आउकाइया जीवा असंखेजासंखेजा, तेउकाइया जीवा असंखेजासंखेजा, वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा; वणफफदिकाइया जीवा अणंताणंता हरिया गीया अंकुरा छिएणा भिएणा तस्स उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरन्तो वा समणुमण्णदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वेइंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुविखकिमि शंख-खुल्लय-वराडय, अबरुग्गि, गंडवाल, संवुक्कसिप्प पुलविकाइयातेसि उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरन्तो वा समणुमण्णदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

तेइंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुंथुदेहिय-विच्चिय-गोमिंद-नोज्जव-मक्कण-पिपीलियाइया, तेसि उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरन्तो वा समणुमण्णदो



तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ।

चउरिदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दसमंसय-मक्खिय पर्यंग-कीड-ममर-महुयरि-गोमक्खियाइया, तेसिउहावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्हिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ।

पंचिदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, अंहाइया पोदाइया जराइया रसाइया संसेदिमा सम्मुच्छिमा उब्भेदिमा उववादिमा अवि चउरासीदिजोखिपमुहसदसहस्सेसु, एदेसि उहावणं परिदावणं विराहण उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्हिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ १ ॥

आहावरे दुब्बे महव्वदे सुसावादादो वेरमणं, से कोहेण वा माणेण वा माएण वा लोहेण वा राएण वा दोसेण वा मोहेण वा हस्सेण वा भएण वा पमादेण वा पेम्मेण वा पिवासेण वा लज्जेण वा गारवेण वा अणादरेण वा केणवि कारणेणजादेण वा सव्वो सुसावादो भासिओ भासाविओ भासिजन्तो वि समणुमण्हिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ २ ॥

आहावरे तव्वे महव्वदे अदिण्णदाणादो वेरमणं, से गामेवाण्यरे वा खेडे वा कव्वट्ट वा मडवे वा मंडले वा पड्डोखा दाणामुहे वा घोसे वा आसमे वा सहाए वा संवाहे वा सण्णिवेसेवा तियां वा कट्ठं वा वियट्ठि वा मणि वा एवमाइय अदत्तं गिण्हिय गेएहावियं गेएिहज्जंतं समणुमण्हिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ ३ ॥

आहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं, से देविण्सु वा

माणुसिएसु वा तेरिच्छिएसु वा अवेयल्लिएसु वा मणुणामणुणोसु  
 रूवेसु मणुणामणुणोसु सददेसु मणुणामणुणोसु गंधेसु मणुणामणु-  
 णोसु रसेसु मणुणामणुणोसु फासेसु चक्खिदियपरिणामे सोदि-  
 दियपरिणामे धाण्णिदियपरिणामे जिब्बिंदियपरिणामे फासिंदिय  
 परिणामे खोह् दियपरिणामे अगुत्तेण अगुत्तिदिएण शवविहं भंभ  
 चरियं ण रक्खियं ण रक्खावियं ण रक्खिज्जंतो वि समणुम-  
 णिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ ४ ॥

आहावरे पंचमे अहन्वदे परिग्गहादो वेरमणां सो वि पर-  
 ग्गहो दुविहो अम्मंतरो बाहिरो चेदि तत्थ अम्मंतरो परिग्गहो  
 णाणावरणीयं दंसणावरणीयं वेयणीयं मोहणीयं आउग्गं णामं  
 गोदं अंतरायं चेदि अट्टविहो, तत्थ बाहिरो परिग्गहो उवयरण भंढ-  
 फलह-पीठ-कमंडलु-संधार-सेज्जउवसेज्ज-भत्त-पाणादिमेएण अणे-  
 यविहो, एदेण परिग्गहेण अट्टविहं कम्मरयं वट्ठं वट्ठावियं वट्ठज्जंतं  
 पि समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ ५ ॥

आहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइभोयणादो वेरमणां, से असणां पाणां  
 खाइयं रसाइयं चेदि चउत्तिवहो आहारो, से तित्तो वा बहुओ वा  
 कसाइलो वा अमिलो वा महुरो वा लवणो वा दुत्तिचित्तो दुग्गा-  
 सिओ दुप्परिणामिओ दुत्तिमिण्णिओ रत्तोए भुत्तो भुज्जवियो  
 भुज्जिजंतो वा समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ॥ ६ ॥

पंचसमिदीओ ईरियासमिदी मासासमिदी एसणासमिदी  
 आदावणाशिकखेवणासमिदी उच्चारपस्सवणाखेलसिंहाययवियट्ठिप-  
 इट्ठावणासमिदी चेदि । तत्थ ईरियासमिदीपुच्चुत्तरदक्खिणपच्छिम

चउदिसिबिदिसासु विहरमाणेण जुगंतरदिट्ठिणा दट्ठ्वा डवडव-  
चरियाए पयाददोसेण पाण-भूद-जीव सत्ताणं उवघादो कदो वा  
वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णियोदो तस्स मिच्छा मे  
दुक्कडं ॥ ६ ॥

तत्थ भासासमिदी कक्कसा कड्डया परुसा णिट्ठुता करको-  
हिणी मज्झंकिसा अइमाणिणी अणयंकरा छेयंकरा भूयाण वडं-  
करा चेदि दसहिवा भासा भासिया भासाविया भासिज्जन्तो पि सम-  
णुमण्णियोदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ७ ॥

तत्थ एसणासमिदी आहाकम्मेण वा पच्छाकम्मेण वा  
पुराकम्मेण वा उद्दिट्ठयडेण वा णिद्दिट्ठयडेण वा कीडयडेण वा  
साइया रसाइया सहङ्गला सधूमिया अइगिद्धीए अग्गिव छण्हं  
जीवणिकायाणं विराहणं काउण्ण अपरिसुद्धं भिक्खं अण्णं पाणं  
आहारादियं आहारियं आहारावियं आहारिज्जंतं पि समणु-  
मण्णियोदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं । ८ ॥

तत्थ आदावणणिकखवणसमिदी चक्कलं वा फलहं वा  
पोथयं वा कमंडलं वा वियडिं वा मणिं वा एवमाइयं उवयरणं  
अप्पडिलेहिऊण गेण्हंतेण वा ठवंतेण वा पाण-भूद-जीव-सत्ताण  
उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णियोदो तस्य  
मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ९ ॥

तत्थ उच्चार-पस्सवण-खेल-सिहाणय-वियडिपट्टठावणिया  
समिदी रत्तीए वा वियाले वा अचक्खु विसए अवत्थंजिले अब्भो-  
वयासे सण्णिडे सवीए सहरीए एवमाइएसु अप्पासुगट्ठाणेषु पइडा-

वतेषु पाण्यभूदजीवसत्ताण उवघादो कदे वा कारिदो वा कीरितो  
वा समणुमण्डिदो तस्म मिच्छा मे दुक्कडं ॥ १० ॥

तिण्ण गुत्तीओ मणुगुत्तोओ वचिगुत्तीओ कायगुत्तीओ  
चेदि, तत्थ मणुगुत्ती अट्ठे भाण्णे रुद्धे भाण्णे इहलोपसत्ताए पर-  
लोयसत्ताए आहारसत्ताए भयसत्ताए मेहसत्ताए परिग्म-  
हसत्ताए एव माइयासु जा मणुगुत्ती ण रक्खिया ण रक्खाविया  
ण रक्खिज्जन्तं पि समणुमण्डिदो तस्म मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ११ ॥

तत्थ वचिगुत्ता इत्थिक्कहाए अत्थक्कहाए भयक्कहाए राय-  
क्कहाए चोक्कहाए वेरक्कहाए परपासंडक्कहाए एवमाइयासु जा  
वचिगुत्ती ण रक्खिया ण रक्खाविया ण रक्खिज्जन्तं पि समणु-  
मण्डिदो तस्म मिच्छा मे दुक्कडं ॥ १२ ॥

तत्थ कायगुत्ती चित्तकम्मेसु वा पोचकम्मेसु वा कट्टकम्मेसु  
वा लेप्यकम्मेसु वा एवमाइयासु जा कायगुत्ता ण रक्खिया ण  
रक्खाविया ण रक्खिज्जन्तं पि समणुमण्डिदो तस्म मिच्छा मे  
दुक्कडं ॥ १३ ॥

णवसु बभवेरगुत्तीसु चउसु मण्णासु, चउसु पण्णसु, दोसु  
अट्ठरुद्धसंक्किलेसपरिणामेसु तीसु अप्पसत्थसंक्किलेसपरिणामेसु,  
मिच्छाणाण मिच्छादंसण-मिच्छाचरिणेसु, चउसु उवसग्गेसु,  
पंचसु चरिणेसु, छमु जीवणिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तासु  
मएसु, अट्ठसु सुद्धीसु (णवसु बभवेरगुत्तीसु) दससु समणव-  
म्मेसु, दससु धम्मज्जाणेषु, दससु वुट्ठेसु वारसेसु पंचमेसु, बावीसाए  
परीसहेसु, पण्णवीसाए भावणासु, पण्णवीसाए किरियासु अट्ठारस-

सीलसहस्त्रेषु, चठरासीदिगुणसयसहस्त्रेषु, मूलगुणेषु, उत्तरगु-  
णेषु, अद्भुमियम्मि पन्निखयम्मि चउमासियम्मि संवच्छरियम्मि  
अइक्कमो वडिक्कमो अइचारो अणचारो आभोगो अणाभोगो  
ओ तं पडिक्कमामि मए पडिक्कंतं; तस्स मे सम्मचमरणं समा-  
हिमरणं पंडियमरण वीरियमरणं दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहि-  
लाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ती हो३ मज्झं ।

(केवलमाचार्यो 'णमो अरहंताणं' इत्यादि पंचपदान्युक्त्वर्यं  
कायोत्सर्गं कृत्वा "श्रोस्सामि" इत्यादि भणित्वा "नवसिद्धे" इत्यादि-  
गार्थां साञ्चलिकां पाठत्वा, पुनः प्रागुक्तत्रिविं कृत्वा "प्रावृट्काले सवि-  
द्युत्" इत्यादिकां योगिभक्तिं साञ्चलिकां पाठत्वा "इच्छामि भंतं ! चार-  
त्ताचारोनेरमविहो" इत्यादि दण्डकपंचक्रमधीत्य तथा 'बहममिदिदिय'  
इत्यादिकं 'छेदेवद्वावणं होदु मज्झं' इत्यन्तं त्रिःपठित्वा स्वदोषान  
देवस्थाने आलोचयेत् । दोषानुसारेण प्रायश्चित्तं च गृहीत्वा "पंच-  
महाव्रत" इत्यादि पाठं त्रिभणित्वा योग्यशिष्यादेः प्रायश्चित्तं निवेश देवाय  
गुरुभक्तिं दद्यात् । ततः पुनः आचार्ययुक्ताः शिष्यसधर्माणः सूरेशे इम-  
मेव पाठं पठित्वा प्रतिक्रान्तिस्तुतिं कुर्युः । तथा— )

नमोऽस्तु सर्वातीचारविशुद्धधर्मं सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करो-  
म्यहम्—

( "णमो अरहंताणं" इत्यादि पंचपदान्युक्त्वर्यं कायोत्सर्गं कृत्वा  
श्रोस्सामीत्यादि भणित्वा— )

सम्मचणाणदंसणवरियसुहुमं तहेव अबगहणं ।

अगुरुलहुमन्वावाहं अद्भुगुणा होति सिद्धाणं ॥१॥

तवसिद्धे षयसिद्धे संजमसिद्धे चरिसिद्धे य ।

आणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा षमंसामि ॥२॥

इच्छामि मंते ! सिद्धभक्तिकाउरसगो कश्चो तस्सालोचैउं,  
सम्भणायसम्मदंसखसम्मचारित्तजुचाणं अट्ट विहकम्मविप्पमु-  
वकाणं अट्ठगुणसपण्णाणं उट्ठलोयमत्थवम्मि पइट्टियाणं तव-  
मिद्धाणं थप-सिद्धाणं संजमसिद्धाणं अतीताणगदवङ्कमाणकाल-  
त्तयसिद्धाणं सञ्चसिद्धाणं सया शिञ्चकालं अंचेमि वंदामि थमं-  
सामि दुक्खस्सव्वा कम्मस्सओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहि-  
मणं जिणगुणसंपत्तिं हेउ मज्झं ।

नमोऽस्तु सर्वातिचागविशुद्धचर्धमालोचनायोगिभक्तिकायो-  
त्सर्गं करोम्यहम्-

( "शमो अरहंताणं इत्यादि पंचपदान्युक्त्वाचार्यं कायोत्सर्गं कृत्वा  
थोस्मामीति पठित्वा— )

प्राश्रुट्काले सविद्युत्प्रपतितसलिले वृषमूलाधिवासाः

हेमन्ते रात्रिमध्ये प्रतिविगतमयाः काष्ठवस्यक्तदेहाः ।

श्रीष्मे सूर्याशुतप्ता गिरिशिखरगताः स्थानकूटान्तरस्था-

स्ते मे धर्मं प्रदद्युर्मुनिगणवृषभा मोक्षनिःश्रेयिभृताः ॥१॥

गिम्हे गिरिसिहरत्था वरिसायाले रुक्खमूलरयणीसु ।

सिसरे बाहिरसयणा ते साहू वंदिमो शिञ्चं ॥२॥

गिरिकन्दरदुर्गेषु ये वमन्ति दिगम्बराः ।

पाणिपात्रपुटाहारास्ते यांति परमां गतिम् ॥३॥

इच्छामि मंते ! योगिभक्तिकाउस्सगो कश्चो तस्सालोचैउं,  
अट्ठाइण्णदेवदेसम्मइसु पण्णारसकम्मभूमिसु आदावणरुक्ख-  
मूलअम्मोवांसठाणमोणवीरासखेक्कपासकुक्कुडासणचउत्तपक्ख-

खवणादिजोगजुर्णाणं सच्चसाहूणं अचेमि पूजेमि वंदामि खम-  
सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोदिल हे। मुग्गइमणं समाहिम-  
रणं जिणुणसपत्ति होउ मज्झ ।

( आलोचना-- )

इच्छामि भंते ! चरित्तायागे तेरमविहो परिहाविदो, पंच-  
महव्वदाणि पंचसमिदीओ तोगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे  
पाणादिवादादो वेग्मणं से पुढवीकाइया जीवा असंखेज्जासखेज्जा,  
आउकाइया जीवा असंखज्जासखज्जा, तेउकाइया जीवा असंखेज्जा-  
संखेज्जा, वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणफफदिकाइया  
जीवा अणंताणांता हरिया गीया अकुरा छिएणा भिएणा, एदेसि  
उदावणं परिदावणं विराइणं उवघादो कदो वा कारिदो वा  
कीरंतो वा समणुमण्णदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड' ॥१॥

वेइदिया जीवा असंखेज्जासखेज्जा कुक्खिक्खिम्म संख-  
खुल्लय-वराडय अक्ख-रिट्ट-गंढवाल-रुवुकक सिप्पि-पुलविकाइया,  
एदेसि उदावण परिदावणं विराइणं उवघादो कदो वा कारिदो वा  
कीरंतो वा समणुमण्णदो तरस मिच्छा मे दुक्कड' ॥ २ ॥

तेहन्दिया जीवा असंखेज्जासखेज्जा कुन्धुहेहिय-विंछिय-गोमि  
द-गोजुव मक्कण-पिपीलियो, एदेसि उदावणं परिदावणं उवघादो  
कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णदो तस्समिच्छा मे  
दुक्कड' ॥ ३ ॥

चउरिंदिया जीवा असांखेज्जासांखेज्जा दंसमसयमक्खिय-

पयङ्गकीडभमरमहुयरगोमक्खिया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं  
विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमणियदो  
तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ४ ॥

पंचिदिया जीवा असंखेज्जासखेज्जा अंढाइया पोदाइया  
रसाइया संसेदिमा सम्मुच्छिमा उम्भेदिमा उववादिमा अविचउ-  
रासीदिजेणिएणिएसदसहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विरा-  
हणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमणियदो  
तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ५ ॥

वदसमिदिदियरोधो लोचो आवासयमवेलमणहाणं ।

खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयमर्चं च ॥ १ ॥

एदे खलु मूलगुणा समणार्या जिणवरेहिं पण्णत्तो ।

एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तो इं ॥ २ ॥

छेदोवट्टावणं होउ मज्झं ॥ ३ ॥

— — —

प्रायश्चित्ताशोभनरसपरित्यागः क्रियते ।

पंचमहाव्रत.पंचसमिति-पंचेन्द्रियरोध लोच-षडावश्यकक्रियाद  
योऽष्टाविंशतिमूलगुणाः, उचामच्चमामार्दवार्जवशौचसत्यसांयमतप-  
स्त्यागाकिंचन्यब्रह्मचर्याणि दशज्ञानाधिको धर्मः, अष्टादशशील-  
सहस्राणि, चतुरशीतिलक्षगुणाः त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं  
तपश्चेति सकलसम्पूर्णं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुसाक्षिक  
सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं.ते मे भवतु ॥ ३ ॥

नमोऽस्तु निष्ठापनाचार्यप्रकृष्णायैः तसर्गं करोम्यहम्—



( ६ जाप्य )

भुतजलधिपारगेभ्यः स्वपामतत्रिभावनापदुमतिभ्यः ।

सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥ १ ॥

छषीसगुणसमग्ने पंचविहाचारकरणसंदरिसे ।

सिस्साणुगढकुसले धम्माइरिए सदा वंदे ॥ २ ॥

गुरुमत्तिसंजमेण य तरंति संसारमायरं घोरं ।

छिण्णात्ति अट्टकम्मं जम्मणमरणां ण पावेत्ति ॥ ३ ॥

ये नित्यं व्रतमंत्रहोमनिरता ध्यानाग्निहोत्राकुलाः

षट्कर्माभिरतास्तपोवनधनाः साधुक्रियामाध्रवः ।

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चन्द्रार्कनेत्रोऽधिका

मोक्षद्वारकपाटपाटनभटाः प्रीणन्तु मां माध्रवः ॥ ४ ॥

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानदर्शननायकाः ।

चारित्रार्णवगम्भीरा मोक्षमार्गोपदेशकाः ॥ ५ ॥

इच्छामि भंते पञ्चियम्मि आलोचेउं, पंचमहव्वयाखि  
 तस्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं, विदियं महव्वदं  
 मुसावादादो वेरमणं, तिदियं महव्वदं अदिण्णदाणादो वेरमणं,  
 तिदियं महव्वदं अदिण्णदाणादोलेरमणं, वेरमं चउत्थं महव्वदं  
 मेहुणादो वेरमणं पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं  
 अणुव्वदं राईभोपणादो वेरमणं, तिसु गुत्तीसु खोखेसु दंसखेसु  
 चरिचेसु वा वीसाए परीसहेसु पत्तावीसाए भावहासु पत्तावीसाए  
 किरियासु अट्टारससोलसइस्सेसु चउरासादिगुणसयसइस्सेसु, वार-  
 सयई सज्जमाणं वारसइहं तवार्त्तं वारसइहं अंगार्त्तं तेरसइहं चार-

तायां चउदसएहं पुब्बायां एयारएहं पडिमायां दसविहसुहायां  
 दसविहसमण्यममायां दसविहसमजक्कायांणवएहं नंभचेरगुत्तीयां  
 णवएहं णोकमायायां सेलसएहं कसायायां अट्टएहं कम्मायांअट्टएहं  
 पउय्यमाउयायां सत्तएहं मयायां सत्तविहसंसारायां छएहं जीवण्णि-  
 कायायां छएहं आवासयायां पंचएहं इन्दियायां पंचएहं महव्वयायां  
 पंचएहं समिदीयां पंचएहं चरित्तायां चउएहं सय्यायां चउएहंपणपायां  
 चउएहंउवसग्गायां मूलगुणायां उसरगुणायां अट्टएहं सुद्धीयांदिट्ठियाए  
 पुट्ठियाए पदेमियाए परिदावणियाए से केहेण वा माणेण वा  
 माएण वा लोहेण वा रागेण वा दोसेण वा मोहेण वा हस्सेण  
 वा भण्ण वा पदेसेण वा पमादेण वा पिम्भेण वा पिवासेण वा  
 लज्जेण वा गारवेण वा एदेसिं अण्णसण्णदाए तिण्णं दंडायां  
 तिण्णं लेस्सायां लेस्सायां तिण्णं गारवायां अप्पसच्यसंकिल्लेपरिण्णा  
 मायां दोएहं अट्टरुहसंकिल्लेसपरिणामायां मिच्छणाण-मिच्छदंसण  
 मिच्छचरित्तायां मिच्छत्तपाउज्जं कसायपाउग्गं कसायपाउग्गं जोग  
 पाउग्गं अप्पपाउग्गेषण्णदाए पाउग्गगरहण्णदाए इत्थं मे जे केई  
 विं पत्तिल्लयम्मि चउमापीयम्मि संवच्छरियम्मि अदिक्कमो वदि-  
 क्कमो अइचारे अणाचारे आमोगो अणामोगो तस्स भन्ते !  
 पडिक्कमामि पडिक्कमंतस्स मे सम्मत्तमरणां समाहिमरणां पंडिय  
 मर विीरियमरणां दुक्खक्खमो कम्मक्खमो वोहिलाहो सुगहग-  
 मणां समाहिमरणां जियगुणसम्पत्ति होउ मज्झं ।

वदन्नमिदिंदियरोषा लोचा आवासयमचेलमहायां ।

स्त्रिदिसयणमदंतवणं ठिदिमोयणमैयमणं च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा समखायं जिखबरेहिं पयख्वा ।

एत्थ पमादकदादो अइचारादो णियत्तो इं ॥ २ ॥

खेदेवट्ठावखं होदु मज्झं ।

पञ्चमहाव्रतपंचसमितिपञ्चेन्द्रियरोधलोचपडावरयकक्रिशदयो  
 ५४विंशतिमूलगुणाः उचामच्चमामार्द्धवार्जवसत्पशौचसंयमतपस्या  
 याकिञ्चन्यब्रह्मवर्षाणि दशज्ञानखिको धर्मः, अष्टादशशालसह-  
 स्राखि, चतुरशीतिलखगुणाः त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं  
 तपश्चेति सकलसम्पूर्णा अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुसाक्षिकं  
 सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥ ३ ॥

प्रतिक्रमण-भक्तिः---

सर्वातिचारविशुद्धयर्थं पाक्षिकप्रतिक्रमणायां पूर्वाचार्यानु-  
 क्रमेण सकलकर्मवयार्थं भावपूजावंदनास्तवसमेनं प्रतिक्रमणभक्ति-  
 कापोत्सर्गं करोम्यहम् :-

( इत्युच्यते "शमो अरहन्तायां" इत्यादि दण्डकं पठित्वा कापोत्सर्गं  
 ससूर्यः साधवः विदधुः )

शमो अरहन्तायां शमो सिद्धायां शमो आहिरियायां ।

शमो उव्वज्जायायां शमो लोए सव्वसाहूयां ॥ १ ॥

चत्तारि मंगलं-अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहु मज्जलं,  
 केवलिपयख्खो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंत लोगुत्तमा  
 सिद्ध लोगुत्तमा, साहु लोगुत्तमा, केवलिपयख्खो धम्मो लोगुत्तमा ।  
 चत्तारि सरणां पव्वज्जामि-अरहंतसरणां पव्वज्जामि, सिद्ध सरणां  
 पव्वज्जामि, साहुसरणां पव्वज्जामि, केवलिपयख्खो धम्मो सरणां  
 पव्वज्जामि ।

अदाइज्जदीवदोसद्दुहे सु पणणारसकम्मभूमिसु जाव अरहंताणं  
 भयवंताणं आदियराणं तित्थयराणं जिणारणंजिणोत्तमारणंकेवलियाणं  
 सिद्धाणं बुद्धाणं परिणिब्बुदाणं अंतपडारणंपारपडारणं, धम्मइरियाणं  
 धम्मदेसणाणं, धम्मखायगाणं, धम्मवरचाउरंगचक्कवट्टीणं देवाहि-  
 देवाणं दाखाणं दसणाणं चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामायियं सव्वसावज्जजोगं एवक्खामि,  
 जावज्जीं तिविहेण मण्णा वचसा काएण ण करेमि एा करेमि  
 कीरंतं ण समणुमणामि, तस्य भते ! अइचारं पच्चक्खामि  
 खिंदामि गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं भयवंताणं पज्जुवास  
 करेमि ताव कालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

( सप्तविंशत्युच्छ्वासेषु ६ जापर्यं )

( यथोक्तपरिक्रमानन्तरं आचार्यः “थोस्सामि” इत्यादि दृष्टकं  
 गणधरवलयं च पठित्वा प्रतिक्रमणदंडकान् पठेत् । शिष्यसधर्माणस्तु  
 तावत्कालं कायेत्मर्गेण तिष्ठन्तः प्रतिक्रमणदंडकान् शृणुयुः )

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।  
 एरपवरलोयमहिणं विहुपरयमले महण्णखे ॥ १ ॥  
 लोयंसुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वदे ।  
 अरहंते क्किचिस्से चोवीसं वेव केवलियो ॥ २ ॥  
 उसहमज्जियं च वंदे संभवमणिणंदणां च सुमहं च ।  
 पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ ३ ॥  
 सुविहिं च पुण्फर्यंतं सीयलसेयं च वासुपुज्जं च ।  
 विमलमणांतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ४ ॥

कुंधुं च जिहवारिंदं अरं च मन्त्रिं च सुव्ययं च खमिं ।  
 वंदामि रिद्धृष्टेभिं तद्द पासं बद्धमार्णं च ॥ ५ ॥  
 एवं मए अभिधुआ विहुयरयमला पहीणजरमरणा ।  
 चोवीसं पि जिहवरा तित्थपरा मे पसीयतु ॥ ६ ॥  
 क्वित्थिय वंदिय महिया एदे लोगोचमा जेखा सिद्धा ।  
 आरोगगलाखलाहं दित्तु समाहिं च मे बोहिं ॥ ७ ॥  
 चंदेहिं सिम्मलपरा आइच्चेहिं अहियपयासता ।  
 सापरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ॥ ८ ॥

गणधरचलयः—

जिनान् जितारातिगणान् गरिष्ठान् देशावधीन् सर्वपरावधींश्च ।  
 सत्कोष्ठवीजादिपदानुसारीन् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥१॥  
 संमिक्षभ्रोत्रान्वितसन्मृनीन्द्रान् प्रत्येकसम्बोधितबुद्धधर्मान् ।  
 स्वयंप्रबुद्धांश्च विमृत्तिमार्गान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥२॥  
 द्विधामनःपर्ययचित्प्रयुक्तान् द्विपंचसप्तद्वयपूर्वसक्तान् ।  
 अष्टाङ्गनैमित्तिकशास्त्रदत्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥३॥  
 विकुर्वशाख्यद्विमहाप्रभावान् विद्याधारांश्चारणप्रद्विप्राप्तान् ।  
 प्रज्ञाश्रिताभित्यखगामिनश्च स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥४॥  
 आशीर्विषान् दृष्टिविषान्मृनीन्द्रानुग्रतिदीप्तोत्तमतप्ततप्तान् ।  
 महातिषोरप्रतपःप्रसक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥५॥  
 वन्द्यान् सुरैर्धोरगुर्णारश्च लोके पूज्यान् बुधैर्धोरपराक्रमांश्च ।  
 घोरदिसंसद्गुणब्रह्मयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्त्यै ॥६॥

आमर्द्धिखेलर्द्धिप्रज्वलवित्प्र-सर्वर्द्धिप्राप्तांश्च व्यथादिहंतुन् ।  
 मनोवचः कायबलोपयुक्तान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्स्ये ॥७॥  
 सत्त्वीरसर्पिर्मधुराभृतर्दीन् यतान् वराचीयमहानसंश्च ।  
 प्रवर्धमानांस्त्रिजगत्प्रपूज्यान् स्तुवे गणेशानपि तद्गुणाप्स्ये ॥८॥  
 सिद्धायलयान् श्रीमहतोऽतिवारान् श्रीवर्द्धमानर्द्धिविबुद्धिदधान् ।  
 सर्वान् मुनीन् मुक्तवरानृषीन्द्रान् स्तुवे गणेशानापि तद्गुणाप्स्ये ॥९॥  
 नृसुरस्त्रचरसेव्या विश्वभ्रष्टर्द्धिभूषा

विविधगुणसमुद्रा मारमातङ्गसिंहाः ।

भवजलनिधिपोता वन्दिता मे दिशन्तु

मुनिगणसकलान् श्रीसिद्धिदाः सदृषीन्द्रान् ॥१०॥

प्रतिक्रमणदण्डकः—

शमो अरहंतायां शमो सिद्धायां शमो आइरियायां ।

शमो उवज्झायायां शमो लोए सव्वसाहूयां ॥ १ ॥

शमो जिज्ञायां, शमो ओहिज्झिणायां, शमो परमोहिज्झिणायां,  
 शमो सव्वोहिज्झिणायां, शमो अयंतोहिज्झिणायां शमो केह्हुबुद्धीयां,  
 शमो वीज्जबुद्धीयां, शमो पादाणुसारीयां शमो संभिएणसोदायायां,  
 शमो सयंबुद्धायां, शमो पनेयबुद्धायां, शमो बोहयबुद्धायां, शमो  
 उज्जुमदीयां शमो विउलमदीयां, शमो दसपुब्बीयां, शमो चउदस-  
 पुब्बीयां, शमो अट्टमहाणिमिचकुसलायां, शमो विउव्वइहिट्ठपत्तायां,  
 शमो विज्जाहरायां, शमो चारणायां, शमो पयणासमयायां, शमो  
 आगासगामीयां, शमो आसीविसायां, शमो दिट्ठिविसायां, शमो

उत्तमतवाणं एषो दिततवाणं, एषो तत्ततवाणं, एषो महातवाणं,  
 एषो घोरतवाणं, एषो घोरगुणार्णं. एषो घोरपरक्कमाणं, एषो  
 घोरगुणवंमयारीणं एषो आमासहिपशाणं, एषोखेन्लोसहिपचार्यं,  
 एषोअन्लोसहिपचार्यं, एषो विप्पोसहिपचार्यं, एषो सन्वोसहि-  
 पचार्यं, एषो मणवलीणं, एषो वचिवत्रीणं, एषो कायवलीणं  
 एषो खीरसवीणं, एषो सप्पिसवीणं, एषो महुरसवीणं, एषो  
 अभियसवीणं. एषो अफलीणनडाणसाणं. एषो वद्धमाणाणं एषो  
 सिद्धायदणाणं, एषो मयवदो महदिमहावीरवद्धमाणाणुद्धरिसीणा  
 वेदि ।

अस्संतियं धम्मपहं शिपच्छे तस्संतियं वेण्णर्यं पउंजे ।

काएण वाचा मणवात्रि शिच्च सत्कारणं तं सिरपंचमेण ॥१॥

सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणे ऽ भयवदो महदिमहा-  
 वीरेण महाकम्पवेण सन्वएहुणा सन्वलोगदरिसिणा सदेवासुरमाणु  
 सस्स लोयस्स आगदिगदिचरणोवधादं वधं मोक्खं इड्ढिं ठिदिं  
 बुदिं अणुमागं तक्कं कलं मणोमाणसियं भूतं कर्यं पडिसेवियं  
 आदिकम्मं अरुहकम्मं सन्वलोए सन्वजीवे सन्वभावे सन्वं समं  
 वासांता पस्संता विहरमाणेण समणाणं पंचमहव्वदाणि राइयो  
 वणवेरमणुच्छडाणि समावणाणि समाउगपदाणि सउत्तरपदाणि  
 सम्मं धम्मं उवदेसिदाणि ! तं ब्रहा--

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, विदिए महव्वदे  
 सुसावादादो वेरमणं, तिदिए महव्वदे अदिएणदाणादो वेरमणं,  
 अउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं, पंचमे महव्वदे परिगहादोवेर-

मर्णां, छद्मे अणुव्वदे राइमोयणादो केमर्णां चेदि ।

तत्थ पढमे महव्वदे सव्वं मते ! पाडादिवादं पच्चक्खामि  
 जावञ्जीवं तिविहेण मणसा वंचिया काएणसे एइंदिया वा, वेइं-  
 दिया वा, तेइन्दिया वा. चउरिदिया वा. पंचिदिया वा, पुडि-  
 काइए वा आउकाइए वा तेउकाइए वा वाउकाइए वा बखफ्फ-  
 दिकाइए वा तमकाइए वा अडाइए वा पोदाइए वा जराइए वा  
 रसाइए वा ससेदिमे वा सम्मुच्छिमे वा उम्भेदिमे वा उववादिमे  
 वा तसे वा थावरे वा नादरे वा सुहुमे वा पाणे वा भूदे वा जीये  
 वा सणे वा पञ्जरे वा अपञ्जनेवा आव चउरासीदिओणिएसुहसइसद  
 स्सेसु, खेव सयं पाणादिवादण्णी अणोहि पाणे अदिवादा  
 वेअ अणोहि पाणे अदिवादिज्जंतो वि ण समणुमणोअ तस्स मते  
 अइचारं पडिक्कमामि खिंदामि गरहामि अप्पाणं, वोस्तरामि  
 पुंविचखं मते ! जं पि मए रागस्स वा दोसस्स वा मोहस्स वा  
 वसंगदेश सयं पाणे अदिवादिदे अणोहि पाणे अदिवादादिदे  
 अणोहि पाणे अदिवादिज्जते वि समणुमणोअदे तं पि इमस्स  
 खिग्गंघस्स पावयणस्स अणुत्तरस्स केवलिण्यस्स केवलिपण्यस्स  
 घम्मस्स अहिंमालक्खणस्स अहिंसालक्खणस्स, सक्खाहिण्डियण  
 विण्यमूलस्स ख्मावलस्स अट्टारसमीलसहस्सपरिमंडियस्स चउ-  
 रासीदिगुणसयसहस्सविहूसियस्स एवर्बभचेरगुत्तस्स नियतिलक्-  
 खणस्स परिचायफलस्स उवसमपहाणस्स खंतिमग्गदेसयस्स  
 मुत्तिमग्गपयासयस्स सिद्धिमग्गपज्जवसाइणस्स, से कोहेण वा  
 माणोण वा माएण वा लोहेण वा अएणाणेण वा अदसंणेण वा



अविरिण्य वा असयमेण वा असमणेण वा अखदिगमणेण वा  
 अमिमंसिदाएण अत्रोद्विदाएण वा रागेण वा दोसेण वा मोहेण  
 वा इस्सेण वा मएण वा पदोसेण वा पमादेशेण वा पेम्मेण वा  
 पिवासेण वा लज्जेण वा गारवेण वा अणादरेण वा केण वि  
 कारणेण जादेण वा आलमदाए कम्मभारिगदाए कम्मगुरुगदाए  
 कम्महुच्चरिदाए कम्मपुरुकण्ठदाए तिगारवगुरुगदाए अबहुसुद-  
 दाए अविदिदपरमहुदाए तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरिहामि आग  
 मेसिच्च, अपव्वक्खियं पव्वक्खामि, अणालोचियं आलोचेमि,  
 अण्णिरियं णिदामि अगरहियं गरहामि, अपडिक्कंतं पडिक्कमामि,  
 विराइयं वेस्सरामि आराहणं अब्भुट्ठेमि, अंणायं वेस्सरामि  
 सण्णायं अब्भुट्ठेमि, कुदसणं वेस्सरामि सम्मदसणं अब्भुट्ठेमि,  
 कुच्चरियं वेस्सरामि सुच्चरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वेस्सरामि सुतवं  
 अब्भुट्ठेमि, अकरण्णिज्जं वेस्सरामि करण्णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकि-  
 रियं वेस्सरामि किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वेस्सरामि अम-  
 यदायं अब्भुट्ठेमि, मोसं वेस्सरामि सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदत्तादाणं  
 वेस्सरामि दिएणं कप्पण्णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अवंमे वेस्सरामि वंम-  
 चरियं अब्भुट्ठेमि, परिगहं वेस्सरामि अपरिगहं अब्भुट्ठेमि,  
 राभोयणं वेस्सरामि दिवामोयणमेगमत्तं पच्चुप्पण्णफासुगं अब्भु-  
 ट्ठेमि, अट्टरुहज्जाण वेस्सरामि धम्मसुक्कज्जाणं अब्भुट्ठेमि,  
 किट्टणीलकाउलेस्सं वेस्सरामि तेउपम्मसुक्कलेस्सं अब्भुट्ठेमि,  
 आरंभं वेस्सरामि अण्णारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वेस्सरामि  
 संजमं अब्भुट्ठेमि, सगंभी वेस्सरामि णिगंभी अब्भुट्ठेमि, सचेनं

वोस्सरामि अचेलंअब्भुट्टे मि अलोचं वोस्सरामि लोचं अब्भुट्टे मि  
 एहाणं वोस्सरामि अएहाणं अब्भुट्टे मि, अखिदिसयणं वोस्स-  
 रामि खिदिसयणं अब्भुट्टे मि, दन्तवणं वोस्सरामि अदन्तवणं  
 अब्भुट्टे मि, अट्टिदिभेयिणं वोस्सरामि टिदिभेयणमेगमसंअब्भु-  
 ट्टे मि, अपाणिसं वोस्सरामि पाणिसं अब्भुट्टे मि, कोहं वोस्स-  
 रामि खंतिं अब्भुट्टे मि, माणं वोस्सरामि महं अब्भुट्टे मि मायं  
 वोस्सरामि अज्जगं अब्भुट्टे मि, लोहं वोस्सरामि संतोसंअब्भुट्टे मि  
 अतथं वोस्सरामि दुवालसविहतवोकम्मं अब्भुट्टे मि, मिच्छसं  
 परिवज्जामि सम्मसं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि सुसीलं  
 उवसम्पज्जामि, समल्लं परिवज्जामि णिसल्लं उवसम्पज्जामि, अवि-  
 ण्यं परिवज्जामि विण्यं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि  
 आचारं उवसंपज्जामि, उम्मगं परिवज्जामि जिणमगं उवसंपज्जा-  
 मि, अखंतिं परिवज्जामि खंतिं उवसम्पज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि  
 गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि मुत्तिं उवसंपज्जामि, अस-  
 माहिं परिवज्जामि सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि  
 णिममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि भावियं ख भावेमि इमं  
 खिग्गं पव्वयसं अणुत्तरं केवलियं पाडिपुणसं खोगादियं सामादियं  
 संसुद्धं सल्लघट्टाणं सल्लघत्ताणं सिद्धिमगंसेट्ठिमगं खंतिमगं-  
 मुत्तिमगं पमुत्तिमगं भोक्खमगं पभोक्खमगं खिज्जाणमगं  
 खिब्बाणमगं सव्वदुक्खपरिहाणिमगं सुत्तरियपरिखिब्बाणमगं  
 जत्थ टिया जीवां सिज्झंति बुज्झंति मुत्तंति परिखिब्बाणंति  
 सव्वदुक्खाणमंतं करंति तं सहहामि तं पत्तियामि तं रोचेमि तं

फासेमि, इदोउत्तरं अण्यं श्रुत्थिण भूदं श्य भवं श्य भविस्सदि,  
 याखेणवा दंसखेणवा चरिणेण वा सुणेण वा सीलेण वा गुखेण  
 वा तवेण वा शियमेण वा वदेण वा विहारेण वा आलएण वा  
 अज्जेण वा लाहवेण वा अण्णेण वा वीरिएण वा समथोमि संज  
 दोमि उवरदोमि उवसंतोमि उवधि शियडि-माण-माया मोस-भूरख-  
 मिच्छाणाणमिच्छादंसण-मिच्छाचरिचं च पडिच्चिरदोमि,सम्मखाण-  
 सम्मदंसण-सम्मचरिचं च रोचेमि, जं जिणवरेहिं पएणत्तो जेमएदेव-  
 सिय-राइय-पक्खिय-चाउम्मासियसंवच्छरियइरियावडिकेसलो वा-  
 इचारस्स संथारादिचारस्सपंधादिचारस्स सव्वादिचारस्स उत्तमट्ठस्स  
 सम्मचरिचं च रोचेमि । पढमे महव्वदेपाणादिवादादोवेमणां-  
 उवट्ठावणमंडलेमहत्येमहागुणेमहाणुभावे महाजसे महापुरिसाणुचिन्ने  
 अरहंतसक्खियं सिद्धसक्खियं साहुसक्खियं अप्पसक्खियं परसक्खियं  
 देवतासक्खियं उत्तमट्ठमिहि इदं मे महव्वदं सुव्वदं दट्ठव्वदं होदु,  
 हित्थारयं पारयं तारयं आराहियं चावि ते मे भवतु ।

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं  
 सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥ ३ ॥

शमो अरहंताणं शमो सिद्धाणां शमो आइरियाणां ।

शमो उवज्झयाणं शमो लोए सव्वसाहू शं ॥ ३ ॥

आहावरे निदिए महव्वदे सव्वं मंते ! मुसावादं पच्च-  
 खामि जावज्जीवं तिविहेण भणसा वचिया काएण, से कोहेण वा  
 माएण वा माएण वा लोहेण वा रागेण वा दोसेण वा मोहेण वा  
 इस्सेण वा भएण वा पदोसेण वा पमादेण वा पिम्मेण वा पिवासेण

वा लज्जेण वा गारवेण वा आणादरेण वा केववि कारणेण जादेण  
 वा जेव सयं मोसं भासेज्ज थ अएणेहि मोसं भासाविज्ज अएणेहि  
 मोसं भासिज्जंतं पि थ समणुपण्णिज्ज तस्स भंते ! अइचारं  
 पडिक्कमामि खिदामि गरहामि अप्पाणं, वोस्सरामि पुट्ठिबचणं  
 भंते ! जं पि मए रागंस्स वा दोसस्स वा मोहस्स वा वसंगदेण  
 सयं मोसं भासियं अएणेहिं मोसं भासावियं अएणेहिं मोसं भासि  
 ज्जंतपि समणुपण्णिज्जं इमस्स णिग्गंथस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स  
 केवलियस्स केवलिपण्णसस्स धम्मस्स अहिंसालक्खणस्स सच्चा-  
 णिद्वियस्स विणयमूलस्सखभावलस्स अट्टारससीलसहस्सपरिमंडि-  
 यस्स च उरासीदिगुणसयसहस्सविहूसियस्स एवसुबंभचेरगुत्तस्स  
 णियदिलक्खणस्स परिचागफलस्स उवसमपहाणस्स खंतिमग्गदेस-  
 गस्स मुत्तिमग्गपयासयस्स सिद्धिमग्गपज्जवसाहणस्स .....  
 सम्मणाय-सम्मदंमण-सम्मचरित्तं च रोचेमि जं जिणवरेहिं पण्ण-  
 चो इत्थ जे मए देवसिय-राहय-पक्खिय-चउमासिय-सवच्छरिय-  
 हरियावहिकेसलोचाइचारस्स पंथादिचारस्स संव्वात्तिचारस्स उच-  
 मट्टस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि, विदिए महव्वदे मुसावादादो  
 वेरनणं उवट्टाणमंडले महत्थे महागुणे महाणुभावे महाजसे महा-  
 पुरिसाणुचिएणे अरहंतसक्खियं सिद्धसक्खियं साहुसक्खियं अप्प-  
 सक्खियं परसक्खियं देवतासक्खियं उत्तमट्टम्भि इदं मे महव्वदं  
 सुव्वदं दहव्वदं होट्टु, णित्पारयं पारयं तारयं आराहियं चावि ते  
 मे भवतु ।

द्वितीयं महव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं

सुम्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥३॥

शमो अरहंतायां एमो सिद्धार्थं शमो आइरीयाणां ।

शमो उवज्झायाणां एमो लोए सच्चसाहृणां ॥३॥

आधावरे तदिये महव्वदे सच्चं भंते ! अदत्तादायां पच्च-  
खामि जावज्जीवां तिविहेण मणसा वचिया काएण से देसे वा  
गामे वा शगरे वा खेडे वा कच्चडे वा मढंवे वा मंडले वा पट्टुणे  
वा देणमुहेवा घोसे वा आसयोया सहाएवा संवाहेवा सखिण्वेसेवा  
तिर्यां वा कट्टं वा विगडिं वा मखिं वा खेचे वा खले वा जलेवा  
थलेवा पहेवा उप्पहेवा रणणेवा अरणणेवा शट्टं वा पट्टुं वा पडिदं  
वा अपडिदं वा सुखिहिदं वा दुखिण्हिदं वा अप्पं वा बहुं वा अणुयं वा  
धूलं वा सच्चिं वा अच्चिं वा मज्झंथं वा वहित्थं वा अवि तं त-  
रसोहणमिचं पि शेव सयं अदत्तं गेण्हिज्ज गो अप्पोहिं अदत्तं  
गेण्हाविज्ज अप्पोहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं पि ए समणुमणियं, तस्स  
भंते ! अइचारं पडिक्कमामि णिंदामि गरहामि अप्पोणां वेस्सरामि  
पुब्बिचणां भंते ! जं पि मए रागस्स वा दोसस्स वा मोहस्स वा  
वसांगदेण सयं अदत्तं गेण्हिदं अप्पोहिं अदत्तं गेण्हाविदं  
अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं पि समणुमणियं देतां पि इमस्स  
णिग्गंथस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स केवलियस्स केवलियणस्स  
धम्मस्स अहिंसालक्खणस्स सच्चोहिट्ठयस्स विणयमूलस्स खमा-  
वलस्स अट्टारससीलसइस्स परिमंडियस्स चउरासीदिगुणसय-  
सइस्स त्रिहसियस्स शवसुवंमचेरगुत्तस्स शिपदिलक्खणस्स  
परिचागफल्लस्स उवसमपहाणस्स खंतिमग्गदेसयस्स मुत्तिमग्ग-

पयासयस्म सिद्धिमग्नपज्जवसाहयास्स .....  
 सम्मणाण-सम्मदंसाण-सम्मचरित्तं च रोचेमि, जं जिणवरेहिं  
 पणत्तो इत्थ जो मए देवसिय-राईय-पक्खिय-चउमासिय-सवच्छ-  
 रियहरियावहिकेसलोचाइवारस्स संथारादिचारस्स पंथादिचारस्स  
 सव्वाइचास्स उत्तमट्टस्स सम्मचरित्तं रोचेमि । तदिए महव्वदे  
 अइत्तोदाणादो वेरमणं उवट्टावणमंडले महत्थे महागुणे महाणुमाने  
 महाजसे महापुरिसाणुचिएणे अरहंतसक्खियं सिद्धसक्खियं साहू-  
 सक्खियं अप्पसक्खियं परसक्खियं देवतासक्खियं उरामट्टमिह  
 इदं मे महव्वद सुव्वदं दट्टव्वदं होट्टु. खित्थारयं पारयं तारय  
 अराहियं चावि ते मे भवतु ॥३॥

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं  
 सुव्रतं समारूढ ते मे भवतु ॥३॥

शमो अरहंताणं शमो सिद्धाणं शमो आहरियाणं ।  
 शमो उवज्झायाणं शमो लोए सव्वसाहणं ॥३॥

आधावरे चउत्थे महव्वदे सव्वं मंते ! अबंमं पच्चक्खामि-  
 जावज्जीर्णं तिविहेण मणसा वचिया काएण से देविएसु वा  
 माणुसिएसु वा तिरिच्छिएसु वा अचेयणिएसु वा कट्टकम्मेषु वा  
 चिन्नाकम्मेषु वा पोत्तकम्मेषु वा लेप्पकम्मेषु वा लयकम्मेषु वा  
 सिन्नाकम्मेषु वा गिहकम्मेषु वा मिशिकम्मेषु वा भेदकम्मेषु  
 वा भंडकम्मेषु वा धादुकम्मेषु वा दंतकम्मेषु वा हत्थसंघट्टणदाए  
 पादसंघट्टणदाए पुग्गलसंघट्टणदाए मणुशामणुणोसु सहेसु मणुशा

मणुषोसु रुवेसु मणुषामणुषोसु गंधेषु मणुषामणुषोसु  
 रसेसु मणुषामणुषोसु फालेसु सौर्दिदियपरिणामे चर्त्विख-  
 दियपरिणामे धार्त्विपरिणामे जिम्बिदियपरिणामे  
 फासिंदियपरिणामे शोइंदियपरिणामे अगुत्तेण अगुत्तिदियेण  
 खेव सयं अबंभं सेविज्ज णो अणोहिं अबंभं सेवाविज्ज णो  
 अणोहिं अबंभं सेविज्जन्तां पि समणुमण्णिज्ज तस्स भंते ! अइ-  
 चारं पडिक्कमामि णिदामि गरहामि अप्पाणां, वोस्सराभि पुवि-  
 च्छं भंते ! जंपि मए रागस्स वा दोसस्स वा वसंभदंण सयं  
 अबंभं सेवियं अणोहिं अबंभं सेवावियं अणोहिं अबंभं सेवि-  
 ज्जन्ता पि समणुमण्णिज्जदं तां पि इमस्स जिग्गंथस्स पवयणस्स  
 अणुत्तरस्स केवलिपणत्तास्स धम्मस्स अहिंसालक्खणस्स सच्चा-  
 हिट्ठियस्स विणयमूलस्स खभावलस्स अट्ठारससीलसहस्सपरि-  
 मडियस्स चउरासीदिगुणसयसहस्सविहूसियस्स णवसुणंभचेरगु-  
 त्तस्स णियदिलक्खणस्स परिचागफलस्स उवसमपहाणस्स क्कंति-  
 मग्गदेसयस्स मुत्तिमग्गपपासयस्स सिद्धिमग्गपज्जवसाहणस्स .  
 ... .. सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरिचां च रोचेमि, जं  
 जिणवरोहिं पण्णो इत्थ जे मए देवसिय-राइय-वक्खिय-चउ-  
 मासिय-संवच्चरिय-इरियावहिकेसलोचाइचारस्स संघारादिचा-  
 रस्स पंथादिचारस्स सव्वादिचारस्स उतामडुस्स सम्मचरिचां च  
 रोचेमि । चउत्थे महव्वदे अगंभादे। वेरमणं उवट्ठावणमंडले  
 महत्थे महागुणे महाणुभावे महाजसे महापूरिसाणुचिपणे अरहं-  
 तसक्खियं सिद्धसक्खियं साहुसक्खियं अप्सपक्खियं परसक्खियं

देवतासन्निध्यं उषामङ्गलि इदं मे महव्वदं सुव्वदं दिदव्वदं होदु  
खित्थारयं पारयं तारयं आराहियं चावि ते मे भवतु ॥ ३॥

चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं  
सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥ ३ ॥

शमो अहंताणं शमो सिद्धाणं शमो आइरियाणं ।

शमो उवज्झाणं शमो लोए सव्वसाहूणं ॥ ३ ॥

आधावरे पंचमे महव्वदे सव्वं भंते ! दुविहं परिग्गहं पब-  
कखामि तिविहेण मणसा वचिया काएण । से परिग्गहो दुविहो  
अभिंतरो बादिरो चेदि । तत्थ अभिंतरं परिग्गहं—“मिच्छत्त-  
वेयराया तहेव हस्सादिया य छदोसा । चत्तारि तह कसाया  
चउदस अचंभंतरं गंधा ॥ १ ॥” तत्थ बाहिरं परिग्गहं, से हिर-  
एणं वा सुवएणं वा धर्पा वा खेत्तं वा खलं वा वत्थुं वा पवत्थुं वा  
कोसं वा कुठारं वा पुरं वा अंतउरं वा वलं वा वाहणं वा सयहं वा जयां  
वा जपायां वा जुगं वा गहियं वा रहं वा सदायां वा सिवियं वा  
दासीदासगोमहिंसिगवेदथं मणिमोत्तियसङ्खसिप्पिपवालयां मणिमा  
जयां वा सुवएणमाजयां वा रजतमाजयां वा कसमाजयां वा लोहमाजयां  
वा तंबमाजयां वा अंरुजं वा वोंडजं वा रोमजं वा वक्कजं वा  
वम्मजं वा अप्पं वा बहुं वा अणुं वा धूलं वा सच्चिं वा अच्चिं  
वा अमुत्थं वा बहित्थं वा अवि वालग्गकेडिमिणांपिशेवसयांस-  
मणपाउग्गं परिग्गहं गिण्हज्ज शो अण्णेहिं असमणपाउग्गं  
परिग्गहं गेण्हिवाविज्ज शो अण्णेहिं असमणपाउग्गं परिग्गहं  
गिण्हिज्जंतं पि समणुमणिज्ज तस्स भंते ! अइचारं पडिकमामि



शिदामि गरहामि अप्पाणां, वोम्सरामि पुर्व्विचयं मंते ! जंपिमए  
 रागस्सवा दोसस्स वा मोऽस्स वा वसंगदेण सयं असमणपाउग्गं  
 परिग्गहं गिएहिज्जं. अण्णेहिं असमणपाउग्गं परिग्गहं  
 गेएहावियं अण्णेहिं असमणपाउग्गं परिग्गहं गेएहिज्जंत पि  
 समणुमएणदं, तं पि इमस्स शिग्गन्धस्स पवयणस्स  
 अणुत्तरस्स केवलियस्स केवलिपणतस्स घम्मस अहिं  
 सालक्खणस्स सच्चाहिड्डियस्स विणयमूत्तस्स ख्मावलस्स अट्टा-  
 रसलीलसहस्सपरिमडियस्स चउरासीगुणसयसहस्सविहूसियस्स खव  
 सुबंभचेरगुत्तस्स शियदिलक्खणस्स परिचागफलास उवसमपहाणस्स  
 खंतिमग्गदेसयस्स मुत्तिमग्गपयासयस्स मिद्धिमग्गपज्जवसाहणस्स  
 सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरितं च रोचेमि, जं जिणवरेहिं  
 पण्णते इत्थजोमए देवसिंप-राइय-पक्खिय-चउमासिय-संवच्छरिय-  
 इरियावहिकेसलोचाइचागस्स सथाराइचारस्स पंथाइचारस्स सव्वा  
 इचारस्स उतमट्टस्स सम्मचरितं रोचेमि । पंचमेमहव्वदे परिग्ग-  
 हादो वेरमणं उवट्टावणमंडले महत्थे महागुणे महाणुभावे महा  
 पुरिसाणुचिएणे अरहंतसक्खियंसिद्धसक्खियं साहुसक्खियं अप्प-  
 सक्खियं परसक्खियं देवतासक्खियं उलमट्टम्हि इदं मे महव्वदं  
 सुव्वदं दिढव्वदं होडु, शित्थारयं पारयं तारयं आराहियं चावि  
 ते मे भवतु ॥ ३ ॥

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं  
 समारूढं ते मे भवतु ॥ ३ ॥

शमो अरहंतायां गमो सिद्धार्थं शमो आहरीयायां ।

शमो उवजभ्तायायां शमो लोए सव्वसाहूयां ॥ ३ ॥

आधावरे छट्ठे अणुव्वदे सर्वमंते ! राईमोययां पच्चक्खामि जावज्जोवं तिविहेण मणसा वचिया काएण, से असयां वा पायां वा खादियां वा सादियां वा कहुयां वा कसायां वा आमिन्नां वामहुंवा लवणांवा कलवणांवा सच्चिंवाअच्चिंवा तं सव्वंचउत्तिहं आहारं खोसयां चिंभुज्जिज्ज शोअण्णोहिं रचिं भुज्जानिज्जशो अण्णोहिंरचिं भुज्जिज्जंतं पि समणुमण्णिज्ज, तस्स मंते ! अइचारं पडिक्कमामि चिंमि गरहामि अप्पायां, वोत्तिरामि पुव्विचर्या मंते ! जंपिमए रागस्स वा दांसस्स वा मोहस्स वा वसंगदेण चउत्तिहो आहारो सर्या रचिं भुत्तो अण्णोहिं रचिं भुज्जाविदो अण्णोहिंरतिंभुज्जिज्जंतो वि समणुमण्णिदे, तंपि इमस्स शिर्गथस्स पवयणस्स अणुत्तरस्स केवलियस्स केवलिपण्णत्तस्स धम्मस्स अहिंसा लक्खणस्स सत्ताहि-  
द्वियस्स विणयमूलस्स खमावलस्स अट्टारससीलसहस्स परिमंढियस्स चउत्तासीदिगुणसथसहस्स विहूसियस्स गवसुवंभवेरगुत्तस्स शिपदिल क्खणस्स परिचागफलस्स उपसमपहाणस्स खंतिमगगदेसयस्स मुत्तिम गगपयासयस्स सिद्धमगगपच्चवसाहणस्स सम्मत्ताय-पम्मदंसण-सम्मवरिचं च रोचेमि जं जिणवरेहिं पण्णत्तो इत्थजो मए देवसिय-राइय-पक्खिय-चउमासियसंबच्छरिय-इरियावहि केसले, चाइयारस्स संथागादिचारस्स पंथादिचारस्स सव्वाइचारस्स उचामहुस्स सम्म-चरिचं च रोचेमि, छट्ठे अणुव्वदे राईमोययादे वेरमण्यं उव्वडावण मंडले मइत्थे महागुणे महाणुभावे महाजसे महापुरिसणुचिण्णे

अरहंतसन्निभयं सिद्धसन्निभयं साधुसन्निभयं परसन्निभयंदेवतास-  
सन्निभयं उत्तमट्ठम्हि इदं मे अणुव्वदं सुव्वदं दिट्ठव्वदं होदु  
खित्थारयं पारयं तारयं आरादियं चावि ते मे भवतु ॥३॥

वृष्टं अणुव्वतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं  
समारूढं ते मे भवतु ॥३॥

शमो अरहंताणं शमो सिद्धाणं शमो आइरीयाणं ।

शमो उवज्झायाणां शमो लोए सव्वसाहूयं ॥ ३ ॥

चूलियंतु पवक्खामि भावया पंचविंसदी ।

पंच पंच अणुण्णादा एक्केक्कम्हि महव्वदे ॥१॥

मण्णुत्तो वच्चिगुत्तो इरिया-कायसंयदो ।

एसणासमिदिसंजुत्तो पढमं वदमस्सिदो ॥ २ ॥

अकोहणो अलोहो य भयहस्सविवज्जिदो ।

अणुवीचिभासकुसलो विदिय वदमस्सिदो ॥ ३ ॥

अदेहणं भावणं चावि उग्गहं य परिग्गहे ।

संतुट्ठो भत्तपाणेषु तिदियं वदमस्सिदो ॥ ४ ॥

इत्थिक्कहा इत्थिसंसग्गहास खेहपलोयणे ।

णियमम्मि द्विदो णियत्तो य चउत्थं वदमस्सिदो ॥५॥

सच्चित्ताच्चित्तदव्वेषु वज्झंभंतरेसु य ।

परिग्गहादे विरदो पंचमं वदमस्सिदो ॥ ६ ॥

धिदिमतो खमाजुत्तो भाणजोगपरिद्विदो ।

परीसहाण्णउरं देत्तो उत्तमं वदमस्सिदो ॥७॥

जो सारो सव्वसारेसु सो सारो एस गोयम !

सारं भाणति णामेण सव्वं बुद्धेहिं देसिदं ॥ ८ ॥

इच्चेदाणि पंचमहव्वयाणि राईभोयणादो वेरमणञ्जुदाणि  
सभावणाणि समाउग्गपदाणि सउत्तरपदाणि सम्मं धम्मं अणुपा-  
लइत्ता समणा भयवंता खिग्गंथादोओण सिज्झंतिबुज्झंतिमुचंति  
परिखियंति सव्वदुक्खाणभंतं करेति परिविजाणंति । तं जहा—

पाणादिवादं चहि मोसगं च अदत्तमेहुणपरिग्गहं च ।

वदाणि सम्मं अणुपालइत्ता णिव्वाणमग्गं विरदा उव्वेति ॥१॥

जाणि काणि वि सन्लाणि गरहिदाणि जिणसासणे ।

ताणि सव्वाणि वे।सरित्ता खिसन्त्तो विहरदे सयाम्मुखी ॥२॥

उप्पण्णाणुप्पण्णा माया अणुपुव्वं सो णिहंतव्वा

आलोयण पडिकमग्गं सिंदणगरहणदाए ॥ ३ ॥

अब्भुट्टिदकरणदाए अब्भुट्टिददुक्कड खिराकरणदाए ।

मवं मात्रपडिकमग्गं सेसा पुण दव्वदो मणिदा ॥४॥

एसो पडिकमणविही पयणचो जिणवरेहिं सव्वेहिं ।

संजमतवट्टिदाणं खिग्गंथाणं महरिसीणं ॥५॥

अन्तरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं भवे एत्थ ।

तं खमउ णाणदेवय ! देउ समाहिं च बोहिं च ॥६॥

काउण णमोक्कारं अरहंतार्यां तहेव सिद्धायां ।

आहरियं-उवज्झायाणं लोयम्मि य सव्वसाह्यां ॥७॥

इच्छामि मंते ! पडिकमणमिदं, सुत्तस्स मूलपदाणं उत्तर-  
पदाणमच्चासणदाए । तं जहा—

शमोक्कारपदे अरहंतपदे सिद्धपदे आइरियपदे उवज्झायपदे साहुपदे मंगलपदे लोकोत्तमपदे सरणपदे सामाहयपदे चउवीसति  
 त्ययरपदे वंदणपदे पडिक्कमणपदे पच्चम्बाणपदे काउसग्गपदे  
 असीहियपदे निसीहियपदे अंगंगेसु पुञ्चंगेसु पइण्णएसु पाहुडंसु  
 पाहुडपाहुडेसु कदकम्मएसु वा भूदकम्मएसु वा ग्याणस्य अइक्क-  
 मणदाए दंसणस्स अइक्कमणदाए चरित्तस्स अइक्कमणदाए  
 तवस्स अइक्कमणदाए वीगियस्स अइक्कमणदाए, से अइस्खरहीणं  
 वा पदहीणं वा सरहीणं वा वंजणहीणं वा अत्यहीणं वा गंथहीणं  
 वा थएसु वा थुईसु वा अट्टभखाणएसु वा अणियोगेसु वा अणियो-  
 गदारेसु वा जे भावा पणत्ता अरहंतेहिं भयवंतेहिं तित्थयरहेहिं  
 आदियरेहिं तिलोगणाहेहिं तिलोगबुद्धेहिं तिलोगदरसीहिं ते  
 सद्धामि ते पत्तिवामि ते रोचेमि ते फासेमि, ते सद्धंतस्य ते  
 पकरयंतस्स ते रोचयंतस्स ते फासयंतस्स ज्ञा मए देवसिओ  
 राईओ पक्खिओ संबच्छरिओ अदिककमो वदिककमो अइचारा  
 अणाचारो आमोगो अणामोगो अकाले सज्झाओ कआ काले वा  
 परिहाविदो अत्था कारिदं मिच्छामलिदं वामेलिदं अण्णदादं-  
 ण्णं अण्णहापडिच्छदं आवसएसु पडिहीणदाए तस्स मिच्छा मे  
 दुक्कहं ।

अह पडिवदाए विदिए तदिए चउत्थीए पंचमीए छट्ठीए  
 सत्तमीए अट्ठमीए खवमीए दसमीए एयरसीए बारसीए तेरसीए  
 चउत्थीए पुण्यमासीए पण्यरसदिसाणं पण्यरसरस्राइणं, जउएह  
 मासाणं अट्ठएहं पञ्चाखाणं वीमुत्तरसयदिवसाणं वीसुत्तरसयराईणं,

वारसएहं मासायां चउवीसएहं पक्खायां तिएहं छावड्डिसयदिवसाए  
 तिएहं छावड्डिसयराईयां पंचवरिसादो परदो अग्भितरदोवा दोधह  
 अट्टरुहसंक्खिलेसपरिणामायां तिएहं अप्पसत्थसंक्खिलेसपरिणामायां  
 तिएहं दएणायां तिएहं लेस्सःयां तिएहं गुत्तीयां तिएहं गारवायां  
 तिएहं मन्लायां चउरुह सएणायां चउएहं फसायायां चउएहं  
 उवसग्गायां पंचएहं महव्वःयां पंचएहं इन्दियायां पंचएहं सामदीयां  
 पंचएहं चरित्तायां छएहं आवापयायां सत्तएहं भयायां सत्तविहसंसारया  
 अट्टएहं मयायां अट्टएहं सुद्धीयां अट्टएहं कम्मायां अट्टएहं पवथ-  
 माउयायां खवएहं नंभचेरगुत्तोयां खवएहं खोससायायां दसविहमुएहं द  
 दसविहसमयाधम्मायां दसविहधम्मज्झाणायां वारसएहं संजमायां  
 वारसएहं तवायां वारसएहं अङ्गायां तेरसएहं किरियायां चउदसएहं  
 पुवःयाएहं पएणरसएहं पमायायां लोलासएहं कसायायां पणवीसाए  
 किरियासु पणवीसाए भावणासु वावीसाए परीसहेसु अट्टारसधी-  
 लसहस्सेसु चउरासीदिगुणभयसहस्सेसु मूलगुणेसु उचारगुणेसु  
 अदिककमो वदिककमो अइचारे अणाचारे आमोमो अणामोमो  
 तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि पडिक्कंतं कदोवा कारिदोवा  
 कीरंतोवा समणुपणिसदंतस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामिणिंदिमि  
 गरहामि अप्पायां वोस्सरा मिजाव अरहंतायां भयणंतायां खमोक्कारं  
 करेमि पज्जुवासं करेमि तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरा मि।

खमो अरहंतायां खमो सिद्धायां खमो आहरीयायां ।

खमो उवज्झायायां खमो लोए सव्वसाहृयां ॥१॥

पढमं ताव सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणोण मयवदा  
महदिमहावीरेण महाकस्सवेण सव्वएहणाणोण सव्वलोयदरसिखा  
साव्याणां सावियाणां खुहुयाणां खुहुयाणांकारणोण पंचाणुव्वदाणि  
तिण्णिण गुणव्वदाणि चत्तारि सिक्खावदाणि बारसविह गिहत्थ-  
धम्मं सम्मं उवदेसियाणि । तत्थ इमाणि पंचाणुव्वदाणि पढमे  
अणुव्वदे धूलयडे पाणादेवादादो वेरमणं, विदिए अणुव्वदे  
धूलयडे मुसावादादो वेरमण, तदिए अणुव्वदे धूलयडे अदत्ता-  
दाणादो वेरमणं, चउत्थे अणुव्वदे धूलयडे सदारसंतोसपरदारा-  
गमणवेरमणं कस्स य पुणु सव्वदो विरदी, पंचमे अणुव्वदे  
धूलयडे इच्छाकूपरिमाणं वेदि, इच्चेदाणि पंच अणुव्वदाणि ।

तत्थ इमाणि तिण्णिण गुणव्वदाणि, तत्थ पढमे गुणव्वदे  
दिसिविदास पच्चक्खाणं, विदिए गुणव्वदे विविधअणत्थ-  
दण्डादो वेरमणं तदिए गुणव्वदे भोगोपभोगपररिसंखाणं वेदि,  
इच्चेदाणि तिण्णिण गुणव्वदाणि ।

तत्थ इमाणि चत्तारि सिक्खावदाणि, तत्थ पढमे सामाइयं,  
विदिए पोसहोवासयं, तदिए अतिथिसंविमागो, चउत्थे  
सिक्खावदे पच्छिमसन्लेहणामरण. तिदियं अब्भोवस्साणं वेदि ।

से अभिमदजीवाजीव-उवलद्धपुण्णपाव-आसवसंवरणिज्जर-  
बंधमोक-उमहिकुसले धम्माणुरायरत्तो पि माणुरागरत्तो अट्टिम-  
ज्जाणुरायरत्तो मुच्छिददुट्ठे गिहिददुट्ठे विहिददुट्ठे पालिददुट्ठे सेत्रिददुट्ठे  
इयमेव शिर्गाथपावयणे अणुत्तरे सेअदुट्ठे सेवणुदुट्ठे --

शिसंक्रियणिकंस्त्रिय शिन्विदिगिन्त्री य अमूढदिद्वी य ।

उवगूहण द्विदिकरथं वच्छञ्जलपहावणा य ते अद्व ॥ १ ॥

सन्वेदाणि पंचाणुव्वदाणि त्रियिण गुणव्वदाणि चत्तारि  
सिक्खावदाणि वारसविहं गिहत्थधम्ममणुपालइत्ता—

दंसण वय सामाइय पोसह सच्च राइभरो य ।

वंमारंभ परिग्गह अणुमणमुद्धिद्व देसविरदो य ॥१॥

मद्दुमंसमज्जजूआ वेसादिविवज्जणासीलो ।

पंचाणुव्वयजुत्तो सरोहिं सिक्खावएहिं संपुण्णो ॥२॥

जो एदाइं वदाइं धरेइं सावया सवियाओ वा खुड्डय  
खुड्डियाओ वा अद्वदहभवणवासियवाणवितर जो इसियसोहम्मी  
साणदेवीओ वदिक्कमित्तउवरिमअण्णदरमहड्डियासु देवेषु  
उववज्जति ।

तं जहा—सोहम्मीसाणसणक्कुमारमाहिंदवंभवभुत्तरलांतव—  
काण्डिसुकमहासुकसतारसहस्सारआणतपाणतआरण अञ्चुतकप्पेसु  
उववज्जति ।

अडयंवरसत्थधरा कडयंगदवद्धनउडकयसोहा ।

मासुरवरबोडिधरा देवा य महड्डिया होंति ॥१॥

उक्कस्सेण देतिपिण्णमवगहणाणि जहण्णे सत्तडुमवगहणाणि  
तदो सुमणुसुत्तादो सुदेवणं सुदेवत्तादो सुमाणुसणं तदोसाइहत्था  
पच्छा शिम्मंथाहोऊत्था सिज्झंतिवुज्झंति म्मुंचंति परिणिव्वाणयंति  
सव्वदुक्खाणमंतं करेति । जाव अरहंतायां मयवंतायां यमोक्कर



करेमि पञ्जु वासं करेमि तावकायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्मरामि ।

(अनन्तरं साधवः “थोस्सामि” इत्यादि दण्डकं पठित्वा  
सूरिणा सहिताः “वदसमिदिदियरोधो” इत्यादिकं चाधीत्य वीर-  
स्तुतिं कुर्युः )

## वीरभक्तिः--

सर्वातिचारविशुद्धयर्थं पाश्चिकप्रतिक्रमणक्रियायां पूर्वा-  
चार्यानुकूले सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं निष्ठित-  
करणवीरभक्तिकाद्योत्सर्गं करोम्यहं--(इत्युच्चार्य, “एमो अरहंतायां”  
इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्गं यथोक्तानुच्छ्वासान् ३०० कृत्वा  
“थोस्सामि” इत्यादिदण्डकं पठित्वा “चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं” इत्यादि  
स्वयंमुचं “या सर्वाणि चराचराणि” इत्यादि वीरभक्ति सांचलिकां  
पठित्वा “वदसमिदिदियरोधो” इत्यादि ० पठेयुः । तद्यथा —)

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।  
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं जिनंजितस्वान्तकषायबन्धम् ॥१  
यस्याङ्गलक्ष्मीपरिवेषमिन्नं तमस्तमोरेरिव रश्मिभिन्नम् ।  
ननाशबाह्वं बहु मानसां च ध्यानप्रदीपातिशयेन भिन्नम् ॥२  
स्वपक्षसौम्यित्यमदाक्षलिप्ता वान्सिंहनादैर्विमदा बभूवुः ।  
प्रवादिनो यस्य मदाद्रंगण्डा गजा यथा केसरिणो निनादैः ३

यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः पदं बभूवाद्भुतकर्मतेजाः ।  
 अनन्तधामाक्षरविरवचक्षुः समस्तदुःखक्षयशासनरच ॥४॥  
 स चन्द्रमा भक्ष्यकुमुद्रतीनां विपन्नदोषाभ्रकलङ्कलेपः ।  
 व्याक्रोशवाक् न्यायमपूखमालः पूयात्पवित्रो भगवान्मनोमेध

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद्द्रव्याणि तेषां गुणान्  
 पर्यायानपि भूतभाविभवतः सर्वान् सदा सर्वदा ।  
 जानीते युगपत्प्रतिक्षणमतः सर्वञ्च हत्युच्यते  
 सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ॥१॥  
 वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिता  
 वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः ।  
 वीरात्तर्थाभिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य वीरं तपो  
 वीरे श्री-श्रुति-कान्ति-कीर्ति-घृतयो हे वीर! मद्रत्त्वयि ॥२॥  
 ये वीरमादौ प्रणमन्ति नित्यं  
 ध्यानस्थिताः संपमयोगयुक्ताः ।  
 ते वीतशोका हि भवन्ति लोके  
 संसारदुर्गं विषमं तरन्ति ॥ ३ ॥  
 व्रतसमुदयमूलः संयमस्कन्धबन्धा  
 यमनियमपयोमिबर्बधितः शीलशाखः ।  
 समितिकलिकमारो गुप्तिगुप्तप्रबालो  
 गुणकुसुमसुगन्धिः सत्तपरिचत्रपत्रः ॥ ४ ॥

शिवसुखफलदायी यो दयाह्वययौघः

शुभजनपथिकानां खेदनादे समर्थः ।

दुरितरविजतापं प्रापयन्नन्तमावं

स भवविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्रवृक्षः ॥५॥

चारित्रं सर्वजिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः ।

प्रणमामि पंचभेदं पंचमचारित्रलाभाय ॥ ६ ॥

धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुधारिचन्वते

धर्मेशैव समाप्यते शिवसुखं धर्माय तस्मै नमः ।

धर्माज्ञास्त्यपरः सुहृद्भवभतां धर्मस्य मूलं दया,

धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ॥७॥

धम्मो मंगलमुद्दिष्टं अहिंसा संयमो तवो ।

देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मो सया मणो ॥८॥

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणादिचारमालोचैउ', सम्मणाण-  
सम्म दंसण-सम्मचरित्त-तव-वीरियाचारेसु यम-नियम-संजम सील  
मूलत्तरगुणेषु सच्चमईचारं सावज्जजोगं पडिविरदोमि असंखेज्ज-  
लोगअज्जवसाणठाणाणि अप्पसत्थजोगसएणाणिदियक्कसायगा-  
रवकिरियासु मणवयणकाधकरणदुप्पणिहाणि परिचिंतिपाणि  
किएहणीलकाउलेस्साओ विकहापलिक्कु'चिएण उम्मगइस्सराद-  
अरदिसोयभयदुगंछवेयणविज्जंभजंभाईआणि अट्टरुदसंक्खिसपरि-  
णाणाणि परिणा'मिदाणि अणिहदकरचरणमणवयणकायकरणेण  
अक्खिचवहुलयरायणेण अपडिपुण्णेण वा सक्खरावयसंघाय  
पडिविणिएण अच्छाकारिदं मिच्छामेलिदं आमेलिटं वामेलिदं

अणुहादिपणं अणुहापडिच्छदं आवसएसु परिहीणदाए कदो  
था कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वदसमिदिदिपरोधो लोचो आवासयमचेलमएहाणं ।

खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभणं च ॥ १ ॥

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णरा ।

एत्थ पमादकदादो अइपारादो णियत्तोहं ॥ २ ॥

छेदोवड्ढावणं होदु मज्झं ।

### शान्तिचतुर्विंशति-स्तुतिः-

सर्वातिचारविशुद्धार्थं पाञ्चिकप्रतिक्रमणक्रियायां पूर्वाचार्या-  
नुक्रमेण सकलकर्मण्यार्थं भावपूजावन्दनास्तवसमेतं शान्तिचतु-  
र्विंशतितीर्थकरभक्तिकायोत्सर्गं करोम्यहं (इत्युक्त्वा “णमो अर-  
हंतायं” इत्यादि दंडकं पठित्वा कायमुत्सृत्य “धोस्सामि” इत्यादि दंड-  
कमधोत्य शान्तिकीर्तनां “विधाय रत्तां” इत्यादिकां चतुर्विंशतिकीर्तनां  
च “चउवीसं तित्थयरेः” इत्यादिकां सांबलिकां “वदसमिदियरोधो”  
इत्यादिकं च ससूरयः संयताः पठेयुः । तथा—

विधाय रत्तां परतः प्रजानां राजा चिरं योऽप्रतिमप्रतापः ।

व्याधात्पुरस्तात्स्वत एव शान्तिमुनिर्दयामूर्तिरिवाघशान्तिम् ॥१॥

चक्रेण यः शत्रुभयंकरेण जित्वा नृपः सर्वनरेन्द्रचक्रम् ।

सर्वाधचक्रेण पुनर्जिगाय महोदयो दुर्जयमोहचक्रम् ॥२॥

राजश्रिया राजसु राजसिंहो रराज यो राजसुभोगतंत्रः ।

आर्हन्त्यलक्ष्म्या पुनरात्मतन्त्रो देवासुरोदारसमे रराज ॥३॥

यस्मिन्नभूद्राजनि राजचक्रं घृणौ दयादीधितिघर्मचक्रम् ।  
 पूज्ये घृहुः प्राञ्जलिदेवचक्रं ध्यानोन्मुखे ध्वंसिकृतान्तचक्रम् ॥४  
 स्वदोषशान्त्यावहितात्मशान्तिः शान्तेर्विधाता शरणं गतानाम् ।  
 भूयाद्भवकलेशभयोपशान्त्यं शान्तिर्जिनो मे भगवाञ्छरण्यः ॥५॥

चउवीसे तित्थयरे उसहाइवीरपच्छिमे वंदे ।

सव्वेसिं गुणगणहरसिद्धे सिरसा खमंसामि ॥१॥

ये लोकेऽष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्थवान्तर्गता

ये सम्यग्भवजालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोऽधिकाः ।

ये साध्विन्द्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्याचिता-

स्तान् देवान् कृपभादिवीरचरमान् भक्त्या नमस्याभ्यहम् ॥२॥

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं

सर्वज्ञं संभवाख्यं घृनिगणकृपभं नन्दनं देवदेवम् ।

कर्मारिध्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्ध

क्षान्तां दान्तं सुपार्वं सकलशशानं चन्द्रनामानमीडे ॥३॥

विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं

श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।

मुक्तदान्तेन्द्रियाशवं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं मुनीन्द्रं

थर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौभिं शान्तिशरण्यम् ॥४॥

कुन्धुं सिद्धालयस्थं भ्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषु चक्रं

मल्लि विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम् ।

देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तं

पार्ष्वं नागेन्द्रवन्द्यं शरणमहमितो वर्धमानं च भक्त्या ॥५॥

इच्छामि भन्ते ! चउवीसतिन्धयरभचिकाउस्सग्गो कम्मो तस्सा-  
लोचेउं .पंचमहाकल्लाणसंपणणायां अट्टमहापाडिहेरसहिदायांचउती  
सातिसयविसेमसंजुचायां वचीसदेविंदमखिमउडमत्थयमहिदायां  
बलदेव-वासुदेव-चक्रहर-रिसिमुखिजइअणगारोवगुढायां थुइसह-  
स्सखिलयायां उसहाइवीरपच्छिममंगलमहापुरिसायां शिषकालं  
अंचेमि पूजेमि वंदामि एमंसामि दुम्बलकल्लो कम्मकल्लो  
बोहिलाहो सुगइगमयां समाहिमयां जिणगुणसंपणि होउ मज्झं ।

वदसमिदिदिमरोधो लोचे अवासयमवेत्तमहएहायां ।

खिदिसयणमदंतवणां ठिदिभोयणमेयभचं च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा समणायां जिणवरेदिं पणत्ता ।

एत्थ पमादकदादे अइचारादे शियत्तो हं ॥२॥

छेदोवट्ठावणां होदु मज्झं ।

**चारित्रालोचनासहितावृहदाचार्यभक्तिः**

सर्वातिचारविशुद्धार्थं चारित्रालोचनाचार्यभक्तिकायोत्सर्गं

करोम्यहम्—

( अत्रापि “एमो अरहंतायां” इत्यादि दंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं  
निधाय “थोस्सामि” इत्यादि दण्डकं पठेत् । )

सिद्धगुणस्तुतिनिरतानुद्धूतरुषाग्निजालबहुलविशेषान् ।

गुप्तिभिरभिसंपूर्णान्मुक्तियुतः सत्यवचनलक्षितभावान् ॥१॥

मुनिमाहात्म्यविशेषाज्जिनशास्रसत् । दीपमासुरमूर्त्तिन् ।  
 सिद्धिं प्रपित्सुमनसो बद्धरजोविपुलमूनघातनकुशतान् ॥२॥  
 गुण्यमखिविरचितत्रपुषः षडद्रव्यविनिश्चितस्य घातुन्सतम् ।  
 रहितप्रमादचर्यान्दर्शनशुद्धान् गणस्य संतुष्टिकरान् ॥३॥  
 मोहच्छिद्रुग्रतपसः प्रशस्तपरिशुद्धहृदयशोभनव्यवहारान् ।  
 प्रासुकनिलयाननघोनाशाविष्वांसिचेतसो हतकुपयान् ॥४॥  
 धारितविलसन्मुडान्त्रजितबहुर्दंडपिंडमडलनिकरान् ।  
 सकलपरीषहजयिनः क्रियाभिरनिशं प्रमादतः परिरहितान् ॥५॥  
 अचलान् व्यपेतनिद्रान् स्थानयुतान्ऋष्टदुष्टत्रेश्याहीनान् ।  
 विधिनानाश्रितवासानलिप्तदेहान्विनिर्जितेन्द्रियकरिणः ॥६॥  
 अतुलानुत्कृष्टिकाप्रान्विक्रचितानखंडितस्वाध्यायान् ।  
 दक्षिणभावसमग्रान् व्यपगतमदरागलोभशठमात्सर्यान् ॥७॥  
 भिन्नातरौद्रपन्नान् संभावितधर्मशुक्लनिर्मलहृदयान् ।  
 नित्यं पिनद्धकुगतीन् पुण्यान् गणयोदयान् विलीनगारवचर्यान् ॥  
 तरुमूलयोगयुक्तानवकाशातापयोगरागसनाथान् ।  
 बहुजनहितकरचर्यानिभयाननघान्महानुभावविधानान् ॥८॥  
 ईदृशगुणसंयन्त्रान्युत्पन्नान् भक्त्या विशालया स्थिरयोगान् ।  
 विधिनानारतमग्न्यान् मुकुलीकृतद्वस्तक्रमलशोभितशिरसा ॥९॥  
 अभिनौमि सकलकलुषप्रभवोदयजन्मज्वरामरखबंधनमुक्तान् ।  
 शिवमचलमनघमच्चयमष्वाहतमुक्तिमौख्यमस्त्विति मततम् ॥१०॥

लघुचारित्रालोचना—

इच्छामि भंते ! वरिष्तापारे। तेरसविहो परिहाविदो, पंच-

मह्वदाशि, पंच समिदीओ, तिगुतीओवेदि । तस्य पठमेमह्वदे पाणादिवादादेवेरणं, से पृढत्रिकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेउकाइयाजीवाअसंखेज्जा-संखेज्जा, वाउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्रफदिकोइया जीवा अणता, हरिया बीया अंकुरा छियणा मियणा, तेसि उदावणं परिदावणं विराहणं कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वेइन्दिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुक्खि-किमी-संख-खुन्लय-वराडय-अक्ख-रिड्ड-वाल-संबुक्क-सिाप्य पुलावकाइया, तेसि उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

तेइन्दिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुन्थु-हेहिय-विंछिय-गोमिंद-गोजुव मक्कण-पिपीलियाइया, तेसि उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंसमसय-मक्खि-पयंग-कोड-ममर-महुयर-गोमच्छिआइया, तेसि उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, अंडाइया पोदाइया-बराइया-रसाइया-संसेदिमा-सम्भुच्छिमा-उम्मेदिमा उववादिमा अदि-



चउरासीदिजोषिपञ्चदसदसहस्त्रेसु, एदेसि उदावर्णं परिदावर्णं  
विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंठो वा समणुम-  
यियादो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

इच्छामिभंते ! काथोसग्गो कथो तस्सालोचेउ', सम्मणाण-  
सम्मदंसणम्मचारित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आइरियाणं आया-  
रादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं  
सव्वसाहूण शिचकालं अंचेमे पूजेमि वंदामि णमंसामि दुक्ख-  
क्खओ कम्मक्खओ वाहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं त्रिण-  
गुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

वदसमिदिदियरोओ लोचे। अवासयमचेलमणहाणं ।  
खिदिसयणमदंतवर्णं ठिदिभेयणमेयमत्तं च ॥ १ ॥  
एदे खलु मूलगुणा सन्णाणं त्रिणवरेहिं पयणत्ता ।  
एत्थ पमादकदादो आइचारादो णियत्तो हं ॥ २ ॥  
छेदोवट्ठावर्णं होहु मज्झं ।

**वृहदालोचनासहिता मध्याचार्यभक्तिः—**

सर्वातिचार विशुद्धार्थं वृहदालोचनाचार्यभक्तिकायोत्सर्गं  
करोम्यहं ।

( इत्युच्चार्य "णमो अरहंताणं" इत्यादि दंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं कृत्वा  
'थोस्सामि" इत्यादि दंडकमधीत्य 'देसकुलजाइसुद्धा" इत्यादिकां  
मध्याचार्यनुति" 'इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि" आलोचेउ' पण्णरसण्हं  
दिवमाणं" इत्यादिवृहदालोचनां च ससूरयः साधवः पठेयुः )

देसकूलजाइसुद्धा विसुद्धमण्यवयवकायसंजुता ।  
 तुम्हं पापपयोरुहमिह मंगलमत्पु मे खिच्वं ॥१॥  
 सगपरसमयविदएहं आगमहेदृहिं चाविजाणित्ता ।  
 सुसमत्था जिण्यवयवो विण्ये सत्ताणुरूवेण ॥ २ ॥  
 बालगुरुबुधुसेहे गिलाण्येरे यं खमण्यसंजुता ।  
 वट्टावपगा अपणे दुस्सीले चावि जाणित्ता ॥ ३ ॥  
 वयसमिदिगुत्तिजुता मृचिपहे ठाविया पुणो अपणे ।  
 अज्झनावयगुण्यखिलये साहुगुण्येणावि संजुता ॥ ४ ॥  
 उत्तमखमाए पुढवी पसएणभावेण अञ्जलसरिसा ।  
 कम्मिधण्यदहणादेा अगणी वाऊ असंगादेा ॥ ५ ॥  
 गयणमिव खिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुणिवसहा ।  
 एरिसगुण्यखिलमाणं पायं पणमामि सुद्धमणो ॥६॥  
 संसारकाण्ये पुण्य बंभममाण्येहिं भव्वजीवेहिं  
 खिन्वाण्यस्स हु मग्गो लद्धो तुम्हं पसाएण ॥ ७ ॥  
 अविमुद्धलेस्सरहिया विमुद्धलेस्साहि परिणदा सुद्धा ।  
 रुद्धे पुण्य चत्ता धम्मे सुक्के य संजुता ॥ ८ ॥  
 उग्गहईहावायाधारण्यगुण्यसंपदेहिं संजुता ।  
 सुत्तथभावणाए मावियमाण्यहिं वंदामि ॥ ९ ॥  
 तुम्हं गुण्यगण्यसंपुदि अजाण्यमाण्येण जो मया बुत्तो ।  
 देउ मम बोहिलाईं गुरुभत्तिजुदत्थओ खिच्वं ॥१०॥

### वृहदालोचना

इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं, पण्यरसएहं दिव-

साखं पण्यारसएहं राईयां अम्भंतरदे पंचविहो आयारो णाणा-  
यारोदंसणायारो तवायारो बीरियायारो चरिणायारो चेदि ।

इच्छामि भंते ! चउमासियम्मि आलोचेउ', चउएहं मासाणं  
अट्टएहं पक्खाएहं वीसुचारसयदिवसाणं वीसुचारसयराईयांअट्ठिभ-  
तरदे पंचविहो आयारो णाणायारो दंसणायारो तवायारो बीरि-  
यायारो चरिणायारो चेदि ।

इच्छामि भंते ! संवच्छरियं आलोचेउ', वारसएहं मासाणं  
चउवीसएहंपक्खाए तिण्णिण्णावट्टिसयदिवसाणं तिण्णिण्णावट्टि-  
सयराईयां अट्ठिभतरदे पंचविहोआयारो णाणायारो दंसणायारो  
तवायारो बीरियायारो चरिणायारो चेदि ।

तत्थ णाणायारो काले विणए उवहाणे बहुमाणे तहेव विणए-  
वणे, बंजण अत्थ तदुमये चेदि, तत्थ णाणायारो अट्टविहो परि-  
हाविदे से अक्खरहीणं वा सरहीणं वा बंजणहोणं वा पदहीणं वा  
अत्थहीणं वा गंथहीणं वा थएसु वा थुएसु वा अट्टक्खाणेसु वा अण्णि-  
योगेसु वा अण्णियोगहारेसु वा अकाले सज्झाओ कदेवा कारिदे  
वा कीरंतो वा समणुमण्णिणदे काले वापरिहाविदे अत्थाकारिदं वा  
मिच्छामेलिदं वा आमेलिदं वा वामेलिदंअण्णहादिएणं अण्णहा  
पडिच्छदं आवासएसु परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कहं ।

दंसणायारो अट्टविहो-णिस्संक्रिय णिक्कंखिय णिच्चिदिगिंळा  
अमूददिट्ठीय । उण्णगूहण ठिदिकरणं वच्छल पहावणा चेदि ।१।

१-इस दंडक को पाञ्चिक-प्रतिक्रमण के समय पढ़े । २-इसको चातुर्मा-  
सिक-प्रतिक्रमणके समय पढ़े । ३-इसेसांबतारिक प्रतिक्रमण के समय पढ़े

अट्टविहो परिहाविहो संकाए कंखाए विदिगिंछाए अणणदिट्ठिप-  
संसादाए परपाखंडपसंमएदाए अणायदरासेवणदाएअवच्छ-  
ल्लदाए अप्पहावणादाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

तवायारो वारसविहो, अण्मंतरो छव्विहो बाहिरो छव्विहो  
चेदि, तत्थ बाहिरो अणसण्णं आमोदरियं वित्तिपरिसङ्गा रसपरि-  
वाओ सरीरपरिवाओ विवित्तसयणासणं चेदि, तत्थ अण्मंतरो  
पायच्छिचं विण्णो वेज्जावच्चं सज्जाओक्खणं विउस्सण्णो चेदि ।  
अण्मंतरं बाहिरं वारसविहं तवोक्खं ण कदं णिसण्णोणा पडि-  
क्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वीरियायारो पंचविहो परिहाविहो वरवीरियपरिक्कमेण'जहु-  
त्तमाणोणा वलेण वीरिएण परिक्कमेण णिसण्णियं तवोक्खं ण  
कयं णिसण्णोणा पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविहो पंच  
महव्वदाणि पंचममिदीओ तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमेमहव्वदे  
पाणादिवादादो वेरमणं । सेपुढविकाइया जीवाअसंखेज्जासंखेज्जा,  
आउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेजा, तेउकाइया जीवा असंखे-  
जासंखेजा, वाठकाइया जीवा असंखेजासंखेजा, वणफफदि-  
काइया जीवा अण्णताण्णतो हरिया, वीया, अंकुरा, छिण्णा, मिण्णा,  
एदेसिं उदावणं परिदावणं विराइणं उववादो कदो वा कारिदो  
वा कीरंतो वा समण्णमण्णियो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वेइदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जाकुक्खि-किम्मि-सङ्गखुल्लय-  
वराडय-अक्ख-रिट्ठा-गंडवाल-संबुक्क-सिप्पि-पुलविकाइया, तेसिं

उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

तेइन्दिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुण्णु-देहिय-विंछिय-गोमिंद-भोज्जव-मक्कुणा-पिपीलियाइया, तेसिं उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंसमसय-ययंग-कीड-ममर-महुयर-भोमच्छिया तेसिं उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया-पोदाइया-जरा-इया-संसेदिमा-सम्म्युच्छिमा-उम्मेदिमा-उववादिमा अवि चउरो-सीदिजोणीपण्हसदसहस्सेसु, एदेसिं उदावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वदसमिदिंदियरोधो लोचो अवांसयमचेलमणहाणं ।

खिदिसयणामदंतवणं ठिदिमोयणमेयमत्तं च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा समयाणां जियावरेहिं 'पय्यात्ता ।

एत्थ पभादकदादो अइचारादो गियाचो हं ॥ २ ॥

छेदोवट्टावणं होद् मज्जं ।

क्षुल्लकालोचनासहिता क्षुल्लकाचार्यभक्तिः—

सर्वातिचारविशुद्धयर्थं क्षुल्लकालोचनाचार्यभक्तिकायोत्सर्ग-  
करोम्यहम् ।

( इत्युच्चार्यपूर्ववद्दृष्टकादिकं विधाय 'प्राज्ञःप्राप्तसमस्तस्त्रशास्त्रद्वयः'  
इत्यादिकां 'श्रुतजलधीत्यादिमोक्षमार्गोपदेशिका' इत्येवमन्तकां ससूरयः  
संयताः पठेयुः )

प्राज्ञः प्राप्तसमस्तशास्त्रहृदयः प्रव्यक्तलोकस्थितिः

प्रास्ताशः प्रतिभापरः प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः ।

प्रायः प्रश्नप्रदः प्रभुः परमनोहारी परानिन्दया

ब्रूयाद्धर्मकथां गली गुणनिधिः प्रस्पष्टमिष्टाक्षरः ॥१॥

श्रुतमविकलं शुद्धा वृत्तिः परप्रतिबोधने

परिणातिरूढयोगो मार्गप्रवर्तनसद्विधौ ।

बुधनुतिरनुत्सेको लोकज्ञता मृदुताऽस्पृहा

यतिपतिगुणा यस्मिन्नन्ये च सोऽस्तु गुरुः सताम् ॥२॥

श्रुतजलधिपारगेभ्यः स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः ।

सुचरिततपोनिधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ॥३॥

छत्तीसगुणासमगो पंचविहाचारकरणासंदरिसे ।

सिस्साणुग्गहकुसले धम्माहरिण सदा बंदे ॥४॥

गुरुभक्तिसंजमेण य तरंति संसारसापरं घोरं ।

द्विषणांति अट्टकम्मं जम्मयाभरणां य पावैति ॥५॥

ये नित्यं श्रतमंत्रहोमनिरता ध्यानाग्निहोत्राकुलाः

षट्कर्माभिरतास्तपोधनधनाः साधुक्रियासाधवः ।

शीलद्रावरणा गुणप्रहरणप्रचन्द्रार्कतेजोधिका  
 मोक्षद्वारकपोटपाटनमटा प्रोक्षन्तु मां साधवः ॥६॥  
 गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानदर्शननायकाः ।  
 चारित्रार्णवर्गभीरा माक्षमार्गोपदेशकाः ॥७॥

आलाचना —

इच्छामि भंते ! आहरियभक्तिकाउस्सग्गो कम्मो तस्सालोचेउं,  
 सम्मयाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्तजुत्ताणं पंचविहायं चाराणं आय-  
 रियाणं, आयारादिसुदयाणोवदेसियाणं उवज्झायाण, त्तरयण-  
 गुणपालणारयाणं तच्चसाहूण णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि  
 णमंसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समा-  
 हिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

वदसमर्दिदियरोघो लोचो आवासयमचेलमण्हाणं ।  
 खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभरं च ॥१॥  
 एदे खलु मूलगुणा समणणं जिणवरेहिं पणत्ता ।  
 एत्थपमाइकदादो अइचारादो णियत्तो हं ॥२॥  
 छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।

समाधिभक्तिः

सर्वातिचारविशुद्धयर्थं सिद्ध-चारित्र-प्रतिक्रमण-निष्ठितकरण-  
 वीर-शान्तिचतुर्विंशतितीर्थकर-चारित्रालोचनाचार्य-बृहदालोचना-  
 चार्यं बुल्लकालोचनाचार्यमत्तीः कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादिदोषवि-  
 शुद्धयर्थं समाधिभक्तिकार्योत्सर्गं करोम्यहं—श्लुक्चार्यं पूर्णवहं डका-

दिकं कृत्वा 'शास्त्राभ्यासे जिनपति' इत्यादीष्टप्रार्थनां ससूरयः साधवः पठेयुः ।

अथेष्टप्रार्थना प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः  
शास्त्राभ्यासे जिनपतिभ्यः संगतिः सर्वदापिः

सद्बुद्धानां गुणगणक्या दोषवादे च मौनम् ॥

सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे

सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥१॥

तव पादौ मम हृदयं मम हृदये तव पदद्वये लीनं ।

तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावन्नावन्निर्वाणसम्प्राप्तिः ॥२॥

अस्खरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।

तं खमहु याणदेव ! य मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ ॥३॥

आलोचना-

इच्छामि भंते ! समाहिभक्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं,  
रयणत्तपपरुवपरमप्पज्झाणलक्खणसमाहिभत्तीए शिच्चकालं  
अंचेमि पूजेमि वंदामि यमं सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहि-  
लाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

ततः ( समाधिभक्तेरन्तरं ) सिद्धं त्रुताचायभक्तिभिः ( पूर्वो-  
क्ताभिः ) आचार्य साधवो वन्देरन् ।

इति ।



## ५७-श्रावक-प्रतिक्रमणम् ।

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया माया विना लोमिना  
 रागद्वेषमलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम् ।  
 त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र ! भवतः शोपादमूलेऽधुना  
 निन्दापूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे ॥१॥  
 खम्मामि सब्वजीवार्यं सब्वे जीवा खमंतु मे ।  
 मेत्ती मे सब्वभूदेसु वेरं मज्झं ण केण्वि ॥२॥  
 रागबंधपदोसं च हरिसं दीणभावयं ।  
 उस्सुगर्हं भयं सोगं रदियरदिं च वोस्सरे ॥३॥  
 हा दुड्ढक्यं हा दुड्ढचित्तिर्यं मासिर्यं च हा दुड्ढं ।  
 अंतो अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयंथो ॥ ४ ॥

एइंदिय-वेइन्दिय-तेइन्दिय-चउरिंदिय-पंचेंदिय-पुढविकाइय-  
 आउकाइय-तैउकाइय-वाउकाइय-वणफदिकाइय-तसकाइया-एदेसिं  
 उदावणं परिदावणं विराइणं उवघादा कदा वा कारिदोवीकीरंतो  
 वा समणुमणियादो तस्स मिञ्जा मे दुक्कडं ।

दंसणवयसामाइयपोसहसच्चित्तरायमत्ते य ।

नंमारंमपरिग्गहअणुमणुमुदिडु देसविरदेदे ॥ १ ॥

एयासु जधाकहिदपडिमासु पमादाइकयाइचारसोहणडं

छेदोवट्ठावर्यं होदु मज्झं ।

अरहंतासद्धआइरिय उवज्झायसब्वसाहुसक्खियं सम्मरुपव्वखं  
 सुव्वद दिड्ढयद सलारोहियं मे भवदु मे भवदु मे भवदु ।

देवसियपडिककमशाए सव्वाइ चारबिसोद्विधिमिर्च पुब्बाइ-  
रियकमेण आलोयणसिद्ध मरिकाउत्सगं करेमि

### सामायिकइण्डकः—

एमो अरहंताणं एमो सिद्धाणं एमो आइरियाणं ।

एमो उवज्जायाणं एमो लोए सव्वसाहूणं ॥ १ ॥

चत्तारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहुर्मंगलं,  
केवलपण्यात्तो धम्मे मंगलं ।

चत्तारि लोगोत्तमा—अरहंतलोगोत्तमा, सिद्धलोगोत्तमा,  
साहु लोगोत्तमा, केवलपण्यात्तो धम्मे लोगोत्तमा ।

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंत सरणं पव्वज्जामि,  
सिद्ध सरणं पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलपण्यात्तो  
धम्मे सरणं पव्वज्जामि ।

अट्ठाइज्जदीवदोसमुद्देशु पण्णारसकम्मभूमीसु जाव अरहं-  
ताणं भयवंतायां आदिपराणां तित्थयराणां जिण्णाणां जिणोत्तमाणां  
केवलियाणां सिद्धाणां बुद्धाणां परिखिण्णुदाणां अंतयडाणां पारय-  
डाणां, धम्माइरियाणां, धम्मदेसयाणां, धम्मशायाणां, धम्मवर-  
चाउरंगचक्कवट्ठीणां देवादिदेवाणां, याणाणां दंसणाणां चरिणाणां  
सदा करेमि किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्वं सावज्जजोगं पव्वज्जामि,  
जावजीवं तिविहेया मयासा वचिया काएया ण करेमि एा कारेमि  
अण्णां करंतं वि ण समणुमण्णामि । तस्स भंते ! अइचारंपडिक-

मामि, सिंदामि, गरहामि अप्पार्थः जाव अरहंताणं मयवंताणं  
पज्जुवासं करेमि ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।  
णमोकार ६ गुणिया । कायोत्सर्गं उच्छ्वास २७ ।

### चतुर्विंशतिस्तवः—

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवलीअयांतजिणे ।  
खरपवरलोयमहिए विहुयरयमले मडापण्णे ॥ १ ॥  
लोयस्सुज्जोययरे धम्मतित्थंकरे जिणे वंदे ।  
अरहंतै कित्तिस्से चउवीसं चैव केवल्लिणो ॥ २ ॥  
उसहमजियं च वंदे संभवमभिणांदणं च सुमहं च ।  
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे ॥ ३ ॥  
सुविहं च पुप्फयंतं सीयल सेयंस वासुपुज्जं च ।  
विमलमणंतं मयवं धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ४ ॥  
कुन्धुं च जिणवरिदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च क्षमिं ।  
वंदामि रिद्धणेमि तह पासं वड्ढमाणं च ॥ ५ ॥  
एवं मए अभित्थुआ विहुयरयमला पहीणजरमरणा ।  
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ॥ ६ ॥  
कित्थिय वंदिय महिया एए लोमोचमा जिणा सिद्धा ।  
आरोग्गणाणलाहं दित्तु समाहिं च मे बोहि ॥७॥  
चंदेहिं शिम्मलयरा आइच्चेहिं अहियं पयासांता ।  
सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिंसंतु ॥ ८ ॥

श्रोमते वर्धमानाय नमो नमितविद्विषे ।

यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोप्पदायते ॥ १ ॥

सिद्धभक्तिः—

तवसिद्धे ष्यसिद्धे संयमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।

द्यायस्मि दंसख्यस्मि य सिद्धे सिरसा ष्यमंसामि ॥ २ ॥

इच्छामि भंते ! सिद्धभक्तिकाउत्सर्गो कश्चो तस्सालोचेउ',  
सम्मण्याण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तजुचाणं अट्टविहकम्ममूक्काणं  
अट्टगुणसंपण्णाणं उडढल्लोयमत्थयस्मि पइट्टियाणं तवसिद्धायां  
ष्यसिद्धायां चरित्तसिद्धायां सम्मण्याण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-  
सिद्धायां अदीदाणागदवट्टमाणकालत्तायसिद्धायां सच्चसिद्धायां शिच्च  
कालं अंचेमि पूजेमि वंदामि ष्यमंसामि दुक्खक्खञ्चो कम्मक्खञ्चो  
बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

आलोचना—

इच्छामि भंते ! देवसियं आलोचेउ । तत्थ--

पंजुम्बरसहियाइं सत्त वि वसणाइं जो विवज्जेइ ।

सम्मत्तविसुद्धमई सो दंसखसावञ्चो भणियो ॥ १ ॥

पंच य अणुब्बयाइं गुणब्बयाइं हवंति तइ तिप्पिण ।

सिक्ख्खावयाइं चत्तारि जाण विदियम्मि ठाणम्मि ॥ २ ॥

जिणवयणधम्मतेहयपरमेट्टिजिणयालयाण शिच्चं पि ।

जं वंदणं तियालं कीरइ सामाइयं तं खु ॥ ३ ॥

उशममज्झन्नहण्यं तिविहं पोसइविहारामुहिट्टं ।

समसशीए मासम्मि चउसु पब्बेसु कायव्वं ॥ ४ ॥

जं वज्जिजदि हरिदं तयपचपवालकंदफलवीयं ।  
 अप्यासुगं च सलिलं सच्चित्तखिष्वत्तिमं ठाणं ॥५॥  
 मणवयथाकायकदकारिदाणुमोदेहि मेहुणं शवधा ।  
 दिवसम्मि जो विवज्जदि गुणम्मि सो सावओ छट्ठो ॥६॥  
 पुव्वुत्तणवविहारं णि मेहुणं सव्वदा विवज्जतो ।  
 इत्थिक्कडादिणिविची सत्तमगुणवंमचारी सो ॥७॥  
 जं किंपि गिहारंमं बहु धोवं वा सया विवज्जेदि ।  
 आरंभणिविचमदी सो अट्टमसावओ भणिओ ॥८॥  
 मोत्तु श वत्थमिचं परिग्गहं जो विवज्जदे सेसं ।  
 तत्थ वि मुच्छं श करदि वियाण सो सावओ शवमो ॥९॥  
 पुट्ठो वापुट्ठो वा णियगेहिं परेहिं सग्गिहकज्जे ।  
 अणुमणणं जो श कुणदि वियाण सो सावओ दसमो ॥१०॥  
 शवकोडीसु विमुद्धं मिक्खायरणेण भुंजदे भुंजं ।  
 जायणरहियं जोग्गं एयारस सावओ सो दु ॥११॥  
 एयारसम्मि ठाणे उक्किट्ठो सावओ हवे दुविहो ।  
 वत्थेयधरो पढमो कोवीणपरिग्गहो विदिओ ॥१२॥  
 तववयणियमावासपलोचं कारेदि पिच्छ गिणहेदि ।  
 अणुवेहाधम्मभाणं करपरो एयठाणम्मि ॥१३॥  
 इत्थ मे जो कोई देवसिओ अइचारो अणाचारो तस्स मंते !  
 पडिक्कमामि पडिक्कम्मंतस्स मे सम्मत्तमरणं समाहिमरणं  
 पंडियमरणं धीरियमरणं दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो  
 सुगहगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

दंसणवयसामाहयपोसदसच्चिचारायमरो य ।

वंभारंभपरिग्गहअणुमणमुद्धिद्ध देसविरदेदे ॥१॥

एयासु यधाकहिदपडिमासु पमादाहकयाहचारसोहण्ड  
छेदेवद्वावर्णं होहु मज्जं ।

### प्रतिक्रमणभक्तिः—

श्रीपडिकक्रमणमणि—काउस्सग्गं करेमि—

णमो अरहंताणमित्यादि—योस्सामीत्यादि ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्झायाणां णमो लोए सव्वसाहूणां ॥ ३ ॥

णमो जिणाणां ३, णमो णिस्सहीए ३, णमोत्थु दे ३, अरहंता  
सिद्ध ! बुद्ध ! शीरय ! शिम्मल ! समण ! सुभण ! सुसमत्थ !  
समजोग ! सममाव ! सल्लघट्ठाणं सल्लघराणा ! शिब्भय ! विराय !  
णिहोस ! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिासंग ! णिस्सल ! माणमाय-  
मोसमूरण ! तवप्पहावण ! गुणारवण ! सीलसापर ! अर्हात !  
अप्पमेय ! महदिमहावीरबट्ठमाण ! बुद्धिरिसिणो चेदि णमोत्थु  
दे णमोत्थु दे णमोत्थु दे ।

मम मंगलं अरहंता य सिद्धा य बुद्धा य जिणा य केवलिणो  
श्रोहिणाणियो मणपजयणाणियो चउदसपुब्बंगामिणो सुदस-  
मिदिसमिद्धा य, तवो य वारसविहो तवसी, गुणा य गुणवंतो  
य महारिसी तित्थं तित्थकरा य, पवयणं पवणी य, णायां णाणी  
य, दंसयां दंसणी य, संजमो संजदा य, विणओ विणीदा य,

बंमचेरवासो बंमचारो य, गुत्तीओ चैव गुत्तिमंतो य, मुत्तीओ चैव मुत्तिमंतो य, समिदोओ चैव समिदिमंतो य, ससमयपरस-मयविदु, खति खवगा य, खीणमोहा य खीणबंतो य, बोहियबुद्धा य बुद्धिमंतो य, चेईयरुक्खाय चेईयाणि ।

उद्धमहतिरियलोए सिद्धायदण्णाणि एमंसामि सिद्धिणिसीहि-याओ अट्टावपन्वे य सम्मेदेउज्जंते चंपाएपावाए मज्झिमाएहत्थि-वालियसहाए जाओ अत्थणाओ का विणिसीहियाओ जीवलोयम्मि ईसिपन्भारतलगयाणां सिद्धाणांबुद्धाणां कम्मचक्कमुक्काणां एआरयाणां णिम्मलाणां गुरुआइरियउवज्झायाणां षव्वति-त्थेर-कुलयराणां चाउ-वण्णाय समणसङ्घा य भरहेरावएसु दससु पंचसु महाविदेहेसु जे लोए संति साहवो संजदा तवसा एदे मम मंगलं पविशं एदे हं मंगलं करेमि मावदो विसुद्धो सिरसा अहिवंदिउण्ण सिद्धेकाउण्ण मंजलिमत्थयम्मि पडिलेहिय अट्टकत्तरिओ तिविहं तियरणसुद्धो

पडिक्कमामि मंते ! दंसणपडिमाए संकाए कंखाए विदि-गिंछाए परपासंडाण पसंसाए पसंथुए जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुम-णिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥१॥

पडिक्कमामि मंते ! वदपडिमाए पढमे थूलयडे हिंसाविरदि-वदे वहेण वा वंघेण वा छेएण वा अइमारारोहणेण वा अएणापाण-णिरोहणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया का-एण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२-१॥

पडिकमामि भंते ! वदपडिमाए विदिप धूलयडे असच्च-  
विरदिवदे मिच्छोवदेसेण वा रहोअम्मकखाणेण वा कूडलेहणकर-  
णेण वा खायापहारेण वा सायारमंत्रमेण वा जो मए देवसिओ  
अइचारो मयासा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो  
वा समणुमणियादो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२-२॥

पडिकमामि भंते ! वदपडिमाए तिदिप धूलयडे थेणाविरदि-  
वदे थेणापओगेणा वा थेणाहरियादाणेणा वा विरुद्धरजाइकमणेणा  
वा हीणाहियमाणुम्माणेणा वा पडिरूपयववहारेण वा जो मए  
देवसिओ अइचारो मयासा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा  
कीरंतो वा समणुमणियादो तस्य मिच्छा मे दुक्कडं ॥२-३॥

पडिकमामि भंते ! वदपडिमाए चउत्थे धूलयडे अवंभवि-  
रदिवदे परविवाहकरणेण वा इत्तरियागमणेण वा परिग्गहिदापरिग्गा-  
हिदागमणेण वा अशंगकीडणेण वा कामतिच्चाभिणिवेसेण वा जो  
मए देवसियो अइचारो मयासा वचिया काएण कदो वा कारिदो  
वा कीरंतो वा समणुमणियादो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥२-४॥

पडिकमामि भंते ! वदपडिमाए पंचमे धूलयडे परिग्गहपरिमा-  
णवदे खेणवत्थूणं परिमाणाइक्कमणेण वा घणघाणाणं परिमाणा-  
इक्कमणेण वा दासीदासाणं परिमाणाइक्कमणेण वा हिरण्य-  
सुवयणाणं परिमाणाइक्कमणेण वा कुप्पभांडपरिमाणाइक्क-  
मणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मयासा वचिया काएण  
कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियादो तस्स मिच्छा  
मे दुक्कडं ॥ २-५ ॥



पठिक्रमामि भंते ! वदपडिमाए पठमे गुणव्वदे उड्डवइ-  
ककमयेण वा अहोवइककमयेण वा तिरियवइककमयेण वा खेच-  
उद्धीएण वा सद्विअंतराघाणेण वा जो मए देवसिओ अइचारो  
मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणु-  
मएणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कं ॥ २-६-१ ॥

पठिक्रमामि भंते ! वदपडिमाए विदिए गुणव्वदे आणयणेण  
वा विणिजेणेण वा सहाणुवाएण वा रूवाणुवाएण वा पुमल-  
खेवेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया काएण  
कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुप्रणिणदो तस्स मिच्छा मे  
दुक्कं ॥ २-७-२ ॥

पठिक्रमामि भंते ! वदपडिमाए तिदिए गुणव्वदे कंदप्पेण  
वा कुकुवेएण वा मोक्खरिएणावा असमक्खियाहिकरणेण वा भोगो-  
पभोगाणत्थकेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा वचिया  
काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणिणदो तस्स  
मिच्छा मे दुक्कं ॥ २-८-३ ॥

पठिक्रमामि भंते ! वदपडिमाए पठमे सिक्खावदे फासिदिय-  
भोगपरिमाणाइकमयेण वा रसणिदियभोगपरिणाइककलणेण वा  
घाणिदियभोगपरिमाणाइकमयेण वा चक्खिदियभोगपरिमाणा-  
इकमयेण वा सवणिदियभोगपरिमाणाइकमयेण वा जोमए देवसिओ  
अइचारो मणसा वचिया काएण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा  
समणुमणिणदो तस्स मिच्छा मे दुक्कं ॥ २-९-१ ॥

पठिक्रमामि भंते ! वदपडिमाए विदिए सिक्खावदे फासि-

दियपरिभोगपरिमाणाइकमण्येण वा रसशिंदियपरिभोगपरिमाणा-  
इकमण्येण वा घाशिंदियपरिभोगपरिमाणाइकमण्येण वा चक्खिं-  
दियपरिभोगपरिमाणाइकमण्येण वा सबशिंदियपरिभोगपरिमाणा-  
इकमण्येण वा जो मए देवसियो अइचारो मणसा वचिया  
काएण कदे वा कारिदे वा कीरंतो वा समणुमणियदे तस्स  
मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-१०-२ ॥

पडिकमामि भंते ! वदपडिमाए तिदिए सिक्खावदे सच्चि-  
शिक्खेवेण वा सच्चिपिदाणेण वा परडवएसेण वा कालाइकमण्येण  
वा मच्छरिएण वा जो मए देवसियो अइचारो मणसा वचिया  
काएण कदे वा कारिदे वा कीरंतो वा समणुमणियदे तस्स  
मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-११-३ ॥

पडिकमामि भंते ! वदपडिमाए चउत्थे सिक्खावदे जीवि-  
दासंसणेण वा मरणासंसणेण वा मित्ताणुराएण वा सुहाणुबंधेण  
वा णिदाणेण वा जो मए देवसियो अइचारो मणसा वचिया  
काएण कदे वा कारिदे वा कीरंतो वा समणुमणियदे तस्स  
मिच्छा मे दुक्कडं ॥ २-१२-४ ॥

पडिकमामि भंते ! सामाइयपडिमाए मणदुप्पण्णिधाणेण वा  
वायदुप्पण्णिधाणेण वा कायदुप्पण्णिधाणेण वा अणादरेण वा  
सदिअणुवट्ठावणेण वा जो मए देवसियो अइचारो मणसावचिया  
काएण कदे वा कारिदे वा कीरंतो वा समणुमणियदे तस्स  
मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ३ ॥

पडिकमामि भंते ! पोसहपडिमाए अप्पडिवेक्खिवापमज्जि-

योस्सग्नेष वा अप्पडिवेक्खियापम् जिजयादायेण वा अप्पडिवे-  
क्खियापमज्जियासंधारोवक्कमणेण वा श्वावस्सयाणादरेण वा  
सदिअणुवट्ठावयेण वा जो मए देवसिओ अइचारो मणसा-  
वचिया काएण कदे वा कारिदे वा कीरंते वा समणुमण्णिदे  
तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ४ ॥

पडिक्कमामि भंते ! सच्चित्तविरदिपडिमाए पुढविकाइया  
जीवा असंखेज्जासंखेज्जा आउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा  
तेउकाइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा वाउकाइया जीवा असंखे-  
ज्जासंखेज्जा वणफुदिकाइया जीवा अयांताअयांता हरिया बीया  
अंकुरा छिण्णा मिएणा एदेसि उदावणं परिदावणं विरोहणं  
उवघादे कदे वा कारिदे वा कीरंते वा समणुमण्णिदे तस्स  
मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ५ ॥

पडिक्कमामि भंते ! राइमत्तपडिमाए श्वविहवंबचरियस्स  
दिवा जो मए देवसिओ अइचारो अणाचारो मणसा वचिया  
काएण कदे वा कारिदे वा कीरंते वा समणुमण्णिदे तस्स  
मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ६ ॥

पडिक्कमामि भंते ! वंमपडिमाए इत्थिकहायत्तयेण वा  
इत्थिमखोहरंणयिरक्खयेण वा पुव्वरयाणुस्सयेण वा कामक्काव-  
णरसासेवयेण वा सर्रीरमडयेण वा जो मए देवसिओ अइचारो  
अणाचारो मणसा वचिया काएण कदे वा कारिदे वा कीरंते वा  
समणुमण्णिदे तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ७ ॥

पडिक्कमामि भंते ! आरंभविरदिपडिमाए कसाववसंगएण

लो मए देवसियो आरंभो मणसा वचिया कारण कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियायो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ८

पडिक्कमामि भंते ! परिग्गहविरदिपडिमाए वत्थभेत्तपरिग्गहादे। अवरम्मि परिग्गहे मुच्छापारिणामे जो मए देवासओअइचारो अणाचारो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमणियादो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ६ ॥

पडिक्कमामि भंते ! अणुमणुविरदिपडिमाए जं किं पि अणुपणणं पुट्ठापुट्ठेण कदं वा कारिदं वा कीरंतं वा समणुमणियादो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ १० ॥

पडिक्कमामि भंते ! उद्दिट्ठविरदिपडिमाए उद्दिट्ठदोसवहुलं अहोरदियं आहारयं आहारावियं आहारिज्जंतं वा समणुमणियादो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥ ११ ॥

इच्छामि भंते ! इमं शिग्गंथं पावयणं अणुत्तरं केवलियं पडिपुण्णं योगाइयं सामाइयं संसुद्धं सल्लघट्ठाणं सल्लघत्ताणं सिद्धिमग्गं सेट्ठिमग्गं खंतिमग्गं मोत्तिमग्गं पमोत्तिमग्गं मोक्खमग्गं पमोक्खमग्गं शिज्जाणमग्गं शिव्वाणमग्गं सव्वदुक्खपरिहाणिमग्गं सुचरियपरिखिन्नाणमग्गं अवितहमविसंतिपव्वयणमुत्तमं तं सहदामि तं पत्तियामि तं रोचेमि तं फासेमि इदो उत्तरं अण्णं णत्थि भूदं ण भयं ण भविस्सदि णाणेण वा दंसणेण वा चरिचंण वा सुचेण वा इदो जीवा सिज्झंति बुज्झंति मुच्चंति परिशिव्वाणयंति सव्वदुक्खाणमंतं करंति परिवियाणंति समओमि संज-

देमि उवरदेमि उवसंतोमि उवधिणियडियमाणमायामोसमूरण  
मिच्छणाणमिच्छदंसणमिच्छचरिचं च पडिविरदेमि सम्मणाण-  
सम्मदंसणसम्मचरिचं च रोचेमि जं जिणवरेहिं पणत्तो इत्थ  
मे जो कोह देवसियो अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छामि  
दुक्कडं ।

—: ० :—

इच्छामि भंते ! वीरभक्तिकाउस्सगं करेमि जो मए देवसिअ  
अइचारो अणाचारो आमोगो अणाभोगो काइओ वाइओ माण-  
सिओ दुच्चरिओ दुच्चारिओ दुब्भासिओ दुप्परिणासिओ णाणे  
दंसणे चरिचे सुत्ते सामाइए एयारसएहं पडिमाणं विराइणाए  
अट्टविहस्स कम्मस्स णिग्घादणाए अण्णहा उस्सासिदेण णिस्सा-  
सिदेण वा उम्मिसिदेण णिम्मिसिदेण खासिदेण वा छिकिदेण  
वा जंभाइदेण वा सुहुमेहिं अंगचलाचलेहिं दिट्ठिचलाचलेहिं एदेहिं  
सन्वेहिं असमाहिं पंचेहिं आपारेहिं जाव अरहंताणं भयवताणं  
पज्जुवासं करेमि ताव कायं पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

दंसणावपसामाइयपोसहसच्चित्तराइभणे य ।

बंभारंभपरिग्गहअधामणुद्धिद्वेसविरदेदे ॥१॥

वीरभक्तिकाउस्सगं करेमि—

( णमां अरहताणमित्यादि, थोस्सामीत्यादि जाप्य ३६ देवा ) ।

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद्द्रव्याणि तेषां गुणान्  
पर्यायानपि भूतभाविभवतः सर्वान् सदा सर्वदा ।

जानीते युगपत्प्रतिक्षणमतः सर्वज्ञ इत्युच्यते

सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ॥१॥

वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिता

वीरेणाभिहतः स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः ।

वीरात्तीर्थभिर्दं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य वीरं तपो

वीरे श्री-द्युति-कान्ति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! भद्रं त्वयि ॥२॥

ये वीरमादौ प्रणमन्ति नित्यं ध्यानस्थिताः संयमयोगयुक्ताः ।

ते वीतशोका हि भवन्ति लोके संसारदुर्गं विषमं तरन्ति ॥३॥

व्रतसमुदयमूलः संयमस्कन्धबन्धो

यमनियमपयोभिर्वर्धितः शीलशास्त्रः ।

समितिकलिकभारो गुप्तगुप्तप्रवालो

गुणकुसुमसुगन्धिः सत्तपश्चित्रपत्रः ॥४॥

शिवसुखफलदायी यो दयाञ्जाययौघः

शुभजनपथिकानां खेदनोदे समर्थः ।

दुरितरविजतापं प्रापयन्नन्तमाव

स भवविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्रवृत्तः ॥५॥

चारित्रं सर्वजिनैश्चरितं प्रोक्त च सर्वशिष्येभ्यः ।

प्रणामामि पंचभेदं पंचमचारित्रलामाय ॥६॥

धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुवाश्चिन्वते

धर्मेणैव समःप्यते शिवसुख धर्माय तस्मै नमः ।

धर्माच्चास्त्यपरः सुहृद्भवभृतां धर्मस्य मूलं दया

धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ॥७॥

धम्मो मंगलमुद्दिट्ठं अहिंसा संयमो तवो ।

देवा वि तस्स पणामंति जस्स धम्मे सया मणो ॥८॥

इच्छामि भंते ! पडिकमणाइचारमालोषेउं तत्थ देसासिआ  
आसणासिआ ठाणासिआ कालासिआ मुदासिआ काओसग्मा-  
सिआ पाणामासिआ आवत्तासिआ पडिकमासिए छमु आवासएसु  
परिहीणादा जो मए अच्चामणो मणासा वचिया काएणा कदो वा  
कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिणदो तस्स मिच्छा मि दुक्कडं ।

दंसण वय-सामाइय पोसह-सच्चि रायभणे य ।

बंधारंम-परिग्गह-अणुपणमुद्दिट्ठ देसविरदेा य ॥१॥

चउवीसतित्थयरभत्तिकाउस्सग्गं करेमि—

(णमो अरहंताणमित्यादि, थोस्सामीत्यादि )

चउवीसं तित्थयरे उपहाइवीरपच्छिमे वंदे ।

सव्वेसिं गुणगणहरसिद्ध सिरसा णमंसामि ॥१॥

ये लोकेष्टसद्वल्लक्षणाधरा ज्ञेयार्णवान्तर्गता

ये सम्यक्भवजालहेतुमथनाश्चन्द्रार्कतेजोधिकाः ।

ये साध्विन्द्रसुराप्सरेऽपणशतैर्गीतप्रणुत्याचिंता-

स्तान् देवान् वृभादिवीरचरमान् भक्त्या नमस्याम्यहम् ॥२॥

नाभेयं देवपूज्यं जिनवरमजितं सर्वलोकप्रदीपं

सर्वज्ञं संमवाख्यं मुनिगणवृषभं नन्दनं देवदेवम् ।

कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिगन्धं

द्वान्तं दान्तं सुपाश्र्णं सकलशशिनिभं चन्द्रनामानमीडे ॥३॥

विख्यातं पुष्पदन्तं भवमयमथनं शीतलं लोकनाथं  
 श्रेयांसं शीलकोशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।  
 मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सिंहसैन्यं घुनीन्द्रं  
 धर्मं सद्गर्भकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शान्तिं शरण्यम् ४  
 कुन्धुं सिद्धालयस्थं श्रमणपतिमरं त्यक्तभोगेषु चक्रं  
 मन्त्रिं विख्यातगोत्रं खचरगणनुतं सुव्रतं सौख्यराशिम् ।  
 देवेन्द्रार्च्यं नमोशं हरिकुलतिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तं  
 पार्श्वं नागेन्द्रबन्धं शरण्यमहमितो वर्धमानं च भक्त्या ॥५॥

### अञ्चलिका--

इच्छामि भंते ! चउवीसतित्थयरभचिक्काउस्सग्गो कओ  
 तस्सालोचेउं, पंचमहाकन्लाखसपण्णायां अट्टमहापाडिहेरसहि-  
 दायां चउतीसातिसयबिसेससंजुत्तायां वत्तीसदेविंदमणिमउडमत्थ-  
 यमहिदायां वल्लदेव-वासुदेव-चककहर-रिसिमुण्णिज्झअण्णगारोवग्गू-  
 टायां थुइसहस्सखिलपायां उसहाइवीरपच्छिममंगलमहापुरिसायां  
 खिच्चकाल अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंसांमि दुक्खक्खओ कम्म-  
 क्खओ बोहिलाहो सुग्गइगमयां समाहिमरयां जिण्णुग्गसंपत्तिहोउ  
 मज्झं ।

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सच्चि-रायभणे य ।

वंभारंम-परिग्गह-अण्णुमण्णुहिइ देसविरदो य ॥ १ ॥

श्रीसिद्धमक्ति-श्रीप्रतिक्रमणमक्ति-श्रीवीरमक्ति-श्रीचंतुर्विंशति-



भक्तीः कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादिदोषविशुद्धार्थं समाधिभक्ति-  
कायोत्सर्गं करोम्यहं--

( एमोकार ६ गुणवा )

अथेष्टप्रार्थना प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः

लघुसमाधिभक्ति

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुतिः सङ्गतिः सर्वदायैः

सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम् ।

सर्वभ्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे

सम्पद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ १ ॥

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनं ।

तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाणसम्पाप्तिः ॥ २ ॥

अक्षरपयत्थहीणं मत्ताहीणं च जं मए भणियं ।

तं खमउ णाणदेव य मज्झ वि दुक्खक्खयं दित्तु ॥३॥

दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमयां समाहि-

मरणां जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

( अञ्चलिका समाधिभक्तिवत् )

—\*—\*—

५८--वीरभक्तिः ।

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद्द्रव्याणि तेषां गुणान्

पर्यायानपि भूतभाविमवतः सर्वान् सदा सर्वथा ।

जानीते युगपत्प्रतिक्षयमतः सर्वज्ञ इत्युच्यते

सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ॥१॥

वीरः सर्वसुरासुरेन्द्रमहितो वीरं बुधाः संश्रिता

वीरेणाभिद्रुतः स्वकर्मनिचयो वीराय भक्त्या नमः ।

वीरात्तोर्यमिदं प्रवृत्तमतुलं वीरस्य घोरं तपो

वीरे श्रो-द्युति-कान्ति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! मद्रं त्वयि ॥२॥

ये वीरपादौ प्रणमन्ति नित्यं ध्यानस्थिताः संयमयोगयुक्ताः ।

ते वीतशोका हि भवन्ति लोके संसारदुर्गं विषमं तरन्ति ॥३॥

व्रतसमुदयमूलः संयमस्कन्धबन्धो

यमनियमतपोमिर्द्धितः शीलशास्त्रः ।

समितिकलिकभारो गुप्तगुप्तप्रवालो

गुणकुसुमसुगन्धिः सत्पापश्चित्रपत्रः ॥४॥

शिवसुखफलदायी यो दयाछाययोद्यः

शुभजनपथिकानां खेदनादे समर्थः ।

दुरितरविजतापं प्रापयन्नन्तभावं

स भवविभवहान्यै नोऽस्तु चारित्रवृक्षः ॥५॥

चारित्रं सर्वजिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्वशिष्येभ्यः ।

प्रणमामि पंचमेदं पंचमचारित्रलाभाय ॥६॥

धम्मो मंगलमुक्किट्टं अहिंसा संयमो तवो ।

देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मो सया मखो ।.७॥

धर्मः सर्वसुखाकरो हितकरो धर्मं बुद्धाश्चिन्वते

धर्मेणैव समाप्यते शिखसुखं धर्माय तस्मै नमः ।

धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद्भवभृतां धर्मस्य मूलं दया

धर्मे चिन्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ॥८॥

## ५६-चतुर्विंशतितीर्थकर-भक्तिः ।

चउबीसं तित्थयरे उसहाइवीरपच्छिमे वंदे ।

सव्वे सगणगणहरे तिद्धे तिरसा णमसामि ॥१॥

ये लोकेष्टसहस्रलक्षणधरा ज्ञेयार्णवातर्गता

ये सम्यग्भवजालहेतुमथनाशचंद्रार्कतेजोधिकाः ।

ये साध्विद्रसुराप्सरोगणशतैर्गीतप्रणुत्पाचिता-

स्तान्देवान्पृषमादि वीरचरमान्भक्त्या नमस्याम्यहम् ॥२

नामेर्या देवपूज्यं जिनवरमर्जितं सर्वलोकप्रदीपं

सर्वज्ञं संभवाख्यं मुनिगणपृषभं नंदनं देवदेवम् ।

कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वरकमलनिभं पद्मपुष्पाभिर्गंधं

क्षान्तं दातं सुपाश्वर्णं संकलशशिनिर्भं चंद्रनामानमीडे ॥३॥

विख्यातं पुष्पदन्तं भवभयमथनं शीतलं लोकनाथं

श्रेयांसं शीलकेशं प्रवरनरगुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।

मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमलमृषिपतिं सैहसेन्यं मुनीन्द्रं

धर्मं सद्धर्मकेतुं शमदमनिलयं स्तौमि शान्तिं शरण्यम् ॥४॥

कुन्थुं सिद्धालयस्थं भ्रमणपतिमरंत्यक्तभोगेषु चक्रं

मन्त्रिं विख्यातगोत्रं खचरणजुतं सुव्रतं सौख्यराशिम्

देवेन्द्राचार्यं नमीशं हरिकुलतिलकं नेमिचंद्रं भवान्तं

पार्श्वं नागेन्द्रबन्धं शरण्यमहमितो वर्द्धमानं च भक्त्या ॥५॥

इच्छामि भंते ! चउबीसतित्थयरभक्तिकाउस्सग्गो कअओ  
तस्सालोचेउ । पंचमहाकन्लाखसंपण्णायां, अट्टमहापाडिहेर-

सद्वियाणं, चउतीसअतिसयविसेससजुत्ताणं वत्तीसदेविंदमणिम-  
उडमत्थयमद्वियाणं बलदेववासुदेवच्चकहररिसिमुण्णिज्जअण्णगारो-  
वगूढाणां, थुइसयसहस्सणिलयाणां, उसहाइवीरपक्खिममंगलमहा-  
पुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमंसामि,  
दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बाहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं,  
जिण्णगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

## देववन्दना-प्रयोगानुपूर्वी ।

देववन्दना के लिए श्रीजिनमन्दिर को जावें, वहाँ उचित स्थान में बैठकर दोनों हाथों और दोनों पैरों को धोवें । अनन्तर—

“निसही निसही निसही”

ऐसा तीन बार उच्चारण कर चैत्यालय में प्रवेश करें; वहाँ जिनेन्द्रदेव के मुख का अवलोकन कर तीन बार प्रणाम करें । अनन्तर “दृष्टं जिनेन्द्रभवनं भवतापहारि” इत्यादि दर्शन-स्तोत्र को बन्दना मुद्रा जोड़ कर पढ़ते हुए चैत्यालय की तीन प्रदक्षिणा दें । प्रत्येक दिशा में तीन तीन आवर्त और एक एक शिरोनति करते जावें ।

अनन्तर खड़ा रह कर, दोनों पैरों को समान कर, चार अंगुल का अन्तर रख कर और दोनों हाथों को मुकुलित कर नीचे लिखा “ऐर्यापथिक दोषविशुद्धिपाठ” पढ़ें ।

—: ० :—

## ६०-ईर्यापथविशुद्धिः

पडिकमामि भंते ! इरियावहियाए विराहणाए अणागुणे,  
अइगमणे निग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजु-

गमये, हरिदुग्गमणे, उच्चारपस्सवद-खेल-सिंहाण-वियडिपइट्ठाव-  
णियाए, जे जीवा एइन्दिया वा, वे इन्दिया वा. ते इंदिया वा  
चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा. शोन्लिदा वा, पेन्लिदा वा,  
संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, परिदाविदा वा, किरिच्छिदा वा,  
लेस्सिदा वा. छिदिदा वा, भिदिदा वा, ठाणदो वा, ठाणचं-  
मणदो वा, तस्स उत्तरगुणां, तस्स पायच्छित्तरणां, तस्स भिसो-  
हिकरणां, जाव अरहंताणां भयवंताणं शमोकारं पज्जुवासंकरोमि  
ताव कायं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

आलोचना— ईर्यापथे प्रचलिताय मया प्रमादा—

देकेन्द्रियप्रमुखजीवनिकायबाधा ।

निर्वर्तिता यदि भवेद्युगान्तरेचा

मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ॥१॥

इच्छामि भंते ! आलोचेउं हरियावहिसस्स पुव्वुत्तरदक्खिणा-  
पच्छिमचउदिसविदिसासु विरहमाणेण जुगंतरदिट्ठिया भव्वेण  
दट्ठवा । पमाददोषेण उब्रहवचरियाए पाणभूदजोवसत्ताणं उव-  
घादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्हिदो तस्समिच्छा  
मे दुक्कडं ।

अनन्तर उठकर गुरुको अथवा देवको पंचांग नमस्कार करे' पुनः गुरु  
के समक्ष अथवा गुरु दूर हो तो देवके समक्ष बंठकर देववंदना करे ।

## ६१ देववन्दना

नमोऽस्तु भगवन् ! देववन्दनां करिष्यामि ।

अनन्तर पर्यकासन से बैठ कर नीचे लिखा मुख्य मंगल पदं ।

सिद्धं सम्पूर्णमव्यार्थसिद्धेः कारणमुत्तमम् ।

प्रेशस्तदर्शनज्ञानचारित्रप्रतिपादनम् ॥ १ ॥

सुरेन्द्रमुकुटाश्लिष्टपादपद्मशुकेशरम् ।

प्रणमामि महावीरं लोकत्रितयमंगलम् ॥२॥

अनन्तर बैठे बैठे ही नीचे लिखा पाठ पद कर सामायिक स्वीकार करें ।

स्वमामि सव्वजीवाणां सव्वे जीवा स्वमंतु मे ।

मिची मे सव्वभूदेसु वेरं खज्झं ण देणा वि ॥१॥

रायबंधं पदेसं च हरिसं दोणभावयं ।

उस्सुगचं भयं सोगं रदिमरदिं च वेस्सरे ॥२॥

हा दुट्ठकयं हा दुट्ठचितियं भासियं च हा दुट्ठं ।

अंतोअंतो डज्झमि पच्छुत्तावेण वेयंतो ॥३॥

दव्वे खेरो काले भावे य कदावराहसोहणयं ।

शिंदणगरहणजुत्तो मणवचकाएण पांडकमणं ॥४॥

समता सर्वभूतेषु संयमः शुभभावना ।

आर्तरीद्रपरित्यागस्तद्ध सामायिकं मतं ॥ ५ ॥

भगवन्नमोऽस्तु प्रसीदंतु प्रभुपादा वंदिष्येऽहं, एषोऽहं सर्व-  
सावधयोगाद्विरतोऽस्मि ।

अथ पौर्वाहिकं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मचयार्थं भाव-  
पूजावन्दनास्तवसमेतं चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

इस तरह कृत्यबिज्ञापना कर खड़े हो कर भूमि-स्पर्शनात्मक पंचांग नमस्कार करें पश्चात् जिनप्रतिमा के सम्मुख चार अंगुल प्रमाण दोनों पैरों का अन्तर कर खड़े हों । तीन आवर्त और एक शिरोनमन करें । पश्चात् मुक्ता-शुक्ति मुद्रा जोड़ कर नीचे लिखा सामायिक दण्डक पढ़ें । पहले उच्छ्वास में अर्हंत—सिद्ध मंत्र का, दूसरे में आचार्य-उपाध्याय मन्त्र का और तीसरे में सर्व-साधु मन्त्र का त्वब्रवणगोचर जिसे दूसरा न मुन सके इस तरह एक बार उच्चारण कर पश्चात् चत्वारि दण्डक स्तोत्र को समीपस्थ मनुष्य के कानों को मनोहर मालूम पड़े ऐसा सुरीली आवाज से पढ़ें । तथा—

६२—सामायिक दंडक—

शुभो अरहंताणं एवमो सिद्धाणं (१) एवमो आइरियाणं ।

एवमो उवज्जयाणं (२) एवमो लोए सव्व साहूणं (३) ॥१॥

चत्वारि मंगलं—अरहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहू मंगलं, केवलपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्वारि लोगुत्तमा—अरहंत लोगुत्तमा, सिद्ध लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्वारि सरणं पव्वज्जामि—अरहंतसरणं पव्वज्जामि, सिद्धसरणं पव्वज्जामि, साहूसरणं पव्वज्जामि, केवलपण्णत्तो धम्मो सरणं पव्वज्जामि ।

अट्ठाइज्जदोवदोसमुहेसु पण्णारसकम्मभूनिसु जाव अरहंताणं मयवंताणं आदियराणं तिसियराणं जिणाणं जिणोत्तमाणं केवलियाणं सिद्धाणं बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं अन्तयडाणं पात्तयडाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसियाणं, धम्मणायगाणं, धम्मवरचाउरंग-चक्कवट्टाणं देवाहिदेवाणं शाणाणं दंसणाणं चरित्ताणं सदा ज्जेनि विगिगमं ।

करेमि भंते ! सामद्यं ( देववन्दनां ) सध्वसावज्जजोगं  
पञ्चकखामि जावज्जीवं ( जावन्नियमं ) तिविहेण मणसा वचसा  
काएण ण करेमि ण कारेमि कीरंतं पि ण समणुमणामि । तस्स  
भंते ! अहचारं पञ्चकखामि, सिंदामि गरहामि अप्पाणं, जाव  
अरहंताणं भयवंताणं पज्जुवासं करेमि ताव काल पावकम्मं  
दुच्चरियं वोस्सरामि ।

इस प्रकार उक्त सामायिक दण्डक पढ़कर पुनः तीन आवर्त  
और एक शिरोनति करें । पश्चात् जिनमुद्रा जोड़कर कायोत्सर्ग करें  
जिसमें “णमो अरहंताणं” इत्यादि मन्त्र का सत्ताईस उच्छ्वासों में नौ  
बार पूर्वोक्त विधि के अनुसार जाप देवां या चिंतवन करें ।

अनन्तर भूमिस्पर्शनात्मक पंचांग नमस्कार करें पश्चात् पूर्वोक्त  
विधि से खड़े होकर तीन आवर्त और एक शिरोनति कर नीचे लिखा  
“चतुर्विंशतिस्तव” पढ़ें । तथायाः—

## ६३ चतुर्विंशतिस्तव

धोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।

णरपवरलोयमहिण विहुयरयमले महप्पणणे ॥ १ ॥

लोयस्सुज्जोययरे धम्मंतित्थंकरे जिणे वंदे ।

अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चैव केवल्लिणो ॥२॥

उसहमजियं च वंदे संभवमभिणंदणं च सुमहं च ।

पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ॥ ३ ॥

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल्ल सेयं च वासुपुज्जं च ।

विमलमखंतं मयवं धम्मं संतिं च वंदामि ॥ ४ ॥



कुन्पुं च जिणवरिदं अरं च मल्लि च सुव्वयं च णमि  
वंदामि रिद्धुणेमिं तह पासं वड्हमाणं च ॥ ५ ॥

एवं मए अमिथुआ विहुयरयमला पहीणजरमरणा ।

चउवीसं पि जिणवरा तिथयरा मे पसीयंतु ॥ ६ ॥

किच्चिय वंदिय महिया एदे लोगेत्तमा जिणा सिद्धी ।

आरोग्गणाणलाहं दिंतु समाहिं च बोहिं ॥ ७ ॥

चंदेहिं णिम्मलयरा आइच्चेहिं अहियपपासंता ।

सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धि मम दिसंतु ॥ ८ ॥

अनन्तर तीन आवर्त और एक शिरोनति करें। इन तरह एक कायोत्सर्ग में दो प्रणाम, बारह आवर्त और चार शिरोनमन हुए। सामायिक दण्डक के आदि में तीन आवर्त और एक शिरोनमन, अन्त में नान आवर्त और एक शिरोनमन, तथा चतुर्विंशतिस्तव के आदि में तीन आवर्त और एक शिरोनमन और अन्त में तीन आवर्त और एक शिरोनमन एवं बारह आवर्त और चार शिरोनमन तथा सामायिक दण्डक के आदि में तीन आवर्त और एक शिरोनमन के पहले अथ पौर्वाहिक, इत्यादि क्रिया विज्ञापन कर खड़े होने के पीछे एक पंचांग भूमिस्पर्शनात्मक नमस्कार तथा चतुर्विंशतिस्तव दण्डकके आदि में तीन आवर्त और एक शिरोनमन के पहले तथा कायोत्सर्ग के अनन्तर एक पंचांग नमस्कार एवं दो प्रणाम एक कायोत्सर्ग में हुए।

अनन्तर तीन प्रदक्षिणा देते हुए और प्रति दिशा में तीन तीन आवर्त और एक एक शिरोनमन करते हुए निम्नलिखित सत्य विज्ञापन करके चैतव्यभक्ति पढ़े।

अथ पौर्वाहिकदेवबन्धनायां 'नीत्यभक्तिकायोत्सर्गं' करोम्वहम्  
नीत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पद कर निम्नलिखित कृत्य विज्ञापन  
करके पंचमहागुरु भक्ति अञ्चलिका सहित पदे ।

अथ पौर्वाहिकं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मस्यार्थं भावपूजाबन्ध-  
नास्तवसमेतं पंचमहागुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

( अञ्चलिका सहितं पंच महा गुरुभक्ति पद कर निम्नांकित कृत्य  
विज्ञापन करके लघु समाधिभक्ति ( प्रिय भक्ति ) अञ्चलिका सहित पद  
कर बन्धना समाप्ति का कायोत्सर्ग करे ।

अथ पौर्वाहिकदेव बन्धनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्मस्यार्थं  
भावपूजाबन्धनास्तवसमेतं श्रीचेत्यपञ्चगुरुभक्ती विधाय तद्धीनाधिकत्वा-  
दिदोषविशुत्तयर्थं आत्मपवित्रोकरणार्थं समाधिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

### ६४—सर्वदोषप्रायश्चित्तविधिलिख्यते ।

ॐ ह्रीं अहं अ सि आ उ सा त्रयस्त्रिशदत्वासादनात्यागानु-  
ष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १ ॥ ॐ ह्रीं अहं अहिसामहाव्रत-  
स्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ २ ॥ ॐ ह्रीं  
अहं सत्यमहाव्रतस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय  
नमः ॥ ३ ॥ ॐ ह्रीं अहं अचोर्यमहाव्रतस्यात्यासदनात्यागायां  
नुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ४ ॥ ॐ ह्रीं अहं ब्रह्मचर्यमहाव्र-  
तस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं  
अहं अपरिग्रहमहाव्रतस्यात्यासादनात्यागायांनुष्ठितप्रोषधोद्योत-  
नाय नमः ॥ ६ ॥ ॐ ह्रीं अहं ईर्यासमितेरत्यासादनात्यागायानु-  
ष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ७ ॥ ॐ ह्रीं अहं भाषासमितेरत्या-  
सादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ८ ॥ ॐ ह्रीं अहं  
एषणासमितेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं अर्हं आदाननिक्षेपणसमितेरत्यासादनात्यागायानुष्ठित-  
 प्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १० ॥ ॐ ह्रीं अर्हं उत्सर्गसमितेरत्या-  
 सादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ११ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं  
 मनोगुप्तेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १२ ॥  
 ॐ ह्रीं अर्हं वचोगुप्तेरत्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय  
 नमः ॥ १३ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं कायगुप्तेरत्यासादनात्यागायानुष्ठित-  
 प्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १४ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं जीवास्तिकायिक-  
 स्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १५ ॥ ॐ  
 ह्रीं अर्हं पुद्गलास्तिकायिकस्यात्सात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधो-  
 द्योतनाय नमः ॥ १६ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं धर्मास्तिकायिकस्यात्यासादना-  
 त्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १७ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं अधर्मा-  
 स्तिकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १८ ॥  
 ॐ ह्रीं अर्हं आकाशास्तिकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठित-  
 प्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ १९ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं पृथ्वीकायिकस्यात्या-  
 सादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ २० ॥ ॐ ह्रीं अर्हं  
 अपृथ्वीकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ २१ ॥  
 ॐ ह्रीं अर्हं तेजः कायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्यो-  
 तनाय नमः ॥ २२ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं वायुकायिकस्यात्यासादना-  
 त्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ २३ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं वनस्प-  
 तिकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ २४ ॥  
 ॐ ह्रीं अर्हं त्रसकायिकस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योत-  
 नाय नमः ॥ २५ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं जीवपदार्थस्यात्यासादनात्या-

गायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ २६ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं अजीव-  
 पदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः २७ ॥  
 ॐ ह्रीं अर्हं आसन्नपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्यो-  
 तनाय नमः ॥ २८ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं बंधपदार्थस्यात्यासादनात्या-  
 गायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ २९ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं संबन्ध-  
 पदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ३० ॥  
 ॐ ह्रीं अर्हं निर्जरपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्यो-  
 तनाय नमः ॥ ३१ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षपदार्थस्यात्यासादना-  
 त्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ३२ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं पुण्य-  
 पदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥ ३३ ॥  
 ॐ ह्रीं अर्हं पापपदार्थस्यात्यासादनात्यागायानुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय  
 नमः ॥ ३४ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं सम्यग्दर्शनाय नमः ॥ ३५ ॥ ॐ ह्रीं  
 अर्हं सम्यग्ज्ञानाय नमः ॥ ३६ ॥ ॐ ह्रीं अर्हं सम्यक् चारित्र्याय  
 नमः ॥ ३७ ॥

इति सर्वदोषप्रायश्चित्तविधिः ।

## ६९ अथ चतुर्दिशि वंदना ।

प्राग्दिग्दिगन्तरि केवलजिनसिद्ध साधुगणदेवाः । ये  
 सर्वर्द्धिसमृद्धा योगिगणांस्तानऽहं वन्दे ॥१॥ दक्षिणदिग्दि-  
 दिगन्तरि केषलिजिनसिद्ध साधुगणदेवाः ये सर्वर्द्धिमृदां ॥ २ ॥  
 परिचमदिग्दिगन्तरि केवलजिनसिद्ध साधुगणदेवाः । ये सर्व-

द्विसप्तमृद्धा० ॥ ३ ॥ उत्तरदिग्विदिगन्तरि केवलजिनसिद्धसाधु-  
गणदेवाः । ये सर्वद्विसप्तमृद्धा० ॥ ४ ॥

इति चतुर्विंशि वन्दना ॥

६६ भूतकालतीर्थङ्कराः ।

१ श्रीनिर्वाण २ सागर ३ महामाधु ४ विमलप्रभ ५ श्रीधर  
६ सुदत्त ७ अमलप्रभ ८ उद्धर ९ अङ्गिर १० सन्मति ११  
सिध १२ कुमुमाञ्जलि १३ शिवगण १४ उत्साह १५ ज्ञानेश्वर  
१६ परमेश्वर १७ विमलेश्वर १८ यशोधर १९ कृष्णमति २०  
ज्ञानमति २१ शुद्धमति २२ श्रीमद्र २३ अतिक्रान्त २४ शांता-  
श्चेति भूतकालसंबन्धिचतुर्विंशित्तितीर्थङ्करेभ्यो नमो नमः ॥

६७ वर्तमानकालतीर्थङ्कराः ।

१ ऋषभ २ अजित ३ शंभुव ४ अभिनन्दन ५ सुमति  
६ पद्मप्रभ ७ सुपार्ष्व ८ चन्द्रप्रभ ९ पुण्ड्र १० शातल  
११ श्रेयान् १२ वारुपूज्य १३ विमल १४ अनन्त १५ धर्म  
१६ शक्ति १७ कुन्धु १८ अर १९ मन्त्रि २० मुनिसुव्रत  
२१ नमि २२ नेमि २३ पार्ष्व २४ वर्द्धमानश्चेति वर्तमान-  
कालसंबन्धि चतुर्विंशित्तितीर्थङ्करेभ्यो नमो नमः ॥

६८ मविष्यत्कालतीर्थङ्कराः ।

१ श्रीमहापद्म २ सुरदेव ३ सुपार्ष्व ४ स्वयंप्रभ ५ सर्वा-

त्मभूत ६ देवपुत्र ७ कुलपुत्र = उदंक ६ प्रीष्ठिल १० जयकीर्ति  
 ११ मुनिसुव्रत १२ अर (अप्तम) १३ निष्पाप १४ निष्कषाय  
 १५ विमल १६ निर्मल १७ चित्रगुप्त १८ समाधिगुप्त १९  
 स्वयंभू २० अनिवृत्तिक २१ जय २२ विमल २३ देवपाल  
 २४ अतन्तवीर्याश्चेति भविष्यत्कालसंबन्धिचतुर्विंशतितीर्थङ्करेभ्यो  
 नमो नमः

६६ विदेहक्षेत्रस्थविंशतितीर्थङ्कराः ।

१ सीमंधर २ युगमंधर ३ बाहु ४ सुबाहु ५ सुजात  
 ६ स्वयंप्रभु ७ वृषमानन = अनंतवीर्य ८ सुरप्रभ ९ विशाल-  
 कीर्ति ११ वज्रधर १२ चंद्रानन १३ मद्रबाहु १४ भुजंगम  
 १५ ईश्वर १६ नेमप्रभ (नमि) १७ वीरसेन १८ महाभद्र  
 १९ देवयश २० अजितवीर्याश्चेतिविदेहक्षेत्रस्थविंशतितीर्थङ्करेभ्यो  
 नमो नमः ॥

७० अथ नमस्कारमन्त्राः

शमो अरिहंताणं । शमो सिद्धाणं । शमो आहरियाणं ।  
 शमो उवज्झायाणं । शमो लोएसच्चसाहूणं ॥१॥ मन्त्रं संसार-  
 सारं त्रिजगदनुपमं सर्वपापारिमन्त्रं । संसारोच्छेदमन्त्रं विषम-  
 विषहरं कर्मनिर्मूलमन्त्रम् । मन्त्रं विद्धिप्रदानं शिवसुखजननं  
 केवलज्ञानमन्त्रं । मन्त्रं श्रीजैनमन्त्रं जप जप जपितं जन्मनिर्वाण-  
 मन्त्रम् ॥ २ ॥ आकृष्टिं सुरसंपदां विदधते मुक्तिधियो वश्यता-  
 मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिशुभां विद्धे षमात्मैनसाम् ॥ स्तम्भं दुर्गमं

प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनं । पायात्पंचनमस्क्रियाक्षरमयी  
 साराधना देवता ॥३॥ अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् ।  
 जिनराजपदोम्भोजस्मरणं शरणां मम ॥ ४ ॥ अन्यथा शरणां  
 नास्ति त्वमेव शरणां मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिने-  
 श्वर ॥ ५ ॥ न हि प्राता न हि प्राता न हि प्राता जगत्त्रये ।  
 वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥ ६ ॥ जिने भक्ति-  
 जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने । सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु  
 सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥ ७ ॥

—: ० :—

## ७१ महावीराष्टकस्तोत्रम्

[ शिखरिणी ]

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचित्तः । समं मांति ध्रौव्य-  
 व्ययजनिलसंतोषरहिताः ॥ जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव  
 यो । महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥१॥ अताम्रं  
 यञ्चक्षुः कमलयुगलं स्पंदरहितं । जनान्कोपापायं प्रकटयति वास्यं-  
 तरमपि ॥ स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला । महा-  
 वीर० ॥२॥ नमन्नाकेंद्रालीमुकुटमणिभाजालजटिलं । लसत्यादां-  
 भोजद्रवभिह्य यदीयं तनुमतां ॥ भवज्जालाशांत्यै प्रभवति जलं  
 वा स्मृतमपि । महावीर० ॥३॥ यदर्चाभावेन प्रमुदितमना ददुर्  
 इह । क्षणादासीत्स्वर्गा गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ॥ लभते  
 सद्गताः शिवसुखसमाजं किमु तदा । महावीर० ॥४॥ कनत्स्व-

र्णामामोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिबहो । विचित्रात्माप्येको नृपतिवर-  
 सिद्धार्थतनयः ॥ अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुतगतिः ।  
 महावीर० ॥५॥ यदीया वाग्गङ्गा विविधनयकन्डोलविमला ।  
 बृहज्ज्ञानामोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ॥ इदानीमप्येषा बुध-  
 जनमरालैः परिचिता । महावीर० ॥६॥ अनिवरित्रेकस्त्रिभुवन-  
 जयी काममुभटः । कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येन विजितः ॥  
 स्फुरभित्यानन्दप्रशमपदराज्याय स जिनः । महावीर० ॥ ७ ॥  
 महामोहातङ्कप्रशमनपराकस्मिकभिषग् । निरापेक्षो बंधुर्विदित-  
 महिमः मङ्गलकरः ॥ शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुचमगुणो ।  
 महावीर० ॥८॥ महावीराष्टकं स्तोत्रं भक्त्या भागेन्दुना कृतं ।  
 यः पठेच्छृणुयाच्चापि स याति परमां गतिम् ॥९॥

## ७२ चतुर्दशीक्रिया

अथ चतुर्दशीक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मच्यार्थं  
 भावपुजावन्दनास्तत्रसमेतं श्रीचैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

इत्युच्चार्य सामायिकदंडकं पठित्वा कायोत्सर्गं कृत्वा तदनु  
 चतुर्विंशतिस्तवं भणित्वा 'जयति भगवान्' इत्यादिकां चैत्यभक्ति  
 सांचलिकां पठेत् । एव सर्वभक्तिकायोत्सर्गं पठितव्यम् भक्तिना पठेत् ।

कायोत्सर्गं पुनः पंचांग प्रणाम, और चतुर्विंशतिजिनस्तुति इसके आदि  
 और अंत में तीन तीन आवर्त और एक एक शिरोनति करके प्रत्येक  
 भक्ति पढ़ना चाहिए । जिन जिन क्रियाओं में जितनी भक्तियों  
 के पढ़ने का विधान हो उन सब को उक्त रीति से पढ़ कर अन्त में  
 समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए । और मुद्रा आदि का प्रयोग भी प्रथमा-  
 ध्याय में बताई गई विधि के अनुसार करना चाहिए ।



अथ चतुर्दशीक्रियायां ... श्रीश्रुतमक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

अथ चतुर्दशीक्रियायां ... श्रीपंचमहागुरुमक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

अथ चतुर्दशीक्रियायां ... चैत्यमक्ति-श्रुतमक्ति-पंचगुरुमक्तोर्विधाय तद्दोनाधिकत्वादिदोषविशुद्धयर्थं समाधिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

संस्कृतक्रियाकाण्डानुसारेण चतुर्दशीक्रिया यथा—

अथ चतुर्दशीक्रियायां ... सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

अथ ... चैत्यमक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

अथ ... श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

अथ ... पंचगुरुमक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

अथ ... शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

अथ ... सिद्ध-चैत्य-श्रुत-पंचगुरु-शान्तिभक्तीः कृत्वा तद्दोनाधिकत्वादिदोषविशुद्धयर्थं समाधिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।



१—चतुर्दशीक्रिया में सिद्धभक्त, चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंचगुरुभक्ति और शान्तिभक्ति करना चाहिए ।

विशेष—प्राकृतक्रियाकाण्ड का और संस्कृतक्रियाकाण्ड का उपदेश भिन्न भिन्न है । दोनों ही उपदेश ऊपर दिखाये गये हैं । उनमें से किसी एक के अनुसार चतुर्दशीक्रिया की जा सकती है ।

## ७३-पात्तिकीक्रिया

‘चतुर्दशीदिने धर्मव्यासंगादिना क्रिया क्तुं न लभ्येत चेत् पात्तिकेऽष्टमीक्रिया कर्तव्या ।

अथ पात्तिकीक्रियायां .. सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

अथ .. ... सालोचनाचारित्रभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—  
(भक्त्यन्ते ‘इच्छामि भन्ते ! चरित्तायारोतेरसबिहो’ इत्यालोचना कार्याः )

अथ ... .. शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि —

( शान्तिभक्ति पठित्वा समाधिभक्ति पठेत् )

संस्कृतक्रियाकाण्डानुसारेण यथा —

अथ पात्तिकीक्रियायां सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

- ” ” सालोचनं चारित्रभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—  
 ” ” चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—  
 ” ” पंचगुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—  
 ” ” शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि—

१—चतुर्दशी के दिन धर्मव्यासंग आदि के कारण क्रिया न कर पाये तो पूर्णिमा और अमावस के रोज अष्टमीक्रिया करना चाहिए ।

२—यदी धर्मव्यासंग से चतुर्दशी के रोज चतुर्दशीक्रिया न की जा सके तो पूर्णिमा और अमावस के रोज पात्तिकीक्रिया करना चाहिए ।

३- पात्तिकीक्रिया में सिद्धभक्ति, सालोचना चारित्रभक्ति, और शान्तिभक्ति करना चाहिए ।

## ७४-अष्टमीक्रिया

- अथ अष्टमीक्रियायां सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
 " " श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
 " " सालोचनं चःखित्तभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
 " " चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
 " " पंचगुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
 " " शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-

( इत्येवं प्रतिहाप्य तत्तद्भक्तयो विधेयाः अन्तेप्रियभक्ति )

### ७५ सिद्धप्रतिमाक्रिया

अथ सिद्धप्रतिमाक्रियायां सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।  
 (इत्येवं प्रतिहाप्य सिद्धभक्तिमञ्चलिकां पठेत)

### ७६-तीर्थकृज्जन्मक्रिया

“अथ पाक्षिकीक्रियायां” इत्यस्यस्थाने “अथ तीर्थकृज्जन्म-  
 क्रियायां” इत्युच्चार्य पाक्षिकीक्रिया कर्तव्या ।

### ७७-पूर्वजिनचैत्यक्रिया

“अथ पूर्वजिनचैत्यक्रियायां” इत्युच्चार्य पाक्षिकीक्रिया  
 कर्तव्या ।

### ७८-अपूर्वचैत्यवन्दनाक्रिया

“अथ अपूर्वचैत्यवन्दनक्रियायां” इत्युच्चार्यपाक्षिकीक्रिया कर्तव्या ।

### ७९-अनेकापूर्वचैत्यदर्शनक्रिया

“अथ अनेकापूर्वचैत्यदर्शनक्रियायां” इत्युच्चार्य पाक्षिकी  
 क्रिया कार्या ।

८०-पाक्षिकादिप्रतिक्रमयाक्रिया

(एषविधिः ३५३ पृष्ठयावदुक्तो ज्ञेयः, श्रावकप्रतिक्रमणे तु "देवसिय" इत्यस्य स्थाने "पक्खिय" "चउम्मासिय" इत्यादि योज्यम्) ।

८१-श्रुतपंचमी क्रिया

अथ श्रुतस्कंधप्रतिष्ठापनक्रियायां सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-

अथश्रुतस्कंधप्रतिष्ठापनक्रियायां श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
( एवं विज्ञाप्य तच्चक्रतयो विधाय श्रुतावतारोपदेशः कार्यः )  
तदनु-

अथ स्वाध्यायप्रतिष्ठापनक्रियायां ... श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-

अथ स्वाध्यायप्रतिष्ठापनक्रियायां आचार्य भक्तिकायोत्सर्गं करोमि-

( एवं विज्ञाप्य भक्तिद्वयं विधाय स्वाध्यायं कुर्यात् ) तदनु  
अथ स्वाध्यायनिष्ठापनक्रियायां ...श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
अथ श्रुतपंचमीक्रियायां शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
( एवं विज्ञाप्य भक्तिद्वयमेतद्विधेयम् )

८२-सिद्धान्ताचारवाचनक्रिया

"अथ श्रुतस्कंध" श्रुतपंचमी "इत्यस्य च स्थाने "अथ सिद्धान्तवाचन" "आचारवाचन" इति बोधार्थं श्रुतपंचमीक्रिया कार्या ।

८३-सन्न्यासक्रिया

अथ सन्न्यासप्रतिष्ठापनक्रियायां ... सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

अथ सन्न्यासप्रतिष्ठापनक्रियायां ... श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-

( सन्न्यासप्रतिष्ठापनम् )

अथ स्वाध्यायप्रतिष्ठापनक्रियायां श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं

अथ स्वाध्यायप्रतिष्ठापनक्रियायां ... आचार्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

( अनन्तरं स्वाध्यायः कार्यः )

अथ स्वाध्यायनिष्ठापनक्रियायां श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

अथ सन्न्यासनिष्ठापनक्रियायां ... सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

अथ सन्न्यासनिष्ठापनक्रियायां ... श्रुतभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

अथ सन्न्यासनिष्ठापनक्रियायां ... शान्तभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

( एवं विज्ञाप्य तच्चक्रकृत्यो विधेयाः )

८४-अष्टाह्निकक्रिया

अथ अष्टाह्निकक्रियायां ... सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

अथ अष्टाह्निकक्रियायां ... नन्दीश्वरचैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

अथ अष्टाह्निकक्रियायां ... पंचगुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।

अथ अष्टाह्निकक्रियायां " शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि ।  
( एवं विज्ञाप्य तत्तद्भक्तयो विधेयाः )

८५—अभिषेकवन्दनाक्रिया

अथ अभिषेकवन्दनाक्रियायां ... सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि ।

अथ अभिषेकवन्दनाक्रियायां ... चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि ।

अथ अभिषेकवन्दनाक्रियायां ... पंचगुरुभक्तिकायोत्सर्गं ०

अथ अभिषेकवन्दनाक्रियायां ... शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि ।

( एवं विज्ञाप्य तत्तद्भक्तयो विधेयाः )

८६—मंगलगोचरमध्याह्नवन्दनाक्रिया

अथ मंगलगोचरमध्याह्नवन्दनाक्रियायां इत्येवमुच्चार्य क्रमेण सिद्ध  
भक्ति—चैत्यभक्ति—पंचगुरुभक्ति—शान्तिभक्तयो विधेयाः ।

—००००००००००—

८७- मंगलगोचरभृहस्पत्याख्यानक्रिया

अथ मंगलगोचरभक्तप्रत्याख्यानक्रियायां.....सिद्धभक्ति  
कायोत्सर्गं करोमि--( 'सिद्धानुद्धूत' इत्यादि )

१ - मङ्गलगोचर में बड़ी सिद्धभक्ति और बड़ी योगिभक्ति द्वारा  
भक्तप्रत्याख्यान ग्रहण करके बड़ी आचार्यभक्ति और शान्तिभक्ति  
को आचार्यादिक सब मिलकर पढ़ें ।

अथ मंगलगोचरभक्तप्रत्याख्यानक्रियायां .....योगिभक्ति-  
कायोत्सर्गं करोमि—( 'जातिजरोरुग' इत्यादि )

( इत्येवं भक्तिद्वयेन प्रत्याख्यानं गृहीत्वा इदं भक्तिद्वयं प्रयुञ्जताम् )

अथ मंगलगोचरभक्तप्रत्याख्यानक्रियायां .. ... आचार्य-  
भक्तिकायोत्सर्गं करोमि—( 'सिद्धगुरुस्तुति' इत्यादि )

अथ मंगलगोचरभक्तप्रत्याख्यानक्रियायां .. ... शान्ति-  
भक्तिकायोत्सर्गं करोमि—( न स्नेहाच्छरणं इत्यादि )

### ८८-वर्षायोगग्रहणक्रिया

१ततश्चतुर्दशीपूर्वरात्रे सिद्धमुनिस्तुती ।

चतुर्दिक्षु परीत्याल्पाश्चैत्यभक्तीगुरुस्तुतिम् ॥

शान्तिभक्तिं च कुर्वाणैर्वर्षायोगस्तु गृह्यताम् ।

अथ वर्षायोगप्रतिष्ठापनाक्रियायां .....सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि—( सिद्धिभक्ति-पठनं )

अथ वर्षायोगप्रतिष्ठापनाक्रियायां .....योगिभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि—( योगिभक्तिपठनं )

१-प्रत्याख्यानप्रयोगविधि के अनन्तर आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी की रात्रि के प्रथम पहर में सिद्धभक्ति और योगिभक्ति करके, चारों दिशाओं में प्रदक्षिणापूर्वक एक एक दिशा में लघुचैत्यभक्ति पढ़ते हुए, पंचगुरुभक्ति और शान्तिभक्ति पढ़ते हुए वर्षा योग ग्रहण करें। भावार्थ—पूर्व दिशा की ओर मुख करके पहले सिद्धभक्ति और योगिभक्ति पढ़ें। चैत्यभक्ति को ऊपर बताये हुए विधान के अनुसार पूर्वादि दिशाओंकी ओर मुख करके चार बार पढ़ें। अथवा भावसे ही प्रदक्षिणा करना चाहिये। इसलिये एकही पूर्व या उत्तर दिशा में मुख करके उक्त रीति से चार बार चैत्यभक्ति पढ़ें। इस तरह वर्षायोग ग्रहण करें।

पूर्वस्याम् दिशि—

यावन्ति जिनचैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।

तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ॥

इमं श्लोकं पठित्वा दूषभाजितस्वर्यभूस्तवद्वयमुच्चार्य 'अथ वर्षा-  
योगप्रतिष्ठापनाः क्रियायां चैत्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि' इत्येवं प्रति-  
ज्ञाप्य, दंडादिकं भणित्वा 'वर्षेषु वर्षान्तर' इत्यादिका लघुचैत्यभक्ति  
सांचलिकां पठेत् । इति पूर्वदिक्चैत्यवन्दना

दक्षिणस्यां दिशि—

उक्तं श्लोकं पठित्वा, संभवाभिनन्दनस्वर्यभूस्तवद्वयमुच्चार्य, क्रियां  
विज्ञाप्य, दंडादिकं विधाय तामेव भक्ति सांचलिकां पठेत् । इत्येवं  
दक्षिणदिक्चैत्यवन्दना ।

पश्चिमायां दिशि—

उक्तं श्लोकं पठित्वा सुमतिपद्मप्रभवयभूस्तवद्वयमुच्चार्य कृत्य-  
विज्ञापनां कृत्वा दंडादिकं विधाय तामेव भक्ति सांचलिकां पठेत् । इति  
पश्चिमदिक्चैत्यवन्दना ।

उत्तरस्यां दिशि—

उक्तं श्लोकं पठित्वा सुपार्श्वचन्द्रप्रभवस्वर्यभूस्तवद्वयं भणित्वा  
कृत्यविज्ञापनां कृत्वा दंडादिकं विधाय तामेव लघुचैत्यभक्ति सांचलिकां  
पठेत् । इत्युत्तरदिक्चैत्यवन्दना ।

अथ वर्षायोगप्रतिष्ठापनक्रियायां ..... पंचगुरुभक्तिका-  
योत्सर्गं करोमि—( पंचगुरुभक्तिः )

अथ वर्षायोगप्रतिष्ठापनक्रियायां ..... शान्तिभक्तिका-  
योत्सर्गं करोमि— ( शान्तिभक्तिः )



## ८६-वर्षायोगानष्टापनाक्रिया

१ ऊर्जकृष्णचतुर्दश्यां परचाद्रात्रौ च मुख्यताम् ।

वर्षायोगप्रतिष्ठापने यो विधिरुक्तः स एव तन्निष्ठापने कार्यः ।  
केवलं 'वर्षायोगप्रतिष्ठापनक्रियायां' इत्यस्य स्थाने 'वर्षायोगनिष्ठापन-  
क्रियायां' इति योन्यम् ।

शेषविधिः- -

मासं वासोऽन्यदेकत्र यांगक्षेत्रं शुचौ ब्रजेत् ।  
मार्गऽतीते त्यजेत्तार्थवशादपि न लंघयेत् ॥  
नभश्चतुर्थी तद्याने कृष्णां शुक्लोर्जपंचमी ।  
यावन्न गच्छेत्तच्छेदे कथाचिच्छेदमाचरेत् ॥

## ६०-वीरनिर्वाणक्रिया

अथ वीरनिर्वाणक्रियायां .. .. सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि--

अथ वीर निर्वाणक्रियायां . निर्वाणभक्तिकायोत्सर्गं करोमि।  
( निर्वाणभक्ति पठन् प्रदक्षिणां कुर्यात् )

अथ वीरनिर्वाणक्रियायां ... पंचगुरुभक्तिकायोत्सर्गं करोमि।

अथ वीर निर्वाणक्रियायां ... शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि

६१ कल्याणपंचकक्रिया

१-'अथ जिनेन्द्रगर्भकल्याणकक्रियाए' इत्येवमुच्चार्य सिद्ध-  
चारित्रशान्तिभक्तयो विधेयाः । .

१-कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी के दिन रात्रि के चौथे प्रहर में वर्षा-  
योग का निष्ठापन करें ।

२-‘अथ जिनेन्द्रजन्मकल्याणकक्रियायां’ इत्येवमुच्चार्य सिद्धचारित्र शान्तिभक्तयो विधेयाः ।

३-‘अथ जिनेन्द्रनिष्क्रमणक्रियायां’ इत्येवमुच्चार्य सिद्धचारित्रयोगिशान्तिभक्तयो विधेयाः । योगिमक्तौ च प्रदक्षिणीकरणम् ।

४-‘अथ जिनेन्द्रज्ञानकल्याणकक्रियायां’ इत्येवमुच्चार्य सिद्धश्रुतचारित्रयोगिशान्तिभक्तयो विधेयाः । योगिमक्तौ च प्रदक्षिणीकरणम् ।

५-‘अथ जिनेन्द्रनिर्वाणकल्याणकक्रियायां’ ‘निर्वाणक्षेत्र क्रियायां वा’ इत्येवमुच्चार्य सिद्धश्रुतचारित्रयोगिनिर्वाणभक्तयोः विधेयाः । निर्वाणभक्तौ प्रदक्षिणीकरणम् ।

६२-पंचत्वप्राप्त्यर्थादीनां काये निषेधिकायां च क्रिया

काये निषेधिकायां च मुनेः सिद्धर्षिशान्तिभिः ।

उत्तरव्रतनः सिद्धवृत्तर्षिशान्तिभिः क्रिया ॥

मैद्धान्तस्य मुनेः सिद्धश्रुतर्षिशान्तिभक्तभिः ।

उत्तरव्रतिनः सिद्धश्रुतवृत्तर्षिशान्तिभिः ॥

सुरेर्निषेधिकाकाये सिद्धर्षिसुरिशान्तिभिः ।

शरीरकेशिनः सिद्धवृत्तर्षिगणेशान्तिभिः ॥

(१) सामान्यमुनिके शरीर और निषद्याभूमि में सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति योगिभक्ति और शान्तिभक्ति पढ़कर, ( २ ) सिद्धान्तवेत्ता श्रुत सामान्य मुनिके शरीर और निषद्याभूमि में सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, योगिभक्ति और शान्तिभक्ति पढ़कर, ( ३ ) उत्तरव्रती और सिद्धान्तवेत्ता श्रुत सामान्य मुनिके शरीर और निषद्याभूमि में सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति,

सैद्धान्तगणिनः सिद्धश्रुतर्षिसूरिशान्तयः ।

अस्य ( क्लेशिनः ) योगे सिद्धश्रुतवृत्तर्षिगणिशान्तयः ॥

( एषामुच्चारणा यथायोग्यमुन्नेयाः )

### ६३-चलाचलविम्बप्रतिष्ठायाः क्रिया ।

चलाचलप्रतिष्ठायां सिद्धशान्तिस्तुतिर्भवेत् ।

वन्दना चाभिषेकस्य तुर्यस्नाने मता पुनः ॥

सिद्धवृत्तानुतिं कुर्याद् बृहदालोचनां तथा ।

शान्तिभक्तिं जिनेन्द्रस्य प्रतिष्ठायां स्थिरस्य तु ॥

चलजिनविम्बप्रतिष्ठाक्रियायां, अचलजिनविम्बप्रतिष्ठाक्रियायां, चल-

योगिभक्ति और शान्तिभक्ति पढ़कर, ( ४ ) मृत आचार्य के शरीर और निषद्याभूमि में सिद्धभक्ति, योगिभक्ति, आचार्यभक्ति और शान्तिभक्ति पढ़कर, ( ५ ) कायक्लेशी मृत आचार्य के शरीर और निषद्याभूमि में सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति, योगिभक्ति, आचार्यभक्ति और शान्तिभक्ति पढ़कर, ( ६ ) सिद्धान्त के ज्ञाता मृत आचार्य के शरीर और निषद्याभूमि में सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, योगिभक्ति, आचार्यभक्ति और शान्तिभक्ति पढ़कर, ( ७ ) शरीर क्लेशी और सिद्धान्तवेत्ता मृत आचार्य के शरीर और निषद्याभूमि में सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति, योगिभक्ति, आचार्यभक्ति और शान्तिभक्ति पढ़कर वन्दना क्रिया करें ।

१-चलजिनविम्ब की प्रतिष्ठा और अचलजिनविम्ब की प्रतिष्ठा में सिद्धभक्ति और शान्तिभक्ति होती है । चलजिनविम्बकी प्रतिष्ठाके चतुर्थ दिनके अवभृथ स्नानमें अभिषेकवन्दना अर्थात् सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति और शान्तिभक्ति मानी गई है । अचलजिनविम्ब की प्रतिष्ठा के चतुर्थ दिन के अवभृथ स्नान में सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति, बड़ी चारित्रालोचना और शान्तिभक्ति करना चाहिए ।

जिनविम्बचतुर्थदिनस्नपनक्रियायां, अचलजिनविम्बचतुर्थदिनस्नपनक्रिया-  
यां इत्येवं विज्ञाप्य तास्ताः भक्तयः प्रयेयाः ।

### ६४-आचार्यपदप्रतिष्ठापनक्रिया-

अथ आचार्यपदप्रतिष्ठापनक्रियायां .. ... आचार्यभक्ति-  
कायोत्सर्गं करोमि-

अथ आचार्यपदप्रतिष्ठापनाक्रियायां ..... आचार्यभक्ति  
कायोत्सर्गं करोमि—

एवं भक्तिद्वयं पठित्वा 'अद्यप्रभृति भवता रहस्यशास्त्राध्ययन-  
दीक्षादानादिक्रमाचार्यकार्यमाचर्यामिति गणसमक्षं भासमाणेन गुरुणा  
समर्प्यमाणपिच्छप्रहणलक्षणमाचार्यपदं गृह्णीयात् । अनन्तरं—

अथ आचार्यपदनिष्ठापनक्रियायां ... शान्तिभक्तिकायो-  
त्सर्गं करोमि (शान्तिभक्तिः)

### ६५-प्रतिमायोगिमुनिक्रिया

अथ प्रतिमायोगिमुनिक्रियायां ..... सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि--

अथ प्रतिमायोगिमुनिक्रियायां ... योगिभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि ।

अथ प्रतिमायोगिमुनिक्रियायां.....शान्तिभक्तिकायोत्सर्गं  
करोमि--

( एवं विज्ञाप्य तत्तद् भक्तयो विधेयाः )

## ६६-दीक्षाग्रहणक्रिया

सिद्धयोगिवृहद्भक्तिपूर्वकं लिङ्गमर्प्ताताम् ।

लुञ्चाख्यानाग्न्यपिच्छात्म ज्ञम्यतां सिद्धभक्तितः ॥

अथ दीक्षाग्रहणक्रियायां .. ...सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करामि--

( 'सिद्धानुद्धूत' इत्यादि )

अथ दीक्षाग्रहणक्रियायां .. .. योगिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि--

( 'थोम्सामि गुणधराणं' इत्यादि 'जातिजरोरुगे' इत्यादि वा )

अनन्तरं लोचकरणां, नामकरणां नाग्न्यप्रदानं, पिच्छप्रदानं च ।

अथ दीक्षानिष्ठापनक्रियायां.....सिद्धभक्तिकापात्सर्गं करोमि

दीक्षादानोत्तरकर्त्तव्यम्--

१-व्रतसमितीन्द्रियरोधाः पांच प्रथक् चित्तिशयो रदावर्षः ।

म्यतिसकृदशने लुञ्चावश्यकपट्के विचेलनाऽश्नानम् ॥

इत्यष्टाविंशति मूलगुणान् निक्षिप्य दीक्षिते ।

संक्षेपेण सशीलादीन् गणी कुर्यात्प्रतिक्रमम् ॥

१-उस दीक्षित में पांच व्रत, पांच समिति, पांच इन्द्रियनिरोध, चित्तिशयन, अदन्तधावन, स्थितिभोजन, सकृद्भुक्ति, लोच, छद्म आवश्यक, अचेलता और अश्नान इन अष्टाईस मूल गुणों को संक्षेप में चौरासां लाख गुणों तथा अठारह हजार शीलों के साथ साथ स्थापित कर दीक्षादाता आचार्य उसी दिन व्रतारोपण प्रतिक्रमण करे । यदि लगन ठीक न हो दो कुछ दिन ठहर कर भी प्रतिक्रमण कर सकता है ।

## ६७-अन्यदातनलोचक्रिया

१लोचो द्वित्रिचतुर्मासैर्वरो मध्यऽधमः क्रमात् ।

लघुप्राग्भक्तिभिः कार्याः सोपवासप्रतिक्रमः ॥

अथ लोचप्रतिष्ठापनक्रियायां ..... सिद्धभक्तिकायोत्सर्ग  
करोमि---

( 'तवसिद्धे' इत्यादि )

अथ लोचप्रतिष्ठापनक्रियायां ..... योगिभक्तिकायोत्सर्ग  
करोमि---

अनन्तरं स्वहस्तेन परहस्तेनापि वा लोचः कायः

अथ लोचनिष्ठापनक्रियायां ..... सिद्धभक्तिकायोत्सर्ग  
करोमि---

( 'तवसिद्धे' इत्यादि ) अनन्तरं प्रतिक्रमणं कर्तव्यम् ।

## ६८-बृहद्दीक्षाविधिः

पूर्वदिने भोजनसमये भाजनतिरस्कारविधिं विधाय आहारं  
गृहीत्वा चैत्यालये आगच्छेत् ततो बृहत्प्रत्याख्यानप्रतिष्ठापने सिद्धयोग-  
भक्ती पठित्वा गुरुपाश्र्वं प्रत्याख्यानं सोपवासात् गृहीत्वा आचार्यशान्ति-  
समाधिभक्तीः पाठित्वा गुरोः प्रणामं कुर्यात् ।

अथ दीक्षादाने दीक्षादातृजनः शान्तिक-गणधरबलयपूजादिकं यथा-  
शक्तिं कारयेत् । अथ दाता तं स्नानादिकं कारयित्वा यथायोग्यालङ्कार-

२—दूसरे, तीसरे या चौथे महीने में लोच करना चाहिए । दो  
महीने से लोच करना उत्कृष्ट, तीन महीने से मध्यम और चार महीने  
से जघन्य माना गया है । इस लोच को उपवासपूर्वक और प्रतिक्रमण  
सहित लघुसिद्धभक्ति और लघुयोगिभक्ति पढ़कर प्रतिष्ठापन और लघु  
सिद्धभक्ति पढ़कर निष्ठापन करना चाहिए ।

युक्तं महामहोत्सवेन चैत्रप्रालये समाप्तयेत् । स देवशास्त्रगुरुपूजां विधाय वैराग्यभावनापरः सर्वैः सह क्षमां कृत्वा गुरोरभ्रे तिष्ठेत् । ततो गुरोरभ्रे संघस्याग्रे च दीक्षायाँ यांचां कृत्वा तदाज्ञया सौभाग्यवतीस्त्रोविहितस्वस्तिकोपरि श्वेतवस्त्रं प्रच्छाद्य तत्र पूर्वदिशाभिमुखः पर्यकासनं कृत्वा आसते, गुरुश्चोत्तराभिमुखो भूत्वा, संघाष्टकं संघं च परिपृच्छथ लोचं कुर्यात् ।

### अथ तद्विधिः—

बृहदीक्षायां लोचन्वीकारक्रियायां पूर्वाचार्येत्यादिकमुच्चार्य सिद्ध-योगिभक्ती कृत्वा—

ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये श्रीशान्तिनाथाय शान्तिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगामृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षामडामरविनाशाय ॐ ह्रां हीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अमुकस्य सर्वशान्तिं कुरु २ स्वाहा ॥

इत्यनेन मंत्रेण गन्धोदकादिकं त्रिवारं मंत्रयित्वा शिरसि निक्षिपेत् । शान्तिमंत्रेण गन्धोदकं त्रिःपरिधिव्यं मस्तकं वामहस्तेन स्पृशेत् । ततो दध्यक्षतगोमयदूर्वांकुरान् मस्तके वर्धमानमंत्रेण निक्षिपेत्—

ॐ नमो भयबदो वडदुमाणस्य रिसहस्रस चक्षकं जलंतं गच्छद्भ्र आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जये वा विवादे वा थंभणे वा रणंगणे वा रायंगणे वा मोहणे वा सव्वजीवसत्ताणं अपरमजिदो मवदु रक्ख रक्ख स्वाहा—वर्धमान मंत्रः ।

ततः पवित्रमसपात्रं गृहीत्वा “ॐ णमो अरहंताणं रत्नत्रय-

पवित्रीकृतोत्तमांगाय ज्योतिर्मयाय मतिश्रुतावधिमनः पर्ययकेवल-  
ज्ञानाय अ सि आ उ सा स्वाहा” इदं मंत्रं पठित्वा शिरसि कपूर्-  
मिश्रितं भस्म परिक्षिप्य “ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं” अ सि आ उ सा  
स्वाहा” अनेन प्रथमं केशोत्पादनं कृत्वा पश्चान् “ॐ ह्रां अर्हद्भ्यो  
नमः, ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः, ॐ हूं सरिभ्यो नमः ॐ ह्रौं पाठ-  
केभ्यो नमः, ॐ हः सर्वसाधुभ्यो नमः” इत्युच्चरन् गुरुः स्व-  
हस्तेन पंचवारान् केशान् उत्पाटयेत् । पश्चादन्यः कोऽपि लोचावसाने  
वृहदीक्षायां लोचनिष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्येत्यादिकं पठित्वा सिद्धभक्तिः  
( क्ति ) कर्तव्या ( कुर्यात् ) नतः शीर्षं प्रक्षाल्य गुरुभक्तिं दत्त्वा वस्त्रा-  
भरणयज्ञोपवीतादिकं परिस्थाय तत्रैवानस्थाय दाक्षां याचयेत् । ततो  
गुरुः शिरसि श्रीकारं लिखित्वा “ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा ह्रीं  
स्वाहा” अनेन मंत्रेण जाप्यं १०८ दद्यात् । ततो गुरुस्तस्यांजलौ केशर-  
कपूर्श्रोखंडेन श्रीकारं कुर्यात् । श्रीकारस्य चतुर्विधं—

रयणत्तर्यं च वंदे चउवीसजिणं तथा वंदे ।

पंचगुरुणं वंदे चारणजुगलं तथा वंदे ॥

इति पठन् अंकान् लिखेत् । पूर्वं ३ दक्षिणे २४ पश्चिमे ५ उत्तरे  
२ इति लिखित्वा “सम्यग्दर्शनाय नमः, सम्यग्ज्ञानाय नमः, सम्य-  
क्चारित्राय नमः” इति पठन् तन्दुलैरञ्जलिं पूरयेत्तदुपरि नालिकेरं  
पूगीफलं च धृत्वा सिद्धचारित्रयोगिभक्तिं पठित्वा व्रतादिकं दद्यात् ।  
तथा हि—

बदसमिदिदियरोधो लोचो आवासय मचेलमण्हाणं ।

खिदिसयणमदंतवणं ठिदिभोयणमेयभत्तं च ॥१॥



इति पठित्वा तद्द्वयाख्याविधेया कान्तानुसारेणेति निरूप्य पञ्चमहा-  
व्रतपञ्चसमितीत्यादि पठित्वा सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते  
भवतु इति त्रीन् वारान् उच्यते व्रतानि दत्त्वा ततः शान्तिभक्तिं पठेत् ।  
ततः आशीः श्लोकं पठित्वा अञ्जलिस्थं तन्दुलादिकं दात्रे दापयित्वा,  
अथ षोडशसंस्कारारोपणं -

- अयं सम्यग्दर्शनसंस्कार इह मुनी स्फुरतु १  
अयं सम्यग्ज्ञानसंस्कार इह मुनी स्फुरतु २  
अयं सम्यक्चारित्र्यसंस्कार इह मुनी स्फुरतु ३  
अयं बाह्याभ्यन्तरतपः संस्कार इह मुनी स्फुरतु ४  
अयं चतुरङ्गवीर्यसंस्कार इह मुनी स्फुरतु ५  
अयं अष्टमातृमंडलसंस्कार इह मुनी स्फुरतु ६  
अयं शुद्धयष्टकावष्टंभसंस्कार इह मुनी स्फुरतु ७  
अयं अशेषपरीपहजयसंस्कार इह मुनी स्फुरतु ८  
अयं त्रयोगासङ्गमनिवृत्तशीलतासंस्कार इह मुनी स्फुरतु ९  
अयं त्रिकरणासंयमनिवृत्तिशीलतासंस्कार इह मुनी स्फुरतु १०  
अयं दशासंयमनिवृत्तिशीलतासंस्कार इह मुनी स्फुरतु ११  
अयं चतुः संज्ञानिग्रहशीलतासंस्कार इह मुनी स्फुरतु १२  
अयं पंचेन्द्रियजयशीलतासंस्कार इह मुनी स्फुरतु १३  
अयं दशधर्मधारणशीलतासंस्कार इह मुनी स्फुरतु १४  
अयमष्टादशसहस्रशीलतासंस्कार इह मुनी स्फुरतु १५  
अयं चतुरशीतिलक्षणसंस्कार इह मुनी स्फुरतु १६

इति प्रत्येकमुच्चार्य शिरसि लवंगपुष्पाणि क्षिपेत् ।

‘शुभो अरहंतायां इत्यादि ‘ॐ परमहंसाय परमेष्ठिने हं स हं स  
हं हां हुं ह्रीं ह्रीं ह्रूं ह्रः जिनाय नमः जिनं स्थापयामि संवीषट्, ऋषि-  
मस्तके न्यसेत् । अथ गुर्वात्रलो पठित्वा अनुकस्य अमुकनामा त्वं शिष्य  
इति कथयित्वा संयमाद्युपकरणानि दद्यात् ।

एगो अरहंताणं भो अन्तेवासिन् ! पद्मजीवनिकायरक्षणाय मार्द-  
वादिगुणोपेतमिदं पिच्छिकोपकरणं गृहाण गृहाणेति ।

ॐ एगो अरहंताणं मतिश्च तावधिमनः पर्यायकेवलज्ञानाय  
द्वादशांगप्रताय नमः भो अन्तेवासिन् ! इदं ज्ञानोपकरणं गृहाण  
गृहाणेति ।

कमंडलुं वामहस्तेन उद्धृत्य ॐ एगो अरहंताणं रत्नत्रयपवित्री-  
करणांगाय बाह्याभ्यन्तरमलशुद्धाय नमः भो अन्तेवासिन् ! इदं शौचो-  
पकरणं गृहाण गृहाणेति ।

ततश्च समाधि-भक्तिं पठेत् । ततो नवदीक्षितो मुनिगुरुभक्त्या  
गुरुं प्रणम्य अन्यान् मुनीन् प्रणम्योपविशति यावद्ब्रतारोपणं न भवति  
तावदन्ये मुनयः प्रतिबन्धानं न ददति, ततो दातृप्रमुखा जना उत्तम-  
फलानि अत्रे निवाय तस्मै नमोऽस्त्विति प्रणामं कुर्वन्ति ।

ततस्तत्पक्षेद्वितीयपक्षे वा सुमुहूर्त्ते ब्रतारोपणं कुर्यात् । तदा रत्नत्रय-  
पूजां विधाय पात्निकप्रतिक्रमणपाठः पठनीयः । तत्र पात्निकनियमप्रह-  
णसमयात् पूर्वं यदा षडसमदीत्यादि पठ्यते तदा पूर्ववद्ब्रतादि दद्यात् ।  
नियमप्रहणसमये यथायोग्यं एकं तपो दद्यात् (पल्यविधानादिकं) । दातृप्रभृ-  
विश्रावकेभ्योऽपि एकं एकं तपो दद्यात् । ततोऽन्ये मुनयः प्रतिबन्धानं ददति ।

अथ मुखशुद्धिमुक्तकरणे विधिः—

त्रयोदशसु पंचसु त्रिषु वा कर्चोलिकासु लवंग-एला-पूगीफलादिकं  
नित्तिप्य ताः कर्चोलिकाः गुरोरग्रे स्थापयेत् । 'मुखशुद्धिमुक्तकरण  
पाठक्रियायामित्याद्युच्चार्या सिद्ध-योगि-आचार्या-शान्त-समाधिभक्ती-  
विधाय ततः पश्चान्मुखशुद्धिं गृहीयात् ।

इति महाप्रतदीक्षाविधिः ।

## ६६-लुल्लकदीक्षाविधिः ।

अथ लघुदीक्षायां सिद्ध-योगि-शान्ति-समाधिभक्तीः पठेत् । “ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं एं अर्हं नमः” अनेन मंत्रेण जाप्यं वार २१ अथवा १०८ दीयते ।

अन्यच्च विस्तारेण लघुदीक्षाविधि—

अथ लघुदीक्षानेतृजनः पुरुषः स्त्री वा दाना संस्थापयति । यथा-योग्यमलंकृतं कृत्वा चैत्यालये 'समानयेत्, देवं वदित्वा सर्वैः सह क्षमां कृत्वा गुरोरग्रे च दीक्षां याचयित्वा तदाह्वया सौभाग्यवतीं स्त्रीं विहितम्वस्तिकोपरि श्वेतवस्त्रं प्रच्छाद्य तत्र पूर्वाभिमुखः पर्यकासनो गुरुश्चोत्तराभिमुखःसंघाटकं संघं च परिपृच्छद्य लोचं ... .. “ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रकीर्णारोपकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्तये शान्तिनाथाय शान्तिकाराय सर्वविघ्नप्रणाशकाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतलुद्रोपप्रविनाशनाय सर्वक्षामहामरविनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अमुकस्य सर्वशान्तिं कुरु कुरु स्वाहा” अनेन मंत्रेण गन्धोदकादिकं त्रिवारं शिरसि निक्षिपेत् । शान्तिमंत्रेण गन्धोदकं त्रिः परिविच्य वामहस्तेन स्पृशेत् । ततो दध्यक्षतगोमयतद्गन्धं दूर्वाङ्कुरान् मस्तके वर्धापनमंत्रेण निक्षिपेत् “ॐ एमो भयवदो बहुमाणास्से त्यादि वर्धापनमन्त्रः पूर्वं कथितः, लोचादिविधिं महाव्रतवद्विधाय ।सिद्ध-भक्ति-योगिभक्ती पठित्वा व्रतं दद्यात् । दंसणवयेत्यादि वारत्रयं पठित्वा व्याख्यां विधाय च गुर्वावलीं पठेत् । ततः संयमाद्युपकरणं दद्यात् ।

ॐ एमो अरहंताणं भोः लुल्लक ! ( आर्य-गेलक ! ) लुल्लके वा घट्जीवनिकायरक्षणाय मार्दवादिगुणोपेतमिदं पिच्छोपकरणं गृहाण गृहाण, इत्यादि पूर्वोक्तमण्डलुं ज्ञानापकरणादिकं च मंत्रं पठित्वा दद्यात् ।

इति लघुदीक्षाविधानं समाप्तम् ।

## १००-अथोपाध्यायपददानविधिः ।

सुमुहूर्ते दाता गणधरबलयार्चनं द्वादशाङ्गमुत्तर्चनं च कारयेत् । ततः श्रोत्रं हादिना छटादिकं कृत्वा तन्दुलैः स्वस्तिकं कृत्वा तदुपरि पट्टकं संस्थाप्य तत्र पूर्वाभिमुखं तमुपाध्यायपदयोग्यं मुनिमासयेत् । अथोपाध्यायपदस्थापनक्रियायां पूर्वाचार्येत्याद्युच्चार्य सिद्धञ्च तभक्त्यै पठेत् । तत आवाहनादिमन्तानुच्चार्येशरसि लवंगपुष्पाक्षतं क्षिपेत् । तद्यथा—  
 ह्रीं एमो उवञ्जायाणं उपाध्यायपरमेश्चिन् ! अत्र एहि एहि संबौषट् ,  
 आह्वाननं स्थापनं सन्निधीकरणं । ततश्च “ॐ ह्रीं एमो उवञ्जायाणं  
 उपाध्यायपरमेश्चिन् नमः” इमं मंत्रं सहेन्दुना चन्दनेन शिरसि न्यसेत् ।  
 ततश्च शान्तिसमाधिभक्ती पठेत् । ततः स उपाध्यायो गुरुभक्तिं दत्त्वा  
 प्रणम्य दात्रे आशिषं दद्यादिति ।

इत्युपाध्यायपदस्थानविधिः ।

## १०१-अथाचार्यपदस्थापनविधिः

सुमुहूर्ते दाता शान्तिकं गणधरबलयार्चनं च यथाशक्ति कारयेत् । ततः श्रोत्रं हादिना छटादिकं कृत्वा आचार्यपदयोग्यं मुनिमासयेत् । आचार्यपदप्रतिष्ठापनक्रियायां इत्याद्युच्चार्य सिद्धाचार्यभक्ती पठेत् । “ॐ ह्रूं परमसुरभिद्रव्यसन्दर्भपरिमलगर्भतीर्थाम्बुसम्पूर्णां मुवर्णाकलशपंचकतोयेन परिषेचयामीति स्वाहा” इति पठित्वा कलशपंचकतोयेन पादोपरि सेचयेत् । ततः पठिताचार्यो “निर्वेद सौष्ठ” इत्यादि महर्षिस्तवनं पठन् पादौ समन्तात्परामृश्य गुणारोपणं कुर्यात् । ततः ॐ ह्रूं एमो आइरियाणं आचार्यपरमेश्चिन् ! अत्र एहि एहि संबौषट् आह्वानं स्थापनं सन्निधीकरणं । ततश्च “ॐ ह्रूं एमो आइरियाणं धर्माचार्याधिपतये नमः” अनेन मंत्रेण सहेन्दुना चन्दनेन पादयोर्द्वयोस्तिलकं दद्यात् । ततः शान्तिसमाधिभक्ती कृत्वा गुरुभक्त्या गुरुं प्रणम्योपविशति । तत उपासकास्तस्य पादयोरष्टतयीमिष्टिं कुर्वन्ति । यतश्च

गुरुभक्तिं दत्त्वा प्रणमन्ति । स उपासकेभ्य आशीर्वादं दद्यात् ।

इत्याचार्यपददानविधिः ।

ॐ ह्रीं ह्रीं श्रीं अर्हं हंसः आचार्याय नमः—आचार्यवचना मंत्रः ।

अन्यरूप—

ॐ ह्रीं श्रीं अर्हं हंसः आचार्याय नमः—आचार्य मंत्रः ।

### १०२-दीक्षा-नक्षत्राणि

प्रथम्य शिरसा वीरं । जनेन्द्रममलव्रतम् ।

दीक्षा ऋक्षाणि वक्ष्यन्ते सर्ता शुभफलाप्तये ॥१॥

भरग्युत्तरफाल्गुन्यौ मघा-चित्रा-विशाखिकाः ।

पूर्वाभाद्रपदा भानि रेवती मुनिदीक्षयो ॥२॥

रोहिणी चोत्तराषाढा उत्तराभाद्रपत्तथा ।

स्वातिः कृत्तिकाया सार्धं वर्ज्यते मुनिदीक्षणे ॥३॥

अश्विनी-पूर्वाफाल्गुन्यौ हस्तस्वात्यनुराधिकाः ।

मूलं तथोत्तराषाढा श्रवणः शतभिषक्तथा ।४।

उत्तराभाद्रपद्याणि दशेति विशदाशयाः ।

आर्थिकार्णां व्रते योग्यान्पुशन्ति शुभहेतवः ।५।

भरण्या कृत्तिकायां च पुण्ये श्लेषार्द्रयोस्तथा ।

पुनर्वसौ च नो दधुरार्यिकाव्रतमुत्तमाः ।६।

पूर्वभाद्रपदा मूलं धनिष्ठा च विशाखिका ।

अवशश्चेषु दीक्ष्यन्ते क्षुब्धकाः शन्यवर्जिताः ।७।

इति दीक्षानक्षत्रपटलम् ।

१०३-आचार्यवन्दना

पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल आचार्यभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
( आचार्यभक्तिविधेया )

१०४ प्रत्याख्यानप्रतिष्ठापनविधिः

प्रत्याख्यानप्रतिष्ठापनक्रियायां सिद्धभक्तिकायो० ।  
( जाप्यं, तवसिद्धे इत्यादिः, अञ्चलिका, जाप्यम् )

१०५ प्रत्याख्याननिष्ठापनविधिः

प्रत्याख्याननिष्ठापनक्रियायां सिद्धभक्तिकायो० ।  
( जाप्यं, तवसिद्धे इत्यादि, अञ्चलिका, जाप्यम् )

१०६ उपवासग्रहणविधिः

उपवास प्रतिष्ठापनक्रियायां सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि  
( जाप्यं, तवसिद्धं इत्यादि, अञ्चलिका, जाप्यम् )

१०७ उपवासत्यागविधिः

उपवासनिष्ठापनक्रियायां सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
( जाप्यं, तवसिद्धे इत्यादि भक्तिः, अञ्चलिका, जाप्यम् )

१०८ आचार्यसमीपे प्रत्याख्यानप्रतिष्ठापनविधिः

प्रत्याख्यानप्रतिष्ठापनक्रियायां सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
प्रत्याख्यानप्रतिष्ठापनक्रियायां योगिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-

( तवसिद्धे ) 'प्रावृट्काले' इत्यादि ।

१०९ आचार्य समीपे उपवास प्रतिष्ठापनविधिः

उपवासप्रतिष्ठापनक्रियायां सिद्धभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-  
उपवासप्रतिष्ठापनक्रियायां योगिभक्तिकायोत्सर्गं करोमि-

( 'तत्रसिद्धे' 'प्रावृत्काले' इत्यादि भक्ती विधेये ) ।

११० पौर्वाहिकस्वाध्यायक्रिया

अथ पौर्वाहिक स्वाध्यायप्रतिष्ठापनक्रियायां श्रुतभक्तिका०

अथ पौर्वाहिकस्वाध्यायप्रतिष्ठापनक्रियायां ... आचार्यभक्तिका०

( 'अर्द्धद्वक्त्रप्रसूतं' प्राज्ञः प्राप्त' इत्यादि भक्तिद्वयम् )

१११ अपरान्हिक स्वाध्यायक्रिया

( पौर्वाहिकइत्यस्यस्थाने 'अपरान्हिक' इत्युच्चार्योक्तभक्ती कार्ये )

११२ प्रादोषिकस्वाध्यायक्रिया

( पौर्वाहिक इत्यस्यस्थाने प्रादोषिक' इत्युच्चार्योक्तभक्तीकार्ये )

११३ वैरात्रिकस्वाध्यायक्रिया

( 'वैरात्रिक' इत्युच्चार्योक्तभक्तीकर्तव्ये )

११४ स्वाध्यायनिष्ठापनक्रिया

( पौर्वाहिकस्वाध्यायनिष्ठापनक्रियायां श्रुतभक्तिकायोत्सर्ग' इत्यादि तन्नमोच्चार्यालघुश्रुतभक्तिः कार्या ) ।

११५ मध्याह्नदेववन्दना

( मध्याह्नदेववन्दनायां इति संयोज्य देववन्दना कर्तव्या )

११६ सायंतनदेववन्दना

( अपरान्हिकदेववन्दनायां इति संयोज्य देववन्दना कर्तव्या )

११७ योगग्रहणक्रिया

अथ रात्रियोगग्रहणक्रियायां ... श्रीयोगिभक्तिकायोत्सर्ग' करोमि

( एमोअरहंताणं इत्यादि, थोस्सामि इत्यादि, जातिजरो इत्यादि )

११८ योगमोचनक्रिया

(योगिनिष्ठापनक्रियायां इत्युच्चार्य पूर्ववद्भक्तिः कार्या)

११९ दैवसिक प्रतिक्रमणविधि

(पृष्ठादारम्य ... पृष्ठपर्यन्तम्)

१२० रात्रिप्रतिक्रमणम्

(देवसिय इत्यस्य स्थाने 'राइय' इत्युच्चार्य दैवसिक-  
प्रतिक्रमणवत्कार्यम्)

१२१ आचार्यवन्दना बृहद्विधिः

नमोऽस्तु श्री आचार्यवन्दनायां श्री सिद्धभक्तिकायोत्सर्ग  
करोम्यहम् ('जाप्यं सम्मत्तणाणदंसण' तवभिद्धे इत्यादि)

नमोऽस्तु श्री आचार्यवन्दनायां श्री श्रुतज्ञानभक्तिकायोत्सर्ग  
करोम्यहम् ('जाप्यम्, कोटीशतं' अरहंतभासित्थं इत्यादि ।

नमोऽस्तु श्री आचार्यवन्दनायां आचार्यभक्तिकायोत्सर्ग  
करोम्यहम् ('सुाप्यं, श्रुतजलधिपारगेम्य इत्यादि)

१२२-मङ्गलाष्टकम्

श्रीमन्नमसुरासुरेन्द्रमुकुटप्रद्योतरत्नप्रभा । भास्वत्पादनखेन्दवः प्र-  
बचनांभोर्धोदवःस्थायिनः॥ये सर्वे जिनसिद्धस्यर्चनुगतास्ते पाठकाः  
साधवः । स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम्॥१॥  
सम्यग्दर्शनबोधवृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं । मुक्ति श्रीनगराधिनाथ-  
जिनपत्युक्तोऽपवर्गपदः ॥ धर्मःसूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं दैत्या-  
लयं श्र्यालयं । प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम्  
।२। नामेयादिजिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः । श्रीमन्तो



भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ॥ ये विष्णुप्रतिविष्णुर्लागल-  
धराः सप्तोत्तरा विंशति । स्वैकान्धे प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते  
मंगलम् ॥३॥ देवोऽष्टौ च जयादिका द्विगुणिता विद्यादिका  
देवताः । श्रोतार्थरुमातृकाश्च जनका यज्ञारच यक्षस्तथा ।  
द्वात्रिंशत्त्रिदशाधिपास्तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधाः । दिक्पालाः  
दक्षकैत्यमी सुरगणाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥४॥ ये सर्वोपधश्चद्वय  
सुतपसौ बुद्धि गताः पञ्च ये । ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशला येऽष्टौ  
विधाश्चारणाः ॥ पञ्चज्ञानधराभ्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिश्चद्वीश्वराः  
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥ ५ ॥ कैलाशे  
वृषभस्य निवृत्तिमही वीरस्य पावापुरे । चम्पायां वसुपूज्यसज्जिन-  
पतेः सम्मोदशैलेऽर्हताम् ॥ शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वर-  
स्यार्हता । निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥६॥  
ज्योतिर्व्यन्तरमावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा । लंबूशान्मलिचैत्याश-  
खिषु तथा वक्षारूप्याद्रिषु । इन्द्राकारगिरौ च कुंडलनगे द्वीपे च  
नन्दीश्वरे शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ॥७॥  
यो गर्भावतरोत्सवो भगवता जन्मामिपेकोत्सवो यो जातः पर्वा  
निष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक् । यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा  
संभाविनः स्वर्गिभिः कन्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते  
मंगलम् ॥८॥ इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसम्पत्प्रदं कन्या-  
शेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणामुषः । ये श्रृण्वन्नि पठन्ति तैश्च  
मुज्जनैर्धर्मार्थकामान्विता लक्ष्मीराश्रयते व्यापायरहिता निर्वाण-  
लक्ष्मीरपि ॥९॥ इति मंगलाष्टकम्

